प्रस्तावना.

—॰॰॰—

आ मूळ ग्रंथ मागधी गाथाबंध छे, तेनी संख्यानुं प्रमाण पण कर्ताए ५४० नुं बतावेलुं छे; उपरांत आशिर्वादात्मक अने मिथ्यादुष्कृत सूचक बे गाथाओ प्रांते अने बीजी बे गाथाओ मध्यमां कोइ पण स्थळे क्षेपक छे, एकंदर ५४४ गाथाओनुं प्रमाण थयेलुं छे.

आ प्रकरण कहो के ग्रंथ कहो, तेना कर्त्ता भगवंत श्रीमहावीर स्वामीना हस्तदीक्षित शिष्य श्रीधर्मदास गणि त्रण ज्ञानना धारक हता. तेमणे प्रथम तो जो के पोताना पुत्रना हित माटे आ ग्रंथ बनाव्यो हतो, परंतु ते अनेक भव्य जीवोना हित माटे थयो छे. आ ग्रंथमां एटला बधा हितनां वाक्यो समावेलां छे के तेनुं पृथक् पृथक् वर्णन करवा बेसीए तो पार आवे तेम नथी. उपदेशना विषयनी पृथकता बताववा माटे अनुक्रमणिका करतां जुदा जुदा २५० विषयो बताववामां आव्या छे; परंतु जुदी जुदी विवक्षा करवा बेसीए तो तेथी विशेष विषयो पण उपलभ्य थइ शके तेवुं छे. अनुक्रमणिकामां विषयसंख्या ३२३ नी आवेली छे, परंतु तेमां प्रथमना त्रण विषय अने मध्यमां आवेली ७० कथाओ सूचक ७० अंक बाद करतां विषयसंख्या २५० नी रहे छे.

आ ग्रंथना कर्त्ता श्रीमान् धर्मदास गणि भगवंतना हस्तदीक्षित शिष्य हता के केम ? ए संबंधमां केटलाएक शंका उठावे छे, परंतु प्रथम दृष्टिए आ ग्रंथमां आवेला उपदेशनी गौरवता, प्रौढता, गंभीरता, विशालता विगेरे जोतां वांचनार बंधुओने स्वतः एम जणाइ आवे तेवुं छे के एमां लेश पण शंका उठाववा जेवुं नथी. कारण के आवी गौरवशाळी वाक्यरचना भगवंतना समयना ग्रंथकर्त्ताने माटेज घटमान छे.

बीजुं प्रबल कारण ए छे के आ उपदेशमाळानी उपर संख्याबंध टीकाओ थयेली छे, जेना कर्त्ता एवा महापुरुषो, सत्यपरायण अने बुद्धिचातुर्यमां अद्वितीय पंडितो छे के जेमने अंशमात्र पण शंका पडी होत तो तेओ निडरपणे पोतानी टीकामां तेनुं सूचन कर्या शिवाय रहेतज नहीं.

त्रीजुं कारण ए पण सबळ छे के आ ग्रंथना प्रारंभमां आवेलुं धर्मदास गणिना सांसारिक पुत्र रणसिंह कुमारनुं दृष्टांत जे घणी टीकाओमां विस्तारथी आपेलुं छे ते बधुं कृत्रिम होय ते तद्दन असंभवित छे.

चोथुं कारण ए छे के शंका उठावनारनो मुख्य मुद्दो पांचमा आराना पण केटलाएक महत्वशाळी पुरुषोनां दृष्टांतो आ ग्रंथमां आपवामां आव्यां छे ते त्यार पछीना कर्त्ता होय तेवुं बतावे छे ते छे. परंतु ते वातमां समजफेर थाय छे, केमके अवधिज्ञान त्रिकाळ

विषयी होवाथी एवां दृष्टांतो जाणवानी तेमनी शक्ति होय छे, एटले तेवां दृष्टांतो आपी शके छे. कदि ते ते दृष्टांतो साथे आपेला क्रियापदोने माटे एम कहेवामां आवे के तेमां भविष्यत् काळ वापरवामां आवेल नथी; परंतु सिद्धांतमां पण एवा घणा पुरावा मळी शके छे के जेमां भविष्यत् काळनी हकीकतने माटे पण क्रियापद वर्तमान काळना वपरायेला छे.

पांचमुं अने छेल्लुं कारण ए छे के वर्तमान समयमां वर्तता सर्व मुनि महाराजाओ आ संबंधमां तद्दन एकज मत धरावे छे, तेमां कोइनो मत जुदो पडतो नथी. जेमणे अनेक सिद्धांतो, पंचांगीओ, ग्रंथो, प्रकरणो अने कथानको वांचेलां छे एवा बहुश्रुतो ज्यारे एमां शंकानो अवकाश गणता नथी त्यारे आपणे पण तेमना विचारनेज अनुसरवुं ए आपणी फरज छे. 'महाजनो येन गतः स पंथाः' ए सूत्र अहीं खास स्मरणमां राखवा योग्य छे.

आ प्रकरण उपरनी अनेक टीकाओ पैकी आ भाषांतर श्रीरामविजय गणिनी करेली टीकानुं करवामां आव्युं छे. एना कर्त्ताए टीकाने छेडे पोतानुं नाम पण सूचव्युं नथी, प्रशस्ति पण लखी नथी, तेमज संवत विगेरे पण जणाव्युं नथी; तेथी बीजो विशेष निर्णय बतावी शकीए तेवुं नथी, तोपण एटलुं जणावीए छीए के आ टीकाना कर्त्ता श्रीहीरविजय सूरि महाराजनी परंपरामां थयेला छे, तेमना गुरुनुं नाम श्रीसुमति विजयजी छे, अने तेओ उपाध्यायजी श्रीमद्यशोविजयजीना समयमांज थया[1] छे. एओ व्याख्यानकळामां बहु प्रवीण हता. एमनी प्रशंसा सांभळीने एक वखत श्रीमद्यशोविजयजी पण एमनुं व्याख्यान सांभळवा गया हता, अने सांभळीने बहुज प्रसन्न थया हता एम कहेवाय छे. एमणे श्रीशांतिनाथजीनो रास संवत १७८५ मां बनाव्यो छे, तदुपरांत बीजुं शुं शुं बनाव्युं छे ते चोक्कस जाणवामां नथी. एक पंच कल्याणकनुं स्तवन एमनुं करेलुं प्रसिद्ध छे. आ ग्रंथना टीकाकार तरीके एओ छेल्ला थयेला जणाय छे.

आ भाषांतरना कार्य माटे पन्यासजी श्री गंभीरविजयजीए आपेली टीकानी प्रत, पन्यासजी आणंद सागरजीनी टीकानी प्रत तथा एक बहु प्राचीन मूळ गाथाओ परना टबानी प्रत, अमदावादमां छपायेल उपदेशमाळानो बालावबोध इत्यादिनी सहाय लेवामां आवी छे, अने तेने अनुसरीने दरेक गाथाना पाठांतरो नोटमां जणाव्या छे. मागधीनी संस्कृत छाया जाणवाना अभिलाषीने माटे केटलाएक अपरिचित मागधी शब्दोनो संस्कृत अर्थ टीका अनुसार नोटमां आपवामां आव्यो छे, तेमज गाथा उपरथी अर्थ करनारने सवळ पडवा माटे अन्वयना अंको पण गाथाओमां मुकवामां आव्या छे,

---

१ वधारे हकीकत माटे जुओ शांतिनाथजीना रासनो प्रांत भाग.

अने अर्थनी अंदर विशेषार्थ कौंसमां आपवामां आवेल छे. जेम बने तेम विशेष उपयोगी थइ पडे तेम करवा माटे बनतुं कर्युं छे. घणी साध्वीओ अने श्राविकाओ आ उपदेशमाळा आखी कंठे करे छे, तेमने अर्थ धारवा सवळ पडे तेवो दरेक प्रयत्न करवामां आव्यो छे.

आ प्रकरणनी टीकामां प्रारंभमां आपेली रणसिंहकुमारनी विस्तृत कथा उपरांत बीजी ७० कथाओ जुदा जुदा प्रसंगने लइने आपवामां आवी छे. गाथाओनी अंदर तो तेथी वधारे नामो लभ्य थाय छे, परंतु ते शिवायनां नामोनी कथाओ उपरनी कथामां अंतर्गत थइ जवाना कारणथी, प्रथम आवी गयेल होवाना कारणथी, अथवा विशेष प्रसिद्ध होवाना कारणथी आपवामां आवी नहीं होय एम जणाय छे. ७० कथाओ पैकी ६५ कथाओ तो २८३ गाथा सुधीमां आवी जाय छे, एटले पाछली गाथाओ २६१ मां मात्र पांचज कथाओ छे, परंतु एकलो उपदेशज भरेलो छे के जे उपदेशनुं मूल्य थइ शके तेम नथी.

आ टीकानी अंदर १ चंदनबाळा, २ संबाधन राजा, ३ भरत चक्री, ४ प्रसन्नचंद्र राजर्षि, ५ बाहुबलि, ६ सनत्कुमार चक्री, ७ ब्रह्मदत्त चक्री, ८ उदायिनृपमारक, ९ जासा सासा, १० मृगावती साध्वी, ११ जंबूस्वामी, १२ चिलाती पुत्र, १३ ढंढण कुमार, १४ स्कंदक सूरिना शिष्यो, १५ हरिकेशी मुनि, १६ वज्र मुनि, १७ वसुदेवना जीव नंदिषेण, १८ गजसुकमाल, १९ स्थूलभद्र, २० सिंहगुफावासी मुनि, २१ पीठ महापीठ मुनि, २२ तामलि तापस, २३ शालिभद्र, २४ अवंतिसुकुमाळ, २५ मेतार्य मुनि, २६ वज्रस्वामी, २७ दत्त मुनि, २८ सुनक्षत्र मुनि. २९ परदेशी राजा, ३० कालिकाचार्य, ३१ महावीर स्वामीना पूर्वभवो, ३२ बळभद्र मुनि, मृग अने रथकारक, ३३ पूरण तापस,३४ वरदत्त मुनि, ३५ चंद्रावतंसक राजा, ३६ सागरचंद्र कुमार, ३७ कामदेव श्रावक, ३८ द्रुमक, ३९ दृढप्रहारी, ४० सहस्रमल्ल, ४१ स्कंद कुमार, ४२ चूलणी राणी, ४३ कनककेतु राजा, ४४ कोणिक राजा, ४५ चाणाक्य, ४६ परशुराम ने सुभूम चक्री, ४७ आर्य महागिरि, ४८ मेघकुमार, ४९ सत्यकी विद्याधर, ५० कृष्ण, ५१ चंडरुद्राचार्य ने तेनो शिष्य, ५२ अंगारमर्दकाचार्य, ५३ पुष्पचूला, ५४ अर्णिकापुत्र आचार्य, ५५ मरुदेवा माता, ५६ सुकुमालिका, ५७ मंगू सूरि, ५८ गिरिशुक ने पुष्पशुक, ५९ सेलकाचार्य ने पंथक शिष्य, ६० दश दशने प्रतिबोधनार नंदिषेण, ६१ कंडरिक ने पुंडरीक, ६२ शशिप्रभ राजा, ६३ शिवभक्त पुलिंद,६४ श्रेणिक राजा ने विद्यादाता चंडाळ,६५ त्रिदंडी, ६६ कपटक्षपक तपस्वी, ६७ दर्दुरांक देव, ६८ सुलस, ६९ जमालि अने ७० कूर्मनी कथा मळी सित्तेर कथाओ आवेली छे. तेमां केटलीक तो जंबूस्वामीनी कथा जेवी बहु विस्तारवाळी छे,अने उपदेशवडे तो तमाम कथाओ भरपूर छे.

---

१ अनुक्रमणिकामा पण कथाना नाम साथे तेना अंक चढता मुक्या छे, तेथी सहेलाइए शोधी शकाय तेम छे.

आ ग्रंथज उपदेशनी माळारूप होवाथी तेमां अमुक उपदेश विशेष ग्राह्य छे एम कहेवा जेवुं नथी, तोपण खास ध्यान खेंचवा लायक स्थळो आ नीचे दर्शाव्या छे. ते उपर वधारे ध्यान आपवुं.

१ माता, पिता, बंधु, स्त्री, मित्र अने स्वजनो पण स्वार्थने माटे प्राणात कष्ट आपनार थाय छे, ते विषे पृष्ठ २०० थी २१८. दरेक संबंधपर कथा साथे.

२ जीवने सामान्य उपदेश. गाथा २०३ थी २१७.

३ पासथ्थादिनुं स्वरूप—तेना लक्षण विगेरे. गाथा २२२ थी २२९ ने ३५४ थी ३८२.

४ श्रावक केवा होय ? तेनी करणी—कर्त्तव्य विगेरे. गाथा २३० थी २४६.

५ चारे गतिना दुःख. गाथा २७९ थी २८७.

६ चारित्रमां समिति विगेरेमां यत्न करवा संबंधी तथा कषाय गारवादि तजवा संबंधी दश द्वार. गाथा २९५ थी ३४८. तेमां क्रोधादि चार कषायना पर्याय नामो विगेरे बहु हकीकत समावेली छे.

७ अगीतार्थ ने अबहुश्रुत संबंधी विचार. गाथा ३९८ थी ४१८.

८ गाथा ४९५ पछीनो प्रांत भागनो अमूल्य उपदेश.

आ ग्रंथ उपरथी केटलाएक क्रियामार्गथी खसी गयानुं कहेवामां आवे छे; परंतु तेम जो बन्युं होय तो तेमां वांचनारनी बुद्धिनोज दोष जणाय छे. कारणके अमने तो आमां स्थाने स्थाने व्यवहारमार्गनी पुष्टिज दृष्टिए पडे छे. वळी शिथिल थयेलाए वेष छोडी दइ संविज्ञ पक्षी थवा बाबतनो उपदेश एटलो बधो सयुक्तिक आपेलो छे के जो ते प्रमाणे वर्तन करवामां आवे तो अवश्य आत्महित थायज. बाकी एकांत खेंचवामां आवे तो पछी संसारवृद्धि करे ने करावे तेमां कांइ पण संशय जणातो नथी.

आ ग्रंथमां समावेला उपदेशनुं महत्व अमे केटलुं लखी शकीए ? ग्रंथकार पोतेज ५३४ मी गाथामां कहेछे के—" आ प्रकरण साद्यंत सांभळ्या छतां पण जे धर्ममां उद्यमी न थाय तेने अनंत संसारी जाणवो. " आटलुं कथनज तेना महत्व माटे बस छे.

आ ग्रंथनुं भाषांतर शास्त्री पासे करावीने, तेने टीका साथे अक्षरशः मेळवी सुधारवामां आव्युं छे. मूळ गाथाओना अर्थ माटे जाते पण प्रयास करवामां आव्यो छे. भाषांतर यथार्थ ने सरल थवा माटे बनतो प्रयास करेलो छे.

आ माळा पुरुषवर्ग करतां स्त्रीवर्गने वधारे उपयोगी होय एवुं बीलकुल जणातुं नथी, छतां तेनुं भणवुं गणवुं साध्वीओ अने श्राविकाओ विशेषे करती होवाथी श्रीबुद्धिविजयजी (बुटेरायजी) महाराजना परिवार मांहेना साध्वीजी लाभश्रीए संवत १९६२ मां भावनगरमां चतुर्मास रहेला ते प्रसंगे उपदेश वडे प्रयास करीने श्राविकावर्गनुं

चित्त ते तरफ दोर्युं, जेथी श्राविकाओमांथी आ ग्रंथ माटे एक सारी रकम उत्पन्न करवामां आवी, जेनुं लीस्ट आ ग्रंथनी प्रांते आपवामां आव्युं छे. ते सहायने लइने आ ग्रंथनुं भाषांतर करावनानुं अने छपाववा विगेरेनुं काम हाथ धरवामां आव्युं छे. अने तेनुं परिणाम पण तेमना लाभमांज लाववामां आव्युं छे. अर्थात् सहायक बहेनोने, अन्य उत्तम श्राविकाओने तेमज साध्वीसमुदायने आ बुक भेट दाखल आपवानुं निर्माण करवामां आव्युं छे. अन्य शहेरनी श्राविकाओए तेमज श्रीमंत गृहस्थनी स्त्रीओए ज्ञानावरणी कर्म त्रोडवा माटे ज्ञाननो उद्धार अने ज्ञाननुं दान करवा रूप आ कार्य अनुकरण करवा योग्य छे.

आ ग्रंथनुं भाषांतर तपास्या छतां तेमां मतिदोष दृष्टिदोषादि कारणथी कांइ पण भूल थइ होय तो तेने माटे मिच्छादुक्कडनी याचना छे.

आ परम उत्कृष्ट, सिद्धांतनी सरखामणीमां मुकवा लायक अने तेज प्रकारनी योग्यता धरावनारो ग्रंथ छे, तेथीज काळवेळाए आ ग्रंथनुं पठन पाठन करवानुं निषेधेलुं छे, माटे ज्ञानाचारना प्रथम अतिचारने ध्यानमां राखीने तेनुं योग्य अवसरेज पठन पाठन करवुं अने आ ग्रंथने विनय पूर्वक लेवो, मुकवो ने वांचवो, के जेथी तेमां रहेलो अमूल्य उपदेश हृदयपर शुभ तेमज दृढ असर करे अने ते प्रमाणे वर्तन करवाथी भव्य आत्मानुं कल्याण थाय.

प्रस्तावनानुं वधारे लंबाण न करतां अनुक्रमणिका तरफ दृष्टि करवानी–तेने साद्यंत वांची जोवानी भलामण करी समाप्त करवामां आवे छे. ते साथे आशा राखवामां आवे छे के जो अनुक्रमणिका साद्यंत वंचाशे तो ग्रंथ वांच्या शिवाय रहेवाशेज नहीं एवी अमने खात्री छे. इत्यलं विस्तरेण.

संवत. १९६६ }
श्रावण शुदि. १ }

श्रीजैनधर्म प्रसारक सभा.
भावनगर.



अनुक्रमणिका.

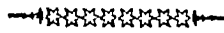
अनुक्रमणिका.

(समाप्ति)

श्री धर्मदासगणि विरचित

श्री उपदेशमाळा

भाषांतर.



श्रेय करवावाळा, इच्छित वस्तुने आपवावाळा अने जेणे कर्मसमूहने जीत्यो छे एवा वीरभगवानने प्रणमीने उपदेशमाळा नामना ग्रंथमां आवेला पदोना अर्थमात्रने स्फुट करवा वडे किंचित् मात्र तेनुं विवरण रचुं छुं. जोके आ ग्रंथनी अनेक टीकाओ छे तोपण जगत्‌ने विषे चंद्रमा प्रकाशमान थये सते शुं घरने विषे दीवो करवामां आवतो नथी ? आवे छे. तेवी रीते हुं आ ग्रंथनी अनिंद्य एवी टीका करुं छुं. श्री धर्मदासगणीए पोताना पुत्रने बोध आपवा अर्थे अनेक जनोने उपकार करनारो तथा भव्यजीवोना कल्याण रूप आ सुखे बोध थाय तेवो ग्रंथ रच्यो छे.

प्रारंभमां धर्मदास गणीना पुत्र **रणसिंहनुं** कर्मनो क्षय करनारुं शुभ चरित्र कहुं छुं.

जंबूद्वीपने विषे भरतक्षेत्रमां समृद्धिवान **विजयपुर** नामनुं नगर छे. त्यां **विजयसेन** नामनो राजा राज्य करतो हतो. तेने **अजया** ने **विजया** नामनी बे राणीओ हती. तेमां विजया राणी नृपने अति वल्लभ हती. ते स्वपतिसाथे विषयसुखनो आनंद लेती सती गर्भवंती थइ. तेने गर्भवंती थयेली जोइने तेनी शोक अजयाने विचार थयो के–' मारे पुत्र नथी, तेथी जो विजयाने पुत्र थशे तो ते राज्याधिपति थशे.' एवुं विचारी तेणे द्वेषथी प्रसूतिकारिकोने बोलावी पुष्कळ धन आपीने कह्युं के–' ज्यारे विजयाने पुत्र थाय त्यारे कोइ मृत पुत्रने लावीने तेने बतावचो अने ते पुत्र मने आपवो.' ए प्रमाणे तेणे प्रसूतिकारिकानी साथे विचारप्रबंध कर्यो. त्यार पछी विजया राणीने पूर्ण मासे पुत्र जन्म्यो. ते समये पापी सूयाणीए[1] कोइ मृत बाळकने लावीने तेने बताव्यो, अने तेना पुत्रने तेनी शोक अजयाने स्वाधीन कर्यो. तेणे एक दासीने बोलावीने कह्युं के–' आ बाळकने वनने विषे कोइ अंध कूवामां नांखी आव.' दासी ते बाळकने लइ वनमां गइ अने कूवा समीप आवी, एटले तेने विचार थयो के– 'मने दुष्ट कर्म करनारीने धिकार

---

१ सूयाणी.

छे के हुं आ बाळकने मारी नांखवा तत्पर थइ छुं. आ मोटुं पाप छे. आ कृत्यथी मने कोइ प्रकारनी अर्थसिद्धि थवानी नथी; पण उलटो नरकादि गतिनी प्राप्ति थवा रूप अनर्थ तो उघाडो छे.' एवुं विचारी कूवाने कांठे घासवाळी जग्यामां ते बाळकने मूकी दइने ते पाछी आवी, अने अजया राणीने जणाव्युं के-' में ते बाळकने कूवामां नांखी दीधो.' पोतानी शोकना पुत्रने मारी नंखाववाथी अजयाने घणो हर्ष थयो.

ते अवसरे **सुंदर** नामनो एक कौटुंबिक[1] घास लेवाने माटे ते वनमां आव्यो. त्यां तेने पेला रोता बाळकने जोइने दया आवी, तेथी घणा हर्षथी घरे लावी ते बाळक पोतानी प्रियाने आपीने कह्युं के-' हे सुंदर लोचनवाळी स्त्री ! वनदेवताए आपणने आ मनोहर बाळक अर्पण करेल छे, तेथी तारे तेनुं पुत्रवत् रक्षण करवुं ने पालणपोषण करवुं.' ते पण तेनुं सम्यक् प्रकारे पालणपोषण करवा लागी अने रणने विषे मालूम पडवाथी तेणे ते बाळकनुं नाम **रणसिंह** पाड्युं. ते दिनप्रतिदिन बीजना चंद्रनी जेम वृद्धि पामवा लाग्यो.

हवे केटलाक दिवस पछी कोइए विजयसेन राजाने तेना पुत्रने मारी नंखाववानुं सर्व वृत्तांत कह्युं; तेथी तेने घणुं दुःख उत्पन्न थयुं. ते विचारवा लाग्यो के-' जेणे मारा पुत्ररत्नने मारी नंखाव्यो ते दुष्ट राणीने धिक्कार छे ! आ संसारस्वरूपने पण धिक्कार छे के जेनी अंदर रागद्वेषथी पराभव पामेला प्राणीओ स्वार्थवृत्तिने वश थइने आवां दुष्ट कर्म आचरे छे, तेथी एवा संसारमां रहेवुं तेज अघटित छे. आ लक्ष्मी चलित छे, प्राण पण चळ छे, आ गृहवास पण अस्थिर ने पाश रूप छे; तेथी प्रमाद छोडीने धर्मने विषे उद्यम करवो जोइए. कह्युं छे के 'संपदा जलना मोजाना जेवी चपल छे, यौवन त्रण चार दिवसनुं छे, आयुष्य शरदऋतुना वादळाना जेवुं चंचळ छे, तो धनथी शुं काम छे ? अनिंद्य एवो धर्मज करो.' वळी ''एवी कोइ कळा नथी, एवुं कोइ औषध नथी, अने एवुं कोइ विज्ञान नथी के जेथी काळसर्पे खवाती एवी आ कायानुं रक्षण करी शकाय !' आ प्रमाणे वैराग्यपरायण थयेला विजयसेन राजाए पोतानी प्रिया विजया तथा **सुजय** नामना तेना भाइ सहित पोताना कोइ वंशजने राज्य सोंपीने वीरभगवाननी पासे चारित्र अंगीकार कर्युं. भगवंते स्थविरोने सोंपी दीधा. अनुक्रमे विजयसेन नामना नवदीक्षित मुनि सिद्धांतना अध्ययने करीने महाज्ञानी थया. तेमनुं **धर्मदासगणि** एवुं नाम राखवामां आव्युं, अने तेना साळा सुजयनुं नाम **जिनदासगणि** राखवामां आव्युं.

अन्यदा भगवंतनी आज्ञा लइने बहु साधुओथी परवरेला तेओ पृथ्वीने विषे भव्य जीवोने बोध करता सता विहार करवा लाग्या.

---

१ कुटुंबवाळो, खेडुत.

हवे पेलो रणसिंह नामे बाळक बाल्यावस्थामां पण राजक्रीडा करतो सतो यौवनावस्था पाम्यो, अने सुंदरने घरे रहीने तेनां क्षेत्र संबंधी कार्यो करवा लाग्यो. तेना क्षेत्र समीपे चिंतामणि यक्षथी अधिष्ठित थयेलुं श्री पार्श्वनाथजीनुं चैत्य आवेलुं छे. त्यां विजयपुरना घणा लोको आवीने हमेशां श्रद्धा पूर्वक पूजा स्नान आदि करे छे अने तेओनां मनोवांछित ते यक्ष पूरा पाडे छे.

एक वखत कौतुक जोवाने अर्थे रणसिंह पण त्यां गयो. त्यां प्रतिमाना दर्शन करतो उभो हतो तेवामां चारणऋषिओ त्यां वंदना करवाने आव्या. रणसिंह पण तेओने वंदन करीने तेमनी पासे बेठो. मुनिए पण 'आ योग्य छे' एवुं जाणीने तेने धर्मनो उपदेश दीधो, ते आ प्रमाणे–

"आ संसारमां प्रथम तो मनुष्योने वालपणामां स्त्रीनी कुक्षिने विषे दुःख छे, त्यारपछी बाल्यावस्थामां पण शरीर मळथी खरडायेलुं रहे छे, तेमज स्त्रीनुं स्तनपान करवुं पडे छे, ते पण दुःख छे. तरुणवयमां विरहथी उत्पन्न थयेलुं दुःख भोगववुं पडे छे अने वृद्धावस्था तो तद्दन सुखरहितज छे; तेथी हे मनुष्यो! आ संसारमां कंइ पण सुख होय तो कहो." आ प्रमाणे सांभळीने रणसिंहे कह्युं के–'आपे कह्युं ते सत्य छे.' साधुए रणसिंहने धर्म उपर रुचिवाळो जाणीने पूछयुं के–'हे वत्स! तुं हमेशां आ प्रासादने विषे पूजा करवा आवे छे?' त्यारे तेणे जवाब आप्यो के–'हुं अहीं आवीने रोज पूजा करुं एवुं मारुं भाग्य क्यांथी?' साधुए कह्युं के–"जिनपूजानुं मोटुं फळ छे. कह्युं छे के–'सोगणुं प्रभुनी प्रतिमाने प्रमार्जन करवामां पुण्य छे, हजारगणुं विलेपन करवामां, लाखगणुं पुष्पनी माळा पहेराववाथी पुण्य छे अने गीत वाजित्रादिनुं अनंत गणुं पुण्य छे.' तेथी जो दररोज तुं पूजा करवाने असमर्थ हो तो देवदर्शन कर्या पछी भोजन लेवुं एवो अभिग्रह कर. एवा अभिग्रहथी पण तुं सुखनुं भाजन थइश." आ प्रमाणे सांभळीने रणसिंहे ते प्रमाणे अभिग्रह लीधो, अने चारणऋषिओ आकाशने विषे उत्पती गया.

हवे रणसिंह हमेशां ज्यारे क्षेत्रने विषे पोताने माटे भोजन आवे छे त्यारे हळ छोडीने कूरकरंबादि नैवेद्य लइने श्री पार्श्वनाथ प्रभुनां दर्शन करवा जाय छे अने पछी भोजन लेछे. ए प्रमाणे अभिग्रह पाळतां तेना बहु दिवसो निर्गमन थया. एक दिवस चिंतामणि यक्ष तेनी परीक्षा करवाने माटे सिंहनुं रूप लइने देरासरनां द्वारनी आडो बेठो. ते अवसरे रणसिंह कुमार पण नैवेद्य ग्रहण करीने जिनदर्शन करवाने माटे आव्यो; त्यां सिंहने जोइने ते विचार करवा लाग्यो के 'ग्रहण करेला नियमनो भंग तो प्राणांते पण करवो योग्य नहि. वळी जो आ सिंह छे तो हुं पण रणसिंह छुं. ए मने शुं करशे?'

ए प्रमाणे शुरवीरपणाथी तेणे सिंहने हाक मारी के 'छेटे खसी जा, मारे अंदर जवुं छे.' तेनुं आवुं साहस जोइने, ते सिंह अद्दश्य थयो. पछी जिनभक्ति करीने, रणसिंहे पोताना क्षेत्रे आवी भोजन कर्युं. एकदा त्रण दिवस सुधी अति मेघवृष्टि थइ, तेथी नदीमां पूर आववाने लीधे त्रण दिवस सुधी घेरेथी भात पण आव्यो नहि. चोथे दिवसे भात आव्यो, एटले जिनगृहे जइ नैवेद्य धरी जिनदर्शन करीने पोताना क्षेत्रे आवी विचार करवा लाग्यो के 'जो कोइ अतिथि आवे, तो तेने भावपूर्वक कांइक आपीने पछी पारणुं करुं.' एवो विचार करे छे, तेवामां वे मुनिओ भाग्यवशात् त्यां आवी चड्या. ते तेओने पगे लाग्यो अने शुद्ध अन्न वहोराव्युं. तेना मनमां घणो आनंद थयो, तेमज पोताने धन्य मानवा लाग्यो के 'अहो! आवे अवसरे मने साधुनां दर्शन थयां अने तेमनी भक्ति पण थइ.' तेना माहात्म्यथी चिंतामणि यक्ष प्रत्यक्ष थयो ने बोल्यो के–' हे वत्स! तारुं सत्य जोइ हुं संतुष्ट थयो छुं माटे तुं वरदान माग.' रणसिंहे कह्युं के–' हे स्वामी! आपनां दर्शन थयां तेथी मने तो नव निधि प्राप्त थइ छे, जेथी मने कांइ न्यूनता नथी.' त्यारे यक्षे कह्युं के–' देवदर्शन मिथ्या थतुं नथी, तेथी कांइक तो माग.' त्यारे तेणे कह्युं के–' मने राज्य आपो.' यक्षे कह्युं के–" आजथी सातमे दिवसे तने राज्यप्राप्ति थशे; पण तारे कनकपुर नगरने विषे **कनकशेखर** राजानी राणी **कनकमाळानी** पुत्री **कनकवतीनो** स्वयंवर थशे त्यां जरुर जवुं. हुं तने त्यां आश्चर्य बतावीश ते तुं जोजे. वळी हवे पछी जन्म पर्यंत तारे कंइ पण काम आवी पडे, तो मारुं स्मरण करवुं." आ प्रमाणे कही यक्ष अद्दश्य थयो. हवे रणसिंह कुमार बे नाना बळदने हळे जोडी, तेना उपर बेसीने कनकपुर आव्यो. त्यां अनेक राजकुमारो प्रथमथी मळेल हता. रणसिंह जरा दूर उभो रह्यो. ते अवसरे जेणे नूपुर तथा कंकण धारण कर्यां छे अने घणी चेटीओथी जे परिवृत थयेली छे एवी कनकवती स्वयंवरमंडपमां आवी. पछी बंने बाजुए बेठेला राजाओने जोती जोती, तेओने नहि पसंद करती ते ज्यां रणसिंह कुमार हळ तजीने खेडुतना वेषमां उभो छे त्यां गइ, अने तेना कंठने विषे वरमाळा आरोपी. ते जोइने सर्वना मनमां एक साथे क्रोध उत्पन्न थयो. तेओ कनकशेखरने ठपको आपवा लाग्या के ' हे राजन्! जो तारी इच्छा हालिक (खेडुत) ने पुत्री आपवानी हती, तो अमने बोलावीने तें शामाटे अमारुं अपमान कर्युं?' कनकशेखरे जवाब दीधो के 'तेमां मारो कांइ अपराध नथी. कारणके मारी पुत्रीए तेनी इच्छानुसार वर पसंद कर्यो, तेमां अयोग्य शुं कर्युं छे?' ए प्रमाणे सांभळीने सर्व कोपायमान थया अने लालचोळ थइ, आयुध धारण करी रणसिंहने घेरी लीधो, अने बोल्या के–' हे रंक! तुं कोण छे? तारुं कुळ कयुं छे?' रणसिंहे कह्युं के–' हाल कुळ कहेवानो अवकाश नथी, अने कदि जो हुं कहीश तोपण तमने विश्वास आवशे नहि; माटे संग्राम करवाथीज मारा कुळनी परीक्षा थशे.'

ए प्रमाणे सांभळीने सर्वे युद्ध करवाने सज्ज थया. रणसिंह पण हळ उपाडीने सामे धस्यो. परस्पर युद्ध थये सते देवप्रभाववडे हळना प्रहारथी सर्व राजाओ जर्जरीभूत थइने नासी गया. ते जोइने चमत्कार पामेला कनकशेखरे रणसिंह कुमारने विज्ञप्ति करी के– 'हे स्वामिन्! आपे मोटुं आश्चर्य बताव्युं छे तो हवे तमारुं रूप पण प्रकाशित करो.' ते वखत यक्षे प्रत्यक्ष थइने रणसिंह कुमारनुं सर्व चरित्र कही संभळाव्युं. ते सांभळीने कनकशेखर अति हर्षित थयो अने घणी धामधुमथी पोतानी पुत्रीनो विवाह कर्यो. बीजा सर्व राजाओनुं पण पहेरामणी आपवावडे सन्मान कर्युं. पछी तेओ पोतपोताने देश गया.

कनकशेखरे एक देशनुं राज्य जमाइने अर्पण कर्युं. एटले त्यां रहीने ते कनकवतीनी साथे विषयसुखनो अनुभव करवा लाग्यो. पछी सुंदर खेडुतने बोलावी तेने योग्य राज्यकार्यमां अधिकारी कर्यो.

ए अवसरे **सोमा** नामनी मोटी नगरीने विषे, **पुरुषोत्तम** नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने **रत्नवती** नामनी पुत्री हती. ते कनकशेखर राजानी बेननी पुत्री (भाणेज) थती हती. तेणे कनकवतीना पाणिग्रहणनो सर्व वृत्तांत जाण्यो. तेथी ते रणसिंह कुमारनी उपर अनुरागवाळी थइ, अने तेणे रणसिंह विना अन्य वर नहि वरवानो नियम लीधो. ए प्रमाणे पोतानी पुत्रीनी इच्छा जाणीने, पुरुषोत्तम राजाए पोताना प्रधानपुरुषोने रणसिंह कुमारने बोलाववा मोकल्या. त्यां जइने तेओए आमंत्रण कर्युं, एटले रणसिंहे जवाब आप्यो के 'ए सघळुं कनकशेखर जाणे, हुं कांइ जाणतो नथी.' एटले प्रधान पुरुषोए कनकशेखरने विदित कर्युं; त्यारे तेणे विचार्युं के 'मारी भाणेजनो विवाह करी आपवो ए मने उचित छे.' ए प्रमाणे चिंतवी रणसिंह कुमारने बोलावीने कह्युं के 'तमे रत्नवतीना पाणिग्रहणमाटे जाओ.' तेणे ते कबुल कर्युं. पछी मोटा परिवार साथे रत्नवतीने परणवा माटे जतां मार्गमां **पाडलीखंड** नगरनी समीपना उपवनमां चिंतामणि यक्षना देरा पासे ते आव्यो. एटले यक्षमंदिरमां जइने तेणे यक्षने प्रणाम कर्या. त्यां तेनी जमणी आंख फरकी, एटले ते मनमां चिन्तवन करवा लाग्यो के 'अहीं कोइ इष्टनो मेळाप थशे.' ते समये पाडलीखंड नगराधीश **कमलसेन** राजानी राणी **कमलिनी**नी कुक्षिने विषे उत्पन्न थयेली **कमलवती** नामनी कुंवरी सुगंधी पदार्थो तथा पुष्प विगेरे पूजानी वस्तुओ लइने, **सुमंगला** दासी सहित ते यक्षना मंदिरमां आवी. त्यां रणसिंह कुमारने जोइने ते कामविह्वल थइ गइ. कुमार पण तेने जोइने मोहित थयो. तेओ बंने नेत्रनुं मटकुं पण मार्या शिवाय, एकीनजरे परस्परने सस्नेह जोतां उभां रह्यां. पछी कमलवतीए यक्षनी पूजा करीने प्रांते प्रार्थना करी के–'स्वामिन्! तमारी कृपाथी आ पुरुष मारो भर्ता थाओ. एना दर्शनथी हुं तेना पर अति रागवती थइ छुं. माटे तमे

प्रसन्न थइने ए राजकुमारने मारा भर्तारपणे आपो.' त्यारे यक्षे कह्युं के–'हे बाला! आ राजपुत्र हुं तने अर्पण करुं छुं. एनी साथे तुं इच्छानुसार संसारनुं सुख भोगव.' ए प्रमाणे सांभळीने तेने घणो आनंद थयो. पछी कमलवती सेवकद्वारा तेनुं नाम विगेरे पूछीने, स्नेहदृष्टिथी तेने फरीफरीथी जोती पोताने घरे गइ. कुमार पण पोताना मुकामे आव्यो. बीजे दिवसे पण कमलवती पूजा करवाने आवी. कुमारे तेने जोइ. पूजा कर्या बाद वीणावादन पूर्वक संगीत करीने ते घरे गइ. कुमार तेनुं गान तथा वीणानो स्वर सांभळीने मनने विषे चिंतववा लाग्यो के 'जो आ बालाने परणुं तोज मारो जन्म सफल छे, नहितो आ जीवितथी शुं?' ए प्रमाणे तेना रागे वाह्यो सतो त्यांज रह्यो. मुकाम उपाड्यो नहि. एकदा पुरुषोत्तम राजाना प्रधानोए आवीने विज्ञप्ति करी के 'स्वामिन्! अत्र विलंब करवानुं शुं कारण छे?' कुमारे कह्युं के–'मारे अहीं कांइ काम छे, तमे आगळ जाओ, हुं तमारी पाछळ जलदीथी आवुं छुं.' ए प्रमाणे कुमारनो उत्तर सांभळीने तेओ सोमापुरीए पुरुषोत्तम राजा समीपे गया अने कुमार पाछळ आवे छे एम कह्युं. हवे रणसिंह कुमार तो कमलवतीना रूपथी मोहित थइने त्यांज रहेलो छे. ते अवसरे एक भीम राजानो पुत्र पण कनकसेन राजानी सेवा करे छे, ते कमलवतीनुं रूप जोइने तेना पर मोहित थयो छे; परंतु कमलवती तेने जरा पण इच्छती नथी. एक वखत कमलवतीने यक्षपूजाने अर्थे गयेली जाणीने ते भीमपुत्र तेनी पछवाडे गयो. तेणे धार्युं के 'ज्यारे ते यक्षप्रासादमांथी बहार नीकळशे, त्यारे हुं मारा मननी सर्व अभिलाषा तेने जणावीश.' ए प्रमाणे विचार करतो सतो ते द्वारमांज उभो रह्यो. कमलवतीए पण तेने जोयो, एटले तेणे सुमंगला दासीने कह्युं के–'आ पुरुष जे द्वारने विषे उभो छे ते जो अंदर आवे तो तेने तारे रोकवो.' ए प्रमाणे कहीने ते मंदिरनी अंदर गइ अने दासीने द्वार पासे उभी राखी. पछी एकांते जइ एक जडी कान उपर बांधवाथी पुरुषरूपे थइने ते प्रासादना द्वार पासे आवी. त्यारे कुमारे तेने पूछ्युं के–'हे देवपूजक! कमलवती हजु केम बहार आवी नहि?' त्यारे तेणे कह्युं के–'में तो आ दासीने एकलीनेज प्रासादने विषे जोइ छे, बीजी कोइ पण स्त्री अंदर नथी.' ए प्रमाणे कहीने ते पोताने घेर आवी. पछी कर्ण उपरथी जटिकाने दूर करी एटले मूळरूपे थइ गइ. पाछळ भीमपुत्रे प्रासादनी अंदर घणी तपास करी, पण कमलवतीने नहि जोवाथी ते खिन्न थइने पोताने स्थाने गयो. सुमंगला दासी पण घेर आवी. त्यां कमलवतीने जोइने तेणे पूछ्युं के–'हे स्वामिनी! तमे अहीं केवी रीते आव्यां? में तमने बहार नीकळतां तो जोयां नहि.' त्यारे तेणे जटिकानुं सर्व स्वरूप कही बताव्युं. ते वखते दासीए कह्युं के–'हे स्वामिनी! एवी जटिका तमने क्यांथी मळी?' कमलवतीए कह्युं के–"सांभळ, पूर्वे हुं एक वखत यक्षने मंदिरे गइ हती. ते वखते त्यां एक विद्याधर ने

विद्याधरीनुं जोडुं आव्युं हतुं. मने जोइने विद्याधरी मनमां चिंतववा लागी के 'जो आ अद्भुत रूपवाळी स्त्रीने मारो पति जोशे तो ते तेना रूपथी मोहित थइ जशे.' एवुं धारीने हुं न जाणुं तेम तेणे मारा कर्ण उपर एक जटिका बांधी दीधी. हुं यक्षनी पूजा करवाने माटे गइ त्यां मारा पुरुषवेषने जोइने हुं विस्मित थइ, अने सर्व शरीरने अवलोकतां एक जटिका कर्णउपर जोवामां आवी. ते जटिका दूर करी एटले हुं मूळरूपमां आवी. त्यारपछी ते जटिकाने आदरथी ग्रहण करीने में मारी पासे राखी छे. तेना प्रभावथी पुरुषवेष धारण करीने हुं आज यक्षप्रासादमांथी बहार नीकळी हती." ए प्रमाणे कमळवतीए पोतानी दासीने जटिकानुं स्वरूप निवेदन कर्युं.

हवे भीम राजाना पुत्रे तेने माटे घणा उपायो कर्या, परंतु एक पण उपाय कामे लाग्यो नहि. त्यारे तेणे कमळवतीनी माताने पोतानो अभिप्राय जणाव्यो. तेणे विचार कर्यो के 'आ महान राजपुत्र छे तो आनी साथे मारी पुत्रीना लग्न थाय तो ते युक्त छे.' ए प्रमाणे विचारीने तेणे पोताना स्वामीने ते हकीकत निवेदन करी. तेणे पण ते कबुल कर्युं. बीजे दिवसेज लग्न लीधां. ज्यारे कमलवतीए ते वार्त जाणी, त्यारे तेने घणुं दुःख उत्पन्न थयुं; तेथी ते खाती नथी, सुती नथी, बोलती नथी अने हसती पण नथी. ते मनमां विचार करे छे के 'ते यक्षनी पासेज जइने तेने उपालंभ दइने तेनोज आश्रय लउं, ते शिवाय मारी बीजी गति नथी.' आ प्रमाणे विचारीने रात्रिए गुप्त रीते नीकळी यक्षमंदिरमां आवीने तेने ओळंभो आपवा लागी के "हे यक्ष! तमारा जेवा मुख्य देवोनुं वचन अन्यथा नीवडे ए घटित गणाय नहि. कारणके सत्पुरुषोने तो एकज जीभ होय छे. कह्युं छे के 'सत् पुरुषोने एक, सर्पने बे, प्रजापतिने चार, अग्निने सात, कार्तिक ऋषिने छ, रावणने दश, शेषनागने बे हजार अने दुर्जनोना मुखमां हजारो ने लाखो जीभ होय छे.' जोके ए प्रमाणे छे छतां तमारी वाणी अन्यथा नीवडी. परंतु मारो जीव तो मारा हाथमां छे." ए प्रमाणे कहीने रणसिंह कुमारना मुकामनी पासे जइ मोटा वृक्षने विषे गळेफांसो बांधीने बोली के—"हे वनदेवताओ! मारुं वचन सांभळो; में रणसिंह कुमारने परणवानी इच्छाथी आ चिंतामणि यक्षनुं बहु रीते आराधन कर्युं. तेणे मने वचन पण आप्युं परंतु पाळ्युं नहि, तेथी हुं आत्मघात करुं छुं. जो आ भवने विषे ए मारा पति न थया तो आवता भवने विषे ते मारा वल्लभ थाओ." ए प्रमाणे बोली वृक्ष उपर चडीने कंठमां फांसो नांखीने लटकी रही. तेवामां सुमंगला दासी तेने पगले पगले त्यां आवी. तेणे कमलवतीनी ए प्रकारनी अवस्था जोइने शोरबकोर करी मूक्यो. ते सांभळीने रणसिंह कुमार पोताना सुमित्र मित्र सहित त्यां सत्वर आव्यो. दासीए गळानो फांसो छेदी नाख्यो, एटले कमळवती बेशुद्ध अवस्थामां नीचे पडी. शीत पवन विगेरेना

उपचारथी ते स्वस्थ थइ, त्यारे कुमारे पूछ्युं के–'हे सुंदरी ! तुं कोण छे? तें शामाटें गळे फांसो नाख्यो हतो? तें आ साहस शा हेतुए कर्युं ?' सुमंगळाए उत्तर आप्यो के–"स्वामिन्! शुं हजु आपे आने न ओळखी ? तमारामां जेनुं चित्त लीन थयुं छे एवी आ राजपुत्री कमळवती छे. तेना पिताए तेने भीम नृपना पुत्रने आपवाथी ते आत्मघात करीने मरण पामवा इच्छती हती, तेनुं में गळाफांसो कापी नांखी रक्षण कर्युं छे." ते सांभळीने रणसिंह कुमार अति हर्षित थयो. त्यारपछी सुमित्र बोल्यो के–'हे मित्र ! कयो क्षुधातुर माणस मिष्ट अन्न खावानुं मळते सते विलंब करे ? ते माटे आ बाळानुं पाणिग्रहण करीने तेनो मन्मथसमुद्रमांथी उद्धार करो.' ए प्रमाणेनुं मित्रनुं कथन सांभळीने रणसिंहे तेज वखते तेनी साथे गांधर्व लग्न कर्युं. कमलवती पण मनमां अति आनंदित थइ. पछी कमळवती रात्रिएज सुमित्रनी साथे पोताने घेर आवी. ते समये विवाहकार्यना अति हर्षमां पोताना कुटुंबपरिवारनुं मन व्यग्र छे, एवुं जाणीने कमलवतीए पोतानो स्त्रीवेष सुमित्रने पहेराव्यो, अने पोते पुरुषवेष धारण करीने रणसिंह कुमारनी समीपे गइ. कुमारे पण तेने स्नेह-दृष्टिथी बे हस्तवडे गाढ आलिंगन करीने पोतानी पासे बेसाडी.

हवे लग्न वखते भीमपुत्र हाथी उपर स्वारी करीने मोटा आडंबरथी परणवा आव्यो; अने महोत्सव पूर्वक कमळवतीनो वेष जेणे धारण कर्यो छे एवा सुमित्रनी साथे पाणिग्रहण करी तेने लइने पोताने स्थाने आव्यो. पछी कामना आवेशथी कोमल आलाप पूर्वक नवीन वधूने पुनः पुनः बोलाववा लाग्यो; पण ते जरा पण बोलती नथी; चूप थइने बेसी रही छे. अति कामना आवेशमां तेणे हस्तवडे तेना अंगनो स्पर्श कर्यो. ते स्पर्शथी ते तो पुरुष छे एवुं जाणीने तेणे पूछ्युं के–'तुं कोण छे?' तेणे उत्तर आप्यो के–'हुं तारी वधू छुं.' कुमारे पूछ्युं के–'तुं वधू क्यां छे ? तारा देहस्पर्शथी जणाय छे के तुं पुरुष छे.' त्यारे वधूनो वेष धारण करनार सुमित्रे जवाब आप्यो के–'हे प्राणनाथ ! आ शुं लवो छो ? शुं तमे तमारुं चेष्टित प्रकट करो छो? विवाहना उत्सवथी परणेली एवी मने चेटकविद्याथी पुरुषरूप करो छो; तेथी हुं हमणा मारा पिता पासे जइने कहीश के– हुं कुमारना प्रभावथी पुत्रीपणाने तजी दइने पुत्र थइ छुं'. ए प्रमाणे बोलवाथी 'आ केम बन्युं ?' एम विचारतो भीमपुत्र व्यग्र चित्तवाळो थयो. ते अवसरे स्त्रीवेष धारण करनार सुमित्र रणसिंह कुमार पासे आव्यो, अने रात्रिनुं सर्व वृत्तांत कह्युं. ते कौतुक सांभळीने तेओ सर्व हस्तताली दइने हसवा लाग्या.

अहीं भीमपुत्रे कनकसेन राजा पासे आवीने कह्युं के–'मारी साथे तमारी जे पुत्रीना लग्न थया ते तो पुत्र देखाय छे.' ते सांभळीने तेना सासु ससराए कह्युं के–"शुं आ जमाइ गांडो थइ गयो छे के आ प्रमाणे लवे छे ? अथवा शुं भुतथी आवेशवान

थयो छे के जेथी आ प्रमाणे असंबंध बोले छे? एकज भवने विषे जीव स्त्रीपणुं तजी दइने पुरुषत्व प्राप्त करे, एवा प्रकारनी प्रवृत्ति कोइ दिवस थइ नथी अने थशे पण नहि, तेमज एवी वात सांभळवामां पण आवी नथी. तेम आ जमाइ पण असत्य शामाटे बोले? माटे ए पुरुषवेषे कोइ धूर्त देखायछे." ए प्रमाणे कही राजाए कमळवतीनी सर्वत्र शोध करावी, पण तेनो पत्तो कोइ जग्याए मळ्यो नहि. त्यारे राजा अति शोकातुर थइ गयो, अने राणी पण पुत्रीना मोहने लीधे रुदन करती सती सेवको प्रत्ये कहेवा लागी के 'जे कोइ मारी पुत्रीने लावी आपशे तेनी अभिलाषा हुं पूर्ण करीश.' तेथी सेवको पण सर्वत्र भम्या, परंतु पत्तो न लागवाथी खिन्न थइने पाछा आव्या.

प्रातःकाले पत्तो मेळवेला कोइ पुरुषे कनकसेन राजा पासे आवीने कह्युं के–'हे स्वामिन्! में कमळवतीने लग्नवेषमां रणसिंह कुमारना मुकामे क्रीडा करती जोइ छे.' ते सांभळीने क्रोधथी जेनां नेत्रो लालचोळ थइ गयां छे एवो कनकसेन राजा भीमपुत्र सहित मोटुं लश्कर लइने त्यां आव्यो, अने रणसिंह कुमारनी साथे युद्ध आरंभ्युं. रणसिंह पण सिंहनी माफक युद्ध करवा लाग्यो. रणसिंह कुमारे पोते एकलो छतां देवनी सहायथी भीमपुत्र सहित कनकसेन राजाने जीती लइने तेमने पकडी लीधा. ते वखते कमळवतीनी दासी सुमंगळाए आवीने सर्व वृत्तांत जणाव्यो. पछी कमळवती पण आवी अने पिताने प्रणाम करी बे हाथ जोडी उभी रही. कनकसेन राजाए भीमपुत्रनुं सर्व स्वरूप सांभळ्युं; तेथी तेनापर क्रोधायमान थइने तेनो घणो तिरस्कार कर्यो. कमळवतीए भीमपुत्रने पण छोडावी मूक्यो. कनकसेन राजा रणसिंह कुमारनुं कुल, धैर्य विगेरे जाणीने अति हर्षित थयो. पछी मोटा आडंबरथी कमलवतीनो विवाह कर्यो. हस्तमेळाप समये घणा हाथी घोडा विगेरे आप्या. रणसिंह पण त्यां चिरकाळ सुधी रह्यो. त्यारपछी कमलवतीने लइने पोताने देश पाछो फर्यो; अने कनकवती तथा कमलवतीनी साथे विषयसुख भोगवतो सुखमां काळ निर्गमन करवा लाग्यो.

अहीं सोमापुरीने विषे पुरुषोत्तम राजानी पुत्री रत्नवती विचार करवा लागी के– "अरे! मारा पाणिग्रहण अर्थे अहीं आवतां रणसिंह कुमार रस्तामां कमळवतीने परण्या अने तेनामां अति लुब्ध थया, एटलुंज नहि पण ते मारा वल्लभे मने एवी विस्मृत करी दीधी के जेथी अहीं मने परणवाने पण आव्या नहि. हमणा तो ते कमलवती विना बीजा कोइ तरफ नजर पण करता नथी; तेथी तेणे कांइ कामण कर्युं होय एम जणाय छे. भर्तानुं हृदय कमळवतीना स्नेहथी अति भरपूर थयेलुं देखाय छे के जेथी मारा स्नेहनो तेमां अवकाश थइ शकतो नथी. परंतु हुं त्यारे खरी के ज्यारे कोइ पण उपाये करी तेना उपर कलंक चडावीने तेना उपरथी भर्तारना चित्तने उतारी नखावुं."

ए प्रमाणे विचार करीने तेणे पोतानी माताने ए वात जणावी. तेणे पण ' तारी इच्छानुसार कर ' एवी रजा आपी. पछी त्यां एक दुष्ट **गंधमूषिका** नामनी कामण तथा वशीकरण विगेरेमां कुशळ एवी स्त्री रहेती हती. तेने बोलावीने रत्नवतीए कह्युं के–' हे माता ! तुं मारुं एक कार्य कर, ते कार्य ए छे के रणसिंह कुमार कमळवतीना उपर अति लुब्ध थयेला छे, तेथी एवुं करो के जेथी तेने कलंकथी दूषित मानीने कुमार घरमांथी काढी मूके. ' ते सांभळीने परिव्राजिकाए ते वात कबूल करी अने बोली के–'एमां ते शुं मोटुं काम छे ? ते हुं अल्प काळमां करीश.' ए प्रमाणे वचन आपीने ते थोडा दिवसमां रणसिंह कुमार हता ते नगरमां आवी. त्यां ते अंतःपुरमां कनकवतीना मंदिरमां गइ, अने तेने रत्नवतीना कुशल समाचार विगेरे निवेदन कर्युं. रत्नवतीना तरफथी समाचार लावेली होवाथी कनकवतीए तेने सन्मान आप्युं. पछी ते हमेशां अंतःपुरमां जवा लागी, अने कुतुहल विनोद विगेरे वार्ता करवा लागी; ते कमलवतीनी साथे विशेष वातचित करती हती, अने जेम कमलवतीनो तेना पर वधारे विश्वास उत्पन्न थाय तेम करती हती. दररोज जवा आववानुं करतां तेणे एक दिवस कूट विद्याथी कमलवतीना मंदिरने विषे परपुरुषने आवतो कुमारने बताव्यो. पण तेना मनमां जराए आव्युं नहि; ते तो विचार करवा लाग्यो के ' कमलवतीनुं शील सर्वथा निष्कलंकित छे. ' ए प्रमाणे घणीवार परपुरुषने आवतो जोवाथी कुमारे विचार्युं के ' शुं कमळवती शीलथी खंडित थइ हशे? के जेथी हुं हमेशां तेना मंदिरमां परपुरुषने आवतो जतो प्रत्यक्ष जोउं छुं. ' तेणे कमलवतीने पूछ्युं के–' हुं हमेशां तारा मंदिरने विषे परपुरुषने आवतो जोउंछुं तेनुं शुं कारण ? ' ते सांभळी कमळवती बोली के–' हे प्राणनाथ ! हुं कंइ पण जाणती नथी. ज्यारे तमे परपुरुषना संचारनुं स्वरूप पूछो छो त्यारे ते मारां कर्मनो दोष छे. ज्यारे तमे एवुं जुओछो त्यारे हुं जरुर मंदभाग्यवती छुं. माटे जो आ पृथ्वी मार्ग आपे, तो तेना विषे समाइ जाउं के जेथी एवुं अश्राव्य[1] वचन सांभळवुं न पडे. ' आ प्रमाणे उत्तर सांभळीने कुमार विचार करवा लाग्यो के–' खरेखर ए भूत आदिनुं विलसित जणाय छे. आनामां कोइ पण प्रकारनी कुचेष्टा जणाती नथी. जोके सुंदर भ्रकुटीवाली स्त्री यौवनावस्थामां तीक्ष्ण कटाक्ष फेंकीने परना मनने मोहित करेछे, परंतु ते पुरुषोनी साथे हमेशां संगम केवी रीते संभवे ? तेमां पण विशेषे करीने अंतःपुरने विषे तो ते संभवेज नहि. केमके अकाल मृत्युनो अभिलाषी एवो कोण अहीं हमेशां आवे ? ए प्रमाणे विचार करवाथी कुमारने ते सत्य जणायुं नहिं, पण मननी अंदर शंकायुक्त रह्यो; तेथी कांइक स्नेह तो घट्यो. पेली दुष्टाए विचार कर्यो के–' हजु पण आनुं चित्त तेना उपरथी विरक्त थयुं नहि, तेथी हवे बीजा उपायथी तेमना स्नेहनो

१ न सांभळवा योग्य.

भंग करुं.' एवुं धारीने तांबूलभोजनना उपाये करी मंत्रचूर्णादिनो योग करीने तेणे कुमारनुं मन विरक्त कर्युं. कुमारनुं मन जे पूर्वे कमलवतीना उपर गाढ प्यारमां लग्न हतुं तेने मंत्रचूर्णादिना प्रयोगथी तेना प्रत्ये ज्वलायमान कर्युं. कुमार लोकापवादथी डरीने विचार करवा लाग्यो के ' आ कमलवतीने तेना पिताने घरे मोकली दउं, अहीं राखवा लायक नथी. ' ए प्रमाणे विचारीने तेणे सेवकोने बोलावी आज्ञा करी के 'तमे कमलवतीने रथमां बेसारीने तेना पिताने घेर मूकी आवो. ' ए प्रमाणे सांभळीने सेवको विचार करवा लाग्या के–' आ आवुं अघटित केम करेछे ? पण आपणने तो स्वामीनुं वाक्य उल्लंघन न थइ शके तेवुं छे. ' ए प्रमाणे विचारीने तेओ कमलवतीनी पासे आवी बोल्या के–' हे स्वामिनी ! तमारा पति वाटिकाने विषे गयेला छे ने तमने त्यां बोलावे छे, माटे रथमां बेसीने शीघ्र चालो. ' ए प्रमाणे असत्य बोलीने तेओए तेने रथमां बेसारी. ते वखते कमलवतीनी जमणी आंख फरकी, तेथी ते विचारवा लागी के–' अत्यारे शुं अशुभ थशे ? पण स्वामी मने बोलावेछे माटे जरुर जवुं, जे बनवानुं होय ते बनो. ' ए प्रमाणे विचारी व्यग्र चित्ते ते रथमां बेसी. सेवकोए रथने सत्वर चलाव्यो. कमलवतीए पूछ्युं के–' मारा स्वामीथी अलंकृत थयेलुं उपवन केटलुं दूर छे ? ' त्यारे सेवके उत्तर आप्यो के–' वन क्यां अने तमारो स्वामी पण क्यां ? कुमारे तमारा पिताने घेर तमने मूकी आववानी अमने आज्ञा आपी छे. ' कमलवतीए कह्युं के–" भले, ज्यारे कुमारे आवुं वगरविचार्युं तेमज परीक्षा कर्या विनानुं कार्य कर्युं छे तो पछवाडेथी तेने घणो पश्चात्ताप थशे, बाकी मारे तो जे कर्म उदयमां आवी पड्युं ते भोगववुंज जोइए. कह्युं छे के ' करेला कर्मोनो क्षय करोडो वर्षे करीने पण थतो नथी. शुभ वा अशुभ जे कर्म कर्युं होय, ते अवश्य भोगववुंज पडे छे. ' परंतु हुं निरपराधी प्रत्ये आ शुं आचर्युं ? " आ प्रमाणे विचारती ते थोडा दिवसमां पाडलीखंडपुर समीपे आवी पहोंची. एटले कमलवती बोली के—'हे सारथी ! तुं अहींथीज रथने पाछो वाळ. हवे अहीं तारुं कंइ काम नथी. आ स्थानथी हुं परिचित छुं. अहींआंथी सन्मुखज पाडलीखंडपुरनुं उपवन देखाय छे, तेथी हुं एकली सुखेथी जइश. ' ए प्रमाणे सांभळी सारथी प्रणाम करीने आंखमा अश्रु लावी बोल्यो के—" हे स्वामिनी ! तमे साक्षात् शील रूपी भूषणने धारण करनारा लक्ष्मी छो, ने हुं अधम आज्ञानो करवावाळो कर्मचंडाळ छुं, के जेथी तमने अरण्यमां तजी दउंछुं. दुष्ट कर्म करनार एवा मने धिक्कार छे! " ए प्रमाणे बोलता सारथीने कमलवतीए कह्युं के—' हे सत्पुरुष ! आमां तारो अपराध नथी. जे सेवक छे ते तो स्वामीनी आज्ञा प्रमाणे करेज छे. पण ते मंदभाग्यवंतने मारुं एक

वचन कहेजे के 'शुं आ कार्य कुलोचित करेलुं छे?' ए प्रमाणे सांभळ्या बाद कमलवतीने वट तरुनी नीचे मूकीने सारथी रथ लइने पाछो वळ्यो. पछी एकाकी कमलवती रोती ने विलाप करती बोलवा लागी के-"हे विधाता! तें आ अति क्रूर कार्य शुं आचर्युं? अकाळे वज्र पडवा रूप प्रियना वियोगथी उत्पन्न थतुं दुःख तें मने शामाटे आप्युं? में तारो शो अपराध कर्यो हतो? आ दुःख तो सर्व सहन थइ शके तेम छे, परंतु असत्य कलंक चडावीने भर्ताए मने घरमांथी काढी मूकी छे; तेथी मने महद् दुःख थाय छे. हुं शुं करुं? क्यां जाउं? हे माता! अहीं आवीने दुःखदावाग्निथी वळती तारी पुत्रीनुं रक्षण कर. अथवा तुं आवती नहि, कारण के मारुं दुःख जोइने तारुं हृदय फाटी जशे. हुं मंदभाग्यवती छुं. कारण के हुं कुमारावस्थामां पिताने वर शोधवानी चिंतानुं कारण थइ हती. पाणिग्रहण वखते पिताने वंधन विगेरेनुं कष्ट प्राप्त कराव्युं हतुं. अत्यारे पण आ स्थिति सांभळीने ते पण दुःखी थशे." आ प्रमाणे अनेक रीते विलाप करती सती मनने विषे विचार करवा लागी के-'प्रथम मारा स्वामीए मारा शीलनी सारी रीते परीक्षा करी हती. परंतु एवुं जणाय छे के कोइ निष्कारण वैरीए अथवा भूतराक्षस विगेरेए इंद्रजाळनुं स्वरूप बतावीने मारा स्वामीनुं मन व्युदग्राहित करी नांख्युं छे. तेथी हमणा कलंकयुक्त मारे पिताने घेर जवुं सर्वथा युक्त नथी. हमणां तो जटिकाना प्रभावथी पुरुष रूप धारण करीने रहुं. कारणके पाका बदरी फळना जेवा स्त्रीशरीरने जोइने कोण भोगववानी इच्छा न करे? कह्युं छे के "तळावनुं पाणी पीवाने, तांबूल खावाने अने यौवनावस्थामां स्त्रीना शरीरने जोवाने कोण उत्सुक न थाय?" मारे तो प्राणत्यागथी पण शीलनुं रक्षण करवुं ते श्रेष्ठ छे. कारणके आ संसारमां शील शिवाय बीजो परम पवित्र अने निष्कारण मित्र नथी. कह्युं छे के-"शील ए निर्धननुं धन छे, अलंकाररहितनुं आभूषण छे, विदेशने विषे परम मित्र छे, अने आ भवमां तथा परभवमां सुख आपनारुं छे." वळी शीलना प्रभावथी प्रज्वलित अग्नि शांत थइ जाय छे अने सर्प आदिनो भय नाश पामी जायछे. आगममां पण कह्युं छे के-"देव, दानव, गंधर्व, यक्ष, राक्षस अने किन्नर विगेरे ब्रह्मचारीने नमस्कार करे छे, कारणके ते दुष्कर कार्यना करनार छे." वळी "कोइ क्रोडोगमे सोनैयानुं दान दे अथवा सोनानुं जिनभुवन करावे तो पण जेटलुं पुण्य ब्रह्मव्रत धारण करनारने थाय छे तेटलुं तेने थतुं नथी."

आ प्रमाणे विचार करीने ते जटिकाना प्रभावथी ब्राह्मणनो वेष धारण करीने पाडलीखंडपुरथी पश्चिम दिशाए आवेल चक्रधर नामना गामनी समीपे चक्रधर देवताना मंदिरमां पूजारीपणे रही, अने सुखे काळ निर्गमन करवा लागी.

हवे सारथीए रणसिंह कुमार पासे जइने कमलवती संबंधी सर्व वृत्तांत कह्युं, ते सांभळीने ‘ आ सर्व गंधमूषिकाना मंत्रादिनुं माहात्म्य छे ’ एवुं जाणी कुमार अत्यंत पश्चात्ताप करवा लाग्यो के–“ में अधमे कुळने अनुचित एवुं आ शुं आचर्युं ? के जेथी निर्दुषण एवी प्राणप्रियाने कलंक चडाव्युं. ते मारी प्राणप्रिया कमळाक्षी कमलवती शुं करती हशे ? हुं शुं करुं ? तेना विना सर्व शून्य लागे छे. ‘ दीप छतां, अग्नि छतां तथा नाना प्रकारना मणि छतां एक ते मृगाक्षी विना आ जगत् बधुं अंधकारमय लागे छे.’ कोण जाणे ते मारी वल्लभा हवे मने क्यारे मळशे ? अधन्य एवो हुं लोकोने मुख शीरीते बतावी शकीश ? मने धिक्कार छे ! जे हृदयने विषे एवो माठो विचार आव्यो ते मारुं हृदय फूटी केम गयुं नहि ? अने ते मारी जीभ शतखंड केम थइ गइ नहि, के जेणे तेने वनमां मूकी आववानी रजा आपी? आ प्रमाणेनुं अकार्य करतां मारा माथा उपर ब्रह्मांड केम त्रुटी पड्युं नहि ? अरे ! वगरविचारे करेलुं कार्य महा अनर्थने माटेज थाय छे. नीतिशास्त्रमां पण कह्युं छे के–“ कोइ पण कार्य सहसा करवुं नहि, कारणके सहसा कार्य करनार अविवेकी परम आपदानुं स्थान थाय छे, अने विचारीने काम करवावाळा गुणलुब्ध प्राणीओ स्वयमेव संपदाने पामे छे. ” पण हवे आ प्रमाणे शोच करवाथी शुं ? विचारवानी जरुर ए छे के आ कार्य कोनाथी थयुं ?” ए प्रमाणे विचार करता तेणे गंधमूषिका जती रह्याना खबर सांभळ्या, एटले ‘ खरेखर आ कार्य तेणेज करेलुं छे ’ एम निः–श्वास पूर्वक विचारवा लाग्यो.

हवे गंधमूषिकाए सोमापुरी जइने रत्नवती पासे कुमारनुं बधुं स्वरूप तथा कमलवतीनुं पण स्वरूप कही बताव्युं. रत्नवती हर्षवती थइ. पछी तेणे पोताना पिता पुरुषोत्तम राजाने कह्युं के–‘ हे स्वामिन् ! रणसिंह कुमारने तेडावो. ’ एटले पुरुषोत्तम राजाए पण कुमारने बोलाववाने कनकपुर कनकशेखर राजानी पासे पोताना सेवको मोकल्या. तेओए त्यां जइने कह्युं के–“ हे स्वामिन् ! रणसिंह कुमार रत्नवतीनुं पाणिग्रहण कर्या वगर रस्तेथीज पाछा वळ्या ए घणुं अनुचित कर्युं छे, तेणे अमने लज्जित कर्या छे; परंतु रत्नवती तो तेमना विषे एकचित्तवाळीज रही छे. तेथी हवे तेना पाणिग्रहण अर्थे कुमारने मोकलो.” कनकशेखरे कुमारने बोलावी आज्ञा करी के–‘ रत्नवतीना विवाहमाटे जाओ.’ कमळवतीना विरहथी जोके तेनुं मन व्यग्र हतुं, तोपण पिताना आग्रहथी तेणे कबुल कर्युं. शुभ दिवसे सैन्यसहित चाल्या. शुभ शकुन जोइ प्रयाण करतां पाडलीखंडपुर समीपे आव्या. एटले प्रियानी शोध माटे फरतां फरतां चक्रधर गामनी समीपना उद्यानमां आवी, त्यां तंबू नांखी पडाव कर्यो. कुमार चक्रधर

देवनी पूजा करवा चाल्या, ते वखते तेमनी जमणी चक्षु फरकी, तेथी ते विचारवा लाग्योके–'आज कोइ इष्टनो संयोग थशे, परंतु कमळवती विना मने बीजुं कंइ इष्ट नथी; तेथी जो ते मळी आवे, तो खरो इष्ट लाभ प्राप्त थयो मानुं.' ए प्रमाणे विचारे छे, तेवामां पुष्पबटुक रुपधारक कमळवतीए पुष्प लावीने कुमारना हस्तमां मूक्यां. कुमारे तेने योग्य मूल आप्युं. पछी पुष्पबटुके विचार्युं के–'आ रणसिंह कुमार रत्नवतीना पाणिग्रहणार्थे जता जणाय छे.' कमळवती कुमारने जोइ अति हर्षित थइ. कुमार पण पुष्पबटुक रूप धरनारी कमळवतीने पुनः पुनः जोतो सतो विचार करवा लाग्यो के–'आ मारी प्राणवल्लभा कमलवतीना जेवो देखाय छे. एने जोईने मारुं मन अति प्रफुल्लित थाय छे.' ए प्रमाणे चिन्तन करतो विस्मयथी तेने पुनः पुनः जोतां पण तृप्त थयो नहि. कमळवती पण स्नेह करीने पोताना प्रियने निरखवा लागी. पछी कुमार बटुकने साथे लइने पोताना मुकामे आव्यो, अने भोजन विगेरेथी भक्तिपूर्वक तेनुं बहु सन्मान करीने तेने पोतानी पासे बेसाड्यो. पछी कुमार तेने कहेवा लाग्यो के–'हे बटुक! तारुं अंग फरीफरीने जोतां छतां मने तृप्ति थती नथी. तारुं दर्शन मने अतिशय इष्ट लागे छे.' बटुक बोल्यो के–'हे स्वामिन्! ए सत्य छे. जेम चंद्रनी कांतिना दर्शनथी चांद्रोत्पलमांथीज अमृत स्रवे छे, बीजामांथी स्रवतुं नथी, तेम आ संसारमां पण जे जेनो वल्लभ होय छे, तेने जोवाथी तृप्ति थतीज नथी.' कुमारे कह्युं के–'मारे आगळ जवानुं खास कारण छे, परंतु तारा प्रेमनी शृंखलाथी बंधायेल मारुं मन एक पगलुं पण आगळ भरवाने उत्साहित थतुं नथी; तेथी कृपा करी तुं मारी साथे चाल. पाछो हुं तने अहीं अवश्य लावीश.' ए प्रमाणे सांभळीने बटुक बोल्यो के–'मारे अत्रे हमेशां चक्रधर देवनी पूजा करवानी छे, तेथी माराथी केम आवी शकाय? वळी दंभरहित व्रत धारण करनार मने त्यां आववानुं प्रयोजन पण शुं छे?' कुमारे कह्युं के–'जोके तारे कंइ पण कार्य नथी तोपण मारा उपर कृपा करीने तारे आववुं जोइए.' कुमारना आग्रहथी तेणे ते कबुल कर्युं, अने तेनी साथे आगळ चाल्यो. मार्गमां जतां कुमारने बटुकनी साथे घणी प्रीति बंधाणी. एक क्षण पण ते तेनो संग छोडतो नथी. तेनी साथेज बेसवुं, उठवुं, चालवुं ने सुवुं विगेरे करे छे. शरीरनी छायानी जेम तेओ बन्ने एक क्षण पण नोखा पडतां नथी. दूध ने जळनी जेवी तेओने मैत्री थइ छे. कह्युं छे के–"दूधे पोतानी साथे मिश्रित थयेल जळने पोताना सर्व गुण आप्या. पछी दूधने ताप उपर चडावेलुं जोइने जळे पोतानी जातने अग्निमां नांखी, अर्थात् पोते बळवा मांड्युं; ते वखते पोताना मित्रने आपत्तिमां जोइने दूध उछळीने अग्निमां पडवा तैयार

थयुं. तेने पाछुं तेना मित्र साथे मेळव्युं अर्थात् पाणी छांटयुं त्यारे ते शांत थयुं. सारा माणसोनी मैत्री एवा प्रकारनी होय छे. "

एकदा कुमार बटुकने कहेवा लाग्यो के–'हे मित्र ! मारुं मन मारी पासे नथी.' तेणे पूछ्युं के–' ते क्यां गयुं छे.?' कुमारे कह्युं के–'ते मारी वल्लभा कमलवतीनी साथे गयुं छे.' तेणे पूछ्युं के–' कमलवती क्यां गइ छे ?' कुमारे कह्युं के–' मारा जेवा मंदभाग्यवाळाना घरने विषे एवुं स्त्रीरत्न क्यांथी रहे ? दैवथी जेनुं मन नष्ट थयेलुं छे एवा में ते निरपराधी बाळाने काढी मूकी. ते क्यां गइ हशे !' बटुके कह्युं के–' जेने माटे तुं आटलो बधो खेद करेछे ते केवी हती ?' कुमार नेत्रमां अश्रु सहित कहेवा लाग्यो के–' हे मित्र ! तेना गुणो एक जीभथी गणवाने केवी रीते शक्तिवान थवाय ? सर्व गुणनुं भाजन ते स्त्री हती; हवे तेना विना सर्व संसार शून्य लागे छे. परंतु तारा दर्शनथी मने आनंद उत्पन्न थाय छे.' त्यारे बटुके कह्युं के–' हे सुंदर ! आटलो बधो पश्चात्ताप करवो उचित नथी, कारणके विधिए निर्माण करेल कार्य निवारवाने कोण शक्तिवान छे ? कह्युं के–' विधि अघटित घटनाने घटावे छे ने सुघटित घटनाने जर्जरीभूत करे छे; जेने माटे मनुष्यजातने विचार पण आवी शकतो नथी तेवी घटना विधि घटावे छे.' तो आ प्रमाणे बहु शोच करवाथी शो लाभ छे?"

हवे घणा दिवसे कुमार मित्र सहित सोमपुरीए पहोंच्या. पुरुषोत्तम राजा महा उत्सवथी तेनी सन्मुख गया, अने जमाइने मोटा आडंबरथी पोताना नगरने विषे प्रवेश कराव्यो. पछी शुभ मुहूर्ते रत्नवतीनुं पाणिग्रहण कराव्युं. पुरुषोत्तम राजाए पहेरामणीमां घणा हाथी तथा अश्वो विगेरे आप्यां. त्यां रणसिंह कुमार श्वसुरे आपेल आवासमां रहेतो सतो रत्नवतीनी साथे विषयसुख भोगववा लाग्यो.

एकदा रत्नवतीए तेने पूछ्युं के–' हे प्राणनाथ ! ते कमलवती केवी हती के जे मरी गइ सती पण आपना चित्तने छोडती नथी, अने जेणे मारा पाणिग्रहणार्थे अहीं आवतां आपने वश करी दइने पाछा वाळ्या हता?' कुमार बोल्यो के–' हे प्रिये? आ त्रिभुवनने विषे एना जेवी बीजी कोइ स्त्री नथी. तेना अंगना लावण्यनुं शुं वर्णन करुं ! ते मरी गये सते तने परणीने जे विषयसुखनो आनंद लउंछुं ते आनंद, दुकाळमां गोधम, तंदुल आदि धान्य नहि मळवाथी हलकां कांग, कोद्रा, शामो विगेरे तृण-धान्य खाइने जे आनंद मळे तेना जेवो छे. कह्युं छे के–

' हेळवीयो हीरे, रुडे रयणायरतणे; फुटरे फटिक तणे, मणिए मन माने नहि. '

" रत्नाकरना रुडा हीराथी हळेला माणसनुं मन फुटडां के उजळां एवा फटकना मणियी माने नहि. "

आ प्रमाणेनां कुमारनां वचन सांभळीने रत्नवती रोषथी बोली के–' में केवुं कर्युं? ते दुष्ट स्त्रीने केवी शिक्षा आपी? अहींथी गंधमूषिकाने मोकली, ते सर्व मेंज कर्युं हतुं. जेवी ते तमारी इष्ट हती, तेवुं में कर्युं; तो हवे तमे शुं सेवकनी पेठे तेना गुणो वारंवार गाया करोछो?' ए प्रमाणे सांभळीने कुमार कमळवतीने तदन निष्कलंक मानी, क्रोधथी लालचोळ थइ, रत्नवतीने हस्तथी पकडी, लात मारी, तिरस्कार करीने बोल्यो के–" हे मलिन कर्म करवावाळी! तने धिक्कार छे! तें आज्ञा आपीने कुकर्म कराव्युं, पण तेथी तें तारा पोताना जीवनेज दुःखसमुद्रमां नांख्यो छे. तारा जेवी स्त्रीना करतां कुतरी पण वधारे सारी छे, के जे भसती होय पण अन्न आपवाथी वश थाय छे ने भसती नथी. परंतु बहुमानिता एवी पण मानिनी (स्त्री) कादि पण पोतानी थती नथी. ?" ए प्रमाणे कहीने पछी विचारवा लाग्यो के–' अरे! वृथा कलंकचिंतामां पडेली मारी प्रिया कमळवती जरुर मृत्युवश थइ हशे, तो हवे मारा आ जीवनथी सर्युं!' ए प्रमाणे विचार करी तेणे पोताना सेवकोने आज्ञा करी के–' तमे मारा आवासनी पासे एक मोटी चिता रचो, के जेथी कमळवतीना विरहथी दुःखी थयेलो हुं तेमां पडीने मरण पामुं.' ए प्रमाणे कही पराणे चिता करावी, अने सर्व जणाए वार्यो छतां वळी मरवा चाल्यो. अहीं पुरुषोत्तम राजाए ते वात सांभळी, एटले प्रथम तो कुडकपटनी पेटी, मिथ्या कलंक चडावनारी, अकार्य करनारी अने नरकगतिमां जनारी एवी गंधमूषिकाने घणी कदर्थना करावी, मानरहित करी, अपमान अपावी रासभ उपर बेसाडीने नगरनी बहार काढी मूकी; स्त्रीजाति होवाथी मारी नंखावी नहि. पछी ते कुमार पासे आव्यो. त्यां तेणे तथा सार्थवाह आदि जनोए कुमारने बहु प्रकारे वार्यो छतां ते चिता समीप आव्यो. राजा आदि जनो विचार करवा लाग्या के–' मोटो अनर्थ थशे, एक स्त्रीना वियोगथी आवुं पुरुषरत्न मृत्यु पामशे.' आ प्रमाणे विचारी कुमारने चितामां पडवाने तैयार थयेला जोइने पुरुषोत्तम राजा बटुक समीपे जइ कहेवा लाग्यो के–' हे आर्य! आ कुमार तारुं वाक्य उल्लंघन करता नथी, तेथी एवी विज्ञप्ति कर के जेथी ते आ पापकार्यथी पाछा फरे.' पछी बटुक कुमार प्रत्ये बोल्यो के–" हे भद्र! उत्तम कुळमां उत्पन्न थया छतां आवुं नीच कुळने उचित कर्म केम करो छो? तमारा जेवा सदाचारी पुरुषने ए घटित नथी. अग्निप्रवेश आदिना मृत्युथी अनंत संसारनी वृद्धि थाय छे. तेमां पण मोहातुर थइने मरवुं ते तो अति दुःखदायी छे. वळी हे मित्र! तमे मने प्रथम कह्युं हतुं के 'हुं तने चक्रधर गामनी समीपे पाछो पहोंचाडीश' ते तमारुं वचन अन्यथा थाय छे. तेमज मृत्यु पामेली कमळवतीनी पाछळ मरवाने इच्छो छो, ते पण व्यर्थ छे;

कारणके जीव पोताना कर्मथीज परभवने विषे जाय छे. जीवोनी चोराशी लाख योनि छे, तेथी तेओनी गति एक नथी; कर्मने अनुसरीने जीवनी गति थाय छे. पंडित पुरुषे सारुं अथवा मध्यम कार्य पण फळना परिणामनो विचार करीनेज करवुं जोइए. रभसवृत्तिए करेलुं तथा वगर विचारे करेलुं कार्य आगळ उपर शल्यनी जेवुं दुःखदायक नीवडे छे. तेथी आ साहस करवाथी पाछा फरो; कारण के 'जीवतो नर सेंकडो भद्रने जुएछे.' वळी जो तमे मारी वात सांभळीने तमारा प्राणनुं रक्षण करशो, तो कदाचित् तमने कमळवतीनो संयोग पण प्राप्त थशे; पण जो मूढपणाने लीधे प्राणत्याग करशो, तो तेनो संगम दुर्लभज छे." आ प्रमाणेनी बटुकनी वाणी सांभळीने कमळवतीने मळवानी किंचित् अभिलाषा जेना हृदयमां उद्भवी छे एवो कुमार कहेवा लाग्यो के–'हे मित्र! शुं तें मारी प्रियाने जोइ छे? अथवा शुं ते जीवे छे एवुं कोइए तने कह्युंछे? अथवा ज्ञानना बळथी तुं जाणे छे के ते मळशे के नहि? तुं मने अग्निमां पडतो अटकावे छे तेनुं कारण शुं छे? ते कहे.' बटुक बोल्यो के–'हे कुमार! तमारी प्रिया कमळवती विधातानी पासे छे एम हुं ज्ञानथी जाणुं छुं, तेथी जो तमे कहो तो मारा आत्माने विधातानी पासे मोकलीने कमळवतीने अहीं लइ आवुं.' त्यारे कुमारे कह्युं के–'जो ए सर्व सत्य होय तो तेमां जरा पण विलंब कर नहि. ज्यारे हुं कमळवतीने जोइश त्यारे मारो आ जन्म कृतार्थ मानीश.' त्यारे बटुक बोल्यो के–'हे सुंदर! दक्षिणा विना मंत्रविद्या आदि केवी रीते सिद्ध थइ शके?' त्यारे कुमारे कह्युं के–'हे मित्र! प्रथम में तने मारुं मन अर्पण करेल छे, हवे मारा प्राण पण तारे आधीन छे; तो कहे हवे तेथी वधारे बीजी शी दक्षिणा आपुं?' बटुके कह्युं के–'दीर्घायु थाओ, पण हुं ज्यारे जे कांइ तमारी पासे मागुं ते तमारे आपवुं पडशे.' कुमारे कह्युं के–'हुं तने वर आपुं छुं ते हुं पाळीश. बहु कहेवाथी शुं! परंतु तुं हवे मारी प्रिय वल्लभाने सत्वर लाव.' ए प्रमाणे कहेवाथी बटुके संजीविनी नामनी जडी सर्वने बतावी. पछी ते पडदानी अंदर ध्यान करतो बेठो. कुमार पण अति हर्षित थवा लाग्यो. राजा विगेरे पण कमळवतीने जोवाने उत्साहित थया. वळी 'मृत्यु पामेली कमळवती पाछी आवशे तो मोटुं आश्चर्य थशे; आ विप्र तो मोटो ज्ञानी जणाय छे.' ए प्रमाणे लोको पण परस्पर आह्लादयुक्त आलाप करवा लाग्या. ते समये बटुके पेली जडी कर्णथी दूर करी एटले कमळवती थइ गइ. पछी ते पडदामांथी बहार आवी. कुमारे तेने अति हर्षथी जोइ, अने 'खरेखर आज मारी प्रिया कमळवती छे' एम कह्युं. तेणे आवीने पोताना प्रियने प्रणाम कर्या. सघळाओए तेने जोइ. तेनुं रूप, लावण्य अने सौभाग्य आदि जोइने लोको पण विस्मय पूर्वक कहेवा

लाग्या के–'जेवी रीते पित्तळ आगळ सुवर्ण शोभतुं नथी तेवी रीते आ कमलवती पासे रत्नवती पण शोभती नथी. कुमार एनी खातर साहस करता हता ते पण युक्तज हतुं. ए कुमारने तेमज ए कमलवतीने बंनेने धन्य छे.' ए प्रमाणे प्रशंसा करता लोको पोतपोताने स्थानके गया. कुमार पण हर्षथी परिवार सहित महोत्सव पूर्वक कमळवतीने लइने पोताने आवासे आव्या; अने अलंकार तथा वस्त्रथी विभूषित एवी कमळवतीनी साथे पंच विषयसुख भोगवता सता पोताना जन्मने सार्थक मानवा लाग्या.

एकदा कुमारे कमळवतीने पूछ्युं के–'हे सुलोचना! कोइ एक विप्र तारी खातर विधातानी पासे आव्यो हतो तेने तें जोयो हतो के नहि?' ए प्रमाणे सांभळी कमलवती विस्मय सहित बोली के–'हे प्राणेश! ते विप्रज हुं हतो.' एम कहीने तेणे जडीबुटीनुं सर्व वृत्तांत निवेदन कर्युं. ते सांभळी कुमार अति संतुष्ट थयो. कमलवतीए विचार्युं के "आ वल्लभ रत्नवतीनी सामुं जरा नजर पण करता नथी, तेना तरफ ते अत्यंत निःस्नेही थयेला छे, पण तेमां मारोज अवर्णवाद बोलाय. जोके तेणे अपराध कर्यो छे तो पण मारे ते विषे विचार करवो योग्य नथी. कारणके उपकारीना प्रति प्रत्युपकार करवो एमां कांइ आश्चर्य नथी, पण अपकार करवावाळानी उपर उपकार करवो एज सत्पुरुषनुं लक्षण छे." कह्युं छे के–"उपकार करवावाळा उपर वा मत्सर विनाना मनुष्य उपर दया बताववामां आवे तेमां विशेषपणुं शुं छे! पण जे अहित करनार प्रति तेमज सहसा अपराध करनार प्रत्ये दया बतावे तेज सत्पुरुषोमां अग्रणी छे." ए प्रमाणे विचार करी कमलवतीए कुमार पासे वरदान माग्युं. कुमारे कह्युं के–'जे तारी इच्छा होय ते मागी ले.' कमलवती बोली के–'जो तमे इप्सित वस्तुने अर्पण करता हो तो मारी उपर जेवा स्नेहवाळा छो तेवा रत्नवती प्रति स्नेहवंत थाओ. जोके तेणे अपराध कर्यो छे तो पण ते क्षमा करवा योग्य छे. कारणके तमे उत्तम कुळमां उत्पन्न थया छो अने कुळवान पुरुषोने चिरकाळ सुधी क्रोध राखवो घटतो नथी. कह्युं छे के "कुळवान पुरुषने क्रोध थतो नथी, कदाच थाय तो ते लांवा काळ सुधी रहेतो नथी, जो कदाच लांवो काळ सुधी रहे तो ते फळतो नथी. तेथी सत्पुरुषोनो कोप नीच जनोना स्नेह जेवो छे." वळी स्त्रीओनुं हृदय प्राये निर्दय होय छे. कह्युं छे के–"असत्य, साहस, माया, मूर्खत्व, अतिलोभ, अस्वच्छता अने निर्दयपणुं ए स्त्रीओना स्वाभाविक दोषो छे. पोताना स्वार्थ साधवाने माटे ते नीच आचरण आचरे छे." आ प्रमाणे कमळवतीना कहेवाथी कुमारे रत्नवतीनुं पण सन्मान कर्युं. पछी केटलाक दिवस त्यां रहीने पुरुषोत्तम राजानी आज्ञा लइ कुमारे कनकपुर तरफ प्रयाण कर्युं. पिताए रत्नवतीने घणा दास, दासी,

अलंकार, द्रव्य विगेरे आपीने विदाय करी अने कुमारने पण घणा हाथी, अश्व, रथ, पायदळ, सुवर्ण, मोती विगेरे अर्पण कर्या.

रणसिंहे रत्नवतीने लइने कमलवती सहित शुभ दिवसे प्रयाण कर्युं. अनुक्रमे पाडलीखंडपुर समीपे आव्या. त्यां जेणे पोतानी पुत्रीनुं सर्व वृत्तांत जाण्युं छे एवो कमळसेन राजा सन्मुख आवी महोत्सव पूर्वक जमाइने पोताना घरे लइ गयो. कमळवतीने पण बहु सन्मान आप्युं. नगरना लोकोए तेनी घणी प्रशंसा करी. तेनी माताए पण स्नेहवडे तेने आलिंगन कर्युं. पछी घणा दिवसो त्यां रहीने कुमार कनकपुर तरफ चाल्यो. कनकशेखर राजा पण कुमारनुं आगमन सांभळीने आनंद सहित सन्मुख आव्यो. विस्मय पूर्वक मळ्यो अने कुमारने नगरमां प्रवेश कराव्यो. ते समये घणा पुरलोको तथा स्त्रीओ तेमने जोवाने आव्या. तेओ परस्पर आनंद सहित बोलवा लाग्या के—"आ कमलवतीने जुओ के जे पोताना शीलना प्रभावथी यम समीप जइ तेना मुखमां धूळ नाखीने पण पाछी आवी. वळी तेना गुणथी रंजित थयेलो रणसिंह कुमार पण तेनी पाछळ मृत्युने आलिंगन देवा तत्पर थयो. ए सतीमां मुख्य एवी कमलवतीने धन्य छे!" ए प्रमाणेनी प्रशंसा सांभळता कुमार पोताना आवासे आव्या; अने त्रणे सुंदरीओनी साथे दोगंदुक देवनी जेम विषयसुख भोगववा लाग्यो. एकदा कुमारे विजयपुर नगरनी समीपे आवेला श्री पार्श्व प्रभुना प्रासादमां अष्टाह्निकोत्सव कर्यो. ते वखते चिंतामणि यक्षे प्रत्यक्ष थइने कह्युं के—'हे वत्स ! अहींथी जइने तारा पितानुं राज्य भोगव.' ए प्रमाणे यक्षनुं वाक्य सांभळी ते मोटा सैन्य सहित विजयपुर आव्यो. ते वखते स्वल्प सैन्यवाळो नगरमां रहेलो राजा दुर्ग मध्यज रह्यो; ते बहार नीकळ्यो नहि तेम नगर पण छोड्युं नहि. ते वखते यक्षे रणसिंह कुमारनी सेनाने आकाशमांथी उतरती तेने बतावी. ते सेनाने जोइने मध्य रहेल राजा नगर तजीने नासी गयो. पछी कुमारे विजयपुरमां प्रवेश कर्यो. नगरजनो हर्ष पाम्या. सर्व प्रधान पुरुषोए मळीने कुमारने तेना पिता विजयसेनना स्थाने स्थापित कर्यो. रणसिंह राजा थयो. ते सज्जन पुरुषोने मान आपतो हतो ने दुर्जनोनी तर्जना करतो हतो. तेमज रामचंद्रनी सदृश नीतिवान थइ पोताना राज्यनुं परिपालन करतो हतो.

एवा अवसरमां एक दिवस पासेना गाममांथी अर्जुन नामनो कोइ कणबी नगर तरफ आवतो हतो तेने मार्गमां क्षुधा तथा तृषा लागवाथी तेणे स्वामिरहित चीभडाना क्षेत्रने जोइ त्यां बमणुं मूल्य मूकीने एक चीभडुं लीधुं, अने ते वस्त्रमां वीटीने कटिए बांध्युं. पछी जेवो ते नगरमां प्रवेश करे छे तेवोज जे दुर्ग-

पालको कोइ श्रेष्ठीपुत्रनो घात करी तेनुं मस्तक लइने नासी गयेल चोरनी तपास करतां अहीं तहीं फरता हता तेओना जोवामां आव्यो. तेओए तेने पूछ्युं के–'तारी कडे आ शुं बांध्युं छे ?' तेणे उत्तर आप्यो के–'चीभडुं छे.' राजसेवकोए तपासतां मस्तक दीठुं एटले तेने चोर धारी बांधीने प्रधान समीपे लइ गया. प्रधाने कह्युं के–'अरे तने धिक्कार छे! तें दुर्गतिना कारणरुप बाळकने मारवानुं काम शा माटे कर्युं?' तेणे कह्युं के–'स्वामिन्! हुं कंइ जाणतो नथी.' आटलुं कहेवा उपरांत घडइ घडइत्ति एटलुं ते बोल्यो. तेथी तेने राजानी समीपे लइ जवामां आव्यो. राजाए पूछ्युं के–'अरे! आ कार्य तें शामाटे कर्युं ?' त्यारे तेणे 'घडइ घडइत्ति' एटलोज उत्तर आप्यो. राजाए कह्युं के–"अरे मूर्ख! वारंवार 'घडइ घडइत्ति' ए शब्दो केम बोलेछे? तेनो परमार्थ कहे." अर्जुन बोल्यो के–'हे स्वामी! आ स्थितिमां हुं तेनो परमार्थ कहीश तोपण ते कोण सत्य मानशे ? वळी कोण जाणे हजु पण मारा कर्मथी पुनः शुं बनशे? माटे हुं कांइ परमार्थ जाणतो नथी.' ते सांभळी दुर्गपाळना पुरुषोए कह्युं के–"आ कोइ धृष्ट जणाय छे, केमके अमे तेनी पासेथीज साक्षात् मस्तक कढाव्युं छे छतां ते सत्य बोलतो नथी ने 'घडइ घडइत्ति' एवो उत्तर आप छे." राजाए पण क्रोधथी 'तेने शूलीये चडावो' एवी आज्ञा आपी. सेवको तेने लइने शूली पासे आव्या. ते समये कोइ एक विकराळ रुपधारी पुरुष आवीने कहेवा लाग्यो के–'हे माणसो! जो तमे आने हणशो तो हुं तमने सर्वने हणी नाखीश.' ए प्रमाणे कहेवाथी तेनी साथे राजपुरुषोने युद्ध थयुं. तेणे सर्वने हांकी काढ्या. तेओ नासीने राजा पासे आव्या. तेओनी पासेथी बनेल वृत्तांत सांभळी राजा पोते युध्ध करवा नीकळ्यो. ते वखते तेणे एक कोस प्रमाण पोतानुं शरीर विकुर्व्युं. ते जोइ राजाए विचार कर्यो के–'आ कोइ मनुष्य नथी, आ तो कोइ यक्ष के राक्षस होय एम जणाय छे; पछी धूप उखेववा विगेरथी तेनी पूजा करीने कह्युं के–'तमे अमारा अपराधने क्षमा करो.' एटले ते प्रत्यक्ष थइ पोतानुं शरीर नानुं करीने बोल्यो के–'हे राजन्! सांभळ, मारुं नाम दुषमाकाळ छे. लोको मने कलि एम कहे छे हमणा भरतक्षेत्रने विषे मारुं' राज्य प्रवर्ते छे. महावीर स्वामीना निर्वाण पछी त्रण वर्षने साडा आठ महिना वीतया बाद मारुं राज्य प्रवर्तेलुं छे. मारा राज्यमां आ खेडुते आवो अन्याय केम कर्यो? कारणके तेणे शून्य क्षेत्रमां बमणुं मूल्य मूकीने एक चीभडुं शामाटे लीधुं? तेथी ते मारो चोर छे. एटले चीभडाने बदले मस्तक बतावीने में प्रत्यक्ष एने शिक्षा आपीछे. हवे पछी कोइ पण एवो अन्याय करशे तो तेने हुं संकटमां नांखीश." पछी श्रेष्ठीपुत्र पण जीवतो थयो, अने ते राजानी समीपे आव्यो. राजाए तेने पोताना खोळामां बेसाड्यो. अर्जुननुं पण घणुं

सन्मान कर्युं. पछी कलिए राजाने पोतानुं सर्व माहात्म्य कहीने छेवटे कह्युं के-'हे राजन्! मारा राजमां तुं रामचंद्र राजानी जेम न्यायधर्मनुं पालन केम करेछे? हवे पछी जो तेम करीश तो ते न्यायधर्माचरणना निमित्तेज हुं तने दुःखी करीश.' आ प्रमाणे कहीने तेणे राजाने छळ्यो. पछी कलि अदृश्य थयो. सर्व पोतपोताना स्थाने गया. अर्जुन पण पोताने स्थाने गयो.

त्यांथी रणसिंह राजा प्रत्यक्ष अनीति जोइने न्यायधर्म तजी अन्याय आचरणमां तत्पर थयो. लोकोए विचार्युं के-'राजाने शुं थयुं छे के जेथी ते आवो अन्याय आचरे छे? तेने वारवाने कोइ समर्थ नथी.' ते समये तेवी स्थितिमां आवी पडेला पोताना भाणेज रणसिंह कुमारने प्रतिबोध आपवाने माटे श्री जिनदास गणि ते नगरना उपवनने विषे पधार्या. राजा पण परिवार सहित तेमने वांदवा गयो. विनय पूर्वक नमस्कार करी बे हाथ जोडीने ते आगळ बेठो. गुरुए पण सकळ क्लेशनो नाश करनारी देशना आपी. तेमां कह्युं के-'हे राजन! कलिनुं रुप जोइने तारुं मन चलित थइ गयुं छे, परंतु आ असार संसारने विषे पुण्य पापना निमित्तथीज सुख दुःख प्राप्त थाय छे.' कह्युं छे के-"कर्मना उदयथीज अन्य भवमां गति थाय छे, भवगतिथीज शरीरनी उत्पत्ति थाय छे, शरीरप्राप्तिथीज इंद्रियोना विषयो उद्भवे छे, अने इंद्रियोना विषयथीज सुख दुःख उत्पन्न थाय छे. प्राणातिपातादि पांच आश्रवद्वारने सेवतो सतोज आ जीव नितांत पापकर्मथी लेपाय छे अने भवसागरमां डुबे छे. हिंसा आदि आश्रवने तज्या विना धर्म क्यांथी होय? कह्युं छे के-" लक्ष्मीथी गृहस्थपणुं शोभे छे, नेत्रथी मुख शोभे छे, रात्रिथी चन्द्रमा शोभे छे, भर्तारथी स्त्री शोभे छे, न्यायथी राज्य शोभे छे, दानथी श्री शोभे छे, पराक्रमथी राजा शोभे छे, निरोगीपणाथी काया शोभे छे, शुद्धताथी कुळ शोभे छे, निर्मदपणाथी विद्या शोभे छे, निर्दंभपणाथी मैत्री शोभे छे अने दयाथी धर्म शोभे छे; बीजी रीते धर्म शोभतो नथी." ए कारणथी आश्रव भवनो हेतु छे अने संवर निवृत्तिनुं असाधारण कारण छे एवो सिद्धांत छे. तेटलामाटे हे वत्स! तारो सज्जन स्वभाव कलि पुरुषना छळथी विपरीत थयेलो छे; परंतु दुर्जनपणुं युक्त नथी. कह्युं छे के-" कोपायमान सर्पना मुखरुप गुफाने विषे हस्त नांखवो ए सारो, ज्वलित अग्निना कुंडमां पडवुं सारुं, पेटने विषे शस्त्रनी अणी भोंकवी ए सारी, पण विपत्तिनुंज घर एवुं दुर्जनपणुं पंडितोने सारुं नहि." कलि पुरुषना कहेवाथी तुं पापमति धारण करे छे, परंतु दुषमाकाळ रुप कलि शुं कहे छे तेनो तुं विचार करतो नथी. दुषमाकाळ ते वळी रुपधारी होय? तेथी ए कोइ दुष्ट देव तरफथी उपद्रव थयेलो जणाय छे. तुं पण तेनाथी छेतरायो छे. कारण के कलि पुरुषना उपदेशथी करवामां आवेलां हिंसा आदि कर्मथी शुं माणस

नरकगतिमा जतो नथी ? शुं कलियुगमां विषभक्षणथी माणस मृत्युवश थतो नथी ? कलिकाळमां पण जेवुं कर्म करे तेवुं फळ प्राप्त थाय छे." ए प्रमाणे जिनदास गणिनां वचनो सांभळीने रणसिंहे चक्षु खोलीने नीचुं मुख कर्युं, अर्थात् शरमायो. एटले जिनदास गणिए फरीने कह्युं के-"हे वत्स! तारा पितानुं वाक्य सांभळीने प्रतिबोध पाम. कलिपुरुषना दर्शनना हेतुवडे तारा ठगायाना स्वरूपने अवधिज्ञानथी जाणीने श्री धर्मदास गणि नामना तारा पिताए तने प्रतिबोध आपवा माटे **उपदेशमाळा** रचेली छे ते तुं सांभळ. तेमां कहेलुं छे के-"जेवी रीते राजा आज्ञा करेछे अने प्रधान आदि प्रकृतिमंडल तथा सामान्य पौरलोको तेनी आज्ञाने मस्तके चडावेछे तेवी रीते शिष्ये पण गुरुनी आज्ञाने करकमळ जोडी श्रवण करवी." वळी बीजुं पण कह्युंछे के"साधु मुनिराजनी सन्मुख जवुं, तेमने वंदन तथा नमस्कार करवा, शाता पूछवी विगेरे करवाथी लांबा काळनां संचित करेलां पापकर्म एक क्षणमां नष्ट थायछे." वळी तेमांज कह्युंछे के-"लाखो भवे पण जे पामवा दुर्लभ छे अने जन्म जरा ने मरण रुप समुद्रथी जे तारे छे एवा जिनप्रवचनने विषे हे गुणना भंडार! एक क्षण पण प्रमाद करवो उचित नथी."

आ प्रमाणे जिनदास गणि कहेछे तेवे समये विजया नामे साध्वी जे रणसिंह राजानी माता थाय ते त्यां आव्या अने तेणे पण कह्युं के-"हे वत्स! तारे माटे तारा पिता धर्मदास गणिए आ उपदेशमाला बनावी छे तेनो तुं प्रथम अभ्यास कर, तेना अर्थनो विचार कर अने विचार करीने अन्याय धर्म तजी दइ मोक्षसुखने उपार्जन कर. तारा पिताना ए आदेशनो स्वीकार कर." आ प्रमाणेनां पोतानी मातानां वचनो सांभळीने रणसिंह राजाए तेनुं अध्ययन करवानुं कबूल कर्युं. पछी प्रथम जिनदास गणि उपदेशमालानी गाथा बोले अने त्यारपछी रणसिंह राजा ते प्रमाणे बोले; ए रीते बे त्रण वार सांभळीने बोली जइ तेणे आखी उपदेशमाला कंठे करी. पछी तेना अर्थने चित्तमां विचारतो सतो ते भावितात्मा वैराग्य पामीने चिंतववा लाग्यो के-'मने धिक्कार छे! में अज्ञानने वशे आ शुं आचर्युं? धन्य छे मारा पिताने के जेमणे मारा उद्धारने माटे अवधिज्ञानवडे आगामी स्वरूप जाणीने प्रथमथीज आ ग्रंथ बनाव्यो. माटे हवे आ विद्युत्पात समान चंचळ एवा विषयसुखवडे सर्युं! कह्युं छे के-

> चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणा–श्चलं चंचलयौवनं ।
> चलाचलेस्मिन्संसारे, धर्म एको हि निश्चलः ॥

"लक्ष्मी चपळ छे, प्राण चपळ छे, चंचळ एवुं यौवन पण चपळ छे; एवा चळाचळ संसारमां धर्म एकज निश्चळ छे."

आ प्रमाणे विचारी घरे आवीने रणसिंह राजा न्याय अने धर्मनी प्रतिपालना करवा लाग्यो. पछी केटलेक काळे कमळवतीना पुत्रने राज्ये स्थापन करीने श्रीमुनिचंद्र सूरि पासे रणसिंह राजाए चारित्र ग्रहण कर्युं; अने विशुद्धचारित्रनुं आराधन करी काळधर्म पामीने देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थया.

कमळवतीना पुत्रे पण आ उपदेशमाळा कंठे करी अने सर्व लोकोए पण तेनुं पठन पाठन कर्युं. ए प्रमाणे अनुक्रमे पठन पाठनना क्रममां चालती आ उपदेशमाळा अद्यापि विजय पामे छे.

आ उपदेशमाळाप्रकरण पोताना पुत्रने प्रतिबोध पमाडवा माटे श्रीधर्मदास गणिए रचेलुंछे; तेनुं रहस्य अन्य बुद्धिमान जनोए सम्यग् प्रकारे धारण करवुं. आ प्रमाणे वृद्धोक्त संप्रदाय बताव्यो. हवे ते उपदेशमाळानी गाथाओनो अर्थ विगेरे कहेवामां आवशे.

इत्युपदेशमालायां प्रथम रणसिंहनृपस्य मूलसंबंधः ।



इति उपदेशमाळानी प्रथम पीठिका

समाप्त.

श्री उपदेशमाळा भाषांतर प्रारंभ.

(टीकाकारनुं मंगलाचरण)

नत्वा विभुं सकलकामितदानदक्षम् ।
शंखेश्वरं जिनवरं जनतासुपक्षम् ॥
कुर्वे सुबोधितपदामुपदेशमालाम् ।
बालावबोधकरणक्षमटीप्पनेन ॥ १ ॥

" सकळ इच्छित दान आपवामां कुशल तथा सुपक्षने उत्पन्न करनार (बतावनार) एवा जिनेश्वर श्री शंखेश्वर प्रभुने नमस्कार करीने बाळजीवोने बोध थइ शके एवा (सरल) टीप्पन (टीका) वडे उपदेशमाळा सुखे बोध थाय तेवा पदवाळी करुंछुं. "

मूळ गाथा.

नमिऊण जिणवरिंदे, इंदनरिंदच्चिए तिलोअगुरू ॥
उवएसमाल मिणमो, वुच्छामि गुरूवएसेणं ॥ १ ॥

शब्दार्थ—"देवेन्द्रो ने नरेन्द्रोए पूजेला अने त्रिलोकना गुरु एवा जिनवरेन्द्रोने नमस्कार करीने तीर्थंकर अने गणधर आदि गुरुओना उपदेशथी हुं आ उपदेशमाळा कहुंछुं." १.

भावार्थ—आ गाथामां प्रथम पदे करीने श्री जिनेश्वरने नमस्कार करवा रुप मंगलाचरण कर्युं छे. बीजा पदमां जिनेश्वरनां विशेषणो कह्यां छे. त्रीजा पदमां अभिधेय बतावेल छे, अने चोथा पदमां अहं ना अध्याहारवडे आ ग्रंथनी पोते शरुआत करे छे एम बताव्युं छे. तेमां अहं एटले हुं धर्मदासगणि क्षमाश्रमण आ उपदेशमाळा रचुंछुं एम समजवुं. ते पण पोतानी बुद्धिए नहि पण तीर्थंकर गणधरादिना उपदेशवडे कहुंछुं. आम कहेवावडे ग्रंथनी आप्तता बतावी छे.

बीजी गाथामां पण मंगळाचरण करे छे ते आ प्रमाणे—

जगचूडामणिभूओ, उसभो वीरो तिलोअसिरितिलओ ॥
एगो लोगाइच्चो एगो चक्खू तिहुअणस्स ॥ २ ॥

भावार्थ–संगमादि देवोना करेला तेमज बीजा गोपादिना करेला प्राणांत करे तेवा उपसर्गो भगवंत श्री महावीर स्वामीए अनंत शक्तिमान छतां सहन कर्या–क्षमा राखी–तेना पर क्रोध कर्यो नहि. ए प्रकारनी क्षमा सर्व मुनिओए पण धारण करवी, एटले भगवंतनुं अनुष्ठान हृदयमां धारण करीने प्राकृत जनोना करेला ताडन तर्जनादि मुनिओए पण सहन करवा. इत्युपदेशः

भगवंतनी दृढता संबंधे कहे छे–

न चइज्जइ चालेउं, महइ महा वध्धमाण जिणचंदो ॥
उवसग्ग सहस्सेहिंवि, मेरु जहा वायगुंजाहिं ॥ ५ ॥

शब्दार्थ–"मेरु पर्वत जेम गुंजारव करता प्रबळ वायुथी चळायमान न थाय तेम महइ एटले मोक्षने विषेज करी छे मति जेमणे एवा महान वर्द्धमान जिनचंद्र हजारा उपसर्गवडे पण चळावी शकाया नहि." ५.

भावार्थ–मेरु पर्वतनी जेम देवमनुष्यना करेला हजारो उपसर्गथी पण वीरप्रभु चलायमान थया नहि; कारण के तेमने ध्यानथी चलाववाने–क्षोभ पमाडवाने कोइ पण शक्तिवान नथी. तेथीज तेमनुं नाम देवोए **वीर** एवुं पाड्युं छे. आ दृष्टांत ध्यानमां राखीने अन्य साधुओए पण प्राणांतकारी उपसर्ग थया छतां ध्यानथी चळवुं नहि. इत्युपदेशः

हवे विनय गुणनी प्राधान्यता बताववा माटे कहे छे–

भद्दो विणीयविणओ, पढमगणहरो समत्तसुअनाणी ॥
जाणंतोवि तमथ्थं, विम्हिअहिअओ सुणइ सव्वं ॥ ६ ॥

शब्दार्थ–"भद्र अने विशेष विनयवान प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी समस्त श्रुतज्ञानी एवा ते अर्थने जाणतां छतां प्रभु ज्यारे कहे त्यारे ते सर्व विस्मित हृदयवाळा थइने सांभळे छे." ६.

भावार्थ–भद्र एटले कल्याणकारी–मंगळरुप अने अत्यंत विनयी गौतम स्वामी श्रुतज्ञानना पारगामी–श्रुतकेवळी छतां एटले सर्व भावने जाणनारा छतां प्रथम पूछायेला अर्थने फरीने पण भगवंत ज्यारे कहे त्यारे कौतुकवडे प्रफुल्लित लोचनवाळा थइने सांभळे छे. आ प्रमाणे बीजा शिष्योए पण विनय पूर्वक गुरुने पूछवुं ने ते जे कहे ते सांभळवुं. इत्युपदेशः

गाथा ५–सहस्सेहवि. वायुगुजाइं. ⁺ मोक्षे कृतमाति. महति. * विशेषेण नीतः प्राप्तो विनयो येन.

विनय उपर लौकिक दृष्टांत आपे छे–

जं आणवेइ राया, पगईओ तं सिरेण इच्छंति ॥
इअ गुरुजणमुहभणिअं, कयंजलिउडेहिं सोयव्वं ॥ ७ ॥

शब्दार्थ–"राजा जे आज्ञा करे छे ते तेनुं प्रकृतिमंडळ–सेवकवर्ग मस्तके करीने इच्छे छे; ते प्रमाणे गुरुजनना मुखथी कहेवायेलुं (शिष्योए) हाथ जोडीने सांभळवुं." ७.

भावार्थ–सप्तांगे[1] स्वामी राजा जे कहे छे ते तेनो सेवकवर्ग माथे हाथ जोडीने प्रमाण करे छे ते प्रमाणे गुरुमहाराज शास्त्रोपदेशादि जे कहे ते भक्तिवडे करकमळ जोडीने विनय पूर्वक शिष्यवर्गे सांभळवुं. आम कहेवावडे शिष्योने विनयनीज प्राधान्यता छे एम उपदेश आप्यो छे.

गुरुना महत्वने वतावे छे–

जह सुरगणाण इंदो, गहगणतारागणाण जह चंदो ॥
जह य पयाण नरिंदो, गणस्सवि गुरू तहा णंदो ॥ ८ ॥

शब्दार्थ–" देवताओना समूहमां जेम इंद्र ग्रहगणे[2] ने ताराओना समूहमा[3] जेम चंद्र अने प्रजामां जेम राजा श्रेष्ठ छे तेम गण (साधुसमूह) मां आनंदकारी गुरु श्रेष्ठ छे." ८.

भावार्थ–देवताओ, ज्योतिषीओ अने मनुष्योमां जेम इंद्र, चंद्र ने नरेंद्रनी आज्ञानो अमल थाय छे तेम गच्छमां गुरुनी आज्ञानो अमल थवो जोइए; तेमज देवता विगेरेने जेम इंद्रादि आल्हाद उत्पन्न करनारा छे तेमज गच्छमां गुरुमहाराज पण आनंद उपजावनारा होय छे.

बाळवयना गुरुने माटे कहे छे–

बालुत्ति महीपालो, न पया परिभवइ एस गुरु उवमा ॥
जं वा पुरओ काउं, विहरंति मुणी तहा सोवि ॥ ९ ॥

शब्दार्थ–" आ बाळक छे एवी बुद्धिए जेम राजाने प्रजा पराभव करती नथी ते उपमा गुरुने पण आपवी; अने जेम गीतार्थने आगळ करीने मुनि विचरे छे तेम बाळ एवा गुरुने पण मानवा." ९.

---

१ स्वामी, अमात्य, सुहृत्, भंडार, देश, किल्ला अने लष्कर ए राज्यनां सात अंग छे. २ ग्रहमंगळादि ८८ छे ३ ताराओ कोडाकोडनी संख्यावाळा छे. गाथा ९–परिहवइ. पुरओ.

भावार्थ–वय अने दीक्षा पर्यायवडे हीन छतां पण ज्ञानवडे श्रेष्ठ एवा गुरुपणे स्थापेला बाळवयना आचार्यनी आज्ञामांज मुनिओए वर्तवुं. कारण के ते गीतार्थ होवाथी गच्छमां दीपक तुल्य छे. आने माटे लौकिक दृष्टांत आपे छे के–कोइ वखत राजा बाळक होय तोपण प्रजा 'आ बाळक छे' एम कही तेनुं अपमान करती नथी पण तेनी आज्ञामां वर्ते छे. ते प्रमाणे गच्छने माटे पण समजवुं.

हवे गुरुनुं स्वरुप कहे छे. गुरु केवा होय ?

पडिरूवो तेयस्सी, जुगप्पहाणागमो महुरवक्को ॥
गंभीरो धीमंतो, उवएसपरो अ आयरिओ ॥ १० ॥
अपरिसावी सोमो, संगहसीलो अभिग्गहमईय ॥
अविकंथणो अचवलो, पसंतहियओ गुरू होइ ॥ ११ ॥

शब्दार्थ–"तीर्थंकरादिना प्रतिबिंब जेवा, तेजस्वी, युगप्रधानागम, मधुर वक्ता, गंभीर, धृतिमान, उपदेश देवामां तत्पर–एवा आचार्य होय. १०. वळी अप्रतिश्रावी, सौम्य, संग्रहशील, अभिग्रह करवानी बुद्धिवाळा, बहु नहि बोलनारा, स्थिर स्वभाववाळा ने प्रशांत हृदयवाळा गुरु होय." ११.

भावार्थ–आचार्य भगवंत आकृतिमां तीर्थंकर गणधरादि जेवा अति सुंदर होय, कांतिमान होय, वर्तमानकाळे वर्तता समग्र शास्त्रना पारगामी होय अथवा अन्य लोकनी अपेक्षाए सर्वथी विशेष ज्ञानवान होय, जेनुं वचन मधुर लागे एवा होय, अतुच्छ हृदयवाळा होय के जेथी पर तेना हृदयने जाणी न शके, धैर्यतावाळा–संतोषवाळा–निष्प्रकंप चित्तवाळा होय, भव्य जीवोने उपदेश देवामां तत्पर होय एटले सद्वचनोवडे मार्गमां प्रवर्तावनारा होय. १०. निश्छिद्र शैल भाजननी जेम अप्रतिश्रावी होय एटले छिद्र विनाना पत्थरना भाजनमां नांखेलुं जळ जेम नीचे गळे नहि तेम कोइए कहेल पोतानुं गुह्य रुपजळ जेना हृदयमांथी स्रवतुं नथी अर्थात् अन्यनी पासे प्रकाशता नथी, सौम्य एटले देखवा मात्रवडेज आह्लादकारी होय–बोलवाथी तो विशेष आह्लाद करे तेमां नवाइज शुं! शिष्यादिकने माटे वस्त्र पात्र पुस्तकादिनो संग्रह करवामां तत्पर होय ते मात्र धर्मवृद्धिनेज माटे–लोलताथी नहि, वळी द्रव्यथी, क्षेत्रथी, काळथी ने भावथी एम चारे प्रकारना अभिग्रहो करवानी बुद्धिवाळा होय, कारण के अभिग्रह पण तप रुपज छे; वळी बहुबोला न होय–पोतानी प्रशंसा तो कदि पण न करे,

---

धीमंतो–धृतिमान. गाथा ११–अपरिस्साविअ.

स्थिर स्वभाववाळा होय–चंचळ परिणामवाळा न होय, प्रशांत हृदयवाळा होय एटले क्रोधादिकथी रहित चित्तवाळा–शांतमूर्ति होय–आवा गुरुना गुणे करीने शोभता गुरु होय. एवा गुरु विशेषे करीने मानवा योग्य जाणवा. ११.

हवे आचार्यवडेज शासन प्रवर्ते छे ते कहे छे–

कइयावि जिणवरिंदा, पत्ता अयरामरं पहं दाउं ॥
आयरिएहिं पवयणं, धारिज्जइ संपयं सयलं ॥ १२ ॥

शब्दार्थ–" कोइ काळे जिनवरेंद्र मार्ग (भव्य जीवोने) आपीने अजरामर स्थानने पाम्या छे. सांप्रत काळे सकळ प्रवचन आचार्योथी धारण कराय छे अर्थात् आचार्य धारण करे छे. " १२.

भावार्थ–कोइ काळे एटले पोतपोताना आयुष्यने अंते तीर्थंकर भगवंतो ज्ञान दर्शन चारित्र रुप मार्ग भव्य जीवोने आपीने–बतावीने–उपदेशीने मोक्षस्थान के ज्यां जन्म, जरा के मृत्यु नथी तेने पाम्या छे. तेमने विरहे संप्रतिकाळे चतुर्विध संघ रुप तीर्थ-प्रवचन अथवा द्वादशांगी रुप प्रवचन आचार्योथीज धारण कराय छे, अर्थात् आचार्योज शासननी रक्षा करे छे. तेथी तीर्थंकरने विरहे आचार्य भगवंत तेमनी समान माननीय–पूजनीय छे. इत्युपदेशः

हवे साध्वीने विनयनो उपदेश आपे छे–

अणुगम्मई भगवई, रायसुअज्जा सहस्सविंदेहिं ॥
तहवि न करेई माणं, परियच्छइ तं तहा नूणं ॥ १३ ॥

शब्दार्थ–"भगवती राजपुत्री आर्या चंदनबाळा हजारोना वृंदोए परवरेली छतां ते अभिमान करती नथी. कारण के ते निश्चये तेने (तेना कारणने) जाणे छे. " १३.

भावार्थ–दधिवाहन राजानी पुत्री साध्वी चंदनबाळा हजारो लोकोना समूहे परवरेली रहे छे, अर्थात् हजारो लोको तेनी सेवा माटे तेनी पाछळ भमे छे तथापि ते किंचित् पण गर्व–अहंकार करती नथी, ए आश्चर्य छे. पण ते बराबर–चोक्स जाणे छे के आ महात्म्य मारुं नथी पण ज्ञान दर्शन-चारित्रादि गुणोनुं महात्म्य छे तेथी ते गर्व करती नथी. ते प्रमाणे अन्य साध्वीओए पण लोकना माननीयपणा विगेरेथी गर्व करवो नहि. इत्युपदेशः

विनयनुं स्वरुप–पुरुषनी प्राधान्यता—

दिणदिक्खियस्स दुमगस्स, अभिमुहा अज्जचंदणाअज्जा ॥
नेच्छइ आसणगहणं, सो विणओ सव्वअज्जाणं ॥ १४ ॥

शब्दार्थ–"एक दिवसना दीक्षित भिक्षुक साधुनी सन्मुख आर्य चंदनबाळा साध्वी उठ्या अने आसन ग्रहण करवाने इच्छ्युं नहि. आवो विनय सर्व साध्वीओने माटे कह्यो छे." १४.

भावार्थ–तेज दिवसना दीक्षित अने ते पण भिक्षुक छतां साधुनो वेष ग्रहण करीने पोतानी समीपे आवतां जोइ सर्व साध्वीमां मुख्य वडेरा चंदनबाळा साध्वी उभा थया, सन्मुख गया अने ते साधु उभा रह्या त्यांसुधी पोते आसन उपर बेसवानी इच्छा करी नहि. आवो विनय तेमणे साचव्यो ते प्रमाणे दरेक साध्वीए साधुमुनिराजनो विनय साचववो. इत्युपदेशः

अहीं चंदनबाळानी कथा छे ते नीचे प्रमाणे—

"जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमां समृद्धिथी तथा लोकोथी भरपूर **कौशाम्बी** नामनी नगरी छे. एक वखत बहु साध्वीओथी परवरेली, श्रावकोथी पूजाती ने राजा सामंत शेठीआओ अने नगरवासीओए वांदेली एवी वर्धमान स्वामीनी प्रथम शिष्या आर्य **चंदनबाला** कौशाम्बी नगरीना चोकमां घणा माणसोनी साथे जती हती. ते वखते **काकंदीपुरथी** कोइएक दरिद्री आव्यो हतो. ते अति दुर्बळ अने मलिन शरीरवाळो हतो. तेना मुख उपर असंख्य माखीओ बणबणाट करती हती; अने ते फुटेलुं माटीनुं वासण हाथमां लइने घेरघेर भिक्षा अर्थे भटकतो हतो. ते भिक्षुके मार्गमां साध्वी चंदनबालाने जोइ, तेथी ते विस्मित थयो के 'आ शुं कौतुक छे? आटला बधा लोको शामाटे भेगा थया छे?' एवुं जाणी ते पण कौतुक जोवाने साध्वीनी पासे आव्यो; एटले जेनुं मस्तक लोच करायेलुं छे, जेणे सांसारिक आसक्ति तजी दीधी छे अने जेणे भूमिप्रदेशने पवित्र करेल छे एवी शांतमूर्ति आर्या चंदनबालाने घणीज साध्वीओथी परिवृत्त थयेली अने घणा राजलोकथी वंदाती जोइ तेना मनमां आश्चर्य उत्पन्न थयुं. तेथी तेणे पासे उभेला कोइ वृद्ध पुरुषने पूछ्युं के–'आ कोण छे ने क्यां जाय छे?' ते वृद्ध पुरुषे कह्युं के स्थीर चित्ते सांभळ—

गाथा १४—दमगस्स. निच्छइ.

चंपा नगरीमां **दधिवाहन** नामनो राजा हतो. तेने अति रूपलावण्य आदि गुणोथी युक्त, शीलथी अलंकृत अने मातापिताने प्राण करतां पण वधारे प्रिय एवी **वसुमती** नामनी पुत्री हती. एक दिवस दधिवाहन राजाने कोइ पण कारणथी कौशाम्बी नगरीना **शतानीक** राजानी साथे कलह थयो. शतानीक राजाए मोटुं सैन्य लइ चंपा नगरी उपर चडाइ करी. दधिवाहन सैन्य एकटुं करी परिवार साथे सामो थयो. मोटुं युद्ध थवाथी घणा लोको नाश पाम्या. परिणामे दधिवाहननो पराभव थयो. तेनुं सैन्य पण नाश पाम्युं. शत्रुना सैन्ये निर्भयपणे अनाथ कामिनीने लुंटे तेवी रीते चंपानगरीने लुंटी. राजानुं अंतःपुर पण लुंटयुं. ते वखते अंतःपुरमांथी नीकळी नाठेली अने भयथी जेनां नेत्र चपळ थइ गयां छे एवी राजकन्या वसुमती, टोळामांथी विखुटी पडेली हरिणीनी माफक आमतेम नासवा लागी, तेने कोइ पुरुषे पकडी. शतानीक राजानुं सैन्य पाछुं वळ्युं. तेनी साथे वसुमती पण कौशाम्बीमां केदी तरीके आवी. त्यां तेने चोकमां वेचवामाटे आणी. ते वखते कौशाम्बीपुरवासी **धनावह** शेठे मूल्य आपीने तेने खरीद करी. ते तेने जोइ अति हर्षित थयो, अने पुत्री तरीके स्वीकार करी तेने पोताने घेर लइ गयो.

एकदा शेठना पग धोती वखते वसुमतीनो केशपास भूमि उपर पडतां शेठे तेने उंचो पकडी राख्यो. ते जोइ तेनी भार्या मूलाए मननी अंदर विचार कर्यो के–'आ स्त्री अति रूपवंती अने सौभाग्यादि गुणथी अलंकृत छे, तेथी मारो भर्तार तेना रूपथी मोहित थइ जरुर मारी अवगणना करशे; माटे एने दुःख आपी घरमांथी हांकी काढुं तो ठीक.' एक दिवस शेठ कोइ कार्यने माटे बहार गाम गया. त्यारे घरे रहेली तेनी भार्याए वसुमतीना केश मुंडावी नांखी, पगमां बेडी नांखी, हाथने मजबूत बांधी लइ गुप्त ओरडामां पूरी. शेठ घेर आव्या एटले तेणे पोतानी स्त्रीने पूछयुं के–'वसुमती क्यां गइ छे?' तेणे जवाब आप्यो के–'हुं जाणती नथी. ते कांइक गइ हशे.' सरळ बुद्धिवाळा शेठे विचार्युं के–'तेम हशे.' ए प्रमाणे त्रण दिवस वीती गया. चोथे दिवसे कोइ पाडोशीए शेठने पूछ्युं के–'वसुमती क्यां छे?' तेना दुःखथी दुःखित थयेला शेठे कह्युं के–'हुं जाणतो नथी, परंतु ते क्यांइ पण गयेली छे.' त्यारे तेणे कह्युं के–'तमारी स्त्रीना मारथी आक्रंद करती एवी तेने कोइक ओरडामां पूरतां आजथी चोथा दिवस उपर में जोयेली छे, तेथी तमारा घरमां तपास करो.' शेठे घरमां तपास करी, एटले जेना पग बेडीथी बंधायेला छे, जेना केश मुंडी नाखेला छे अने जे घणी क्षुधातुर थयेली छे एवी वसुमतीने तेणे अंदरना ओरडामां दीठी. शेठे दुःखितचित्ते विचार कर्यो के–'अहो! स्त्रीनुं दुश्चरित्र कोइ पण जाणतुं नथी. कामथी अंध

बनेली मारी स्त्रीने धिक्कार छे!' पछी शेठे वसुमतीने पूछ्युं के–'आ तारी शी दशा!' तेणे जवाब आप्यो के–'सघळो दोष मारां कर्मनो छे.' शेठे तेने अंदरथी बहार काढी घरना उमरा पासे बेसाडीने कह्युं के–'तुं अहीं बेस, एटले हुं बेडी भांगवाने कोइ लुहारने बोलावी लावुं.' तेणे कह्युं के–'मने भुख बहु लागी छे तेथी कांइक खावानुं आपो.' ते वखते घोडाने माटे अडद बाफेला हता ते सुपडाना एक खुणामां नांखीने शेठे वसुमतीने खावा आप्या. ते पण एक पग उमरानी बहार अने बीजो पग उमरानी अंदर राखीने बेठी. पछी जेवामां ते खोळामां रहेला सुपडामांना अडद खावा जाय छे ते अवसरे शुं बन्युं ते सांभळो—

छद्मस्थपणे विचरता श्रीमहावीर स्वामीए पोताना कर्मना क्षयने माटे एवो अभिग्रह करेलो छे के—"राजकन्या होय, माथुं मुंडावेलुं होय, बंने पगमां बेडी नांखेली होय, हाथ बांधेला होय, केदी तरीके पकडायेली होय, मूल्यवडे खरीदायेली होय, जे एक पग उमरानी बहार ने बीजो पग उमरानी अंदर राखीने बेठेली होय ते बे पहोर वीत्या पछी सुपडाना खुणामां रहेला अडद जो मने वहोरावे तो मारे वहोरवा." एवो अभिग्रह कर्याने पांच मास ने पचीश दिवस व्यतीत थया हता. ते वीरभगवंत एक गामथी बीजे गाम विहार करतां ते अवसरे कोशाम्बी नगरीए पधार्या. तेओ दरेक घरे पर्यटन करे छे, परंतु अभिग्रह प्रमाणे भिक्षा मळती नथी; अनुक्रमे भगवान धनावह शेठने घरे आव्या. तेमने जोइ वसुमती विचारवा लागी के–'मने धन्य छे के आवी स्थितिमां मारे भगवानना दर्शन थया.' पछी वसुमतीए कह्युं के–'हे त्रिलोकना स्वामी! माषभिक्षाने माटे हाथ लांबा करीने मारो आ भवदुःखमांथी उद्धार करो अने मने तारो.' एवां वसुमतीनां वचन सांभळीने भगवाने विचार्युं के–'मारो अभिग्रह तो पूरो थयो छे परंतु आ रोती नथी एटलुं अधुरुं छे तेथी हुं वहोरीश नहीं.' एवुं धारी भगवान पाछा वळ्या. त्यारे वसुमती अश्रुजळथी नेत्रने मलिन करी विचारवा लागी के–'मंदभागिणी एवी मने धिक्कार छे! मारे घेर भगवान आव्या छतां मारो उद्धार कर्या विना पाछा गया.' त्यारे भगवाने अभिग्रह संपूर्ण थयेलो जोइ पाछा वळीने माषभिक्षा ग्रहण करी. तेथी वसुमती अति हर्षित थइ, तेनां नेत्र प्रफुल्लित थयां, तेनी रोमराजि विकस्वर थइ; अने ते भवसागरनो पार पामी एम मानवा लागी. ते अवसरे ते दानना प्रभावथी तेना पगनी बेडी पोतानी मेळे त्रुटी गइ, मस्तक उपर श्याम केशपास विस्तृत थयो, हाथनुं बंधन त्रुटी गयुं; अने पांच दीव्य प्रगट थयां ते आ प्रमाणे—१ साडी बार क्रोड सोनैयानी वृष्टि थइ, २ सुगंधी पंचरंगी पुष्पोनी वृष्टि थइ, ३ वस्त्रनी वृष्टि थइ, ४ सुगंधी जळनी वृष्टि थइ अने ५ 'अहो दानम् दानम्' ए प्रमाणे आकाशमां देवताओए घोष कर्यो अने जयजयकार थयो. देवताओए वसुमतीनो चंदन जेवो शीतळ

स्वभाव होवाथी तेनुं चंदना एवुं नाम आप्युं. प्रभुए छमासी तपनुं पारणुं करीने अन्यत्र विहार कर्यो. लोकोए चंदनानी घणी प्रशंसा करी. ए वखते शक्रे (इंद्रे) शतानीक नृपनी समीपे आवीने कह्युं के—'आ वसुमती दधिवाहन राजानी पुत्री छे के जेणे स्वगुणोथी 'चंदना' एवुं बीजुं नाम मेळवेलुं छे, तेनुं तारे यत्नथी रक्षण करवुं. आगळ उपर ए धर्मनी उद्योत करनारी थशे अने भगवान श्रीवीरस्वामीनी प्रथम शिष्या थशे.' ए प्रमाणे शिक्षण आपीने इंद्र देवलोक प्रत्ये गया.

शतानीक राजाथी अने बीजा लोकोथी अति सन्मान पामेली चंदनाए केटलाक दिवसो गया पछी वीरभगवंतने केवळज्ञान उत्पन्न थयेलुं जाणीने भगवंत पासे जइ तेमना हाथथी चारित्र लीधुं, अने भगवाननी शिष्या थइ. ते आ चंदना साध्वी नजीकना उपाश्रयमां रहेला **श्रीसुस्थिताचार्यने** वंदन करवाने माटे जाय छे."

आ प्रमाणे तेनुं सघळुं चरित्र वृद्ध पुरुषे द्रुमकने (भिक्षुकने) कही संभळाव्युं; तेथी आनंदित थयेलो द्रुमक साधुने उपाश्रये गयो. चंदना पण गुरुने वांदीने पोताना उपाश्रये गइ. गुरुए भिक्षुकने जोयो, एटले 'आ पुरुष थोडा वखतमां सिद्धि मेळवनारो छे' एम ज्ञानवडे जाणी तेमणे विचार्युं के—'आ भिक्षुकने धर्ममां जोडवो जोइए.' एवुं विचारी तेने मिष्टान्न खावा आप्युं. तेथी ते अति हर्षित थइ मनमां विचारवा लाग्यो के—'आ साधुओ घणा दयाळु छे. आलोक ने परलोक बंनेमां हितकर आ मार्ग छे. आलोकमां मिष्टान्नादि खावानुं मळे छे अने परलोकमां स्वर्गादिनां सुख मळे छे.' एवुं विचारी ते भिक्षुके गुरु पासे दीक्षा लीधी. गुरुए पण तेने प्रव्रज्यामां दृढ करवा माटे घणा साधुओनी साथे साध्वीने उपाश्रये मोकल्यो. ते द्रुमक साधु चंदना साध्वीने उपाश्रये गयो. बीजा साधुओ बहार उभा रह्या, अने भिक्षुक साधु एकला उपाश्रयनी अंदर गया. चंदना साध्वी नवा दीक्षित थयेला द्रुमक साधुने आवतां जोइने तेमनी सन्मुख गइ, आसन आप्युं, तेमनुं सन्मान कर्युं अने बे हाथ जोडी सामे उभी रही. द्रुमक साधु विचारवा लाग्या के—'अहो! आ वेषने धन्य छे! जोके हुं नवदीक्षित थयोछुं छतां आ पूज्य एवी चंदना मने आटलुं बधुं मान आपे छे.' ए वखते ते धर्ममां दृढ थयो. चंदनाए तेमने पूछ्युं के—'आपने अत्रे आववानुं प्रयोजन शुं छे?' द्रुमके कह्युं के—'तमारो वृत्तांत जाणवाने माटे गुरुए मने अहीं मोकल्यो छे.' एटलुं कही मनने चारित्रमां स्थिर करी घणा काळ सुधी निरतिचार चारित्र पाळ्युं.

आ दृष्टान्त उपरथी अन्य साध्वीओए पण मुनिनो आ प्रमाणे विनय करवो एवो आ कथानो उपनय छे.

साध्वी करतां साधुनी श्रेष्ठता बतावे छे—

वरिससयदिक्खियाए, अज्जाए अज्जदिक्खिओ साहु ॥
अभिगमण वंदण नमंसणेणं, विणयेण सो पुज्जो ॥ १५ ॥

शब्दार्थ—" सो वर्षनी दीक्षित साध्वीने आजनो दीक्षित साधु होय तो ते (पण) अभिगमन, वंदन अने नमस्कारवडे तेमज विनयवडे पूजवा योग्य छे." १५.

भावार्थ—" सो वर्षनी दीक्षित एटले वृद्ध एवी साध्वीने लघु मुनि एटले यावत् एकज दिवसनो दीक्षित मुनि पण पूजवा योग्य छे. तेना पूजनना प्रकार बतावे छे—अभिगमन ते सामा जवुं, वंदन ते द्वादशावर्तादि वंदन करवुं, नमस्कार ते अंतरंग प्रीति धराववी अने विनय ते आसन आपवुं विगेरे.

साधुना विशेष पूजनीकपणानां कारणो बतावे छे—

धम्मो पुरिसप्पभवो, पुरिसवरदेसिओ पुरिसजिट्ठो ॥
लोएवि पहू पुरिसो, किं पुण लोगुत्तमे धम्मे ॥ १६ ॥

शब्दार्थ—" धर्म पुरुषथी उत्पन्न थयेलो छे अने पुरुषश्रेष्ठ उपदेशेलो छे तेथी तेमां पुरुष ज्येष्ठ छे. लोकने विषे पण पुरुषज स्वामी थाय छे, तो लोकोत्तम एवा धर्ममां पुरुषनी श्रेष्ठता गणाय तेमां शुं!" १६.

भावार्थ—दुर्गतिथी जे रक्षा करे ते धर्म कहीए. एवो धर्म पुरुष जे गणधर महाराजा तेमनाथी उत्पन्न थयेलो—शरु थयेलो छे. पुरुषवर—पुरुषश्रेष्ठ जे तीर्थंकर महाराजा तेमणे बतावेलो—कहेलो—प्ररुपेलो छे. एवो श्रुत चारित्र रुप जे धर्म ते पुरुषना स्वामीपणावाळो होवाथी तेमां पुरुषनुं ज्येष्ठपणुं कहेलुं छे. लोकोमां पण स्वामीपणुं पुत्रने अपाय छे, पुत्रीने अपातुं नथी; तो लोकमां उत्तम एवा धर्ममां तो विशेषे करीने पुरुषनुंज स्वामीपणुं समजवुं. जो लोकमां पुरुषनी श्रेष्ठता छे तो लोकोत्तम एवा धर्ममां तो विशेषे करीने तेनी श्रेष्ठता जाणवी.

तेने माटे दृष्टांत बतावे छे—

संबाहणस्स रन्नो, तइया वाणारसीयनयरिए ॥
कन्नासहस्स महिअं, आसी कीर रूपवंतीणं ॥ १७ ॥
तहवियं सा रायसिरी, उल्लट्टंती न ताइया ताहिं ॥
उयरट्ठिएण इक्केण, ताइया अंगवीरेण ॥ १८ ॥

गाथा १६—जेट्ठो. गाथा १७—संवाहणस्स. वाणारसीइ. गाथा १८—उल्लटती

शब्दार्थ–" ते काळने विषे वाराणसी नगरीमां संबाधन नामना राजाने अधिक रुपवती एवी एक हजार कन्याओ हती, तथापि तेनी राजलक्ष्मी लुंटाती तेओ राखी शकी नहि;-अने उदरमां रहेला एवा पण अंगवीर नामना एक पुत्रे ते राखी."१७-१८.

भावार्थ–वराणासी नगरीमां राज करनारा संबाधन राजाने एक हजार पुत्रीओ अत्यंत रुपवंती हती, तथापि ते राजा गुजरी गयो त्यारे तेनी लुंटाती राजलक्ष्मीनुं रक्षण करवाने तेओ समर्थ थइ नहि; परंतु ते राजानी राणीना गर्भमां रहेला एक पुत्रना कारणथी तेनी राज्यलक्ष्मी लुंटाती–नाश पामती रही गइ. अर्थात् ते पुत्र के जेनुं पाछळथी **अंगवीर** नाम पाडवामां आव्युं हतुं तेना प्रतापवडे तेनुं रक्षण थयुं. आनी स्पष्टता तेना दृष्टांतवडे विशेष थइ शके तेम छे.

संबाधन राजानुं दृष्टांत नीचे प्रमाणेः—

वाराणसी नगरीमां **संबाधन** नामनो एक राजा राज्य करतो हतो. तेने एक हजार पुत्रीओ हती; परंतु घणा उपायो कर्या छतां तेने पुत्र थयो नहतो. राजाए विचार्युं के–'पुत्र विना राजलक्ष्मी शा कामनी ? जेना घरमां पुत्र नथी तेनुं घर पण शून्य छे.' वेदमां पण कह्युं छे के–" पुत्र वगरना माणसनी सद्गति थती नथी अने स्वर्गमां तो ते बीलकुल जइ शकतोज नथी, तेथी मनुष्यो पुत्रनुं मुख जोइने स्वर्गे जाय छे." लोकोक्ति पण एवी छे के–

चोसठ दीवा जो बळे, बारे रवी उगंत;
तस घर तोहे अंधारवुं, जस घर पुत्र न हुंत.

" एकी वखते चोसठ दीवा बळता होय अने एकी वखते बारे सूर्य उग्या होय तोपण जेना घरमां पुत्र नथी तेना घरमां तो अंधारुंज छे." तेथी पुत्र विना राज्य-लक्ष्मी कांइ कामनी नथी. आ प्रमाणे विचारीने राजाए अनेक मांत्रिको, तांत्रिको अने यांत्रिकोने पूछ्युं, परंतु कोइ पण उपाये पुत्र प्राप्त थयो नहि. कह्युं छे के—

प्राप्तव्यो नियतिबलाश्रयेण योऽर्थः
सोऽवश्यं भवति नृणां शुभोऽशुभो वा ॥
भूतानां महति कृतेऽपि हि प्रयत्ने ।
नाभाव्यं भवति न भाविनोऽस्ति नाशः ॥

" नियतिना बळथी शुभ वा अशुभ जे अर्थ प्राप्त थवा योग्य छे ते माणसोने अवश्य प्राप्त थाय छे. ते शिवाय माणसो अनेक प्रयत्नो करे तोपण जे नथी बनवानुं ते बनतुं नथी ने जे बनवानुं छे तेनो नाश थतो नथी."

हवे राजा वृद्ध थयो. ए वखतमां कोइएक जीव पट्टराणीना उदरमां पुत्रपणे आवीने उत्पन्न थयो; परंतु पुत्रमुख जोया वगरज राजा तो परलोकमां गयो. पछी सर्व पौरजनो एकठा मळी विचार करवा लाग्या के-'हवे शुं थशे? पुत्र विनानुं राज्य केवी रीते रहेशे?' ए प्रमाणे विचारी सर्व नगरवासी लोको शोकाकुल थया. ते वखते शत्रुओए पण सांभळ्युं के-'संबाधन राजा अपुत्र मरण पाम्यो छे.' तेथी तेओ सर्व एकठा मळी मोटुं लश्कर एकठुं करी सज्ज थइने वाराणसी नगरी तरफ चाल्या. ते वात सांभळी बधा लोको त्रास पाम्या, अने पोतपोताना घरनी अंदरथी धन काढवा लाग्या. ते वखते शत्रुओए कोइएक निमित्तियाने पूछ्युं के-'अमारो जय थशे के केम?' ते निमित्तिये लग्नबळ जोइने कह्युं के-'तमो सर्व मळीने जयनी अभिलाषाथी त्यां जवानी इच्छा करो छो, परंतु संबाधन राजानी पट्टराणीना उदरमां रहेल गर्भना प्रभावथी तमारो पराजय थशे, जय थशे नहि.' ए प्रमाणे सांभळीने सघळा वैरीओ पाछा वळ्या. नागरीको खुशी थया अने कहेवा लाग्या के-'अहो गर्भमां रहेल पुत्रनुं महात्म्य केवुं अद्भुत छे के जेथी सघळा शत्रुओ नासी गया.' गर्भस्थिति पूर्ण थतां पुत्रनो जन्म थयो. अशुचिकर्म पूरुं कर्या पछी तेनुं **अंगवीर्य** नाम पाड्युं. अनुक्रमे ते युवावस्थामां आव्यो, अने तेणे लांबा वखत सुधी प्रजानुं पालन कर्युं.

"हजार कन्याओथी पण राज्यनुं रक्षण थयुं नहि, परंतु गर्भस्थित पुत्रमात्रथी रक्षण थयुं" एवो कर्मव्यवहारमां उपनय छे. धर्मव्यवहारमां एवो उपनय छे के-"सर्वत्र पुरुष एज श्रेष्ठ छे. तेथी साध्वीओए एक दिवसनी दीक्षावाळा साधुनो पण विनय करवो." ए प्रमाणे पूर्वनी गाथा साथे संबंध छे. हजु आगली गाथामां पण तेज बाबत स्पष्ट करी देखाडे छे.

महिलाण सुबहुयाणवि, मज्झाओ इह समत्त घरसारो ॥
रायपुरिसेहिं निज्जइ, जणेवि पुरिसो जहिं नत्थि ॥ १९ ॥

शब्दार्थ-"आलोकने विषे पण ज्यां पुरुष-पुत्र नथी त्यां घणी स्त्रीओना मध्यमांथी पण समस्त घरनो सार राजपुरुषो लइ जाय छे." १९.

भावार्थ-अपुत्रनुं धन राजा लइ जाय एवो लोकमां प्रचार छे, तेथी जेना कुळमां पाछळ पुत्र न होय तेनुं धन घणी स्त्रीओ अथवा पुत्रीओ होय छतां पण राजा लइ जाय छे तेथी पुरुषनुंज प्रधानपणुं छे.

हवे आत्मसाक्षीए धर्म करवा विषे कहे छे—

किं परजणबहुजाणावणाहिं, वरं मप्पसख्खियं सुकयं ॥
इह भरहचक्कवट्टी, पसन्नचंदो य दिट्ठंता ॥ २० ॥

शब्दार्थ–"हे आत्मा! परजनने बहु जणाववाथी शुं? आत्मसाक्षिक सुकृत तेज श्रेष्ठ छे. अहीं भरत चक्रवर्ती अने प्रसन्नचंद्रनुं दृष्टांत जाणवुं." २०.

भावार्थ–'में आ अनुष्ठान कर्युं' एम परजन एटले बीजाओने बहु जणाववाथी शो लाभ छे? आत्मसाक्षिक धर्म करवो तेज श्रेष्ठ छे. आ विषय उपर भरत चक्रीनुं दृष्टांत छे के जेमणे यत्नवडे करेला आत्मसाक्षिक अनुष्ठानथी सिद्धि सुखने प्राप्त कर्युं छे. प्रसन्नचंद्र राजर्षिनुं पण आ विषय उपरज दृष्टांत छे.

तेमां प्रथम भरतचक्रीनुं दृष्टांत कहे छेः–

अयोध्या नगरीमां ऋषभदेवना पुत्र **भरत** नामे चक्रवर्ती थया हता. ज्यारे श्री ऋषभदेवस्वामीए चारित्र ग्रहण कर्युं ते वखते पोताना सो पुत्रोने पोतपोतानां नामवाळा देशो आप्या. **बाहुबलीने** बहुलि देशमां तक्षशिला नगरीनुं राज्य आप्युं अने भरतने अयोध्या नगरीनुं राज्य आप्युं. एक दिवस भरतराजा सभामां बेठेला छे ते वखते **यमक** अने **समक** नामना बे पुरुषो वधामणी देवाने सभास्थानना मुख्य द्वार पासे आव्या; प्रतिहारे भरत राजाने तेओनुं आगमन निवेदन कर्युं एटले भ्रूसंज्ञाथी द्वारपाळने आववा देवानो हुकम आपवाथी यमक अने समक सभामां आव्या. तेओ बंनेए हाथ जोडी आशीर्वाद पूर्वक राजानी स्तुति करी. पछी तेमांना यमके विज्ञप्ति करी के–'हे देव! **पुरिमताल**[1]पुरना शकट नामना उद्याननें विषे श्री ऋषभस्वामीने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं छे, ए वधामणी आपवा माटे हुं आव्यो छुं.' त्यार पछी समके कह्युं के–'हे देव! एक हजार देवताओथी सेवायेलुं अने करोडो सूर्य जेवो प्रकाश आपतुं चक्ररत्न आयुधशाळामां उत्पन्न थयुं छे.' आ प्रमाणे बे माणसना मुखथी बे वधामणी सांभळीने भरत राजा अति हर्ष पाम्यो. पछी तेमने जीवित पर्यंत देतां अने भोगवतां खुटे नहि एटलुं धन आपीने ते बंनेनुं सन्मान कर्युं. हवे भरत विचार करवा लाग्या के–'मारे प्रथम कोनो उत्सव करवो उचित छे? केवळज्ञाननो के चक्रनो?' ए प्रमाणे विचार करतां पाछुं तेणे चिंतव्युं के–'मने धिक्कार छे के में आ शुं चिंतव्युं? अक्षय सुखना दाता पिता क्यां! अने मात्र संसारसुखनुं हेतुभूत चक्र क्यां! वळी तातनी पूजा करवाथी चक्रनी पूजा पण थइज गइ.' ए प्रमाणेनो निश्चय करी मोटा आडंबर पूर्वक पुत्रमोहथी विह्वल बनेला अने 'ऋषभ! ऋषभ!'

---

[1] अयोध्या नगरीनु पुरिमताल नामे परुं हतुं.

ए नामनो जप करता एवा पोताना पितामही मरुदेवाने गज उपर बेसाडीने भरत राजा ऋषभ स्वामीने वंदन करवा चाल्या. मार्गमां भरते मरुदेवाने कह्युं के–"माता! तमे स्वपुत्रनी समृद्धिने जुओ. तमे मने हमेशां कहेता हता के–'मारो पुत्र वनमां भटके छे अने दुःख अनुभवे छे, परंतु तुं तेनी संभाळ करतो नथी.' आ प्रमाणे दररोज मने ओळंभो आपता हता; पण हवे तमारा पुत्रनुं ऐश्वर्य जुओ."

ए अवसरे चोसठ सुरेंद्रोए एकठा थइने समवसरण रच्युं. करोडो देवदेवीओ एकठा मळ्यां. विविध प्रकारनां वाजित्रोना शब्दोथी गगनमंडळ गाजी रह्युं. जयजय शब्दो साथे गीतगान पूर्वक प्रभु सिंहासन उपर बेसीने देशना आपवा लाग्या. ते वखते देवदुंदुभिनो ध्वनि अने जयजयना शब्दो सांभळीने मरुदेवा माता कहे छे के–'आ कौतुक शुं छे?' भरते कह्युं के–'आ तमारा पुत्रनुं ऐश्वर्य छे.' मरुदेवा विचारे छे के–'अहो! पुत्रे आटली बधी समृद्धि मेळवी छे?' ए प्रमाणे उत्कंठा पूर्वक आनंदाश्रु आववाथी तेमनां बंने नेत्रनां पडळ खुली गयां अने सर्व प्रत्यक्ष जोयुं. जोइने विचार्युं के–"अहो! आ ऋषभ आवुं ऐश्वर्य भोगवे छे! परंतु एणे मने एकवार संभारी पण नथी. हुं तो एक हजार वर्ष पर्यंत पुत्रमोहथी दुःखित थइ अने पुत्रना मनमां तो मोहनुं किंचित् कारण पण जणातुं नथी. अहो! मोहनी चेष्टाने धिक्कार छे! मोहांध माणसो कंइ पण जाणता नथी." ए प्रमाणे वैराग्यमग्नपणाथी क्षपकश्रेणी उपर आरुढ थया अने आठे कर्मनो क्षय करी अंतकृत केवळी थइने मोक्षे गया. देवताओए महोत्सव कर्यो. इंद्र आदि सर्व देवोए समवसरणमांथी त्यां आवीने मरुदेवा माताना शरीरने क्षीरसागरना प्रवाहमां वहेतुं मूक्युं. पछी शोकमग्न भरतने अग्रेसर करीने सौ समवसरणमां आव्या. भरत प्रभुने त्रण प्रदक्षिणा करीने यथायोग्य स्थाने बेठा अने प्रभुनी देशना सांभळी तेमनो शोक नष्ट थयो. देशनाने अंते प्रभुने वांदी श्रावकधर्म अंगीकार करी अयोध्यामां आव्या, अने पछी चक्रनो उत्सव कर्यो.

आठ दिवस गया पछी चक्र पूर्व दिशामां चाल्युं. भरत राजा पण देश जीतवाने माटे चक्रनी पाछळ सैन्य सहित चाल्या. एकेक योजननुं दररोज प्रयाण करतां केटलेक दिवसे पूर्व समुद्रने किनारे आवी सैन्यनो पडाव नाख्यो. त्यां भरते अठमनुं तप कर्युं; अने मागध नामना देवनुं मनमां ध्यान करीने स्थित रह्या. त्रण दिवस पछी रथमां बेसी समुद्रना जळमां रथनी धरी पर्यंत प्रवेश करी पोताना नामथी अंकित बाणने धनुष्यमां सांधीने ते देवप्रति छोड्युं. ते बाण बार योजन जइने मगधदेवनी सभामां सिंहासन साथे अथडाइने भूमि उपर पड्युं. बाणनुं पडवुं जोइ मगधदेव क्रोधायमान थइ गयो. पछी ते बाण

हाथमां लइ तेना परना अक्षरो वांच्याः एटले भरत चक्रवर्तीने आवेला जाणी कोपरहित थइ भेटणुं लइ परिवार सहित तेमनी सन्मुख चाल्यो. नजीक आवीने ते चक्रवर्तीना चरणमां पड्यो ने बोल्यो के–'हे स्वामिन्! मारो अपराध क्षमा करो, हुं तमारो सेवक छुं; आटला दिवस सुधी हुं स्वामीरहित हतो, हवे आपना दर्शनथी सनाथ थयो छुं.' ए प्रमाणे कही, नमस्कार करी, भेट धरी, रजा लइने स्वस्थाने गयो. पछी भरतचक्रीए छावणीमां पाछा आवी अट्ठम तपनुं पारणुं कर्युं.

त्यारपछी पाछुं चक्र आकाशमां चाल्युं. सैन्य पण तेनी पाछळ चाल्युं. अनुक्रमे तेओ दक्षिण समुद्रने किनारे आव्या. पूर्ववत् ते दिशाना स्वामी **वरदामदेवने** पण जीत्यो. त्यारबाद पश्चिम दिशामां **प्रभासदेवने** जीतीने चक्रे उत्तर दिशा भणी प्रयाण कर्युं. अनुक्रमे वैताढ्य पर्वत पासे आवीने चक्रवर्ती अट्ठम तप करी **तमिस्रा** गुफाना अधिष्ठापक **कृतमालदेवनुं** मनमां ध्यान करीने स्थित रह्या. अट्ठम तपने अंते ते देव प्रत्यक्ष थयो अने तामिस्रा गुफानुं द्वार उघाडयुं. सैन्य सहित भरत राजाए तमिस्रा गुफामां प्रवेश कर्यो. मणिरत्नना प्रकाशवडे सैन्य सहित आगळ चालतां **निम्नगा** अने **उन्निम्नगा** नामनी बे नदीओ आवी. ते नदीओ चर्म रत्नवडे उतर्या, अने आगळ चाली गुफाना बीजा द्वार पासे आवी सैन्यने बहार काढयुं. हवे त्यां घणा म्लेच्छ राजाओ रहे छे तेओ एकठा थया अने चक्रीनी साथे युद्ध करवा लाग्या. चक्रीए ते सघळाओने जीती लीधा. तेओ चक्रीना सेवको थया. त्यां आवेला उत्तर तरफना त्रणे खंडने जीतीने चक्री पाछा वळ्या. मार्गे चालतां गंगाने तीरे सैन्यनो पडाव नाख्यो. त्यां नव निधिओ प्रगट थया. नव निधाननुं स्वरुप आ प्रमाणेः—

"१ नैसर्प, २ पांडुक, ३ पिंगळ, ४ सर्वरत्न, ५ महापद्म, ६ काळ, ७ महाकाळ, ८ माणवक ने ९ शंख–ए प्रमाणे तेनां नामो छे. ते गंगाना मुखमां रहेनारा छे. आठ पैडांवाळा, आठ योजन उंचा, नव योजन विस्तारवाळा ने बार योजन लांबा मंजुषाने आकारे छे. तेना वैडूर्यमणिना कमाड (बारणा) छे, कनकमय छे, विविध प्रकारनां रत्नोवडे परिपूर्ण छे, अने तेना अधिष्ठाता देवो तेज नामना पल्योपमना आयुष्यवाळा होय छे."

चक्रीए गंगाने तीरे रहीने आठ दिवस सुधी ते निधान संबंधी उत्सव कर्यो. गंगानदीनी अधिष्ठायिका **गंगा** नामनी देवी भरतचक्रीने पोताना आवासमां लइ गइ. त्यां तेनी साथे एक हजार वर्ष पर्यंत भोग भोगव्या. त्यारपछी चक्र आगळ चाल्युं, एटले चक्रीए वैताढ्य पर्वत पासे आवी तेनी उपर रहेनारा **नमि** अने **विनमि**

नामना विद्याधरोने जीत्या. विनमि विद्याधरे पोतानी पुत्री चक्रीने आपी. ते स्त्रीरत्न थइ. ए प्रमाणे भरतचक्री साठ हजार वर्ष पर्यंत दिग्विजय करीने अयोध्यामां पाछा आव्या; ते षट्खंडाधिपति महा ऋद्धिमान थया. तेमनी ऋद्धिनुं स्वरूप कहेछे—चोराशी लाख हाथी, तेटलाज रथो, तेटलाज अश्वो, छन्नुकोटी पायदळ, बत्रीश हजार देशो, बत्रीश हजार मुकुटबंध राजाओ जेना सेवक छे, अडताळीश हजार पाटण, बोंतेर हजार नगरो, छन्नुकोटी गामो, चौद रत्नो, नव निधि, साठ हजार वंशावळी कहेनारा भाटो, साठ हजार पंडितो, दश कोटी ध्वजा धारण करनारा, पांच लाख मशालची, वीश हजार सुवर्ण आदि धातुनी खाणो, पचीश हजार देवो जेना सेवको छे, अढार कोटी घोडेस्वार जेनी पाछळ चाले छे—आ प्रमाणेनी ऋद्धि प्राप्त थइ छतां ते मनथी विरक्त रहेता हता. ए प्रमाणे घणालाख पूर्वो व्यतीत थतां एकदा भरतचक्री पोतानी शृंगारशालामां शरीर-प्रमाण आदर्श (काच) मां पोतानुं रुप जोवा लाग्या. ते वखते दरेक अवयवनी सुंदरता निहाळतां एक आंगळीने वींटीरहित होवाथी अत्यंत शोभारहित लागती जोइने मनमां विचार करवा लाग्या के-"अहो ! देहनी असारता ! परपुद्गलोथीज शरीर शोभे छे, पोताना पुद्गलोथी शोभतुं नथी. अरे ! में शुं कर्युं ! आ असार देहनी खातर में घणा आरंभो कर्या. आ असार संसारमां सघळुं अनित्य छे. कोइ कोइनुं नथी. मारा नाना भाइओने धन्य छे के तेमणे वीजळीना चमकारानी जेवां चंचल राज्य-सुखने तजी दइने संयम स्वीकार्युं. हुं तो अधन्य छुं, जेथी आ अनित्य एवा संसारी सुखमां नित्यपणानी बुद्धिथी मोह पामेलोछुं. आ देहने धिक्कार छे ! अने सर्पनी फणा जेवा आ विषयोने पण धिक्कार छे ! हे आत्मा ! आ संसारमां तुं एकलोज छे. बीजुं कोइ तारुं नथी." आ प्रमाणे विचार करतां परमपद पर आरोहण करवानी निःसरणी रूप क्षपकश्रेणीए आरूढ थया; अने चार घन घातिकर्मनो क्षय करीने उज्वल केवळ-ज्ञान प्राप्त कर्युं. ते अवसरे शासनदेवीए आवीने मुनिनो वेष अर्पण कर्यो. ते साधुनो वेष धारण करीने तेमणे केवलीपणे पृथ्वी उपर विहार कर्यो, अने अनुक्रमे मोक्षसुख प्राप्त कर्युं. एटलामाटे आत्मसाक्षिक अनुष्ठानज फळदायी छे; अन्य साक्षिक अनुष्ठान फळदायी नथी.

आ प्रमाणे अध्यात्मिक अनुष्ठानमां भरतचक्रीनुं दृष्टांत जाणवुं.

हवे प्रसन्नचंद्र राजर्षिनुं दृष्टांत कहेछे—

पोतनपुर नगरमां **प्रसन्नचंद्र** नामनो राजा हतो. ते अति धार्मिक, सत्य-वादी तथा न्यायधर्ममां अद्वितीय निपुण हतो. ते एक दिवसे संध्याकाळे झरुखामां

बेसी नगरनुं स्वरूप जोतो हतो. ते समये नाना प्रकारनां रंगवाळां वादळां थयां. संध्यानो रंग खील्यो. ते जोइ राजाने अति हर्ष थयो. पछी ते तेना तरफ पुनः पुनः दृष्टि करवा लाग्यो. एटलामां ते संध्यास्वरूप क्षणिक होवाथी जोतांजोतांमांज नाश पामी गयुं. ते जोइ राजा विचार करवा लाग्यो के—अहो ! संध्याना रंगनी सुंदरता क्यां गइ ! पुद्गलो अनित्य छे. संध्याना रंगनी पेठे आ देह पण अनित्य छे. संसारमां प्राणीओने कंइ पण सुख नथी. कह्युं छे के—

दुःखं स्त्रीकुक्षिमध्ये प्रथममिहभवे गर्भवासे नराणाम्
बालत्वे चापि दुःखं मलल्लुलितवपुः स्त्रीपयःपानमिश्रम् ।
तारुण्ये चापि दुःखं भवति विरहजं वृद्धभावोप्यसारः
संसारे रे मनुष्या वदत यदि सुखं स्वल्पमप्यस्ति किंचित् ॥

"माणसोने आ संसारमां प्रथम स्त्रीनी कुक्षिनी विषे गर्भवासमां दुःख होय छे, बाल्यावस्थामां पण माताना दुधना पानथी तेमज मळमूत्रथी शरीर खरडायेलुं रहेवाथी दुःख छे, युवावस्थामां पण विरहथी उत्पन्न थयेलुं दुःख छे, अने वृद्धभाव तो तद्दन असारज छे. माटे हे मनुष्यो ! जो आ संसारमां स्वल्प पण कांइ सुख होय तो कहो."

ए प्रमाणे वैराग्यथी जेनुं मन रंजित थयुं छे एवो राजा चिंतवन करे छे के—'आ संसारमां वैराग्यनी साथे बरोबरी करी शके तेवुं कोइ पण सुख नथी.' कह्युं छे के—

भोगे रोगभयं सुखे क्षयभयं वित्तेऽग्निभूभृद्भयम्
दास्ये स्वामिभयं गुणे खलभयं वंशे कुयोषिद्भयम् ।
माने म्लानिभयं जये रिपुभयं काये कृतांताद्भयम्
सर्वं नामभयं भवेऽत्र भविनां वैराग्यमेवाऽभयम् ॥

"भोगमां रोगनो भय, सुखमां क्षयनो भय, धनने विषे अग्नि ने राजानो भय, दासत्वमां स्वामीनो भय, गुणमां खळपुरुषनो भय, वंशमां कुनारीनो भय, मानने विषे तेनी हानि थवानो भय, जयने विषे रिपुनो भय अने देहने विषे यम राजानो भय होय छे. ए प्रमाणे आ संसारमां मनुष्योने सर्व भययुक्त होय छे, मात्र वैराग्यज एक भयरहित छे."

ए प्रमाणे विचारी वैराग्यमां तत्पर थयेल राजाए पोताना बाल्यावस्थावाळा पुत्रने राज्य उपर बेसाडीने पोते दीक्षा ग्रहण करी. तत्काळ जेणे केशनो लोच कर्यो छे एवो ते राजा पृथ्वी उपर विहार करतां राजगृहीना उद्यानमां कायोत्सर्ग मुद्राथी उभो रह्यो. ते अवसरे श्रीमान वर्धमान स्वामी–एक गामथी बीजे गाम विहार करतां चौद हजार साधुओथी परिवृत थयेला, देवताओए निर्माण करेलां सोनानां कमलो उपर पोताना चरणोने धारण करतां राजगृह नगरना गुणशील नामना उद्यानमां समवसर्या. देवोए आवीने त्यां समवसरण रच्युं. वनपाळके त्वराथी श्रेणिक राजा पासे जइने विज्ञप्ति करी के–'हे स्वामिन्! आपना मनने घणाज वहाला श्री महावीर स्वामी वनमां समवसरेला छे.' ए प्रमाणेनुं वनपाळकनुं बोलवुं सांभळीने राजाने घणो हर्ष थयो. राजाए तेने कोटी द्रव्य अने सोनानी जीभ आपी. पछी श्रेणिक राजा मोटा आडंबरसहित प्रभुने वंदन करवा चाल्यो. सैन्यना अग्र भागे सुमुख ने दुर्मुख नामना बे चोपदारो चालता हता. तेओए प्रसन्नचंद्र मुनिने वनमां कायोत्सर्ग मुद्राए उभा रहेला जोया. प्रथम सुमुखे कह्युं के–'आ मुनिने धन्य छे के जेणे आवी मोटी राज्यलक्ष्मी तजी दइने संयम रूपी समृद्धि ग्रहण करेली छे. एना नाम मात्रनो उच्चार करवाथी पाप जाय तो पछी सेवा करवाथी जाय तेमां तो शुं कहेवुं!' पछी दुर्मुख बोल्यो के–'अरे! आ मुनि तो अधन्य अने महापापी छे. तुं एने वारंवार शामाटे वखाणे छे? एना जेवो पापी तो कोइ नथी.' सुमुखे मनमां चिंतव्युं के–'अहो! दुर्जननो स्वभावज आवो होय छे के जे गुणोमांथी पण दोषनेज ग्रहण करे छे.' कह्युं छे के–

आक्रांतेव महोपलेन मुनिना शप्तेव दुर्वाससा
सातत्यं बत मुद्रितेव जतुना नीतेव मूर्छां विषैः।
बद्धेवातनुरज्जुभिः परगुणान् वक्तुं न शक्ता सति
जिह्वा लोहशलाकया खलमुखे विद्धेव संलक्ष्यते ॥

"मोटा पथ्थरथी दबायेली होय नहि! दुर्वासा मुनिथी शाप पामेली होय नहि! लाखथी निरंतर चोटाडी दीधेली होय नहि! विषथी मूर्छित थयेल होय नहि! अथवा जाडा दोरडाथी बांधेली होय नहि! तेवी खल माणसनी जीभ पारकाना गुणो बोलवाने अशक्त होती सती लोढाना खीलाथी जाणे विंधेली होय नहि तेवी जणाय छे." वळी कह्युं छे के–

आर्योऽपि दोषान् खलवत्परेषां, वक्तुं हि जानाति परं न वक्ति।
किं काकवत्तीव्रतराननोऽपि, कीरः करोत्यस्थिविघट्टनानि ॥

"सज्जन माणसने पण खल माणसनी पेठे पारकाना दोषो बोलतां आवडे छे पण ते बोलता नथी. शुं कागडानी माफक पोपट पण तीव्र चांचवाळो नथी ? छे; छतां ते अस्थिना टुकडा करे छे ? नथी करतो."

पछी सुमुखे कह्युं-' हे दुर्मुख ! तुं आ मुनीश्वर महात्माने शामाटे निंदे छे ?' त्यारे दुर्मुखे कह्युं-" अरे ! तेनुं नाम पण लेवा जेवुं नथी. कारणके आ मुनिए पांच वर्षना बाळकने राज्यगादी उपर बेसाडीने पोते दीक्षा लीधी छे; परंतु तेना वैरीओए एकठा थइने तेना नगरने लुंट्युं छे, तेना नगरवासी जनो आक्रंद अने विलाप करे छे. मोटुं युद्ध थाय छे. हमणां तेना शत्रुओ ते बाळकने हणीने राज्य ग्रहण करशे. आ सघळुं पाप तेना शिरे छे." आ प्रमाणे सांभळीने ध्यानमां स्थित थयेला प्रसन्नचंद्र ऋषिए चिंतव्युं के-' अरे ! हुं जीवतां जो मारा शत्रुओ मारा बाळकने मारीने राज्य ग्रहण करे, तो ए मानना हानि तो मारी पोतानीज छे.' ए प्रमाणे चिंतवतां ध्यानथी चलित थइने मनमां शत्रुओनी साथे युद्ध करवा लाग्या; अति भयंकरपणाने पाम्या अने तेमां एकाग्र थवाथी रौद्र ध्यान ध्यावा लाग्या. मनवडेज शत्रुओने हणे छे, अने 'में अमुक शत्रुने मार्यो' एवी बुद्धिथी 'बहु सारुं थयुं' एम मुखथी पण बोले छे. 'हवे बीजाने मारुं' ए प्रमाणे ते फरीने पण मनथी युद्धमां प्रवर्ते छे. एवे समये हाथी उपर बेठेला श्रेणिके प्रसन्नचंद्र मुनिने जोया. एटले 'अहो ! आ राजर्षिने धन्य छे के जे एकाग्र मनथी ध्यान करे छे.' एम विचारी श्रेणिक राजाए गज उपरथी उतरी मुनिनी त्रण प्रदक्षिणा करीने तेमने वारंवार वांद्या अने स्तुति करी. पछी तेमने वांदीने मनमां स्तुति करतो हाथी उपर चढी श्री महावीर स्वामी समीपे आव्यो. समवसरण जोइने पंचाभिगम[1] जाळववानी विधिथी जिनेश्वरने वंदन करीने बे हस्तकमळ जोडी आ प्रमाणे स्तुति करी—

अद्याभवत्सफलता नयनद्वयस्य, देव त्वदीयचरणांबुजवीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोकतिलक प्रतिभासते मे, संसारवारिधिरयं चुलुकप्रमाणः ॥

"हे देव ! तमारां चरणकमळना दर्शनथी मारां बन्ने नेत्रो आज सफल थयां; अने हे त्रिलोकतिलक ! आज आ संसारवारिधि मने एक अंजलिप्रमाणज भासे छे."

---

१ चैत्यवंदन भाष्यमां कहेला बन्ने प्रकारना पाच पांच अभिगम अहीं जाणी लेवा.

दिट्ठे तुहमुहकमले, तिन्नि विणट्ठाइं निरवसेसाइं ।
दारिद्दं दोहग्गं, जम्मंतरसंचियं पावं ॥

"तमारुं मुखकमळ देखवाथी दारिद्र, दौर्भाग्य अने जन्मांतरसंचित पाप- ए त्रणे वानां सर्वथा नाश पाम्यां."

इत्यादि एकसो ने आठ काव्योथी जिनेन्द्रने स्तवीने ते योग्य स्थान उपर बेठो. पछी प्रभुए क्लेशने नाश करनारी धर्मदेशना शरु करी. देशनाने अंते श्रेणिक राजाए वीरस्वामीने पूछ्युं के-'हे प्रभु! जे अवसरे में प्रसन्नचंद्र मुनिने वांद्या, ते अवसरे जो ते काळधर्म पामे तो तेनी गति क्यां थाय? स्वामीए कह्युं के-'जो ते वखते मरण पामे तो सातमी नरके जाय.' फरी पूछ्युं 'हमणा काळ करे तो क्यां जाय?, भगवाने कह्युं के-'छठ्ठी नरके जाय.' फरीथी श्रेणिके क्षणमात्र विलंब करीने पूछ्युं क-'हवे क्यां जाय?' भगवाने कह्युं के-'पांचमी नरकभूमिए जाय.' क्षण पछी फरीथी पूछतां भगवाने कह्युं के-'चोथी नरकभूमिए जाय.' ए प्रमाणे पुनः पुनः पूछतां ते 'त्रीजी, बीजी ने पहेली नरकभूमिए जाय' एवो उत्तर भगवाने आप्यो. फरीथी श्रेणिक राजाए पूछ्युं के-'हवे क्यां जाय?' त्यारे भगवाने कह्युं के-'प्रथम देवलोकमां जाय.' एम पुनः पुनः पूछतां 'ते बीजा, त्रीजा, चोथा, पांचमा, छठ्ठा, सातमा, आठमा, नवमा, दशमा, अग्यारमा ने बारमा देवलोके जाय.' ए प्रमाणे अनुक्रमे 'नव ग्रैवेयकमां अने पांच अनुत्तर विमानो पर्यंत ते जाय' एवो उत्तर श्रेणिक राजाए पूछतां भगवाने आप्यो. आ रीते सभामां प्रश्नोत्तर चालता हता तेवे समये आकाशमां देवदुंदुभिनो नाद सांभळीने श्रेणिके पूछ्युं के-' हे प्रभु! आ दुंदुभिनो नाद क्यां थायछे?' प्रभुए कह्युं के-'प्रसन्नचंद्र राजर्षिने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं; तेथी देवो दुंदुभि वगाडे छे अने जय जय शब्द करेछे.' श्रेणिके पूछ्युं के-'प्रभु! आ कौतुक शुं ते मारा समजवामां आवतुं नथी, माटे आनुं स्वरूप शुं छे ते जाणवा माटे हे स्वामिन्! तेनो सघळो वृत्तांत कहेवा कृपा करो.' प्रभुए कह्युं के-'हे श्रेणिक! सर्वत्र मन एज प्रधान छे.' कह्युं छे के-

मन एव मनुष्याणां, कारणं बंधमोक्षयोः ।
क्षणेन सप्तमीं याति, जीवस्तंदुलमत्स्यवत् ॥

"मनुष्योने मन एज बंध तथा मोक्षनुं कारण छे. जीव क्षणमात्रमां तंदुलमत्स्यनी जेम सातमी नरके जायछे." वळी कह्युं छे के-

मणमरणेंदिअ मरणं, इंदियमरणे मरंति कम्माइं ।
कम्ममरणेण मुक्खो, तम्हा मणमारणं पवरं ॥

"मनने मारवाथी इंद्रियो मरे छे, इंद्रियोने मारवाथी कर्म मरे छे अने कर्मने मारवाथी मनुष्य मोक्षने पामे छे; माटे मनने मारवुं एज श्रेष्ठ छे."

वळी प्रभुए कह्युं के–"हे श्रेणिक ! जे अवसरे तें प्रसन्नचंद्रने वांद्या हता ते अवसरे तारा चोपदार दुर्मुखनां वचन सांभळीने ते ध्यानथी चलित थया हता, अने शत्रुओनी साथे मनमां युद्ध करता हता. तुं तो एम जाणतो हतो के आ एक मोटा मुनीश्वर छे, ते एकाग्र मनथी ध्यान करेछे; परंतु तेणे ते अवसरे शत्रुओ साथे मनमां मोटुं युद्ध आरंभेलुं एतुं: तो ते युद्धथी तेणे सातमी नरके जवा योग्य आयुष्यनां पुद्गलो मेळव्यां हतां, पण ते पुद्गलो निकाचित बंधथी बांधेला नहोतां, त्यारपछी तुं तो तेमने वांदीने अहीं आव्यो अने तेणे तो मनमां थता युद्धमां शस्त्रोवडे सर्व शत्रुओने हण्या अने शस्त्रो पण सघळां खपी गयां. एवामां एक शत्रुने सन्मुख उभेलो दीठो; पण पोतानी पासे एके शस्त्र रह्युं नहोतुं. तेथी रौद्र ध्यानमां मग्न थयेला प्रसन्नचंद्रे विचार्युं के–'आ मारा मस्तकपर बांधेला लोढाना पाटाथी आ शत्रुने मारुं.' एवी बुद्धिथी तेणे साक्षात् पोतानो हाथ माथा उपर मूक्यो के तरतज पोतानुं नवीन लोच करेलुं माथुं जोइने ते रौद्रध्यानथी पाछा वळ्या अने विचारवा लाग्या के–'अहो ! मने धिक्कार छे ! अज्ञानथी जेनी मति अंध थइ गयेली छे एवा में रौद्रध्यानमां मग्न थइने आ शुं चिंतव्युं ? जेणे सर्व सावद्य संगनो त्याग कर्यो छे, योगने ग्रहण करेल छे अने भोगोने वमी नांख्या छे एवा मने आ युद्ध घटतुं नथी. कोनो पुत्र ! कोनी प्रजा ! कोनुं अंतःपुर ! अरे दुरात्मन् जीव ! तें आ शो विचार कर्यो ! आ सर्व अनित्य छे.' कह्युं छे के—

चला विभूतिः क्षणभंगि यौवनम् कृतान्तदंतान्तरवर्ति जीवितं ।
तथाप्यवज्ञा परलोकसाधने अहो नृणां विस्मयकारिचेष्टितम् ॥

"आ विभूतिओ चलित छे, यौवन क्षणभंगुर छे, जीवित यमराजाना दांतनी मध्ये रहेलुं छे, तथापि परलोकसाधनमां माणस अवज्ञा करे छे; माटे मनुष्योनी चेष्टा अति आश्चर्यकारक छे !"

आ प्रमाणे शुभ ध्यानमां लीन थयेला प्रसन्नचंद्र मुनिए क्षणे क्षणे खरावमांखरात्र अध्यवसायथी बांधेला कर्मदलोने मूळमांथी उखेडी नाखवा

मांड्यां. शुभ अध्यवसायना बलथी साते नरकभूमिने योग्य कर्मदलोनुं छेदन करीने अने उत्तरोत्तर सर्वार्थसिद्धि विमान पर्यंत जवा योग्य कर्मदलने मेळवीने अनुक्रमे वृद्धि पामती शुभ परिणामनी धारावडे परमपदनी प्राप्तिमां परम कारण रूप क्षपक श्रेणीनो आश्रय करी, घातिकर्मनो नाश करी तरतज अति उज्वल केवळज्ञान मेळव्युं. तेना प्रभावथी देवताओ एकठा थइ गीतगानादि पूर्वक तेनो महोत्सव करे छे."

आ प्रमाणे प्रभुना मुखथी सांभळीने श्रेणिक राजाए सविस्मय वारंवार पोतानुं मस्तक धुणाव्युं, अने वीरप्रभुने वंदन करी संदेहरहित थइ स्वस्थाने गया. प्रभुए पण अन्यस्थाने विहार कर्यो. प्रसन्नचंद्र राजर्षिए पण घणां वर्षो सुधी केवली-पणे भूमि उपर विहार करीने प्रांते मोक्षपद प्राप्त कर्युं.

'आ दृष्टांत उपरथी सार ए ग्रहण करवो के आत्मसाक्षीए करेलुं आचरणज पुण्यपापना फळने आपनार छे.'

एकला वेषनी अप्रामाण्यता बतावेछे—

वेसोपि अप्पमाणो, असंजमपहेसु वट्टमाणस्स ।
किं परियत्तियवेसं, विसं न मारेइ खज्जंतं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—"असंयममार्गमां वर्तता मुनिनो वेष पण अप्रमाण छे. केमके शुं वेष परावर्तन करेल मनुष्यने विष खाधुं सतुं मारतुं नथी ? मारे छे."

भावार्थ—षट्कायना आरंभादिकमां वर्तता एवा मुनिनो रजोहरणादि वेष कामनो नथी. केवळ वेषवडे आत्मशुद्धि थती नथी. अहीं दृष्टांत कहे छे के—एक वेष मूकीने बीजो वेष लीधो होय ते जो विष खाय तो मरण न पामे ? पामे. तेम संक्लिष्ट चित्त रूप विष असंयम मार्गमां प्रवर्तनारा मुनिने मुनिवेष छतां पण अनेक जन्म मरण आपे.

अहीं कोइ एम कहे के त्यारे तो वेषनुं शुं काम छे ? केवळ भावशुद्धिज करवी. तेने गुरु कहे छे के एम नहि, वेष पण धर्मनो हेतु होवाथी मुख्य छे ते आ प्रमाणे—

धम्मं रक्खइ वेसो, संकइ वेसेण दिक्खिओमि अहं ॥
उमग्गेण पडंतं, रक्खइ राया जणवउव्व ॥ २२ ॥

शब्दार्थ—"वेष धर्मनुं रक्षण करे छे, वेषे करीने हुं दीक्षित छुं एम धारीने शंकायछे, अने राजा जनपदने राखे तेम उन्मार्गे पडताने वेष राखेछे." २२

गाथा २१—असंजमपएसु. गाथा २२—जणपउव्व.

भावार्थ–चारित्रधर्मनी वेष रक्षा करे छे अने कोइपण प्रकारनुं पापकार्य आचरता हुं मुनिवेषधारक छुं–दीक्षित छुं एवा विचारथी माणस शंकायछे–लज्जा पामेछे–पाप करी शकतो नथी. वळी राजा जेम जनपदनी एटले पोताना देशना लोकोनी रक्षा करेछे अर्थात् राजाना भयथी जेम प्रजावर्ग उन्मार्गे चाली शकतो नथी, प्रवर्त्यो होय तोपण राजभयथी पाछो निवर्ते छे; तेम वेष प्राणीने उन्मार्गे पडतां रोकेछे–उन्मार्गे पडी शकतो नथी–पड्यो होय तोपण पाछो ओसरे छे.

अप्पाण जाणइ अप्पा, जहट्ठिओ अप्पसक्खिओ धम्मो ॥
अप्पा करेइ तं तह, जह अप्पसुहावहं होइ ॥ २३ ॥

शब्दार्थ–"आतमाज यथास्थित पोताना आत्माने जाणेछे, माटे आत्मसाक्षिक धर्म (प्रमाण छे.) तेथी आतमाए जे क्रियानुष्ठान आत्माने सुखकारक होय ते तेवा प्रकारेज करवुं के जे परभवमां हितकारक थाय." २३

भावार्थ—पोतानो आत्मा शुभ परिणाममां वर्तेछे के अशुभ परिणाममां वर्तेछे तेनी खरी खबर पोताना आत्मानेज पडे छे, कारणके पारकी चेतोवृत्ति छद्मस्थ जाणी शकता नथी; पण पोते जाणी शके छे.

जं जं समयं जीवो, आविसइ जेण जेण भावेण ॥
सो तम्मि तम्मि समये, सुहासुहं बंधए कम्मं ॥ २४ ॥

शब्दार्थ–"जीव जेजे समये जेवा जेवा भावे वर्तेछे ते ते समये ते (तेवा प्रकारना) शुभाशुभ कर्मने बांधेछे." २४

भावार्थ–समय ते अति सूक्ष्म काळ समजवो. जेवा शुभ के अशुभ परिणाममां आत्मा प्रवर्ततो होय.तेवां शुभ के अशुभ कर्मो बांधेछे, अर्थात् शुभ परिणामे वर्ततां शुभ कर्म बांधेछे, अशुभ परिणामे वर्ततां अशुभ कर्मो बांधेछे; ते कारण माटे शुभ भावज करवो, गर्वादिथी दूषित भाव न करवो. ते संबंधे हवे कहे छे–

धम्मो मएण हुंतो, तो नवि सीउन्हवायविज्झडिउ ॥
संवच्छरमणसिओ, बाहुबली तह किलिस्संतो ॥ २५ ॥

शब्दार्थ–"जो अभिमाने करीने धर्म थतो होत तो शीत उष्ण वायू विगेरेथी पराभव पामता अने एक वर्ष पर्यंत अशन विना रहेला बाहुबलि तेवा प्रकारनो कलेश न पामत." २५

गाथा २४—१ आविस्सइ. २ आवसइ. ॐ आसक्तो भवति.

गाथा २५–जंतो. ब्रह्ममिओ, मणसीओ. तो. अणसिओ—अनशितः=अशन विना स्थितः

भावार्थ–एक वर्ष पर्यंत आहाररहित उपवासी रह्या छतां अने अनेक प्रकारना परीसहो सहन कर्या छतां 'हुं मारा नाना भाइओने वंदना केम करुं ?' एवुं अभिमान हतुं त्यांसुधी बाहुबलिने केवळज्ञान न थयुं, अने मान तज्युं के तरत थयुं; माटे अभिमानवडे धर्म थइ शकतो नथी. अहीं बाहुबलिनुं दृष्टांत जाणवुं, ते आ प्रमाणे—

बाहुबलिनुं दृष्टांत.

भरतचक्रीए छ खंडनो विजय कर्या पछी पोताना अठ्ठाणुं भाइओने बोलाववाने तेणे दूतो मोकल्या. दूतोए जइने कह्युं के—'आपने भरत राजा बोलावे छे,' तेथी सघळा बंधुओ एकठा थइ विचार करवा लाग्या के—'भरत लोभ रूप पिशाचथी ग्रस्त थइ मत्त बनेलो छे. तेणे छ खंडनुं राज्य प्राप्त कर्युं छे छतां तेना लोभनी तृष्णा शांत थती नथी. अहो ! केवी लोभांधता !' कह्युं छे के—

लोभमूलानि पापानि, रसमूलानि व्याधयः ।
स्नेहमूलानि दुःखानि, त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भव ॥

"लोभ पापनुं मूळ छे, रस (स्वाद) व्याधिनुं मूळ छे, अने स्नेह दुःखनुं मूळ छे; माटे ए त्रणे वानांने त्यजीने सुखी था."

वळी कह्युं छे के—

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्तास्तपो न तप्तं वयमेव तप्ता ।
कालो न यातो वयमेव यातास्तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा ॥

"अमे भोग भोगव्या नहि पण अमे जाते भोगवाया, अमे तप कर्युं नहि पण अमे तप्त थया, काळ गयो नहि पण अमे गया अर्थात् अमारी वय गइ, अने तृष्णा जीर्ण थइ नहि पण अमे जीर्ण थया अर्थात् अमारी वय जीर्ण थइ."

"एटला माटे बलात्कारथी पण ते आपणुं राज्य ग्रहण करशे अने आपणे एनी सेवा करवी पडशे; माटे तेनी सेवा करवी के नहि ?" आ प्रकारना विचारने अंते 'तेनी सेवा करवी नहि' एवुं दरेक भाइए कबुल कर्युं–मुकरर कर्युं. पछी सघळा भाइओ श्रीऋषभस्वामी पासे पोतानो वृत्तांत निवेदन करवा गया. प्रभुने वंदन करी हाथ जोडीने विज्ञापना करी के–"हे प्रभु ! भरत मत्त थयोछे अने ते अमारुं राज्य ग्रहण करवाने उद्युक्त छे; माटे अमारे क्यां जवुं ? अमे तो आपे आपेला एक एक देशना राज्यथी पण संतुष्ट छीए; अने भरत तो छ खंडनुं राज्य मळ्या छतां पण संतुष्ट थतो नथी."

वां तेमनां वचन सांभळीने प्रभु बोल्या के—" हे पुत्रो ! परिणामे नरकगतिने आपनारी ए राज्यलक्ष्मीथी शुं विशेष छे ? आ जीवे अनंतवार राज्यलक्ष्मी अनुभवेली छे, तो पण आ जीव तृप्त थयेलो नथी. आ राज्यलीलानो विलास स्वप्न तुल्य छे" कह्युं छे के-

स्वप्ने यथायं पुरुषः प्रयाति, ददाति गृह्णाति करोति वक्ति ।
निद्राक्षये तच्च न किंचिदस्ति, सर्वं तथेदं हि विचार्यमाणम् ॥

" आ पुरुष (जीव) जेम स्वप्नने विषे प्रयाण करे छे, आपे छे, ग्रहण करे छे, कांइ कार्य करे छे अथवा बोले छे, पण निद्रानो क्षय थतां जेम तेमांनुं कांइ होतुं नथी तेम विचार करतां आ सघळुं—संसारी पदार्थमात्र तेवाज छे."

वळी—

संपदो जलतरंगविलोला, यौवनं त्रिचतुराणि दिनानि ।
शारदाभ्रमिव चंचलमायुः, किं धनैः कुरुत धर्ममनिंद्यम् ॥

"संपत्तिओ जळना तरंगो जेवी चपळ छे, यौवन त्रण चार दिवसनुंज छे अने आयुष्य शरद ऋतुना मेघनी पेठे चलित छे; तो धनथी शुं विशेष छे ? स्तुत्य एवो धर्मज करो. "

"माटे हे पुत्रो ! तमारे आटलो बधो मोहविलास शो ! कोना पुत्रो ? कोनुं राज्य ? कोनी स्त्री ? कोइ पण साथे आववानुं नथी." कह्युं छे के—

द्रव्याणि तिष्ठंति गृहेषु नार्यो, विश्रामभूमौ स्वजनाः श्मशाने ।
देहश्चितायां परलोकमार्गे, कर्मानुगो याति स एव जीवः ॥

" द्रव्य तो घरमांज पड्युं रहे छे, नारी विश्रामभूमि सुधी आवे छे, स्वजनो स्मशान सुधी आवे छे, अने छेवट देह चितामां रहे छे. पछी परलोकमार्गे तो कर्म सहित जीवज एकलो जाय छे."

" माटे तमे आ विनाशी राज्य त्यजी द्यो अने अक्षय एवुं मोक्षराज्य मेळवो."

आ प्रमाणेनी प्रभुनी देशना सांभळीने सघळाए दीक्षा लीधी अने निर्दोष चारित्र पाळवा लाग्या. दूतोए आवीने भरतने ए हकीकत निवेदन करी. एटले भरतचक्रीए ते भाइओना पुत्रोने बोलावीने सौसौनुं राज्य आप्युं.

हवे भरत राजा अयोध्या नगरीमां आव्या छतां चक्र आयुधशालामा प्रवेश करतुं नथी, तेथी सुषेण सेनापतिए तेमनी समीपे आवीने जणाव्युं के 'हे स्वामी ! चक्र आयुधशालामां प्रवेश करतुं नथी.' भरतचक्रीए पूछ्युं के-'तेनुं शुं कारण छे ?' सुषेण सेनापतिए कह्युं के-'स्वामिन् ! हजु पण कोइ शत्रु रह्यो होय तेम जणाय छे.' चक्रीए कह्युं के-'आ छखंडमां तो मारा माथा उपर कोइ पण शत्रु नथी.' त्यारे सुषेणे कह्युं के-"आपनो नानो भाइ बाहुबलि आपनी आज्ञा मानतो नथी. नानो भाइ छतां पण जो मोटा भाइनी आज्ञा माने नहि तो तेने शत्रुज समजवो. जेनी आज्ञा पोताना घरमां पण चालती नथी ते स्वामी शेनो ? तेथी तेने आज्ञावर्ती करवो जोइए." भरत राजाए विचार्युं के-'मारा भयथी मारा सघळा भाइओए तो चरित्र ग्रहण कर्युं छे, हवे बाहु रुपे मारे एकज भाइ रहेलोछे अने ते पण अनुज बन्धु छे तो तेना उपर शुं कराय ?' सुषेणे कह्युं के-"स्वामिन् ! आ बाबतमां विचार न करवो. गुणहीन भाइथी शो लाभ छे ? सोनानी छरी कांइ पेटमां मराय नहि. माटे दूत मोकलीने तेने अहीं बोलावो; परंतु हुं धारुंछुं के ते कोइ पण रीते अहीं आवशे नहि." एवां सुषेणनां वचनथी क्रोधित थयेल भरते सुवेग नामना दूतने बोलावीने कह्युं के-'तुं तक्षशिला नगरीमां मारा नाना भाइ बाहुबलि पासे जा अने तेने अहीं बोलावी लाव.' आ प्रमाणे भरतचक्रीनां वचन सांभळीने पुष्पनी माफक तेमनी आज्ञा माथे चडावी रथमां बेसीने परिवार सहित ते चाल्यो. मार्गे जतां तेने घणां अपशुकनो थयां; परंतु ते अपशुकनोए वार्या छतां स्वामीनी आज्ञा पाळवामां उद्युक्त थयेलो ते अविच्छिन्न चाल्यो. केटलेक दिवसे ते बहलीदेशमां पहोंच्यो. त्यांना लोकोए तेने पूछ्युं के-'तुं कोण छे? अने क्यां जायछे ?' सुवेगना अनुचरोए कह्युं के-'आ सुवेग नामनो भरत राजानो दूत छे अने ते बाहुबलिने बोलाववा माटे जायछे.' त्यारे लोकोए फरीथी कह्युं के-'ए भरत कोण छे?' सुवेगना सेवकोए कह्युं के-'ते छ खंडनो धणी छे, जगतनो स्वामी छे, अने ते लोकोमां पण प्रख्यात छे.' त्यारे ते लोको बोल्या के-"आटला दिवस पर्यंत तो अमे तेने सांभळ्यो नथी के ते क्यां रहे छे ? अमारा देशमां तो स्त्रीओना स्तननी कंचुकी उपर भरत होय छे तेने अमे भरत तरीके सांभळीए छीए, परंतु भरत राजा तो कोइ सांभळ्यो नथी. अमारो राजा क्यां ! अने ए भरत क्यां ! अमारा स्वामीना भुजदंडप्रहारने सहन करे तेवो आ दुनियामां कोइ नथी." आ प्रमाणे लोकोना मुखथी बाहुबलिना बळनो उत्कर्ष सांभळीने चकित थतो सतो सुवेग अनुक्रमे तक्षशिलाए पहोंच्यो; नगरीमां दाखल थयो अने बाहुबलिना सभामंडप पासे आव्यो. द्वारपाळे राजानी आगळ दूतनुं आगमन निवेदन कर्युं. तेनी आज्ञाथी दूत रथमां-

थी उतरी बाहुबलिनी समीपे जइ तेने पगे लाग्यो. बाहुबलिए दूतने पोताना भाइना कुशल समाचार आदि पूछतां दूते कह्युं के—"तमारो भाइ भरत कुशळ छे, अयोध्या नगरी कुशळ छे अने तेमना सवाकोटी पुत्रो पण कुशळ छे. जेना घरमां चौद रत्न अने नव निधि आदि मोटी ऐश्वर्यसंपत्ति छे तेनुं अकुशल करवाने कोण शक्तिवान छे ? जोके तेणे सर्व संपत्ति प्राप्त करी छे तथापि तेने स्वबन्धुनां दर्शननो लाभ लेवानी घणी उत्कंठा छे. माटे तमे त्यां आवीने तमारा समागमथी उत्पन्न थती सुखवृद्धिथी तेने अति प्रमुदित करो; कदि जो तमे नहि आवो तो ते तमारा उपर कुपित थइने तमने घणी पीडा पमाडशे. जेनी बत्रीश हजार राजाओ सेवा करेछे तेनी चरणसेवाथी तमारो कोइ पण रीते उपहास (मश्करी) नथी, पांच माणसनी साथे भोगववुं ते दुःख नथी' एवी लोकोक्ति छे; तेथी मान त्यजीने त्यां चालो." एवां दूतनां वचन सांभळीने बाहुबलि अति क्रोधायमान थइ ललाटमां त्रिवलि चडावी भुजास्फोट करीने बोल्या के—"अरे दूत ! भरत कोण मात्र छे ? तेनां चौद रत्नो शुं मात्र छे? अने तेना सेवको पण कोण मात्र छे? में बाल्यावस्थामां भरतने गंगाकांठे दडानी माफक आकाशमां उछाळ्यो हतो अने पछी गगनमांथी पडतां मेंज तेने मारा हाथमां झीली लीधो हतो, ते शुं भरत भूली गयो ? मारुं ते बल तेने विस्मृत थयुं होय तेम जणाय छे, जेथी तने अहीं मोकल्यो छे. आटला दिवस सुधी तो में पिता तुल्य गणीने मोटा भाइनी आराधना करीछे; पण हवे तो हुं तेनी उपेक्षा करुं छुं. केमके गुणहीन अने लोभी एवा मोटा भाइथी पण शुं ! तेणे अठ्ठाणुं नाना भाइओनां राज्यो लइ लीधां अने तेओए तो व्हीकणपणाने लीधे लोकापवादथी डरी राज्य त्यजीने संयम ग्रहण कर्युं, परंतु हुं तो तेने नहि सहन करुं. मारो भुजप्रहार केवळ भरतज सहन करशे, पण ते सहन करवा माटे अन्य कोइ आवशे नहि, माटे तुं जा. दूत होवाथी तुं अवध्य छे, तेथी मारी दृष्टिथी तत्काळ दूर था."

आ प्रमाणे क्रोधथी लालचोळ नेत्रवाळुं सूर्यमंडळनी माफक उद्दीप्त थयेलुं तेनुं मुख जोइने सुवेग भय पामी धीमे धीमे त्यांथी बहार नीकळ्यो अने पाछो वळी मानभंग थइ रथमां बेसी अयोध्या तरफ चाल्यो. मार्गमां बहुली देशने निहाळतां तेणे आ प्रमाणे लोकोनां वाक्यो सांभळ्यां—"अरे ! भरत कोण छे के जे अमारा स्वामीनी साथे युद्ध करवाने इच्छे छे ? परंतु तेना जेवो कोइ मूर्ख जणातो नथी के जेणे सुतेला सिंहने जगाडयोछे." ए प्रमाणे लोकोनां वाक्यो सांभळी सुवेग विस्मित थइने विचारवा लाग्यो के—"अहो ! आ देशना लोको पण आटलुं बधुं शौर्य धरावे छे ! परंतु ते तेमना स्वामीनोज प्रभाव छे, तेओनो प्रभाव नथी. पण भरते आ शुं कर्युं ? तेणे

ठीक न कर्युं, अयोग्य कर्युं." ए प्रमाणे विचार करतो अने लोकोने भय पमाडतो सुवेग केटलेक दिवसे अयोध्या नगरीए पहोंच्यो.

तेणे सभामां जइने सर्व हकीकत भरत चक्रीने निवेदन करी. छेवटे तेणे कह्युं के– 'ए तमारो नानो भाइ तमने तृणवत् गणेछे, वधारे शुं कहुं !' एवा दूतना शब्दो सांभळीने सैन्य सहित भरत चक्रीए ते तरफ प्रयाण कर्युं. भरतनी मोटी सेना चाली, तेथी दिग्मंडल पण ध्रुजवा लाग्युं. तेना सैन्यनुं स्वरूप नीचे प्रमाणे–

दिग्चक्रं चलितं भयाज्जलनिधिर्जातो महाव्याकुलो ।
पाताले चकितो भुजंगमपतिः क्षोणिधराः कंपिताः ॥
भ्रांताः सुपृथिवी महाविषधरा क्ष्वेडं वमत्युत्कटम् ।
वृत्तं सर्वमनेकधा दलपतेरेवं चमूनिर्गमे ॥

" दिग्मंडल कंपवा लाग्यु, भयथी समुद्र आकुलव्याकुल थयो, पातालमां शेषनाग चकित थयो, पर्वतो कंपायमान थया, पृथ्वी भमवा लागी, मोटा विषधरो उत्कट विषनुं वमन करवा लाग्या; सेनापतिनुं सैन्य चालतां अनेक प्रकारे ए प्रमाणे थवा लाग्युं. "

अढारकोटी घोडेस्वारोनुं लश्कर एकटुं करी भरत राजा पोताना हस्तीरत्न उपर स्वार थइने बाहुबलिने जीतवा माटे चाल्यो. केटलेक दिवसे ते बहुली देशमां पहोंच्यो.

भरत आव्यो छे एवुं बाहुबलिए पण सांभळ्युं एटले ते पोताना त्रण लाख पुत्रोथी परिवृत थइ **सोमयशा** नामना पोताना पुत्रने सेनाधिपति बनावीने मोटी सेना सहित सामे नीकळ्यो. बन्ने सैन्यो सामसामा मळ्यां. बंने सैन्यना चोराशी हजार रणतुरीना अवाजो थवा लाग्या. भेरीओना भांकारोथी अने वाजित्रोना शब्दोथी कान उपर पडतो शब्द पण न संभळावा लाग्यो. पछी उद्धत, रणभूमिमां विकट, अनेक हस्तीओनी घटामां जेओए प्रवेश करेलोछे तेवा, सिंहनुं पण मर्दन करनारा अने जेओनो कीर्तिपट चारे तरफ फेलायेलो छे एवा योद्धाओए युद्ध शरु कर्युं. योद्धाओना वीरशब्दो थवा लाग्या. आखुं जगत शब्दमय भासवा लाग्युं. अश्वोनी खरीथी उडती रजवडे घेरायेलुं सूर्यमंडल वायुसमूहनी अंदर रहेला शुष्क पलाश पत्रनी जेवुं देखावा लाग्युं. ते वखते त्यां आ प्रमाणे युद्ध थवा लाग्युं—

एके वै हन्यमाना रणभुवि सुभटा जीवशेषाः पतन्ति
ह्येके मूर्छाप्रपन्नाः स्युरपि च पुनरुन्मूर्छिता वै पतन्ति ।

मुंचन्त्येकेऽट्टहासान्निजपतिकृतसन्मानमाद्यं प्रसादं
स्मृत्वा धावंति मार्गे जितसमरभयाः प्रौढिवंतो हि भक्त्या ॥

"केटलाएक सुभटो रणभूमिमां हणावाथी जीवशेष थइने पडे छे, मूर्छित थयेला केटलाएक सुभटो शुद्धिमां आवीने पाछा मूर्छित थाय छे, केटलाएक सुभटो अट्टहास करे छे अने केटलाएक पोताना स्वामीए करेला सन्मानने तेमज प्राथमिक प्रसादने संभारीने युद्धनो भय दूर करी भक्तिवडे प्रौढ बनी रणमार्गमां दोडे छे." ए प्रमाणे मोटा युद्धमां केटलाएक योद्धाओ हाथीओना झुंडने पगवती पकडी आकाशमां फेरवे छे, केटलाएक उछळता योद्धाओने पकडीने भूमि उपर पाडे छे, केटलाएक सिंहनाद करे छे अने केटलाएक हस्तना आस्फोटनथी वैरीओना हृदयने फाडी नाखे छे. ए प्रमाणे स्वामीए भ्रकुटीसंज्ञाथी उत्तेजित करेला सुभटोए उत्कट युद्ध आरंभ्युं. कह्युं छे के—

राजा तुष्टोपि भृत्यानां, मानमात्रं प्रयच्छति ।
ते तु सन्मानमात्रेण, प्राणैरप्युपकुर्वते ॥

"राजा संतुष्ट थतां सेवकोने मात्र मान आपे छे, पण सेवको तो फक्त मानथी पोताना प्राण आपीने बदलो वाळे छे."

रणमां एक मित्र बीजा मित्रने कहे छे के—'हे मित्र ! ब्हीकण न था, कारणके युद्धमां तो बंने प्रकारे सुख छे. जीत मेळवशुं तो आलोकमां सुख छे, अने मृत्यु थशे तो परलोकमां देवांगनाना आलिंगननुं सुख प्राप्त थशे.' कह्युं छे के—

जिते च लभ्यते लक्ष्मीर्मृते चापि सुरांगना ।
क्षणविध्वंसिनी काया, का चिंता मरणे रणे ॥

"रणमां जीतवाथी लक्ष्मी प्राप्त थाय छे अने मरवाथी देवांगना प्राप्त थाय छे; आ काया क्षणमां नाश पामे एवी छे, तो युद्ध करतां मृत्युनी चिंता शामाटे राखवी ?"

ए प्रमाणे युद्ध थतां बार वर्ष व्यतीत थयां, तो पण बेमांथी एकेनुं सैन्य पाछुं हठयुं नहि. ते अवसरे करोडो देवो ते युद्ध जोवाने माटे गगनमंडळमां आव्या हता. तेनी अंदर सौधर्मेन्द्रे आवीने विचार कर्यो के—'अहो! कर्मनी गति विषम छे! के जेथी बे सगा भाइओ अंशमात्र राज्य मेळववाने माटे कोटी मनुष्योनो विनाश करे छे, माटे हुं त्यां जइने युद्धने अटकावुं.' एवो विचार करी इंद्रे आवीने भरतने कह्युं के—"हे छ खंडना अधिपति ! जेणे

अनेक राजाओने किंकर बनाव्या छे एवा हे भरत राजा ! आ शुं आरंभ्युं छे ? मात्र सहज कारणमां तमे जगतनो शा माटे संहार करो छो ? श्रीऋषभदेवे लांबा वखतथी पाळेल प्रजानो लय केम करवा मांड्यो छे ? सुपुत्रने आवुं आचरण घटतुं नथी. सुपुत्रने तो पिताए जे प्रमाणे आचरेलुं होय ते प्रमाणे आचरवुं–वर्तवुं जोइए; माटे हे राजेन्द्र ! लोकना संहारथी तमे निवृत्त थाओ." भरते कह्युं के–"तातना भक्त एवा आपे जे कह्युं ते सत्य छे. हुं पण ते जाणुं छुं, परंतु शुं करुं ? चक्र आयुधशाळामां पेसतुं नथी, तेथी बाहुबलि मात्र एकवार मारी समीपे आवी जाय तो पछी मारे बीजुं कांइ कार्य नथी. तेनुं राज्य लेवानी मारे जरुर नथी; माटे तमे त्यां जइने मारा लघु बंधुने समजावो." एवां भरतनां वचनो सांभळीने शक्रेन्द्र बाहुबलि पासे गया. बाहुबलिए तेमनुं घणुं सन्मान कर्युं अने कह्युं के–'हुकम करो, आपने आववानुं शुं प्रयोजन छे ?' इंद्रे कह्युं के–'तमे पितृ तुल्य मोटा भाइनी साथे युद्ध करोछो ए तमने घटतुं नथी, तेथी तमे तेनी पासे जइने नमो, अपराधनी क्षमा मागो अने लोकसंहारथी निवृत्त थाओ'. बाहुबलिए कह्युं के–'एमां दोष भरतनोज छे, अहींआं तेने कोणे बोलाव्यो हतो ? ते अत्रे शामाटे आव्यो छे ? अतृप्त एवा तेने लज्जा नथी. ते सर्व बंधुओनां राज्यो ग्रहण करीने हवे मारुं राज्य लेवा आव्यो छे; परंतु ते जाणतो नथी के सर्व दरोनी अंदर कांइ उंदरो होता नथी; माटे हुं पाछो हठनार नथी; कारणके मानहानि करतां प्राणहानि वधारे सारी छे, कह्युं छे के–

> अधमा धनमिच्छंति, धनमानौ च मध्यमाः ।
> उत्तमा मानमिच्छंति, मानो हि महतां धनम् ॥

"अधम लोको धनने इच्छे छे, मध्यम लोको मान अने धनने इच्छे छे, उत्तम लोको माननेज इच्छे छे, कारणके मान ए मोटाओनुं धन छे." वळी–

> वरं प्राणपरित्यागो, मा मानपरिखंडनम् ।
> मृत्युस्तत्क्षणिका पीडा, मानखंडे दिने दिने ॥

"प्राणनो त्याग करवो ए वधारे सारो छे, पण मानखंडन सारुं नथी. कारणके मृत्यु तेज क्षणे मात्र पीडा आपे छे, पण मानखंड तो दररोज पीडा करे छे."

ए प्रमाणे बाहुबलिनुं निश्चयवाळुं वचन सांभळीने इंद्रे कह्युं के–"जो एवोज निश्चय होय तो तमारे बंने भाइओएज युद्ध करवुं, आ लोकसंहार शामाटे करो छो ?'

बाहुबलिए ते वात कबुल करी. पछी इंद्रे पांच प्रकारनां युद्धो स्थापित कर्यां—दृष्टियुद्ध, वाक्युद्ध, बाहुयुद्ध, मुष्टियुद्ध अने दंडयुद्ध. भरते पण ए प्रमाणे कबुल कर्युं. पछी बंने भाइओ सैन्यने युद्ध करतुं बंध करीने सामसामा आव्या.

प्रथम दृष्टियुद्ध शरु कर्युं. परस्पर दृष्टि साथे दृष्टि मळतां प्रथम भरतचक्रीना नेत्रमां अश्रुजळ आवी गयां. तेथी साक्षीभूत देवताओए कह्युं के—'चक्री हार्या अने बाहुबलि जीत्या.' एम पांचे युद्धोमां बाहुबलि जीत्या. एटले विलखा थयेला चक्रीए मर्यादा मूकी चक्रने छोड्युं. त्यारे बाहुबलिए कह्युं के—'ए प्रमाणे न करो, सत्पुरुषोए मर्यादानो त्याग करवो ए योग्य नथी.' छतां पण तेणे बाहुबलि उपर चक्र मूक्युं, एटले बाहुबलिए मुष्टि उगामीने विचार कर्यो के—'आ मुष्टिवडे चक्र सहित भरतने चूर्ण करी नाखुं.' एटलामां चक्र तो बाहुबलि पासे आवी त्रण प्रदक्षिणा करीने पाछुं वळ्युं. कारणके गोत्रमां चक्र चालतुं नथी. पछी बाहुबलिए चिंतव्युं के—'आ वज्र जेवी मुष्टि वडे माटीना वासणनी माफक भरतने चूर्ण करी नाखुं.' वळी तेणे विचार कर्यो के—"अहो ! में अंशमात्र सुखने अर्थे आ बांधवनो नाश शामाटे चिंतव्यो ? जेने अंते नरक प्राप्त थाय छे एवा राज्यने धिक्कार छे ! विषयोने धिक्कार छे ! मारा नाना भाइओने धन्य छे के जेओए अनर्थहेतुक राज्यने तजी दइने संयम ग्रहण कर्युं छे." आ प्रमाणे जेना हृदयमां वैराग्य उत्पन्न थयो छे एवा बाहुबलिए उगामेली मुठी पोताना माथा उपर पाछी वाळीने पंचमुष्टि लोच कर्यो; ते वखते देवताए रजोहरण विगरे साधुनो वेष तेने अर्पण कर्यो. बाहुबलिए स्वयमेव चारित्र ग्रहण कर्युं.

पछी जेणे साधुनो वेष ग्रहण करेलो छे एवा पोताना भाइने जोइने भरत पोते आचरेला कर्मथी लज्जा पाम्यो. एटले बंने नेत्रमांथी अश्रु वर्षावतो वारंवार तेना चरणमां पड्यो अने बोल्यो के—'तने धन्य छे ! मारो अपराध क्षमा कर अने आ राज्यलक्ष्मी ग्रहण करवानी कृपा कर.' बाहुबलि मुनिए कह्युं के—'आ राज्यलीलाविलास अनित्य छे, यौवन अनित्य छे अने शरीर पण अनित्य छे, तेमज आ विषयो परिणामे दुःख आपनारा छे.' इत्यादि उपदेश आपवा वडे भरतने वैराग्यवान करीने बाहुबलि मुनि तेज स्थाने ध्यानमुद्राथी उभा रह्या. तेमणे मनमां विचार कर्यो के—'हुं छद्मस्थ होवाथी दीक्षाए वडेरा एवा लघु बन्धुओने केवी रीते वंदन करुं ?' ए प्रमाणे मानथी उन्नत ग्रीवावाळा थइ कायोत्सर्ग धारण करीने त्यांज उभा रह्या.

भरतचक्री तेमने वांदी सोमयशाने बाहुबलिनुं राज्य आपीने स्वस्थाने गया. बाहुबलिए पण एक वर्ष पर्यंत शीत, वात, आतप आदि परीसहोने सहन करतां

दावानलथी दाझेला झाडना ठुंठा जेवुं पोतानुं शरीर करी नाख्युं. तेनुं शरीर वेलाओथी वींटाइ गयुं, तेना पगमां दर्भनी शूळीओ उगी नीकळी, तेनी आसपास राफडाओ थइ गया, तेनी दाढी विगेरेना केशोमां पक्षीओए माळा नांखीने प्रसव कर्यो.

वर्षने अंते भगवान ऋषभदेवे बाहुबलिने प्रतिबोध करवाने माटे ब्राह्मी अने सुंदरी नामनी तेनी बे बहेनोने मोकली. भगवाने तेमने कह्युं के–'तमारे त्यां जइने ए प्रमाणे कहेवुं के–'हे बन्धु ! हाथी उपरथी उतरो.' ते बहेनो बाहुबली समीपे जइ तेने वांदी ए प्रमाणे बोली के–'हे भाइ ! हाथी उपरथी उतरो.' ए प्रमाणेनां पोतानी बहेनोनां वचन सांभळी ते मनमां विचार करवा लाग्या के–"में सर्व संगनो त्याग कर्यो छे तो मारे हाथी क्यांथी ? मारी बहेनो आ शुं कहे छे ? अरे ! में जाण्युं. हुं मान रुपी हाथी उपर चड्यो छुं, तेथी तेमनुं कहेवुं सत्य छे. अरे! दुष्ट चित्तने धारण करनार एवा मने धिक्कार छे ! मारा ते नाना भाइओ मारे वंद्य छे, तेथी तेमने वांदवाने हुं जाउं." ए प्रमाणे निश्चय करीने चरण उपाडतांज तेमने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी प्रभु पासे जइ वांदीने केवळज्ञानीओनी सभामां बेठा. माटे "मदथी धर्म थतो नथी ए योग्य कह्युं छे. मुमुक्षुए धर्मकर्ममां विनयज करवो, पण मान राखवुं नहि." आ कथानो ए उपदेश छे.

निअगमइ विगप्पिअ-चिंतिएण सच्छंदबुद्धिरइएण ।
कत्तो पारत्तहियं, कीरइ गुरु अणुवएसेणं ॥ २६ ॥

शब्दार्थ—"गुरुना उपदेशने अयोग्य, पोतानी मतिना विकल्पथी विचार करवावाळो अने स्वतंत्रमति पूर्वक चेष्टा करवावाळो प्राणी परलोकनुं हित शीरीते करे ? अर्थात् न करे." २६.

भावार्थ—भारेकर्मी जीव गुरुना उपदेशने अयोग्य समजे छे. तेवो स्वेच्छाचारी प्राणी पोतानी बुद्धिमात्रथी आ स्थूळ ने आ सूक्ष्म इत्यादिक विचारो करे छे; तेवो मनुष्य परलोकनुं हित करी शकतो नथी.

थद्धो निरोवयारी, अविणीओ गव्विओ निरुवणामो ।
साहुजणस्स गरहिओ, जणे वि वयणिज्जयं लहइ ॥ २७ ॥

अर्थ–"स्तब्ध, निरुपकारी, अविनीत, गर्वित अने कोइने नहीं नमवावाळो एवो पुरुष साधुजनथी निंदाय छे अने लोकमां पण हीलनाने पामे छे." २७.

गाथा २६–परत्रहितम्. अनुपदेशेन. गाथा २७–वयणिज्जिय. वचनीवतां

स्तब्ध ते अभिमानी—अक्कड रहेनारो—कोइने नहि नमनारो, निरुपकारी ते कोइना करेला उपकारने नहि जाणवावाळो—कृतघ्न, अविनीत ते आसन आपवा विगेरेवडे वडीलनो विनय नहि करनारो, गर्वित ते पोताना गुणो प्रगट करवानो उत्सुक, निरुपनाम ते गुरुने पण नमस्कार नहि करवावाळो—एवा पुरुषनी साधुजनो पण गर्हा करे छे अने लोको पण आ दुष्ट आचारवाळो छे एम कही तेने निंदे छे, तेथी विनीतज श्लाघाने पामे छे एम समजवुं.

थोवेणवि सप्पुरिसा, सणंकुमारुव्व केइ बुझंति।
देहे खणपरिहाणी, जं किर देवेहिं से कहियं ॥ २८ ॥

अर्थ—"कोइ सत्पुरुषो (सुलभबोधीओ) थोडा निमित्त मात्रे करीने पण सनत्कुमार चक्रीनी जेम बोध पामे छे. जे कारण माटे 'देहने विषे क्षणमात्रमां पण रुपनी हानि थइ गइ छे' एम देवताए तेने (सनत्कुमारने) कह्युं अने तेटलुं वचनमात्रज तेने बोधनुं कारण थयुं. एम सांभळीए छीए." २८.

अहीं सनत्कुमार चक्रीनुं दृष्टांत जाणवुं. ते आ प्रमाणे—

हस्तीनापुर नगरमां **सनत्कुमार** नामे चक्रवर्ती राजा हतो. ते अति रूपवान हतो, अने ते छखंडनुं राज्य करतो हतो. एक दिवस इंद्रे सभामां सनत्कुमारना रूप संबंधी एवुं विवेचन कर्युं के 'पृथ्वी उपर तेना जेवो रूपवान कोइ नथी.' बे देवोए इंद्रनुं कहेलुं वचन कबुल कर्युं नहि. तेथी तेओ कुतूहल जोवा माटे द्विजनुं रूप धारण करीने हस्तीनापुर आव्या. ते वखते स्नान करवानो अवसर होवाथी तेओए सनत्कुमारने न्हावाने आसने बेठेलो, आभूषणरहित अने सुगंधी तेलथी मर्दन करातो जोयो; तेना रूपथी मोहित थइने तेओ वारंवार मस्तक धुणाववा लाग्या. त्यारे सनत्कुमारे तेमने पूछ्युं के-'तमे शिर शामाटे धुणावोछो ?' तेओए कह्युं के-' हे देव ! आपना दर्शननुं कौतुक जेवुं अमे सांभळ्युं हतुं तेवुंज अमे जोयुं.' ए प्रमाणे ते ब्राह्मणोनुं वचन सांभळी चक्री बोल्या के-" अरे ! हमणां आ स्थितिमां मारुं रूप तमे शुं जुओछो ? स्नान कर्या पछी ज्यारे हुं उत्तम वस्त्रो पहेरुं, अलंकारो धारण करुं, मारा मस्तक उपर छत्र धराय, चामर ढोळाय अने बत्रीश हजार राजाओ ज्यारे मारी सेवा करे त्यारे मारुं रूप जोवा जेवुं छे." ए प्रमाणे चक्रीनुं वचन सांभळीने ते बंने देवोए चिंतव्युं के-' उत्तम पुरुषने पोतानी प्रशंसा पोताना मुखे करवी घटती नथी.' कह्युं छे के—

गाथा २८—थेवेण.

न सौख्यसौभाग्यकरा नृणां गुणाः, स्वयंगृहीता युवतीकुचा इव ।
परैर्गृहीता द्वितयं वितन्वते न तेन गृह्णन्ति निजं गुणं बुधाः ॥

"युवती जो पोताना स्तनने पोताना हाथे ग्रहण करे तो ते जेम तेने सौभाग्य अने सुखना करवावाळा थतां नथी, तेम पोताना मुखथी वर्णवाता पोताना गुणो मनुष्योने सौभाग्य ने सुख आपनारा थता नथी; पण तेज गुणो स्त्रीना स्तननी जेम बीजाओथी ग्रहातां—वर्णवातां सौभाग्य अने सुख बंने आपेछे. तेथींज डाह्या पुरुषो पोताना गुणोनी प्रशंसा पोताना मुखे करता नथी."

पछी चक्रवर्तीनुं वचन मान्य करी ते बंने विप्रो त्यांथी चाल्या गया, अने ज्यारे चक्री सभामां बिराजमान थया त्यारे त्यां आव्या. ते वखते चक्रीना रूपने जोइने तेओ खिन्न थया. चक्रीए पूछ्युं के—'तमने खेद थवानुं शुं कारण छे ?' तेओ बोल्या के—'संसारनुं विचित्रपणुं अमारा खेदनुं कारण छे.' चक्रीए पूछ्युं के—'केवी रीते?' तेओए कह्युं के—'अमे पहेलां आपनुं जे रूप जोयुं हतुं तेना करतां आ वखते अनंतगुणहीन छे.' चक्रीए कह्युं के—'तमे ते शीरीते जाण्युं ?' तेओए कह्युं के—'अवधिज्ञानथी.' चक्रीए कह्युं के—'तेमां प्रमाण शुं ?' तेओए कह्युं के—"हे चक्री ! मुखमां रहेल तांबूलनो रस भूमि उपर थुंकीने जुओ के तेनी उपर जे मक्षिका बेसे ते मृत्युवश थाय छे ? आ अनुमानथी तमे जाणजो के तमारुं शरीर विषरूप थइ गयुं छे. तमारा शरीरमां सात मोटा रोगो उत्पन्न थयेला छे." आ प्रमाणे देवताओनां वचन सांभळीने चक्री विचार करवा लाग्या के—'अहो ! आ देह अनित्य छे, आ असार देहमां कांइ पण सार नथी.' कह्युं छे के—

इदं शरीरं परिणामदुर्बलं, पतत्यवश्यं श्लथसंधिजर्जरं ।
किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते, निरामयं धर्मरसायनं पिब ॥

"आ शरीर परिणामे दुर्बल छे, तेथी तेना सांधा शिथिल थवाथी जर्जरित थइने ते अवश्य पडेछे; माटे हे मूढ ! हे दुर्मति ! तुं औषधो करवा वडे शामाटे क्लेश पामेछे सर्व रोगथी निवृत्त करनार धर्मरसायननुंज पान कर."

वळी—

कस्तूरी पृषतां रदाः करटिनां कृत्तिः पशूनां पयो
धेनूनां छदमंडलानि शिखिनां रोमाण्यवीनामपि ।

पुच्छस्नायुवशाविषाणनखरस्वेदादि किं किं च न
स्यात् कस्याप्युपकारि मर्त्यवपुषो नामुष्य किंचित्पुनः ॥

" मृगोनी कस्तुरी, हाथीओना दांत, पशुओनुं चर्म, गायोनुं दुध, मयूरनां पीछां, घेटाना वाळ अने अन्य पशुओनां पुच्छ, स्नायु, चरबी, शींगडां, नख, स्वेद आदि कांइ कांइ कोइने पण उपयोगमां आवे छे; परंतु मनुष्यना शरीरनुं तो कांइ पण उपयोगमां आवतुं नथी."

ए प्रमाणे वैराग्यपरायण थयेल राजाए राज्यलक्ष्मी तजी दईने संयमलक्ष्मी ग्रहण करी. जेम भुजंग कांचळीनो त्याग करी पाछुं जोतो नथी तेम तेणे पोतानी पाछळ आवती समृद्धि तरफ दृष्टि पण करी नहि. स्त्रीरत्न सुनंदा आदि पोतानी स्त्रीओना विलाप सांभळतां छतां पण ते जरा पण डग्यो नहि. छ मास सुधी निधिओ, रत्नो अने सेवको तेनी पाछळ फर्या, परंतु तेणे तेमना तरफ जोयुं पण नहि. सनत्कुमार मुनि दीक्षा लीधा पछी बबे उपवासने अंते पारणुं करवा लाग्या, अने पारणे पण नीवी के आचाम्लादि (आंबिल आदि) तप करवा लाग्या. ए प्रमाणे विगयना त्यागी, धर्मना अनुरागी अने रोगथी भरेली कायावाळा ते मुनि मायारहितपणे भूमि उपर विहार करेछे. ए अवसरे सौधर्मेन्द्रे फरीथी सभामां तेनी प्रशंसा करी के–'अहो आ सनत्कुमार मुनिने धन्य छे के जे मोटा रोगथी पीडित शरीरवाळा छतां पण औषध आदिनी किंचित् पण स्पृहा करता नथी.' एवां इंद्रनां वचन सांभळी तेने नहि श्रद्धनारा बे देवो ब्राह्मणनुं रूप धारण करी सनत्कुमार मुनिनी पासे आव्या अने बोल्या के–' हे मुनि ! तमारुं शरीर रोगथी जीर्ण थयेलुं अने घणुं पीडातुं जणाय छे; अमे वैद्य छीए. जो तमारी आज्ञा होय तो अमे तेनो उपाय करीए.' मुनिए कह्युं के– " आ अनित्य शरीर माटे उपाय शो करवो ? तमारामां शरीरना रोगने दूर करवानी शक्ति छे, पण कर्मना रोगने दूर करवानी शक्ति नथी; अने ते शक्ति (देहरोग दूर करवानी शक्ति) तो मारामां पण छे. " एटलुं कही आंगळीने थुंक लगाडी बताववाम आवी तो ते सोना जेवी थइ गइ. पछी कह्युं के–' मारामां आवी शक्ति तो छे, परंतु तेथी सिद्धि शी ? ज्यां सुधी कर्मरोगनो क्षय थयो नथी त्यांसुधी देहरोगना नाशथी शुं ? तेथी मारे रोगनो प्रतिकार करवा साथे काइं पण प्रयोजन नथी." बंने देवो आश्चर्य पाम्या अने तेमने वांदी पोतानुं स्वरूप जणावी स्वर्गमां गया.

सनत्कुमार मुनि पण सातसे वर्ष सुधी रोगोने अनुभवी एक लाख वर्ष पर्यंत निर्दोष चारित्र पाळीने एकावतारीपणे त्रीजे स्वर्गे उत्पन्न थया. त्यांथी च्यवीने महाविदेहमां मनुष्य थइ सिद्धिपदने प्राप्त करशे.

हवे आयुष्यनी अनित्यता दर्शावे छे.

जइ ता लवसत्तमसुर-विमाणवासीवि परिवडंति सुरा ।
चिंतिज्जं तं सेसं, संसारे सासयं कयरं ॥ २९ ॥

अर्थ—"जो ते अनुत्तर विमानवासी देवताओ पण आयुक्षये त्यांथी पडेछे—च्यवेछे तो विचारी जो के बाकी संसारमां शुं शाश्वत-स्थिर छे? अर्थात् कांइपण शाश्वत—नित्य नथी, एक धर्मज नित्य छे." २९

अनुत्तर विमानवासी देवो लवसत्तमीआ देवता कहेवायछे. तेवा सर्व जीवथी अधिक आयुष्यवाळा देवताओनुं ३३ सागरोपम जेटलुं आयुष पण पूर्ण थइ जाय छे अने ते त्यांथी च्यवे छे तो तेनी अपेक्षाए हीन स्थितिवाळा आ संसारमां बीजुं शुं शाश्वत छे? कांइ नथी.

कह तं भन्नइ सुक्खं, सुचिरेणवि जस्स दुक्ख मुल्लिअइ ।
जं च मरणावसाणे, भवसंसाराणुबंधिं च ॥ ३० ॥

अर्थ—"घणा काळे पण जेना परिणामे दुःख वेठवुं पडे तेने सुख केम कहीए? न कहीए. जे कारणमाटे मरण पछी नरकादि गति रूप संसारमां परिभ्रमण करवुं पडे अथवा गर्भावासादि दुःख सहेवुं पडे ते सुखज न कहेवाय." ३०

पल्योपम सागरोपमना सुखने अंते पण दुःखनुं आस्वादन करवुं पडे तो ते सुख दुःखज छे. चार गति रूप संसारनो अनुबंध जेथी थया करे ते सुखज नथी. संसारनो छेद थाय तेज वास्तविक सुख छे.

गुरुनो कहेलो उपदेश पण भारेकर्मीने लागतो नथी.

उवएस सहस्सेहिवि, बोहिज्जंतो न बुझइ कोई ।
जह बंभदत्तराया, उदायि निवमारओ चेव ॥ ३१ ॥

अर्थ—"कोइ (भारेकर्मी जीव) हजारो उपदेश वडे बोध पमाड्यो सतो पण बुझतो नथी. जेम ब्रह्मदत्त चक्री बोध पाम्यो नहि अने उदायि नृपने मारनार बारवर्ष पर्यंत तप तप्यो—मुनिपणे रह्यो पण भव्यत्व पाम्यो नहि." ३१

ब्रह्मदत्त चक्रीने तेना पूर्वभवना भाइमुनिए घणी रीते उपदेश आप्यो पण किंचित् मात्र बोध लाग्यो नहि तेनुं तथा उदायि नृपमारकनुं दृष्टांत अहीं जाणवुं. ७-८. ते आ प्रमाणे—

गाथा ३०—मल्लिअइ, भवसंसाराणुबंधं. गाथा ३१—कोइ—कोपि, नृपमारक.

ब्रह्मदत्त चक्रीनी कथा.

प्रथम ब्रह्मदत्तना भवना कारणभूत चित्रसंभूति मुनिनुं (ब्रह्मदत्तना पूर्वभवनुं) स्वरूप आ प्रमाणे छे—

पर्वभवमां कोइएक गाममां भद्रिक परिणामी चार गोवाळीआ हता. एक दिवस ते चारे गोवाळीआओ ग्रीष्म ऋतुमां गायो चारवाने माटे वनमां गया. मध्यान्हसमये ते चारे जणा एकठा थइने वातो करवा बेठा; एवामां मार्गथी भूला पडेला, जेने ते वनमां मार्ग जडतो नथी, जेनुं गळुं अति तीव्र तृषाथी रुंधाइ गयुंछे अने जेनुं तालुपुट सुकाइ गयुं छे एवा कोइएक साधुने वृक्षनी छायामां बेठेला तेओए जोया; एटले तेओए विचार्युं के–' आ कोण हशे ?' पछी ते चारे जणा मुनिनी समीपे आव्या. त्यां तृषातुर थवाथी अति पीडा पामता अने जेना प्राण कंठगत थयेला छे एवा ते मुनिने जोइने मनमां विचार करवा लाग्या के–'अरे आ मुनि जंगमतीर्थ जेवा जणाय छे, पण ते पाणी विना मृत्यु पामशे; तेथी जो कोइ जग्याएथी पाणी लावीने तेमने आपीए तो मोटुं पुण्य थाय.' आम विचारी पाणीने माटे तेओए आखा वनमां शोध करी पण मळ्युं नहि. त्यारे तेओ एकठा थइ गाय दोही दूध लइने साधु समीपे आव्या,साधुना मुखमां दूधनां टींपां मूकीने तेमने सावधान कर्या. साधु सचेतन थया एटले मनमां विचार करवा लाग्या के–' आ लोकोए मारा उपर मोटो उपकार कर्यो छे; केमके तेओए मने जीवितदान आप्युं छे.' पछी ते साधुए तेओने सरल स्वभाववाला जोइने देशना आपी. ते देशना सांभळीने ते चारे वैराग्यने प्राप्त थया, अने तरतज चारे जणाए दीक्षा लीधी अने सम्यक्त्व मेळव्युं. ते साधुए तेओने साथे लइने अन्यत्र विहार कर्यो.

हवे ते चारे जणा चारित्र पाळेछे, पण तेमां बे जण चारित्रनी अवज्ञा करे छे के– ' आ साधुनो वेष तो सारो छे, पण स्नानादि विना शरीरनी शुद्धि केवी रीते थाय ? मेलां वस्त्र पहेरवां, दांत साफ न राखवां इत्यादि महा कष्ट छे.' ए प्रमाणे विचारणा करवाथी ते बे मुनिए चारित्रनी विराधना करी; अने बे जणाए निर्दोष चारित्र पाळ्युं, ते बंने जणाए तो तेज भवमां केवळज्ञान प्राप्त करीने मोक्षसुख मेळव्युं.

जे बंनेए चारित्रनी विराधना करी हती तेओ अंतसमये ते पापने आळोव्या शिवाय मृत्यु पामीने स्वर्गे गया. तेओ लांबा वखत सुधी देव संबंधी सुख भोगवी त्यांथी च्यवीने साधुवेषनी निंदा करवाथी दशार्ण देशमां कोइएक ब्राह्मणना घरमां काम करनारी दासी हती तेनी कुक्षिने विषे उत्पन्न थया. अनुक्रमे तेओ युवावस्था पाम्या अने घरनुं कामकाज करवा लाग्या.

एक दिवसे वर्षाऋतुमां क्षेत्रनी रक्षा करवा माटे ते बंने भाइओ गया. मध्यान्हसमये ते बेमांनो एक जण क्षेत्र समीपे आवेला वडना झाड नीचे शीतल छायामां सुतेलो छे तेवामां ते वडना पोलाणमांथी एक सर्प नीकळ्यो, अने ते सुतेलाने पगे डस्यो. ते वखते दैवयोगथी बीजो भाइ पण त्यां आव्यो. तेणे सर्पने जोयो, एटले तेणे सर्पने गाळ दीधी के-'अरे दुरात्मन्! मारा भाइने हणीने तुं क्यां जाय छे?' एवां तेनां वचन सांभळीने क्रोधित थयेला सर्पे कुदीने तेने पण करड्यो. बंने भाइओ मृत्यु पाम्या. बीजा भवमां कालिंजर पर्वतनी अंदर हरिणीनी कुक्षिमां तेओ मृगपणे उत्पन्न थया. तेओ परस्पर अति स्नेहयुक्त थया. एकदा कोइ शिकारीना बाणप्रहारथी तेओ मरण पाम्या. त्रीजा भवमां गंगा नदीना किनारे हंसीनी कुक्षिने विषे हंसपणे उपन्या. ते भवमां पण तेओ परस्पर घणा स्नेहवाळा थया. तेओ गंगाने किनारे रहेला कमलना बिसतंतुओ खाय छे अने सुखमां काल व्यतीत करे छे; तेवामां कोइएक शिकारीए ते बंनेने मारी नाख्या.

चोथे भवे साधुवेषनी निंदा करवाना फळथी काशी नगरीमां कोइ चंडालने घरे पुत्रपणे उत्पन्न थया. ते चंडाले पुष्कळ धन खर्ची ते बंने छोकरानां नाम चित्र अने संभूति पाड्यां. तेओ पूर्वभवना स्नेहथी अन्योन्य अति रागयुक्त थया. एक क्षण पण बीजानो वियोग सहन करी शकता नथी. हवे ते नगरनो जे राजा छे तेनी सभामां नमुचि नामनो प्रधान छे. ते प्रधान राजानुं परम विश्वासस्थान छे, परंतु ते राजानी पट्टराणीनी साथे प्यारमां संलग्न थयो छे, अने तेनी साथे दररोज भोग भोगवे छे. पट्टराणीने पण तेनी साथे अत्यंत स्नेह बंधायो छे, तेथी ते पोताना भर्तारनी अवगणना करीने ते नमुचिनी साथे भोग भोगवे छे. अहो! कामनी अंधता अपूर्व छे. कह्युं छे के-

दिवा पश्यति नो घूकः, काको नक्तं न पश्यति ।
अपूर्वः कोऽपि कामांधो, दिवा नक्तं न पश्यति ॥

"घुड दिवसे जोइ शकतो नथी, कागडो रात्रिए देखतो नथी; पण कामांध तो कोइ अपूर्व अंध छे के जे दिवसे तेमज रात्रिए जोइ शकतो नथी."

वळी कह्युं छे के-

या चिंतयामि सततं मयि सा विरक्ता
साप्यन्यमिच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः ।
अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मा च ॥

"जे स्त्रीनुं हुं हमेशां चिंतवन करुं छुं ते माराथी विमुख रहे छे अने ते अन्य पुरुषने इच्छे छे, ते पुरुष बीजी स्त्रीमां आसक्त थयेलो छे, अने ते बीजी कोइ स्त्री मने चाहे छे; माटे ते (राणी) ने धिक्कार छे, तेना यारने धिक्कार छे, मदनने धिक्कार छे अने मने पण धिक्कार छे."

ए प्रमाणे घणा दिवसो जतां तेनुं पाप कोढनी माफक फुटी नीकळ्युं. राजाए ते वात जाणी, एटले ते मनमां विचार करवा लाग्यो के—' आ पापात्मा प्रधान दुष्ट छे के जेणे आवुं नीच काम कर्युं; एणे पोताने हाथेज मृत्यु मागी लीधुं छे. ए जोके बुद्धिमान छे छतां पण नीच होवाथी उपेक्षा करवा योग्य छे.' कह्युं छे के—

लूणह घूणह कुमाणसह, ए त्रिहुं इक सहाओ।
जिहां जिहां करे निवासडो, तिहां तिहां फेडे ठाओ॥

भावार्थः—"लुणो, घुणो ने कुमाणस ए त्रणे एक सरखा स्वभाववाळा होय छे. ते ज्यां ज्यां निवास करेछे त्यां त्यां रहेवानां स्थानकनोज नाश करे छे." लुणो भींत विगेरेने पायमाल करेछे; घुणो लाकडामां थाय छे ते तेने कोतरी नाखेछे, अने खराब माणसने जे आश्रय आपे तेने ज ते पायमाल करेछे. 'तेथी आ प्रधान वध्य छे' एम विचारी चंडालने बोलावीने कह्युं के—'एने वध्यभूमिमां लइ जइने मारी नाखो' राजानी आज्ञा थतां चंडाल नमुचिने वधभूमिए लइ गयो. ते चंडाले विचार कर्यो के—'अरे! कोइ माठा कर्मना योगथी आ काम थयेलुं छे. विनाशकाळे बुद्धिमान पुरुषोनी बुद्धि पण नाश पामे छे. कह्युं छे के—

न निर्मिता केन न दृष्टपूर्वा, न श्रूयते हेममयी कुरंगी।
तथापि तृष्णा रघुनंदनस्य, विनाशकाले विपरीतबुद्धिः॥

"सोनानी हरिणी कोइए बनावेली नथी, कोइए पूर्वे जोयेली नथी तेम सांभळेली पण नथी, तोपण तेने माटे रघुनंदन (राम) नी तृष्णा थइ, माटे विनाशकाले विपरीत बुद्धि ज थाय छे." वळी कह्युं छे के—

रावण तणे कपाळ, अष्टोतरसो बुद्धि वसे;
लंका फीटणकाळ, एको बुद्धि न संभरी.

"रावणना कपाळमां एकसो ने आठ बुद्धि वसती हती, छतां पण ज्यारे लंकानो फीटणकाल आव्यो त्यारे एके बुद्धि स्मरणमां आवी नहि."

वळी चांडाले विचार्युं के—' आ प्रधान महा बुद्धिवाळो छे अने मारा घरमां बे छोकरा भणवा लायक थयाछे, पण बीजो कोइ तेमने भणावशे नहि; तेथी जो आ

प्रधान तेने भणाववानुं कबुल करे तो हुं तेनो बचाव करुं.' ए प्रमाणे विचारी तेणे नमुचिने पूछ्युं के–'जो तुं मारा पुत्रोने भणाव तो हुं तारुं रक्षण करुं. तेणे तेम करवानुं कबुल कर्युं. तेथी चांडाले तेने गुप्तपणे पोताना घरे आण्यो अने राजाना भयथी तेने भोंयरामां राख्यो. त्यां रहीने ते चित्र अने संभूत नामना चांडालपुत्रोने भणाववा लाग्यो. तेओ बुद्धिवान होवाथी थोडा वखतमां सकल शास्त्रमां पारंगत थया. नमुचि प्रधान त्यां रहेतो सतो चित्रसंभूतनी मानी साथे प्यारमां पड्यो. अहो! आ कामनो दुष्ट स्वभाव दुस्त्यज छे. कारणके आवी अवस्थाने पाम्या छतां पण नीच माणस विषयनी आशंसा तजतो नथी. कह्युं छे के—

कृशः काणः खञ्जः श्रवणरहितः पुच्छविकलो।
व्रणीपूयक्लिन्नः कृमिकुलशतैरावृततनुः॥
क्षुधाक्रांतो जीर्णः पिठरककपालार्पित गलः।
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि च हंत्येव मदनः॥

"शरीरे दुर्बल, काणो, लंगडो, बहेरो, पुच्छ विनानो, जेना अंगपर चांदां पडेलां छे, परुथी खरडायेलो छे अने जेनुं शरीर हजारो कृमिथी घेरायेलुं छे एवो क्षुधाक्रांत, जीर्ण अने जेना गळामां ठीबनो कांठो वळगेलो छे एवो श्वान पण जो कूतरीने देखे छे तो तेनी पाछळ जाय छे; तेथी दिलगीरीनी वात छे के कामदेव मरायेलाने पण मारे छे." कामनो स्वभावज दुस्त्यज छे. कह्युं छे के—

उखल करे धबुकडां, घरहर करे घरट्ट;
जिहां जे अंग सभावडा, तिहां ते मरण निकट्ट.

"जेम खारणीओ धबकारा करे छे अने घंटी घरघराट करे छे तेम जे अंग (जीव)-नो जेवो स्वभाव पड्यो होय छे ते मरण पर्यंत रहे छे, फरतो नथी."

ए प्रमाणे घणा दिवसो जतां चांडाले ते वात जाणी, एटले ते विचारवा लाग्यो के–'अहो! आ विषयांधने धिक्कार छे! तेना उपर करेलो उपकार पण ए भूली गयो छे. आना करतां कूतरो पण वधारे सारो होय छे के जे करेल उपकारने भूली जतो नथी.' कह्युं छे के—

अशनमात्रकृतज्ञतयागुरोर्न पिशुनोऽपि शुनो लभते तुलाम्।
अपि बहूपकृते सखिता खले, न खलु खेलति खेलतिका यथा॥

"भोजनमात्रथी कृतज्ञपणावडे गुरु तरीके माननार एवा कूतरानी पण बरोबरी पिशुन (खळ पुरुष) करी शकतो नथी; केमके जेनी उपर घणा उपकार कर्या छे एवा खळ साथेनी मित्रता पण आकाशमां लता टकी शकती नथी तेम (लांबो वखत) टकती नथी."

'में पहेलांज विपरीत कार्य कर्युं के आ दुष्टनुं रक्षण कर्युं. आ तो वध करवानेज लायक छे.' आ प्रमाणे विचारीने तेणे तेने मारी नांखवा माटे बहार काढ्यो. ते वखते चित्रसंभूतिए विचार्युं के–'आपणो पिता आपणी नजर आगळ आपणा विद्यागुरुने हणे ए मोटो अनर्थ थाय छे.' पछी तेना रक्षणना उपाय मनमां विचारीने तेओए पोताना पिताने कह्युं के–'हे पिताजी ! आ पापी महा दुराचरणी छे, ए हणवा लायकज छे, रक्षण करवा लायक नथी. तेथी अमने तमे हुकम आपो के अमे तेने स्मशानभूमिमां लइ जइने मारी नांखीए.' चांडाले तेमने आज्ञा आपी, एटले तेओ तेने लइने रात्रिना वखते नीकळ्या. पछी दूर जइने तेओए तेने एकांतमां कह्युं के–'तमे अमारा विद्यागुरु छो तेथी अमे तमने छोडी दइए छीए, माटे तमे आ गाम छोडी दूर चाल्या जाओ.' ए उपरथी नमुचि त्यांथी नीकळी गयो. अनुक्रमे ते हस्तीनापुर आव्यो अने सनत्कुमारनो सेवक थइने रह्यो.

अहीं चित्र अने संभूति नामना ते बंने भाइओ संगीतकलामां घणा कुशळ थया हता, तेथी हाथमां वीणा लइने नगरना चोकमां संगीत करवा लाग्या. त्यां तेमना रागथी मोहित थइने घणा लोको आवता हता. जेओ सूर्यने पण जोइ शकती नहोती एवी युवतीओ पण तेमना रागथी मोहित थइ लज्जा छोडीने सांभळवाने माटे त्यां आवती हतीं. केटलीक स्त्रीओ तो अर्ध शृंगार कर्यो छे अने अर्ध बाकीमां छे एवी स्थितिमां त्यां आवती हती; तेमां केटलीके अळताथी एकज पग रंग्यो हतो, केटलीक स्त्रीओए एकज आंख आंजी हती अने केटलीक स्त्रीओना माथा उपरनां कपडां पवनथी उडी गयां हतां, केटलीक स्त्रीओए एकज स्तन उपर कांचळी पहेरी हती, केटलीक स्त्रीओ अन्य स्त्रीओनां बाळकोने पोतानां छे एवी बुद्धिथी उपाडीने आवी हती, केटलीएक स्त्रीओ पोताना भर्तार पासे कांइ बहानुं काढी 'आवुं छुं' एम कही त्यां आवेली हती, केटलीक स्त्रीओ तो जमती जमती भोजननी थाळी छोडीने जोवा माटे दोडी आवी हती, केटलीक स्त्रीओ गाय दोवाने माटे वाछडाने गायना आंचळे वळगाडीने आवी हती, अने केटलीक स्त्रीओ तो पोताना भर्तारनी नजरे उंचुं मुख करीने एमने जोती हती. आ प्रमाणे रागमां परवश बनेली कामिनीओ सघळुं घरनुं कामकाज छोडी दइने आवती हती. अहो ! नादनी परवशता केवी छे ! कह्युं छे के–

सुखिनि सुखनिदानं, दुःखिताना विनोदः ।
श्रवणहृदयहारी, मन्मथस्याग्रदूतः ॥
रणरणकविधाता, वल्लभः कामिनीनाम् ।
जयति जगति नादः, पंचमश्चोपवेदः ॥

" नाद ए सुखी जनोना सुखनुं कारण छे, दुःखी माणसोने विनोद आपनार छे, श्रवण अने हृदयनो हरनार छे, कामदेवनो अग्रेसर दूत छे, विधाताए रणरणाट करेलो छे अने कामिनीओने वहालो छे—एवो नाद के जे पांचमो उपवेद छे ते जगतमा जय पामे छे. "

ए प्रमाणे सघळी स्त्रीओ रागमां मोहित थइने तेमनी पाछळ भम्या करे छे. तेथी लोकोए विचार्युं के—' चांडालकुळमां उत्पन्न थयेला आ बन्ने छोकराओए तो सघळुं नगर मलिन कर्युं छे.' पछी तेओए राजा पासे जइने अरज करी के—' हे देव ! आ चित्र संभूति नामना बंने चांडालपुत्रोने गाममांथी बहार काढी मूकवा जोइए, कारणके तेओए आखुं नगर दूषित कर्युं छे. जो तेओ वधारे वखत रहेशे तो आचारशुद्धि बिलकुल रहेशे नहि. राजाए तरतज तेओने नगरमांथी काढी मूक्या.

हवे चित्रसंभूतिए मनमां विचार कर्यो के—' दुष्कुलना दोषथी दूषित थयेली आपणी कळाथी शो लाभ छे ?' ए प्रमाणे विचार करी कोइ पर्वत उपरथी झंपापात करवाने तेओ चाल्या; अने कोइ पर्वत उपर चढी बंने हाथे ताली दइ तेओ जेवा पडवाने तत्पर थया तेवाज नजीकनी गुफामां तप करता कोइ साधुए तेमने जोया. एटले ते साधु बोल्या के—' अरे तमे पडशो नहि.' ए प्रमाणे तेओए साधुनुं वाक्य त्रणवार सांभळीने पडवामां विलंब कर्यो अने आसपास जोवा लाग्या के 'आपणने पडतां कोण वारे छे ?' तेटलामां गुफानी अंदर तप करता कोइ मुनिने जोइने तेओ त्यां गया. मुनिए पूछ्युं के—'तमारे दुःखनुं शुं कारण छे ?' तेओए सर्व बीना निवेदन करी. एटले साधु बोल्या के—' कुळथी शी सिद्धि छे ? अने आवी रीते अज्ञानपणे मरवाथी पण शो लाभ छे ? माटे तमे जिनेश्वर भगवाने कहेलो धर्म आचरो के जेथी आ लोकमां तेमज परलोकमां तमारा कार्यनी सिद्धि थाय. ' ए प्रमाणेना साधुना वाक्यथी तेओने वैराग्य उत्पन्न थयो, एटले तरतज तेमणे दीक्षा ग्रहण करी अने निरतिचारपणे अति दुष्कर तप करवा लाग्या.

अन्यदा एक गामथी बीजे गाम विहार करतां ते बंने मुनि हस्तीनापुरना उद्यानमां आव्या. बंने मुनि मासक्षमण करता हता तेथी मासक्षपणने पारणे संभूति मुनि आहार लेवा निमित्ते गजपुरमां गया. त्यां भिक्षा अर्थे नाना मोटा कुळमां फरता ते मुनिने नमुचि प्रधाने जोया. 'अरे! आ तो संभूति नामनो चांडालपुत्र जणाय छे. ते अहीं क्यांथी आव्यो? माटे ते मारुं चरित्र रखेने राजाने कही दे.' एम विचारी नोकर पासे गरदन पकडावी तिरस्कार करीने तेने शहेरनी बहार काढी मूक्या. संभूति मुनिए विचार्युं के—'अरे! आ दुष्ट नमुचिए शुं कर्युं! अमे तेने मरणथी बचाव्यो छे छतां पण तेने लाज न आवी, तो हवे हुं तेने बाळी नांखुं.' पछी ते मुनि दीपायमान थयेला क्रोध रुपी अग्निवडे तेना पर तेजोलेश्या मूकवाउद्युक्त थया. मुखमांथी धूमाडाना गोटेगोटा नीकळवा लाग्या. तेथी सर्व नगर आच्छादित थइ गयुं. ते जोइ शोकथी आकुल थयेला लोको 'आ शुं थयुं!' एम बोलतां त्यां एकठा थइ गया. सनत्कुमार चक्रीए पण ते हकीकत सांभळी. एटले भयथी आकुळव्याकुळ थइ ते पण त्यां आवी संभूति मुनिना चरणमां पड्या अने बोल्या के—"हे प्रभु! अपराध क्षमा करो अने कृपा करीने लोकना संहारथी पाछा ओसरो, मारा पर एटलो अनुग्रह करो, तमे कृपासिंधु छो, नतवत्सल छो, क्षमाशील छो, हुं दीन छुं अने बंने हाथ जोडी अरज करुं छुं. तेथी कृपा करीने क्रोध तजी दो."

ते अवसरे संभूति मुनिनुं सघळुं चरित्र चित्र मुनिए जाण्युं, एटले ते त्यां आव्या अने संभूति मुनिने घणां शांत वचनो कह्यां. शांत वचन रूप अमृतनी धाराथी तेणे संभूति मुनिनुं मन शांत कर्युं. तेथी संभूति मुनि क्रोधथी निवृत्त थया अने शांतिभावने पाम्या. नमुचिनुं चरित्र जाणीने सनत्कुमारे तत्काल तेने बांधी मंगावी मुनिने पगे लगाड्यो अने पूछयुं के—'हे मुनि! आप हुकम करो के आ नमुचिने हुं शी शिक्षा करुं?' बंने मुनिओए कह्युं के—'अमारे कोइनी साथे वैरभाव नथी.' पछी सनत्कुमारे नमुचिने देशनिकाल कर्यो. पछी बंने मुनिओए विचार कर्यो के—'अहो! क्रोधांध पुरुषो कांइ पण जाणता नथी. आ क्रोध महा अनर्थकारी छे.' कह्युं छे के—

जं अज्जियं चरित्तं, देसूणाएय पुव्वकोडीए।
तंपिअ कसायमित्तो, हारेइ नरो मुहुत्तेण ॥ १ ॥

"देशे ऊणा पूर्वक्रोड पर्यंत जे चारित्र पाळ्युं होय तेने कषायमात्रवडे करीने प्राणी एक मुहूर्तमां हारी जाय छे, अर्थात् एक मुहूर्त मात्र करेल कषाय क्रोडपूर्वना चारित्रनो पण नाश करी शके छे." वळी—

कोह पइट्ठो देहघरि, तिन्नि विकार करेह ।
आपो तावें पर तवें, परतह हाणि करेह ॥ २ ॥

"देह रूप घरमां क्रोध पेठो तो ते त्रण विकार करे. १ पोते तपे, २ बीजाने तपावे अने ३ परसाथेना स्नेहनी हानि करे."

"माटे ते क्रोधना आश्रयभूत आ देहनेज तजी देवो जोइए, अवगुणोना निवासस्थान एवा आ देहने धारण करवाथी शो लाभ छे ?" आ प्रमाणे विचार करीने चित्र अने संभूति बंने मुनिओए वनमां जइने अनशन ग्रहण कर्युं. लोको 'धन्य ! धन्य !' एम कहीने तेमनी प्रशंसा करवा लाग्या. घणा लोको तेमने वांदवा गया, एटले सनत्कुमार चक्री पण पोताना परिवार सहित तेमने वांदवाने गयो. ते वांदी प्रशंसा करीने पाछो आव्यो. पछी चक्रवर्तीनी स्त्रीरत्न सुनंदा घणी स्त्रीओथी परिवृत थइने वांदवा गइ, अने ते भक्तिथी बंने हाथ जोडी चित्र मुनिना चरणने वांदीने पछी संभूति मुनिना चरणमां पडी. ते समये काजळ जेवो श्याम तेनो केशपास संभूति मुनिना चरणमां अथडायो. तेना स्पर्शथी जेने अत्यंत राग उत्पन्न थयो छे एवा संभूति मुनिए नियाणुं कर्युं के–'जो मारा तपनुं फळ होय तो आवुं स्त्रीरत्न मने परभवमां प्राप्त थाओ.' आ प्रमाणे निकाचित नियाणुं कर्युं. ते अवसरे चित्र मुनिए कह्युं के–'हे बन्धु ! तमे ए शुं करो छो ? आ दुष्ट परिणामवाळा विषयो आ जीवे अनंतीवार भोगव्या छे तथापि ते तृप्ति पाम्यो नथी, माटे आवुं नियाणुं न करो.' संभूति मुनिए कह्युं के–'में दृढ मनथी जे नियाणुं करेलुं छे ते फरवानुं नथी, माटे हवे तुं कांइ कहीश नहि.' ते सांभळी चित्रमुनि मौन रह्या.

अनुक्रमे बंने मुनि अनशन पाळीने स्वर्गे गया. बंने जणा एकज विमानमां उत्पन्न थया. त्यां चिरकाल भोग भोगवी प्रथम चित्रनो जीव त्यांथी च्यवीने **पुरिमताल** नगरमां एक शेठने घेर पुत्रपणे उत्पन्न थयो; अने संभूति निदानना माहात्म्यथी **कांपिल्यपुर** नगरमां **ब्रह्मदत्त** नामनो बारमो चक्रवर्ती थयो. तेनी उत्पत्तिनुं स्वरूप आगळ कहीशुं. अनुक्रमे तेणे छखंडनो विजय कर्यो. एक दिवस सभामां बेठेला ब्रह्मदत्तने पुष्पनो गुच्छ जोवाथी जातिस्मरणज्ञान थयुं. तेथी पूर्वभवमां अनुभवेलुं नलिनीगुल्म विमान तेने याद आव्युं. ते साथे पाछला पांच भव तेने याद आव्या. तेणे मनम चिंतवन कर्युं के–'जेनी साथे मारे पांच भवथी संबंध हतो ते मने केवी रीते मळशे ? ते क्यां उत्पन्न थयो हशे ?' पछी तेणे पोताना बंधुने मळवाने माटे अर्धी गाथा रची ते नीचे प्रमाणे–

आश्वदासौ मृगौ हंसौ मातंगावमरौ तथा ।

" प्रथम बंने अश्वदास (घोडाना खासदार), पछी बे मृग, पछी बे हंस, पछी बे मातंग (चांडाळ) अने पछी बंने देव थया." आ प्रमाणे बनावीने 'जे आ गाथानो अर्ध भाग पूरो करशे ते मारो बंधुज होवो जोइए, बीजाथी पूरी शकाय तेम नथी' एवो निश्चय करीने तेणे लोकोमां जाहेर कर्युं के ' जे आ गाथानो उत्तरार्द्ध पूरो करशे तेने हुं मनवांछित आपीश.' आ प्रमाणेनी हकीकत सांभळीने सर्व लोकोए ते अर्धी गाथा कंठे करी, परंतु कोइ ते समश्या पूर्ण करी शक्युं नहि. ए प्रमाणे घणा दिवसो व्यतीत थया.

हवे एवे समये पुरिमताल नगरमां शेठना कुळमां उत्पन्न थयेला चित्रना जीवे गुरु पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. तेने जातिस्मरणज्ञान थयुं, तेथी तेणे पण पाछलो पांच भवनो संबंध जाण्यो. पछी तेणे विचार्युं के–' मारा बांधवे नियाणुं करेलुं होवाथी ते भिन्न कुळमां चक्रवर्त्ती थयेलोछे, माटे हुं तेने प्रतिबोध पमाडुं.' एवो विचार करी ते कांपिल्यपुरना उद्यानमां आव्या. त्यां रेंट चलावनारना मुखथी पेली अर्धी गाथा सांभळीने चित्रमुनिए उत्तरार्द्ध पूरुं कर्युं. ते नीचे प्रमाणे–

एषा नौ षष्ठिका जातिरन्योन्याभ्यां वियुक्तयोः ॥

" एक बीजाथी जुदा पडेला एवा आपणो आ छट्ठो भव छे. " ए प्रमाणे मुनिमुखथी उत्तरार्द्ध सांभळीने रेंट चलावनारे राजा पासे जइ गाथानुं उत्तरार्द्ध पूरुं कर्युं. ते सांभळी अति स्नेहथी राजा मूर्छित थइ गयो. पछी सावधान थइने पूछवा लाग्यो के–' अरे ! आ समश्या कोणे पूरी करीछे ?' तेणे कह्युं के–' मारा रेंटनी पासे एक मुनि आवेलाछे तेणे आ उत्तरार्द्ध पूरुं करेलुं छे. ' राजा मुनिनुं आगमन सांभळी घणोज खुशी थयो अने सपरिवार वांदवा गयो. मुनिए देशना आपी; तेमां आ संसारनी अनित्यता वर्णवीने कह्युं के–" हे ब्रह्मदत्त ! वीजळीना चमकारा जेवुं चंचळ विषयसुख तजी दे अने जिनेश्वर भगवाने कहेलो धर्म सेव, विषयमां अनुरागनुं परिणाम घणुं खराब छे; तें पूर्वभवमां नियाणुं कर्युं ते वखते में तने घणो वार्यो हतो छतां पण तें मोक्षसुखने आपनारुं चारित्र अंशमात्र एवा राज्य अने स्त्रीना सुखने अर्थे गुमावी दीधुं छे. हजु पण परिणामे नरक आपनारा राज्यथी विरक्त था. " ए प्रमाणेनां बंधुनां वचन सांभळी चक्री बोल्यो के–" हे बंधु ! मोक्षसुख कोणे जोयुं छे ? आ विषयादि सुख तो प्रत्यक्ष छे; माटे हे भाइ ! तुं पण मारे घेर चाल अने सांसारिक सुखनो अनु-

भव ले, आ माथुं मुंडाववाथी शुं विशेष छे ? आपणे प्रथम सारी रीते भोग भोगव्या पछी संयम ग्रहण करशुं. " ए प्रमाणेनां संभूतिनां वचन सांभळीने चित्रमुनिए कह्युं के-" एवो कोण मूढ होय के जे भस्मने माटे चंदन बाळे? एवो कोण मूर्ख होय के जे जीववानी इच्छाथी कालकूट विषनुं भक्षण करे ? एवो कोण नीच होय के जे लोढाना खीला माटे प्रवहणने तोडी नांखे ? एवो कोण मूर्ख होय के जे दोराने माटे मोतीनो हार तोडी नाखे ? माटे हे भाइ ! तुं प्रतिबोध पाम, प्रतिबोध पाम. " ए प्रमाणेनां बंधुनां वचन अनेकवार सांभळ्यां पण तेने वैराग्य प्राप्त थयो नहि. तेथी 'आ दुर्बुद्धि छे' एम जाणी चित्रमुनिए बंधुने जणावीने त्यांथी विहार कर्यो. ब्रह्मदत्त पण पोताने घेर आव्यो, अने अनेक पापाचरण करवा लाग्यो.

चित्रमुनि लांबाकाळ सुधी साधुमार्गने सेवी केवलज्ञान प्राप्त करीने मोक्षे गया; अने जेणे पूर्वभवे नियाणुं करेलुं छे एवो ब्रह्मदत्त धर्म पाम्या शिवाय अनेक पापकर्म आचरीने सातसें वर्षनुं आयुष्य भोगवी सातमी नरके गयो.

ए प्रमाणे बीजा माणस पण भारेकर्मी होय छे ते प्रतिबोध पामता नथी; माटे सुलभ बोधिपणुं ए घणुं दुर्लभ छे एवो आकथानो तात्पर्य छे.

हवे बीजुं उदायी नृपने मारनारनुं दृष्टांत कहेछे—

पाडलीपुत्र नगरमां कोणिक राजानो पुत्र उदायी नामे राजा थयो. तेणे कोइ राजानुं राज्य लइ लीधुं. तेथी ते वैरी राजाए पोतानी सभामां कह्युं के-' जे कोइ उदायी राजाने मारी आवे तेने हुं मागे ते आपुं. ' ते उपरथी तेना कोइ सेवके ते प्रमाणे करवानुं कबुल कर्युं. ते सेवक पाडलीपुर आव्यो अने अनेक उपायो चिंतव्या, परंतु कोइ उपाय लागु पड्यो नहि, तेथी ते दुष्टे विचार्युं के 'उदायी राजा विश्वास विना मृत्यु पामे तेम नथी. ' तेथी तेणे गुरु समीपे जइने कपटथी चारित्र ग्रहण कर्युं; ते आचार्य (गुरु) उदायी राजाने घणा मान्य हता. पेलो सेवक चारित्र ग्रहण करीने आचार्य पासे अध्ययन करवा लाग्यो अने साधुओनो अत्यंत विनय करवा लाग्यो. अनुक्रमे विनयगुणथी तेणे आचार्य विगेरेनां चित्त वश कर्यां.

हवे उदायी राजा आठमने दिवसे अने चौदशने दिवसे रात्रिदिवसनो पोसह करेछे, त्यारे आचार्य धर्मदेशना आपवाने रात्रिए तेनी पौषधशाळामां जायछे. आठमने दिवसे त्यां जवाने गुरु प्रवृत्त थया ते वखते पेला नवदीक्षित साधुए कह्युं के—'हे स्वामिन् ! आपनी आज्ञा होय तो हुं साथे आवुं. ' गुरुए एनुं हृदय नहि जाणवाथी साथे

लीधो नहि. ए प्रमाणे दर वखते मागणी करे छे पण तेने गुरु साथे लेता नथी. एम वार वर्ष वीती गयां. एक समये चतुर्दशीने दिवसे सायंकाळे गुरु त्यां जायछे ते वखते पेला कपटी साधुए कह्युं के—' हे स्वामी ! हुं साथे आवुं ?' भवितव्यताने जोगे गुरुए कह्युं के—' भले आव ' तेथी ते गुरु साथे गयो. गुरु राजानी पौषधशाळामां आव्या, एटले दर्भना संथारा उपर बेठेला उदायी राजाए तेमने वांद्या, अने प्रतिक्रमण कर्युं. पछी संथारापोरषी भणावीने राजाए शयन कर्युं. राजा निद्रावश थया, एटले पेला दुष्ट शिष्ये उठीने छानी रीते राखेली कंक जातिना लोढानी छरी राजाने गळे फेरवी, जेथी तत्काळ ते मरण पाम्यो. पछी छरी त्यांज रहेवा दइने ते नासी गयो. बहार रहेला राजसेवकोए ' आ साधु छे ' एम जाणीने तेने अटकाव्यो नहि. अनुक्रमे रुधिरनो प्रवाह गुरुना संथारा पासे आव्यो, तेना स्पर्शथी गुरु जागी उठ्या अने विचार करवा लाग्या के—' आ शुं ?' तेणे पासे शिष्यने जोयो नहि, एटले धार्युं के ' आ कुशिष्य राजाने मारीने चाली गयेलो जणाय छे. ' पछी ते वातनी खात्री करीने विचारवा लाग्या के—' आ मोटो अनर्थ थयो छे. प्रातःकाळे जैन शासननो मोटो उड्डाह थशे के मुनिओ आवुं दुष्ट कर्म आचरे छे. ' तेथी तेम न थवा माटे गुरु पण पोताना गळा पर छरी फेरवीने मृत्युवश थया. बंने जणा मरण पामीने स्वर्गे गया.

ए प्रमाणे बीजा पण अभव्य जीवो बहु उपदेशथी पण प्रतिबोध पामता नथी. पेलो दुष्ट सेवक साधुवेष छोडीने पोताना राजानी पासे गयो अने सघळी हकीकत कही. ते सांभळीने राजाए कह्युं के—' तने धिक्कार छे ! अरे दुष्ट ! तें आ शुं कर्युं ? ' ए प्रमाणे तिरस्कार करी तेने देशमांथी हांकी काढ्यो. माटे जीवोए कोइ पण प्रकारे भारेकर्मी न थवुं एवो आ दृष्टांतनो उपनय छे.

गयकन्नचंचलाए, अपरिच्चत्ताए रायलच्छीए ।
जीवा सकम्मकलिमल—भरिय भरांतो पडंति अहे ॥ ३२ ॥

अर्थ—"हाथीना काननी जेवी चपळ राज्यलक्ष्मीने नहीं छोडनारा जीवो पोताना कर्मकिल्विषथी भरेला भारवडे अधोभूमिमां पडे छे अर्थात् नरके जाय छे. " ३२

वुत्तूणवि जीवाणं, सुदुक्कराइंति पावचरियाइं ।
भयवं जासा सासा, पच्छाएसो हु इणमो ते ॥ ३३ ॥

गाथा ३२—अपरिच्चत्ताए भरातो. भरतो.

गाथा—३३वुतूण. वूत्तूण. सुदुक्करायंति. पचाएसोय. पचाएसोहु.

अर्थ—"केटलाक जीवोनां पापचारित्रो मुखवडे कहेवाने पण सुदुष्कर होय छे, अर्थात् कहेवा योग्य पण होतां नथी. ते उपर निश्चये हे शिष्य! 'भगवंत! ते स्त्री ते? (मारी बहेन?)' भगवंते कह्युं 'हा ते ते' आ तारे दृष्टांत जाणवुं." ३३

केटलाक प्राणीनां पापकर्मो एवां होय छे के जे बीजानी समक्ष कहेतां पण लज्जा आवे. एटलामाटे एक पुरुषे समवसरणमां आवीने भगवंतने पूछ्युं के 'ते, ते?' भगवंते कह्युं 'हा, ते.' अहीं 'जासा सासानुं' दृष्टांत जाणवुं.

'जासा सासा' नुं दृष्टांत.

वसंतपुर नगरमां **अनंगसेन** नामे एक सोनी रहेतो हतो. ते अति स्त्रीलंपट हतो. ते पांचसो स्त्रीओ परण्यो हतो. ते दरेक अति रुपवती हती. ते सोनी पोतानी स्त्रीओने बहार काढतो नहोतो, घरमांज राखतो हतो. एक वखत ते जमवाने माटे पोताना कोइ मित्रने घेर गयो. त्यारे ते सर्वे स्त्रीओए विचार कर्यो के–'आज आपणने वखत मळ्यो छे.' एम विचारीने स्नान, विलेपन, काजळ, सिंदुरना तिलक विगेरे करीने तथा आभरणो पहेरीने सर्व स्त्रीओ पोताना हस्तमां आदर्श (काच) लइ पोताना रूपने जोवा लागी; अने हसवुं, रमवुं, गीतगान करवां इत्यादि क्रीडा परस्पर करवा लागी. तेओ अन्योन्य कहेवा लागी के–"आपणामांथी जेनो वारो होय छे तेनेज आपणो स्वामी तो आभूषण विगेरेथी सुशोभित करे छे, बीजी स्त्रीओने शणगार पण करवा देतो नथी; तो हवे आपणे आजे तो मरजी मुजब क्रीडा करवी जोइए." एवामां सोनी पोताने घेर आव्यो, तेणे पोतानी स्त्रीओनी पूर्वोक्त चेष्टा जोइ; एटले तेमांथी एक स्त्रीने पकडीने मर्मस्थानमां मार मार्यो, जेथी ते मृत्युवश थइ गइ. त्यारे बीजी स्त्रीओए विचार्युं के 'आणे एकने मारी नांखी तेम बीजीओने पण मारी नांखशे माटे एनेज मारी नांखवो जोइए.' ए प्रमाणे विचार करी, ते सघळी स्त्रीओए एकी वखते पोतपोताना हाथमां रहेलां दर्पणो तेना तरफ फेंक्यां. ते दर्पणोना प्रहारथी सोनी मृत्यु पाम्यो. पाछळ स्त्रीओ लोकोना अपवादथी भय पामीने वळी मुइ. तेओ बधी मरण पामीने एक पाळमां चोर थइ. जे स्त्री प्रथम मृत्यु पामी हती ते कोइएक गाममां कोइ व्यापारीने घेर पुत्र तरीके उत्पन्न थइ, अने सोनीनो जीव ते श्रेष्ठीने घरे पुत्रीपणे उत्पन्न थयो. तेणे पूर्वभवमां अति विषय सेव्यो हतो तेथी ते जन्म पामतांज अति कामातुर थइ रुदन करती हती. एकदा तेना भाइनो हस्त तेनी योनिने लाग्यो, एटले ते रोती बंध थइ गइ. आ प्रमाणे तेने छानी राखवानो उपाय हाथ लागवाथी ज्यारे ते रुए त्यारे तेनो भाइ दररोज ए प्रमाणे करे एटले ते रोती बंध थइ जाय. एक वखते

तेना पिताए तेने ए प्रमाणे करतो जोयो तेथी तेणे तेने वार्यो छतां पण ते अटक्यो नहि त्यारे तेने घरमांथी काढी मूक्यो. ते चोरपल्लीमां जइ पेला पांचसो चोरोनो स्वामी थयो. एक दिवस ते सर्व चोरोए एकठा थइ कोइ गाममां धाड पाडी. त्यांथी बीजे गाम गया. त्यां पेली विषयाभिलाषिणी कन्या के जेने युवानी प्राप्त थइ छे ते आवी हती. तेने चोरोए जोइ एटले पूर्वभवना स्नेहथी कामातुर थइ तेणेज चोरोने कह्युं के–'मने स्त्री तरीके स्वीकारो.' ए प्रमाणे प्रार्थना करवाथी तेओए तेने स्वीकारी. आ प्रमाणे ते पांचसो चोरोनी पत्नी थइ. परंतु ते पांचसो पुरुषोथी पण तृप्ति पामती नथी. अहो ! स्त्रीओनी कामलोलुपता केवा प्रकारनी छे ! कह्युं छे के—

नाग्निस्तृप्यति काष्ठौघै, र्नापगाभिर्महोदधिः ।
नांतकः सर्वभूतेभ्यो, न पुंभिर्वामलोचना ॥

"काष्ठना समूहथी अग्नि तृप्त थतो नथी, नदीओथी समुद्र तृप्त थतो नथी, सर्व प्राणीओथी यम राजा तृप्त नथी, अने पुरुषोथी स्त्री तृप्त थती नथी." वळी—

नागरजातिरदुष्टा, शीतोवह्निर्निरामयः कायः ।
स्वादु च सागरसलिलं, स्त्रीषु सतीत्वं न संभवति ॥

"नागरजातिमां अदुष्टपणुं, वन्हिमां शीतलपणुं, कायामां निरोगपणुं, समुद्रजळमां स्वादिष्टपणुं अने स्त्रीओमां सतीपणुं संभवतुंज नथी."

एक दिवसे चोरोए विचार्युं के–'आ स्त्री पांचसे पुरुषोथी सेवातां दुःख पामे छे, तथी बीजी स्त्री लाववी जोइए.' ए प्रमाणे दयाथी तेओए बीजी स्त्री आणी; तेने जोइ पहेली स्त्रीए विचार्युं के–'अरे ! मारा उपर आ बीजी स्त्री आणी ! आ मारा विषय-भोगमां भाग पाडशे.' एवी बुद्धिथी तेणे तेने कूवामां नांखी दीधी, जेथी ते मृत्यु पामी. ए वात पल्लीपतिए सांभळी तेथी विचारवा लाग्यो के 'अहो ! आ कामथी अतिविह्वल छे अने महापापकारिणी छे.' वळी तेणे विचार कर्यो के–'आवी तीव्र कामरागवाळी कदि मारी बहेन हशे ? कारणके तेनामां अति कामबुद्धि हती.' पछी ए प्रकारनो संशय दूर करवाने माटे ते श्री वर्धमान स्वामीना समवसरणमां गयो.

पल्लीपतिए प्रभुने वांदीने पूछ्युं के–'हे भगवन् ! 'आ ते ?' त्यारे भगवाने कह्युं के–'ते ते.' ए प्रमाणे सांभळी, वैराग्यपरायण थइ, व्रत अंगीकार करी, पाळीने ते शुभगतिने प्राप्त थयो.

अहीं गौतम स्वामीए प्रभुने पूछ्युं के-" हे भगवन्! आपने पल्लीपतिए पूछ्युं के-'आ ते ?' त्यारे आपे उत्तर आप्यो के 'ते ते' एटले शुं ? अमे कांइ समज्या नहि." भगवाने कह्युं के-" एणे समश्यामां पूछ्युं के-'जे पेली मारी बहेन हती ते आ छे के नहि ? ए प्रमाणे लज्जाथी तेणे पोतानी स्त्रीनुं स्वरूप पूछ्युं, एटले में पण समश्याथी जवाब दीधो के 'तारी पत्नी ते तारी बहेनज छे.' ते सांभळी घणा लोक प्रतिबोध पाम्या.

'कर्मे प्रेरायेलो जीव न आचरवानुं पण आचरे छे' आवो आ कथानो उपनय छे.

पडिवज्जिऊण दोसे, निअए सम्मंचं पायवंडिआए ।
तो किर मिगावईए, उप्पंन्नं केवलंनाणम् ॥ ३४ ॥

अर्थ-" पोताना दोषने अंगीकार करीने सम्यक् प्रकारे त्रिकरण शुद्धे पगे पडेली एवी (गुरुणीनी सेवा करनारी) मृगावतीने तेज कारणथी निश्चये निरावरण एवुं केवळज्ञान उत्पन्न थयुं." ३४. तेथी विनयज सर्व गुणोनुं निवासस्थान छे.

अहीं मृगावती साध्वीनुं दृष्टांत जाणवुं.

मृगावतीनुं दृष्टांत.

कोशाम्बी नगरीए श्रीमहावीर स्वामी समवसर्या ते वखते सर्व सुर अने असुरोना इंद्रो करोडो देवताओथी परिवृत थइ वांदवाने माटे आव्या; तेमज सूर्य अने चंद्र पण पोताना मूळ विमानमां बेसीने वांदवाने आव्या. आर्य चंदना साध्वी पण मृगावतीने साथे लइने वांदवाने आव्या. आर्य चंदना आदि साध्वीओ प्रभुने वांदीने पोताना उपाश्रये आवी, पण मृगावती तो समवसरणमांज बेसी रही. ते वखते संध्याकाळ थयो हतो छतां पण सूर्यना तेजथी ते तेना जाणवामां आव्यो नहि; कारणके उद्योत तेवो ने तेवोज रहेलो हतो. अनुक्रमे रात्रि घणी गइ, अने सर्व लोको प्रभुने वांदीने पोतपोताने घेर गया; पण मृगावतीए रात्रि घणी गइ छे एम जाण्युं नहि. पछी ज्यारे सूर्य चंद्र पोताना विमानमां बेसीने पोताना स्थानके गया त्यारे समवसरणमां तेमज पृथ्वी उपर अंधकार प्रसरी गयो, तेथी मृगावती संभ्रमित थइ. 'घणी रात्रि गइ छे' एम जाणी शहेरमां आर्य चंदनाना उपाश्रये आवी. ए समये आर्य चंदना साध्वी पण प्रतिक्रमण करी, संथारापोरषी भणावी, संथारामां बेसीने मनमां विचार करती हती के-'मृगावती क्यां गइ हशे ? अने क्यां रही हशे ?' एवामां मृगावतीने आवेली जोइ तेने ठपको आपवा लाग्या के-'हे मृगावती ! तने आ न घटे. तारा जेवी प्रधा-

नकुळमां जन्मेली साध्वीने रात्रिए बहार रहेवुं ए उचित नथी; तें आ विरुद्ध आचरेलुं छे.' आ प्रमाणेनां आर्य चंदनानां वचन सांभळीने नेत्रमांथी गळतां अश्रुथी संतापने वहन करती ते पश्चात्ताप करवा लागी के—'में आ गुणवती साध्वीने संताप उत्पन्न कर्यो.' ए प्रमाणे पोताना आत्माने निंदती ते हाथ जोडी कहेवा लागी के—'हे भगवती ! मारो आ एक अपराध क्षमा करो, हुं मंदभागी छुं; प्रमादवशथी हुं रात्रिनुं स्वरूप जाणी शकी नहि, हुं फरीथी आवुं करीश नहि.' ए प्रमाणे वारंवार खमावीने तेमना चरणमां पडी तेमनी वैयावच्च करवा लागी. आर्य चंदना तो संथारामां सुइ गया, पण मृगावती तो पोताना आतमानी निंदा करे छे. एम करतां करतां मृगावतीनो शुक्लध्यान रूपी अग्नि वृद्धि पाम्यो अने कठिन कर्म रूपी इन्धनसमूह बळी गयो; तेथी मृगावतीने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं. एवामां कोइएक सर्प आर्य चंदनाना संथारानी पासे आवतो मृगावतीए केवलज्ञानथी जोयो, एटले संथारानी बहार रहेलो आर्य चंदनानो हाथ तेणे संथारामां मूक्यो. तेथी आर्य चंदना जागी गया अने पूछ्युं के—'मारो हाथ कोणे हलाव्यो ?' त्यारे मृगावतीए कह्युं के—'स्वामिनी ! मारो अपराध क्षमा करो, में तमारो हाथ हलाव्यो छे.' ते सांभळी चंदनाए 'केम हलाव्यो ?' एम पूछतां मृगावतीए कह्युं के—'सर्प आवे छे तेथी.' चंदनाए पूछ्युं के—'आवा अंधकारमां तें ते केम जाण्युं ?' मृगावती बोली के—'अतिशयथी.' आर्य चंदनाए पूछ्युं के—'आ अतिशय केवा प्रकारनो ?' मृगावतीए कह्युं के—'केवलज्ञान रूपी अतिशय.' ते सांभळी आर्य चंदना केवलज्ञानीनी आशातना थयेली जाणी पश्चात्ताप करवा लाग्या अने मृगावतीना चरणमां पड्या. ए प्रमाणे आत्मनिंदामां तत्पर थयेला आर्य चंदनाने पण केवलज्ञान उत्पन्न थयुं.

जेवी रीते मृगावतीए कषाय न कर्यो तेवी रीते बीजाओए पण कषाय करवो नहि, एवो आ दृष्टांतना उपनयथी उपदेश आपेलो छे. इति.

किं[1] सक्का[3] वुत्तुं[2] जे, सरागधम्मंमि[4] कोइ[5] अकसाओ[6] ।
जो[7] पुण[8] धरिज्ज[11] धणिअं[10], दुव्वयणुज्जालिए[9] स[12] मुणी[13] ॥३५॥

अर्थ—"शुं एम कही शकाय के आधुनिक सराग धर्ममां—रागद्वेष सहित चारित्रमां (कोइ मुनि) अकषायी—सर्वथा कषाय रहित होय, आ वात संभवित नथी. कारणके सर्वथा कषायरहितपणुं हाल क्यांथी होय ? परंतु जे दुर्वचन रूप काष्ठवडे प्रज्वलित करेल अत्यंत एवा कषाय रुप अग्निने धरी राखे—उदय आवेलाने पण प्रगट न थवा दे

गाथा ३५— अकसाई. धणिअ. दुव्वयणज्जालिए. दुव्वयणुजालिए. जइतिपद शोभानिमित्त.

तेज मुनि, तेज महापुरुष; कारणके सर्वथा कषायत्याग तो बहु दुर्लभ छे. सर्वथा कषाय-रहितपणुं तो आ काळमां संभवतुंज नथी; परंतु जेओ कोइना कहेलां दुर्वचनोथी उदयमां आववाने तैयार थयेला कषायने पण रोकी राखे तेने धन्य छे, ते महापुरुष छे." ३५

कडुअ कसायतरूणं, पुप्फं च फलं च दोवि विरसाइं ।
पुप्फेण झाइ कुविओ, फलेण पावं समायरइ ॥ ३६ ॥

अर्थ—"कडवा कषाय वृक्षनां पुष्प अने फळ बंने निःस्वादु छे. तेनां पुष्पवडे कोपायमान थयो सतो परने मारवा विगेरे अनर्थ चिंतवे छे—ध्याय छे. ते कषाय वृक्षनां पुष्पो छे अने फळे करीने परने ताडन तर्जन करवा रुप पाप आचरे छे ते फळ छे. तेथी कषायरूप वृक्षनां पुष्प ने फळ बंने कडवां छे अने ते बंनेथी गति नरकनी प्राप्त थाय छे." ३६

संते वि को वि उज्झइ, को वि असंतेवि अहिलसइ भोए ।
चयइ परपच्चएणावि, पभवो दट्ठूण जह जंबू ॥ ३७ ॥

अर्थ—"कोइ (महापुरुष) छता भोगने तजे छे, कोइ (नीचकर्मी जीव) अछता भोगनो अभिलाष करे छे, अने कोइ परना निमित्ते करीने पण भोगने तजी दे छे. अन्यने छता भोग तजतो देखी पोते बोध पामे छे. जेम जंबूस्वामीने भोग तजतां जोइने पांचशें चोर सहित प्रभव स्वामीए पण भोग तजी दीधा तेम. ३७. अहीं जंबू स्वामीनुं दृष्टांत जाणवुं. ११

श्री जंबूस्वामीनुं दृष्टांत.

प्रथम तेमना पूर्वभवनुं स्वरूप कहे छे—

एकदा राजगृह नगरे श्री महावीर स्वामी समवसर्या. श्रेणिक राजा वांदवाने माटे आव्या. ते समये कोइ देवताए प्रथम देवलोकथी आवी सूर्याभदेवनी जेम नाटक करीने पोताना आयुष्यनुं स्वरूप पूछ्युं. भगवाने कह्युं के—' आजथी सातमे दिवसे तुं च्यवीने मनुष्यभव पामीश.' ए प्रमाणे सांभळीने ते देव पोताने स्थानके गयो. पछी श्रेणिक राजाए पूछ्युं के—' हे स्वामी ! आ देव क्यां जन्म लेशे ? ' वीर प्रभुए कह्युं के—' आ राजगृह नगरमांज जंबू नामे ए छेल्ला केवली थशे.' श्रेणिक राजाए कह्युं के—' हे प्रभु ! एना पूर्वभवनुं स्वरूप मने कहो.' भगवाने कह्युं के—" जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमां सुग्रीव नामना गाममां रावड नामनो कोइ रंक रहेतो हतो. तेने रेवती नामे स्त्री हती. तेनाथी भवदेव अने भावदेव नामना बे पुत्रो थया हता.

गाथा ३५—जाइ. ध्याइ-ध्यायति.

एकदा भवदेवे दीक्षा लीधी. विहार करतां ते एक दिवस पोताना गामे आव्या. ते वखत भावदेवे पोतानी नवी परणेली **नागिला** नामनी स्त्रीने तजी दइने लज्जावडे पोताना बंधु भवदेव मुनि समीपे चारित्र ग्रहण कर्युं. भवदेव मृत्यु पामीने स्वर्गे गया. भावदेव भवदेवना मरण पछी चारित्रथी भ्रष्ट थया. ते लज्जा तजी दइ नवी परणेली नागिलाने संभारता भोगनी आशाथी घर तरफ चाल्या. अनुक्रमे पोताना गामे आवी गामनी बहार श्री ऋषभदेव भगवानना मंदिरमां रह्या. ते समये तपथी कृश थयेली नागिला पण त्यां दर्शनार्थे आवी. तेणे पोताना पतिने ओळख्या अने इंगिताकारथी तेने कामातुर पण जाण्या. नागिलाए पूछ्युं के–' हे मुनि ! आप अहीं शा अर्थे पधार्या छो ? ' साधुए कह्युं के–" मारी नागिला नामनी स्त्रीना स्नेहने लीधे हुं आव्यो छुं. में लज्जाने लीधे पूर्वे संयम ग्रहण कर्युं हतुं, परंतु प्रेमभाव केम जाय ? माटे जो नागिला मळे तो मारुं सर्व मनवांछित सिद्ध थाय. " त्यारे नागिलाए कह्युं के—" अरे मुनि ! चिंतामणिने छोडीने कांकरो कोण ग्रहण करे ? हाथीने छोडीने रासभ उपर कोण स्वारी करे ? नावने दूर छोडी दइने मोटी शिलानो आश्रय कोण करे ? कल्पतरुने छोडी धतुरो कोण वावे ? " इत्यादि उपदेश आपी पोताना धणीने वाळी चारित्रमां दृढ कर्या. भावदेव पाप आळोवी चारित्र पाळीने त्रीजा स्वर्गमां सात सागरोपमना आयुष्यवाळा देवता थया. नागिला पण मरण पामीने स्वर्गे गइ. त्यांथी च्यवी एक अवतार करीने मोक्षे जशे.

भावदेवनो जीव त्रीजा देवलोकथी च्यवी जंबूद्वीपमां पूर्व विदेहने विषे **वीतशोका** नगरीमां **पद्मरथ** राजाने घेरे **वनमाला** राणीनी कुक्षिथी पुत्रपणे उत्पन्न थयो. तेनुं **शिवकुमार** नाम पाड्युं. युवान वय पामतां ते पांचसो राजकन्याओने परण्यो. एक दिवसे ते गोखमां बेठो हतो तेवामां तेणे एक साधुने जोया. एटले गोखमांथी उतरी नीचे आवीने तेणे साधुने पूछ्युं के–' तमे आटलो बधो क्लेश शामाटे सहन करो छो' ? साधुए कह्युं के–' धर्मनिमित्ते. ' शिवकुमारे पूछ्युं के—' आ धर्म कया प्रकारनो ? ' साधुए कह्युं के—' जो तमारे सांभळवानी इच्छा होय तो अमारा गुरु पासे आवो. ' शिवकुमार तेनी साथे **धर्मघोष** आचार्य पासे गयो. त्यां धर्म सांभळतां तेने जातिस्मरण ज्ञान थयुं. पछी ते गुरुने नमीने घेर आव्यो. तेणे मातापिता पासे दीक्षानी आज्ञा मागी. तेमणे दीक्षानी आज्ञा आपी नहि; तेथी ते घरमां रही निरंतर छठ्ठ तप करवा लाग्यो, अने पारणे आंबिल करवा लाग्यो. ए प्रमाणे बार वर्ष सुधी तप करीने पहेला स्वर्गमां चार पल्योपम आयुष्यवाळो **विद्युन्माली** नामे देव थयो.

हे श्रेणिक ! ते विद्युन्माली देव अहीं आव्यो हतो. " आ प्रमाणे जंबूस्वामीना चार भव वीर प्रभुए श्रेणिक राजानी आगळ कह्या.

पांचमा भवमां विद्युन्माली देव स्वर्गथी च्यवी राजगृह नगरमां **ऋषभदत्त** श्रेष्ठीने घेर **धारणी** देवीनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो. स्वप्नमां शाश्वत जंबूतरु देखवाथी ते जन्म्यो त्यारे तेनुं **जंबूकुमार** नाम राख्युं. तेणे बाल्यावस्थामां सकल कळानो अभ्यास कर्यो. अनुक्रमे यौवन प्राप्त थतां ते अति रुपवान होवाथी तरुणी रुपी हरिणीओने पाश रुप थयो. ते समये तेज नगरमां रहेनारा आठ शेठीआओए जंबूकुमारनी साथे पोतानी आठ कन्याओनुं वेशवाळ कर्युं.

अन्यदा श्री सुधर्मा स्वामी गणधर राजगृह नगरे समवसर्या. कोणिक राजा वांदवा आव्यो. श्री सुधर्मा स्वामीए संसार रुपी दावानळना तापनी शांति अर्थे मेघजळनी धारा जेवी देशना आपी, अने संसारना स्वरूपनी अनित्यता दर्शावी. तेमणे कह्युं के– ' जेम कामीओनुं मन चंचळ होय छे, मूषा (सोनुं गाळवानी कुरडी)नी अंदर रहेलुं प्रवाही बनेलुं सोनुं चंचळ होय छे, जळनी अंदर पडतुं चंद्रनुं प्रतिबिंब चंचळ होय छे अने वायुथी हणायेलो ध्वजनो प्रांत भाग जेम चंचळ होय छे तेवीज रीते आ संसारनुं स्वरूप अस्थिर छे. वळी जेवी रीते अंगुठो चूसी पोतानीज लाळनुं पान करतो बाळक जेम सुख माने छे, तेम आ जीव पण निंदित भोग भोगवी सुख माने छे. अहो ! आ लोकोनुं मूर्खपणुं केवुं छे ! के ते जेमां उत्पन्न थयो छे तेमांज आसक्त थाय छे, जेनुं पान करेलुं छे तेज स्तनोनो स्पर्श करवाथी मनमां खुशी थाय छे. ' इत्यादि देशना सांभळीने जंबूकुमार प्रतिबोध पाम्या. तेमणे सुधर्मा स्वामीने कह्युं के– ' हे स्वामी ! मने संसारनो निस्तार करनारी दीक्षा आपीने मारो उद्धार करो. ' सुधर्मा स्वामीए कह्युं के–' हे देवानुप्रिय ! प्रमाद कर नहि. ' ए प्रमाणे गुरुनुं वचन सांभळी ते मातापितानी आज्ञा लेवा माटे घेर आवतां राजमार्गमां आव्यो. त्यां घणा राजकुमारो हथियारोनो अभ्यास करे छे. त्यांथी एक लोढानो गोळो जंबूकुमार पासे आवीने पड्यो. जंबूकुमारे विचार्युं के–' जो मने आ गोळो लाग्यो होत तो हुं मनवांछित केवी रीते करी शकत ? ' ए प्रमाणे विचारी पाछा वळी गुरु पासे आवी तेणे लघु दीक्षा ग्रहण करी; पछी घेर आव्या, अने मातापिताना चरणमां पडीने कहेवा लाग्या के–" हुं दीक्षा लइश, आ संसार अनित्य छे, आ बाह्य कुटुंबपरिवारथी शो लाभ छे ? हुं तो अंतरंग कुटुंबमां अनुरक्त थयेलो छुं, तेथी हुं उदासीनपणा रुपी घरनी अंदर वास करीश अने विरति रुपी मातानी सेवा करीश,योगाभ्यास रुपी पिता, शमता रुपी धावमाता, निरागता रुपी प्रिय बहेन, विनय रुपी अनुयायी बंधु,

विवेक रुपी पुत्र, सुमति रुपी प्राणप्रिया, ज्ञान रुपी अमृतभोजन अने सम्यक्त्व रुपी अक्षय भंडार—आ कुटुंबमां मारो प्रेम छे. तप रुपी अश्व उपर स्वारी करी, भावना रुपी कवचने धारण करी, अभयदान आदि उमरावो सहित संतोष रुपी सेनापतिने अग्रेसर करी, संयमना नाना प्रकारना गुण रुपी सेनाने सज्ज करी, क्षपकश्रेणि रुपी गजघटाथी परिवृत थइ, गुरुनी आज्ञा रुपी शिरस्त्राणे[1] धारण करी, धर्मध्यान रुपी खड्ग वडे महा दुःख देनारी एवी अंतरंग मोहराजानी सेनाने हणीश." आ प्रमाणेनां पुत्रनां वचन सांभळीने मातापिता बोल्यां के—"हे पुत्र! एक वखत आठ कन्याओने परणी अमारो मनोरथ पूर्ण करी पछी व्रत ग्रहण कर." ए प्रमाणेनां पितानां वचनथी तेणे आठे कन्याओनी साथे पाणिग्रहण कर्युं; परंतु ते मनथी तद्दन निर्विकारी हतो. एक एक कन्या नव नव क्रोड सोनामहोर करीयावरमां लावी हती, आठ क्रोड सोनामहोर आठ कन्याना मोसाळपक्ष तरफथी आवी हती अने एक क्रोड जंबूकुमारना मोसाळपक्ष तरफथी आवी हती. ए प्रमाणे एकाशी क्रोड सोनामहोर आवेली हती, अने अढार क्रोड सोनामहोर पोताना घरमां हती. आ प्रमाणे जंबूकुमार नवाणुं क्रोड सोनामहोरना अधिपति थया हता.

हवे जंबूकुमार रात्रिए रंगशाला (शयनगृह) मां स्त्रीओ साथे बेठा छे; पण ते तेमने रागवाळी दृष्टिए जोता पण नथी, तेम वचनथी पण संतोष आपता नथी. स्त्रीओए तेने प्रेममय वचनोथी चलित करवा माटे घणो प्रयत्न कर्यो पण ते चलित थया नहि. ते समये प्रभव नामनो चोर पांचसे चोरोथी परिवृत थइ जंबूकुमारना घरमां आव्यो; तेमणे क्रोड सोनामहोर लइ तेनी गांसडीओ बांधी अने मस्तकपर मूकीने नीकळवा लाग्या, ते अवसरे जंबूकुमारे स्मरण करेला पंचपरमेष्ठी नमस्कार मंत्रना महात्म्यथी ते सर्वे भींत उपर काढेल चित्रोनी पेठे स्थिर थइ गया. त्यारे प्रभवे कह्युं के 'हे जंबूकुमार! तुं जीवदयापालक छे, अभयदानथी वधारे दुनियामां बीजुं कोइ पण पुण्य नथी; अमे जो अहीं पकडाशुं तो प्रातःकाळे कोणिक राजा अमने सर्वने मारी नांखशे. माटे अमने छोडी दे, अने मारी पासे तालोद्घाटिनी (ताळुं उघाडनारी) अने अवस्वापिनी (निद्रित करनारी) नामनी बे विद्या छे ते तुं ले अने तारी स्तंभिनी विद्या मने आप.' जंबूकुमारे कह्युं के—'मारी पासे तो धर्मकला नामनी एक मोटी विद्या छे, ते शिवायनी बीजी वधी विद्याओ कुविद्या छे. हुं तो तृणनी माफक आ सर्व भोगोनो त्याग करीने प्रातःकाळमां दीक्षा ग्रहण करवानो छुं. आ

---

१ युद्ध करवा जतां मस्तकना रक्षण माटे माथापर मूके छे ते लोहनो टोप.

भोगो मधुबिंदु जेवा छे. ' प्रभवे कह्युं के–' मने मधुबिंदु पुरुषनुं दृष्टांत कहो. ' एटले जंबूकुमार कहेवा लाग्या के–सांभळ !

" एक वनमां साथथी विखुटो पडी गयेलो कोइएक पुरुष भटके छे. एवे समये एक जंगली हाथी तेने मारवाने माटे सन्मुख दोड्यो, एटले ते नाठो. हाथी तेनी पाछळ लाग्यो. आगळ चालतां हाथीना भयथी कूवानी अंदर रहेल वड वृक्षनी शाखानो आश्रय लइने ते कूवामां लटकी रह्यो. कूवामां तेनी नीचे पहोळा मुख करीने रहेला एवा बे अजगरो छे, अने चारे पडखे चार मोटा सर्पो छे; हाथमां पकडेली वडनी शाखा उपर रसथी भरेलो एक मधपुडो छे. बे उंदरो ते शाखाने कोतरे छे अने मधपुडामांथी उडेली माखीओ तेने डंख मार्या करे छे. ए प्रमाणेना कष्टमां पडेलो ते मूढ माणस घणे लांबे वखते मधपुडामांथी मुखमां टपकतुं मधुबिंदु मेळवीने तेना स्वादथी पोताने सुखी माने छे. एवे वखते कोइएक विद्याधर त्यां आव्यो. तेणे तेने कह्युं के– ' तुं आ विमानमां आव, हुं तने दुःखमांथी मुक्त करुं.' त्यारे ते मूर्ख माणसे जवाब आप्यो के–' एक क्षण थोभो, हुं आ मधना एक बिंदुनो स्वाद लइने आवुं छुं. ' ते सांभळी विद्याधर चाल्यो गयो अने ते मूर्ख दुःख पाम्यो. "

माटे हे प्रभव ! आ विषयनो विपाक मधुबिंदुना जेवो छे. आनो उपनय एवो छे के–' आ संसार रुपी मोटुं जंगल छे, तेमां जीव रूपी विखुटो पडी गयेलो रंक छे, जन्म, जरा ने मरण रूपी कूवो छे, ते विषय रूपी जळथी भरेलो छे. नारकी गति अने तिर्यक् गति रूपी बे अजगरो छे, कषाय रूपी चार सर्पो छे, आयुष्य रूपी वडनी शाखा छे, शुक्ल ने कृष्ण पक्ष रूपी बे उंदरो छे, मृत्यु रूपी हाथी छे, अने विषय रूपी मधपुडो छे. तेमां आसक्त थइ आ जीव रोग, शोक, वियोग आदि अनेक उपद्रवोने सहन करे छे. माटे धर्म एज मोटुं सुख छे, तेवा सुखने आपनार गुरु ते विद्याधरनी जग्याए छे. ' आ प्रमाणे मधुबिंदुनुं दृष्टांत जाणवुं.

प्रभवे फरीथी कह्युं के–' भर यौवनमां पुत्र स्त्री विगेरे सघळा परिवारनो त्याग करवो उचित नथी. ' जंबूकुमारे कह्युं के–' एक एक जीवने परस्पर अनंतीवार दरेक संबंध थयेला छे. जेमके एक भवमां थयेला अढार नातरानो संबंध छे. ' प्रभवे कह्युं के–' ते अढार नातराना संबंधनुं स्वरूप केवुं छे ते मने कहो. ' जंबूकुमारे कह्युं के–' मथुरापुरीमां **कुबेरसेना** नामे वेश्या हती. तेनी कुक्षिथी छोकरा ने छोकरीनुं युगल उत्पन्न थयुं. छोकरानुं नाम **कुबेरदत्त** राख्युं अने छोकरीनुं नाम **कुबेरदत्ता** राख्युं. ते युगलने तेमनां नामथी अंकित मुद्रा पहेरावी वस्त्रमां वींटी पेटीमां नाखीने ते पेटी यमुना नदीना प्रवाहमां वहेती करी. प्रातःकाळे ते पेटी **सोरीपुर** नामना

नगर पासे पहोंची. त्यांना बे शेठीआओए ते पेटी बहार काढी. एक शेठे पुत्र ग्रहण कर्यो अने बीजाए पुत्री ग्रहण करी. तेओ युवान थतां कर्मयोगे लग्ननी गांठथी परस्पर जोडायां. एकठा सोगठाबाजी रमतां कुबेरदत्ताए पोताना पतिना हाथमां पेली मुद्रा जोइ. तेथी 'आ मारो भाइ छे' एम जाणी ते विरक्त थइ. तेणे संयम ग्रहण कर्युं. अनुक्रमे तेने अवधिज्ञान प्राप्त थयुं. एवे समये कुबेरदत्त कार्य अर्थे मथुराए गयो. त्यां कुबेरसेना वेश्या जे तेनी माता हती तेनी साथे लपटायो. तेमने पुत्रप्राप्ति थइ. कुबेरदत्ता साध्वीए अवधिज्ञानथी जाण्युं के–'आ मोटो अनर्थ थाय छे.' तेथी तेमने प्रतिबोध पमाडवाने माटे ते त्यां आव्या. ते कुबेरसेनाने घरेज रह्या. त्यां रुदन करता पेला बाळक पासे आवीने कहेवा लाग्या के–"हे बाळक! तुं केम रुवे छे? मौन ग्रहण कर. तुं मने वहालो छे. तारी साथे मारे छ संबंध छे. (१) तुं मारो पुत्र छे, (२) तुं मारा भाइनो पुत्र छे, (३) तुं मारो भाइ छे, (४) तुं मारो देर छे, (५) तुं मारो काको छे, अने (६) तुं मारो पौत्र छे; अने हे वत्स! तारा पिता साथे पण मारे छ संबंध छे. (१) ते मारो पति छे, (२) मारो पिता छे, (३) मारो ज्येष्ठ बंधु छे, (४) मारो पुत्र छे, (५) मारो ससरो छे, अने (६) मारो प्रपिता (पितानो पिता) छे. तारी मानी साथे पण मारे छ संबंध छे. (१) ते मारी भ्रातृपत्नी (भोजाइ) छे, (२) मारी सपत्नी (शोक) छे, (३) मारी माता छे, (४) मारी सासु छे, (५) मारी वहु छे, अने (६) मारी मातामही (बापनी मा) छे." ए प्रमाणेनां साध्वीनां वचन सांभळी पूर्व भवनुं* स्वरूप जाणी कुबेरसेनाए व्रत ग्रहण कर्युं, अने संसारना पारने पामी.' ए प्रमाणे हे प्रभव! आ संसारमां अनंतवार दरेक संबंध थयेला छे. कोण कोनुं छे? धर्म एज परम बंधु छे.

प्रभवे फरीथी कह्युं के–"हे जंबूकुमार! तमे जे कह्युं ते खरुं छे. परंतु 'जेने पुत्र नथी तेने सद्गति नथी' एवुं पुराणवाक्य छे. तेथी भोग भोगवीने अने पुत्रने घरे मूकीने पछी संयममां मन राखजो." जंबूकुमारे कह्युं के–"पुत्र होय तो सुगति थाय अने ते न होय तो कुगति थाय एवो कांइ नियम नथी; ए तो संसारी जीवोने केवळ मोहजन्य भ्रम छे. जेम महेश्वरदत्तने पुत्र काममां आव्यो नहि तेम." प्रभवे पूछ्युं के 'ते महेश्वरदत्त कोण हतो?' जंबूकुमारे कह्युं के सांभळ—

"विजयपुर नगरमां महेश्वरदत्त नामे एक शेठीओ हतो. तेने महेश्वर नामे एक पुत्र हतो. महेश्वरदत्ते पोताना मरणसमये पुत्रने कह्युं के–'मारा श्राद्धना

---

* आ भवनुज प्रथमनुं स्वरूप.

नगर पासे पहोंची. त्यांना बे शेठीआओए ते पेटी बहार काढी. एक शेठे पुत्र ग्रहण कर्यो अने बीजाए पुत्री ग्रहण करी. तेओ युवान थतां कर्मयोगे लग्ननी गांठथी परस्पर जोडायां. एकठा सोगठावाजी रमतां कुबेरदत्ताए पोताना पतिना हाथमां पेली मुद्रा जोइ. तेथी 'आ मारो भाइ छे' एम जाणी ते विरक्त थइ. तेणे संयम ग्रहण कर्युं. अनुक्रमे तेने अवधिज्ञान प्राप्त थयुं. एवे समये कुबेरदत्त कार्य अर्थे मथुराए गयो. त्यां कुबेरसेना वेश्या जे तेनी माता हती तेनी साथे लपटायो. तेमने पुत्रप्राप्ति थइ. कुबेरदत्ता साध्वीए अवधिज्ञानथी जाण्युं के–'आ मोटो अनर्थ थाय छे.' तेथी तेमने प्रतिबोध पमाडवाने माटे ते त्यां आव्या. ते कुबेरसेनाने घरेज रह्या. त्यां रुदन करता पेला बाळक पासे आवीने कहेवा लाग्या के–"हे बाळक! तुं केम रुवे छे? मौन ग्रहण कर. तुं मने वहालो छे. तारी साथे मारे छ संबंध छे. (१) तुं मारो पुत्र छे, (२) तुं मारा भाइनो पुत्र छे, (३) तुं मारो भाइ छे, (४) तुं मारो देर छे, (५) तुं मारो काको छे, अने (६) तुं मारो पौत्र छे; अने हे वत्स! तारा पिता साथे पण मारे छ संबंध छे. (१) ते मारो पति छे, (२) मारो पिता छे, (३) मारो ज्येष्ठ बंधु छे, (४) मारो पुत्र छे, (५) मारो ससरो छे, अने (६) मारो प्रपिता (पितानो पिता) छे. तारी मानी साथे पण मारे छ संबंध छे. (१) ते मारी भ्रातृपत्नी (भोजाइ) छे, (२) मारी सपत्नी (शोक) छे, (३) मारी माता छे, (४) मारी सासु छे, (५) मारी वहु छे, अने (६) मारी मातामही (बापनी मा) छे." ए प्रमाणेनां साध्वीनां वचन सांभळी पूर्व भवनुं* स्वरूप जाणी कुबेरसेनाए व्रत ग्रहण कर्युं, अने संसारना पारने पामी.' ए प्रमाणे हे प्रभव! आ संसारमां अनंतवार दरेक संबंध थयेला छे. कोण कोनुं छे? धर्म एज परम बंधु छे.

प्रभवे फरीथी कह्युं के–"हे जंबूकुमार! तमे जे कह्युं ते खरुं छे. परंतु 'जेने पुत्र नथी तेने सद्गति नथी' एवुं पुराणवाक्य छे. तेथी भोग भोगवीने अने पुत्रने घरे मूकीने पछी संयममां मन राखजो." जंबूकुमारे कह्युं के–"पुत्र होय तो सुगति थाय अने ते न होय तो कुगति थाय एवो कांइ नियम नथी; ए तो संसारी जीवोने केवळ मोहजन्य भ्रम छे. जेम महेश्वरदत्तने पुत्र काममां आव्यो नहि तेम." प्रभवे पूछ्युं के 'ते महेश्वरदत्त कोण हतो?' जंबूकुमारे कह्युं के सांभळ—

"विजयपुर नगरमां महेश्वरदत्त नामे एक शेठीओ हतो. तेने **महेश्वर** नामे एक पुत्र हतो. महेश्वरदत्ते पोताना मरणसमये पुत्रने कह्युं के–'मारा श्राद्धना

---

* आ भवनुज प्रथमनु स्वरूप.

मरु देशनी अंदर एक बग नामनो पामर वसतो हतो. ते खेती करतो हतो अने कोद्रा, कांग विगेरे धान्य वावतो हतो. ते एक दिवस पोतानी दीकरीने सासरे गयो. त्यां तेने गोळमिश्रित मालपुडा जमाडचा. त्यां तेणे शेरडीनी अंदरथी गोळनी उत्पत्ति जाणी. तेथी पोताने घेर आवीने तेणे पुष्प ने फळथी खीलेला क्षेत्रने निर्मूल करी नांखीने तेमां शेरडी वावी. तेनी स्त्रीए तेने घणो वार्यो पण ते अटक्यो नहि, आपमतिलो थयो. मरुभूमि होवाथी पाणी विना शेरडी तो थइ नहि अने पूर्वनुं धान्य हतुं ते पण गयुं. पछी ते पश्चात्ताप करवा लाग्यो के 'मिष्ट भोजननी आशाथी में प्रथमनुं पाकेलुं धान्य पण गुमाव्युं.' ते प्रमाणे हे प्राणवल्लभ! तमे पण पश्चात्ताप पामशो. माटे प्राप्त थयेल सुखनो त्याग करी अधिक सुखनी वांछा करवी नहि.

इति बगपामर दृष्टांत १.

जंबूकुमारे कह्युं के–"तुं जे कहे छे ते सत्य छे, परंतु जेओ आ लोकना सुखना अभिलाषी होय छे तेओ दुःख पामेछे. पण ज्ञानथी उत्कृष्ट वीजुं धन नथी, शमता जेवुं वीजुं सुख नथी, 'दीर्घ काळ जीवो' ए आशीर्वाद उपरांत वीजो उत्तम आशीर्वाद नथी, लोभ जेवुं बीजुं दुःख नथी, आशा जेवुं वीजुं बंधन नथी अने स्त्री जेवी वीजी जाळ नथी. तेथी जे स्त्रीओमां अतिलुब्ध रहेछे ते कागडानी माफक अनर्थ प्राप्त करेछे.' स्त्रीए पूछयुं के–'ए वायस कोण हतो ?'

जंबूकुमार कहेछे के–भृगुकच्छमां रेवा नदीने किनारे एक हाथी मरण पाम्यो. त्यां वहु कागडाओ भेगा थइ आवजाव करवा लाग्या. जेम दानशाळामां ब्राह्मणो मळे तेम त्यां कागडाओ एकठा थयेला हता. तेमांथी एक कागडे ते मरेला हाथीना गुदाद्वारमां प्रवेश कर्यो अने मांसलुब्ध थइने त्यांज रहेवा लाग्यो. एवामां ग्रीष्म काळ आवतां गुदाद्वार संकुचित थइ गयुं, तेथी कागडो अंदरज रह्यो. वर्षाऋतु आवतां ते हाथीनुं शव पाणीना प्रवाहमां तणायुं. गुदाद्वार विकसित थवाथी ते विचारो कागडो वहार तो नीकल्यो, पण चारे दिशामां पाणीनुं पूर जोइने त्यांज मरण पाम्यो. आ दृष्टांतनो एवो उपनय छे के मरेला हाथीना कलेवर जेवी स्त्रीओ छे, अने कागडा जेवा विषयासक्त पुरुष छे, ते संसाररूपी जळमां बुडेछे, विषयना अतिशय लोभथी ते शोकने पामेछे.

इतिकाक दृष्टांत २.

हवे वीजी स्त्री पद्मश्री कहेवा लागी के–' हे प्रिय ! अति लोभथी मनुष्य वान-

मरु देशनी अंदर एक बग नामनो पामर वसतो हतो. ते खेती करतो हतो अने कोद्रा, कांग विगेरे धान्य वावतो हतो. ते एक दिवस पोतानी दीकरीने सासरे गयो. त्यां तेने गोळमिश्रित मालपुडा जमाड्या. त्यां तेणे शेरडीनी अंदरथी गोळनी उत्पत्ति जाणी. तेथी पोताने घेर आवीने तेणे पुष्प ने फळथी खीलेला क्षेत्रने निर्मूल करी नांखीने तेमां शेरडी वावी. तेनी स्त्रीए तेने घणो वार्यो पण ते अटक्यो नहि, आपमतिलो थयो. मरुभूमि होवाथी पाणी विना शेरडी तो थइ नहि अने पूर्वनुं धान्य हतुं ते पण गयुं. पछी ते पश्चात्ताप करवा लाग्यो के 'मिष्ट भोजननी आशाथी में प्रथमनुं पाकेलुं धान्य पण गुमाव्युं.' ते प्रमाणे हे प्राणवल्लभ! तमे पण पश्चात्ताप पामशो. माटे प्राप्त थयेल सुखनो त्याग करी अधिक सुखनी वांछा करवी नहि.

इति बगपामर दृष्टांत १.

जंबूकुमारे कह्युं के—"तुं जे कहे छे ते सत्य छे, परंतु जेओ आ लोकना सुखना अभिलाषी होय छे तेओ दुःख पामेछे. पण ज्ञानथी उत्कृष्ट बीजुं धन नथी, शमता जेवुं बीजुं सुख नथी, 'दीर्घ काळ जीवो' ए आशीर्वाद उपरांत बीजो उत्तम आशीर्वाद नथी, लोभ जेवुं बीजुं दुःख नथी, आशा जेवुं बीजुं बंधन नथी अने स्त्री जेवी बीजी जाळ नथी. तेथी जे स्त्रीओमां अतिलुब्ध रहेछे ते कागडानी माफक अनर्थ प्राप्त करेछे.' स्त्रीए पूछ्युं के—'ए वायस कोण हतो?'

जंबूकुमार कहेछे के—भृगुकच्छमां रेवा नदीने किनारे एक हाथी मरण पाम्यो. त्यां बहु कागडाओ भेगा थइ आवजाव करवा लाग्या. जेम दानशाळामां ब्राह्मणो मळे तेम त्यां कागडाओ एकठा थयेला हता. तेमांथी एक कागडे ते मरेला हाथीना गुदाद्वारमां प्रवेश कर्यो अने मांसलुब्ध थइने त्यांज रहेवा लाग्यो. एवामां ग्रीष्म काळ आवतां गुदाद्वार संकुचित थइ गयुं, तेथी कागडो अंदरज रह्यो. वर्षाऋतु आवतां ते हाथीनुं शव पाणीना प्रवाहमां तणायुं. गुदाद्वार विकसित थवाथी ते विचारो कागडो बहार तो नीकल्यो, पण चारे दिशामां पाणीनुं पूर जोइने त्यांज मरण पाम्यो. आ दृष्टांतनो एवो उपनय छे के मरेला हाथीना कलेवर जेवी स्त्रीओ छे, अने कागडा जेवा विषयासक्त पुरुष छे, ते संसाररूपी जळमां बुडेछे, विषयना अतिशय लोभथी ते शोकने पामेछे.

इतिकाक दृष्टांत २.

हवे बीजी स्त्री पद्मश्री कहेवा लागी के—' हे प्रिय ! अति लोभथी मनुष्य वान-

तो विद्या सिद्ध थशे. पछी बंने भाइओ विद्या साधवा बेठा. तेमां एक विद्युन्माली विह्वल मनने होवाथी चलित थयो, अने बीजो मेघरथ गुरुनुं वचन याद राखीने चलित थयो नहि तेने विद्या सिद्ध थइ अने छ मासमां पुष्कळ धन प्राप्त थयुं; विद्युन्माली दुःखी थयो. आ दृष्टांत कहीने जंबूकुमारे कह्युं के–मातंगी सदृश मनुष्यस्त्रीना भोगो छे, तेथी बहु सुखना अर्थी पुरुषोए तेनो त्याग करवो योग्य छे.

इति विद्युन्माली कथा ५–६.

चोथी कनकसेना नामनी स्त्री बोली के–'हे स्वामी! जो अमे मातंगी सदृश हता तो तमे शामाटे परण्या ? हवे पाणी पीने घर पूछवुं ते घटित नथी. वळी हे स्वामी ! अतिलोभथी तमे पेला कणबीनी पेठे पश्चात्ताप पामशो.' ते दृष्टांत आ प्रमाणे—

सुरपुर नगरमां एक कणबी वसतो हतो. तेणे पोताना खेतरमां खेड करी हती. तेथी रात्रिए पक्षी उडाडवाने माटे ते शंख वगाडतो हतो. एक दिवसे चोरो गायोनुं धण लइने ते क्षेत्र पासे आव्या. तेवामां शंखनो ध्वनि सांभळीने तेओ भयाक्रांत थइ गया. एटले गायोने छोडीने नासी गया. पेलो कणबी ते गायो वेचीने सुखी थयो. ए प्रमाणे त्रणवार बन्युं. एक दिवस ते चोरोए कणबीनी तमाम हकीकत जाणी, एटले तेओए त्यां आवीने कणबीने बांध्यो अने प्रहारथी सीधो कर्यो. ए प्रमाणे हे स्वामी ! अतिलोभी प्राणीओ दुःख पामेछे.

इति शंख वगाडनार कणबीनुं दृष्टांत ७.

जंबूकुमार कहेछे के–' अति कामनी लालसावाळा मनुष्यो वानरनी पेठे बंधन प्राप्त करेछे. ते वानरनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

एक वानर ग्रीष्म ऋतुमां तृषातुर थवाथी जळनी भ्रांतिए चीकणा जळवगरना कीचडमां पड्यो. जेम जेम शरीरनी उपर कीचडनो स्पर्श थतो गयो तेम तेम ठंडो लागतो गयो, तेथी तेणे आखुं शरीर कादवथी लींप्युं; पण तेथी तेनी तृषा गइ नहि; अने सूर्यना तापथी ज्यारे कादव सूकायो त्यारे तेने शरीरे घणी पीडा थइ. तेवी रीते हे प्रिये ! विषयसुख रूपी कीचडथी हुं मारा शरीरने लेपन करीश नहि.

इति वानर दृष्टांत ८.

हवे पांचमी स्त्री **नभसेना** कहेवा लागी के–'हे स्वामी ! अतिलोभ न करवो. अतिलोभथी बुद्धि नष्ट थायछे. ते उपर सिद्धि अने बुद्धिनुं दृष्टांत छे.' तेणे सिद्धि-

तो विद्या सिद्ध थशे. पछी बंने भाइओ विद्या साधवा बेठा. तेमां एक विद्युन्माली विह्वल मननो होवाथी चलित थयो, अने बीजो मेघरथ गुरुनुं वचन याद राखीने चलित थयो नहि तेने विद्या सिद्ध थइ अने छ मासमां पुष्कळ धन प्राप्त थयुं; विद्युन्माली दुःखी थयो. आ दृष्टांत कहीने जंबूकुमारे कह्युं के–मातंगी सदृश मनुष्यस्त्रीना भोगो छे, तेथी बहु सुखना अर्थी पुरुषोए तेनो त्याग करवो योग्य छे.

इति विद्युन्माली कथा ५–६.

चोथी कनकसेना नामनी स्त्री बोली के–'हे स्वामी! जो अमे मातंगी सदृश हता तो तमे शामाटे परण्या ? हवे पाणी पीने घर पूछवुं ते घटित नथी. वळी हे स्वामी ! अतिलोभथी तमे पेला कणबीनी पेठे पश्चात्ताप पामशो.' ते दृष्टांत आ प्रमाणे—

सुरपुर नगरमां एक कणबी वसतो हतो. तेणे पोताना खेतरमां खेड करी हती. तेथी रात्रिए पक्षी उडाडवाने माटे ते शंख वगाडतो हतो. एक दिवसे चोरो गायोनुं धण लइने ते क्षेत्र पासे आव्या. तेवामां शंखनो ध्वनि सांभळीने तेओ भयाक्रांत थइ गया. एटले गायोने छोडीने नासी गया. पेलो कणबी ते गायो वेचीने सुखी थयो. ए प्रमाणे त्रणवार बन्युं. एक दिवस ते चोरोए कणबीनी तमाम हकीकत जाणी, एटले तेओए त्यां आवीने कणबीने बांध्यो अने प्रहारथी सीधो कर्यो. ए प्रमाणे हे स्वामी ! अतिलोभी प्राणीओ दुःख पामेछे.

इति शंख वगाडनार कणबीनुं दृष्टांत ७.

जंबूकुमार कहेछे के–' अति कामनी लालसावाळा मनुष्यो वानरनी पेठे बंधन प्राप्त करेछे. ते वानरनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

एक वानर ग्रीष्म ऋतुमां तृषातुर थवाथी जळनी भ्रांतिए चीकणा जळवगरना कीचडमां पड्यो. जेम जेम शरीरनी उपर कीचडनो स्पर्श थतो गयो तेम तेम ठंडो लागतो गयो, तेथी तेणे आखुं शरीर कादवथी लींप्युं; पण तेथी तेनी तृषा गइ नहिः अने सूर्यना तापथी ज्यारे कादव सूकायो त्यारे तेने शरीरे घणी पीडा थइ. तेवी रीते हे प्रिये ! विषयसुख रूपी कीचडथी हुं मारा शरीरने लेपन करीश नहि.

इति वानर दृष्टांत ८.

हवे पांचमी स्त्री नभसेना कहेवा लागी के–'हे स्वामी ! अतिलोभ न करवो. अतिलोभेथी बुद्धि नष्ट थायछे. ते उपर सिद्धि अने बुद्धिनुं दृष्टांत छे.' तेणे सिद्धि-

तो विद्या सिद्ध थशे. पछी बंने भाइओ विद्या साधवा बेठा. तेमां एक विद्युन्माली विह्वळ मननो होवाथी चलित थयो, अने बीजो मेघरथ गुरुनुं वचन याद राखीने चलित थयो नहि तेने विद्या सिद्ध थइ अने छ मासमां पुष्कळ धन प्राप्त थयुं; विद्युन्माली दुःखी थयो. आ दृष्टांत कहीने जंबूकुमारे कह्युं के–मातंगी सदृश मनुष्य-स्त्रीना भोगो छे, तेथी बहु सुखना अर्थी पुरुषोए तेनो त्याग करवो योग्य छे.

इति विद्युन्माली कथा ५–६.

चोथी कनकसेना नामनी स्त्री बोली के–'हे स्वामी! जो अमे मातंगी सदृश हता तो तमे शामाटे परण्या ? हवे पाणी पीने घर पूछवुं ते घटित नथी. वळी हे स्वामी ! अतिलोभथी तमे पेला कणबीनी पेठे पश्चात्ताप पामशो.' ते दृष्टांत आ प्रमाणे—

सुरपुर नगरमां एक कणबी वसतो हतो. तेणे पोताना खेतरमां खेड करी हती. तेथी रात्रिए पक्षी उडाडवाने माटे ते शंख वगाडतो हतो. एक दिवसे चोरो गायोनुं धण लइने ते क्षेत्र पासे आव्या. तेवामां शंखनो ध्वनि सांभळीने तेओ भयाक्रांत थइ गया. एटले गायोने छोडीने नासी गया. पेलो कणबी ते गायो वेचीने सुखी थयो. ए प्रमाणे त्रणवार बन्युं. एक दिवस ते चोरोए कणबीनी तमाम हकीकत जाणी, एटले तेओए त्यां आवीने कणबीने बांध्यो अने प्रहारथी सीधो कर्यो. ए प्रमाणे हे स्वामी ! अतिलोभी प्राणीओ दुःख पामेछे.

इति शंख वगाडनार कणबीनुं दृष्टांत ७.

जंबूकुमार कहेछे के–' अति कामनी लालसावाळा मनुष्यो वानरनी पेठे बंधन प्राप्त करेछे. ते वानरनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

एक वानर ग्रीष्म ऋतुमां तृषातुर थवाथी जळनी भ्रांतिए चीकणा जळवगरना कीचडमां पड्यो. जेम जेम शरीरनी उपर कीचडनो स्पर्श थतो गयो तेम तेम ठंडो लागतो गयो, तेथी तेणे आखुं शरीर कादवथी लींप्युं; पण तेथी तेनी तृषा गइ नहि; अने सूर्यना तापथी ज्यारे कादव सूकायो त्यारे तेने शरीरे घणी पीडा थइ. तेवी रीते हे प्रिये ! विषयसुख रूपी कीचडथी हुं मारा शरीरने लेपन करीश नहि.

इति वानर दृष्टांत ८.

हवे पांचमी स्त्री **नभसेना** कहेवा लागी के–'हे स्वामी ! अतिलोभ न करवो. अतिलोभथी बुद्धि नष्ट थायछे. ते उपर सिद्धि अने बुद्धिनुं दृष्टांत छे.' तेणे सिद्धि-

तो विद्या सिद्ध थशे. पछी वंने भाइओ विद्या साधवा बेठा. तेमां एक विद्युन्माली विह्वल मननो होवाथी चलित थयो, अने वीजो मेघरथ गुरुनुं वचन याद राखीने चलित थयो नहि तेने विद्या सिद्ध थइ अने छ मासमां पुष्कळ धन प्राप्त थयुं; विद्युन्माली दुःखी थयो. आ दृष्टांत कहीने जंबूकुमारे कह्युं के–मातंगी सदृश मनुष्यस्त्रीना भोगो छे, तेथी बहु सुखना अर्थी पुरुषोए तेनो त्याग करवो योग्य छे.

इति विद्युन्माली कथा ५–६.

चोथी कनकसेना नामनी स्त्री बोली के–'हे स्वामी! जो अमे मातंगी सदृश हता तो तमे शामाटे परण्या ? हवे पाणी पीने घर पूछवुं ते घटित नथी. वळी हे स्वामी ! अतिलोभथी तमे पेला कणवीनी पेठे पश्चात्ताप पामशो.' ते दृष्टांत आ प्रमाणे—

सुरपुर नगरमां एक कणवी वसतो हतो. तेणे पोताना खेतरमां खेड करी हती. तेथी रात्रिए पक्षी उडाडवाने माटे ते शंख वगाडतो हतो. एक दिवसे चोरो गायोनुं धण लइने ते क्षेत्र पासे आव्या. तेवामां शंखनो ध्वनि सांभळीने तेओ भयाक्रांत थइ गया. एटले गायोने छोडीने नासी गया. पेलो कणबी ते गायो वेचीने सुखी थयो. ए प्रमाणे त्रणवार वन्युं. एक दिवस ते चोरोए कणवीनी तमाम हकीकत जाणी, एटले तेओए त्यां आवीने कणवीने बांध्यो अने प्रहारथी सीधो कर्यो. ए प्रमाणे हे स्वामी ! अतिलोभी प्राणीओ दुःख पामेछे.

इति शंख वगाडनार कणबीनुं दृष्टांत ७.

जंबूकुमार कहेछे के–' अति कामनी लालसावाळा मनुष्यो वानरनी पेठे वंधन प्राप्त करेछे. ते वानरनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

एक वानर ग्रीष्म ऋतुमां तृषातुर थवाथी जळनी भ्रांतिए चीकणा जळवगरना कीचडमां पड्यो. जेम जेम शरीरनी उपर कीचडनो स्पर्श थतो गयो तेम तेम ठंडो लागतो गयो, तेथी तेणे आखुं शरीर कादवथी लींप्युं; पण तेथी तेनी तृषा गइ नहि; अने सूर्यना तापथी ज्यारे कादव सूकायो त्यारे तेने शरीरे घणी पीडा थइ. तेवी रीते हे प्रिये ! विषयसुख रूपी कीचडथी हुं मारा शरीरने लेपन करीश नहि.

इति वानर दृष्टांत ८.

हवे पांचमी स्त्री **नभसेना** कहेवा लागी के–'हे स्वामी ! अतिलोभ न करवो. अतिलोभथी वुद्धि नष्ट थायछे. ते उपर सिद्धि अने बुद्धिनुं दृष्टांत छे.' तेणे सिद्धि-

तमे लज्जावान होवाथी तमने आवुं वाक्य बोलवुं उचित नथी. आवा शब्दो तेज सहन करे छे के जेने रहेवानुं ठेकाणुं होतुं नथी. वळी जे ब्राह्मणनी माफक पूर्वभवनो करजदार होय छे तेज दास थइने तेना घरमां रहे छे.' ते विप्रनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—
कुशस्थल नगरमां एक क्षत्रिय रहेतो हतो. तेने घेर एक घोडी हती. तेनी चाकरीने माटे एक माणसने तेणे राख्यो हतो. ते माणस हमेशां घोडीने माटे जे खावानुं आपे तेमांथी पोते गुप्त रीते खाइ जतो हतो. खोराक ओछो मळवाथी घोडी शरीरे दुर्बळ थइ गइ अने छेवटे मरी गइ. मरण पामीने तेज नगरने विषे वेश्या थइ, अने पेलो माणस विप्रकुळमां उत्पन्न थयो. एक दिवसे तेणे ते वेश्याने जोइ, एटले पूर्वभवना ऋणने लइने ते वेश्याना घरमां दास थइने रह्यो अने तेना घरनुं कामकाज करवा लाग्यो. ए दासनी जेम हुं पण भोगनी आशाथी दास थइने घरमां रहीश नहि.

इति विप्रकथा १२.

हवे सातमी स्त्री रूपश्री कहेवा लागी के–'हे स्वामी! हमणां तमे अमारुं कहेवुं नहि मानो, पण पछीथी **मासाहस** पक्षीनी पेठे तमने संकट प्राप्त थशे त्यारे समजशो.' ते कथा आ प्रमाणे—

एक मासाहस नामनुं पक्षी कोइ वनमां रहेतुं हतुं. ते पक्षी सुतेला वाघना मुखमां पेसी, तेनी दाढमां वळगेल मांसनो पिंड लइ बहार आवीने एम बोलतो हतो के–'आ प्रमाणे कोइए साहस करवुं नहि.' आटला उपरथीज तेनुं नाम 'मासाहस' पड्युं हतुं. ते पक्षी जे प्रमाणे कहेतो हतो ते प्रमाणे पोतेज वर्ततो नहोतो. तेने बीजां पक्षीओए घणो वार्यो छतां पण मांसमां लोलुप थइने ते वारंवार वाघना मुखमां पेसतो हतो. एम करतां करतां वाघ जाग्यो एटले ते पक्षीनो कोळीओ करी गयो.

इति मासाहस पक्षी दृष्टांत १३.

जंबूकुमार कहे छे के 'हे स्त्रीओ! आ संसारमां कोइ रक्षण करनार नथी, मात्र जेम प्रधानने तेना धर्ममित्रे सहाय आपी तेम धर्ममित्र शरणे जतां रक्षण करेछे.' ते दृष्टांत आ प्रमाणे—

सुग्रीवपुर नामनां नगरमां जितशत्रु नामे राजा हतो. तेने सुबुद्धि नामे मंत्री हतो. ते मंत्रीने त्रण मित्रो हता. एक नित्यमित्र, बीजो पर्वमित्र अने त्रीजो प्रणाममित्र. राजा तरफथी कष्ट प्राप्त थये आ त्रण मित्रमांथी प्रणाममित्रे केवी रीते रक्षण आपी प्रधानने बचाव्या तेनी कथा परिशिष्ट पर्वादिथी जाणी लेवी.

ते त्रण मित्रनो उपनय आ प्रमाणे छे—

नित्यमित्रसमोदेहः स्वजनाः पर्वसन्निभाः ।
जुहारमित्रसमोज्ञेयो धर्मः परमबांधवः ॥

"नित्यमित्र समान देह छे, पर्वमित्रो समान सगांवहालां छे, अने प्रणामा मित्रनी जेवो परमबंधु धर्म छे." ते धर्म प्राणीने अंतसमये पण सहाय करेछे अने जे कोइ तेनुं शरण करे तेने कुशळक्षेमे स्वस्थाने पहोंचाडेछे"

इति त्रणमित्र दृष्टांत १४.

हवे आठमी स्त्री जयश्री जे धनावह शेठनी पुत्री हती ते जंबूकुमारने कहेवा लागी के–'हे स्वामी ! आ वचनविवाद शो ? अमने नवी परणेलीओने आपनी साथे विवाद करवो युक्त नथी; परंतु तमे आवी कल्पित वार्ताओ कहेवा वडे अमने शामाटे ठगो छे ? आपे जे जे कथाओ कही छे ते तमाम कल्पित छे; अने जेवी रीते एक ब्राह्मणनी पुत्रीए कल्पित वार्ताओथी राजानुं मन रंजित कर्युं हतुं तेवी रीते तमे पण कल्पित वार्ताओथी अमारुं मन रंजन करो छो. ते समये सर्व स्त्रीओए कह्युं के–'हे जयश्री ! ते कथा कहे के जे सांभळीने आपणो प्रियतम घरमां रहे.' जयश्री कहे छे के सावधान थइने सांभळो—

भरतक्षेत्रमां **लक्ष्मीपुर** नगरमां **नयसार** नामनो राजा राज्य करतो हतो. ते राजा गीत, कथा, नाटक, महेलीका, अंतर्लापिका विगेरेमां घणोज निपुण हतो, अने नवीन कथा सांभळवामां घणो रसिक हतो. ते दररोज माणसो पासेथी नवी नवी वार्ताओ सांभळतो हतो. एक दिवस ते राजाए नगरमां ढंढेरो पीटाव्यो के 'सर्व लोकोए वारा प्रमाणे राजा पासे आवीने नवीन नवीन वार्ता कहेवी.' ए प्रमाणे राजानी आज्ञा थवाथी जे माणसनो वारो आवेछे ते राजा पासे जइ वार्ता कहे छे. एम करतां एक दिवस एक ब्राह्मणनो वारो आव्यो. ते ब्राह्मण अति मूर्ख होवाथी तेने वार्ता कहेतां आवडती नहोती. तेने एक कन्या हती, ते घणी चतुर हती. तेणे पोताना पिताने कह्युं के–'आप निश्चिंत रहो, हुं राजा पासे जइने नवी वार्ता कहीश.' पछी ते राजा समीपे गइ. राजाए ते बाळाने कह्युं के–'जे वार्ताथी मारुं मन रंजन थाय एवी वार्ता कहे.' ब्राह्मणपुत्रीए कह्युं के–'हे राजन् ! हुं मारी अनुभवेलीज वार्ता कहुं छुं ते सावधान थइने सांभळो–हुं पिताना घरमां नवयौवनवती थइ, त्यारे मारा पिताए योग्य कुळमां उत्पन्न थयेला एक ब्राह्मणपुत्र साथे मारो विवाह कर्यो. जेनी साथे मारो विवाह कर्यो ते भर्ता मारुं रूप जोवाने माटे मारे

घेर आव्यो. ते वखते मारां मातापिता क्षेत्रमां गयां हतां. हुं घरे एकली हती. में सारी रीते स्नान भोजन आदिथी तेने अति संतुष्ट कर्यो. परंतु मारुं अद्भुत रूप जोइ ते कामज्वरथी अति पीडित थयो. ते पलंग उपर बेठो सतो पोतानुं अंग मरडे छे, प्रीतिवाळां वचनो बोले छे, अने वारंवारे मारा तरफ दृष्टि करे छे. में तेनो अभिप्राय जाण्यो एटले में तेने कह्युं के–'हे स्वामी ! उतावळ न करो, पाणिग्रहण विना विषयादि कृत्य थतुं नथी. घणो भूख्यो माणस शुं बे हाथे खावा लागे छे? माटे हमणां विषयसेवन योग्य नथी.' एवुं मारुं वाक्य सांभळीने घणाज कामातुर थयेला मारा पतिने पडखामां शूळ उत्पन्न थयुं, अने ते व्याधिथी ते मरण पाम्यो. तेने में मारा घरनी अंदर दाटी दीधो. ते वात कोइए जाणी नहि. मारां मातापिताए पण ते वात जाणी नहि. हे राजन् ! मारी अनुभवेली आ वार्ता में कहेली छे.' ते वार्ता सांभळीने राजा घणो खुशी थयो अने ते कन्या पोताने घरे आवी. जयश्री कहे छे के–" जेवी रीते कल्पित वार्ताथी ते विप्रपुत्रीए राजानुं मन रंजन कर्युं तेवी रीते तमे पण अमारा मनने रंजित करो छो, परंतु ए प्रवृत्ति मिथ्या छे; माटे जे माणस विचारीने पगलुं मूके छे ते माणसनी लाज रहे छे. तेथी हे स्वामी ! भोगो भोगवी पछी चारित्र ग्रहण करीने पोतानो अर्थ साधवो उचित छे."

इति ब्राह्मणपुत्री दृष्टांत १५.

ए प्रमाणे जयश्रीनुं वाक्य सांभळीने जंबूकुमारे कह्युं के–'हे जयश्री ! मोहथी आतुर थयेला प्राणीओ अधर्ममां धर्मबुद्धि मानी विषयोने स्थापित करी कर्मो बांधे छे, परंतु ए विषयो घणाज खराब परिणामवाळा छे. विषथी पण विषयो अधिक छे ए खरेखरुं छे. कारणके विषयो तो मरेलाने पण मारे छे. कह्युं छे के—

> भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं
> शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रं ।
> वस्त्रं च जीर्णशतखंडमयी च कंथा
> हाहा तथापि विषया न परित्यजन्ति ॥

" खावामां भिक्षानुं भोजन–ते पण नीरस अने एकवार, सुवामां मात्र पृथ्वी, परिजनमां मात्र पोतानोज देह अने लुगडामां जीर्ण अने तद्दन फाटेली गोदडी–एवी स्थितिवाळा माणसने पण हा हा इति खेदे ! विषयो छोडता नथी." तेथी हे स्त्रीओ ! जो जन्म, जरा, मरण, रोग, वियोग ने शोक आदि शत्रुओ मारी समीपे आवे नहि

तो हुं तमारी साथे भोग भोगवुं. ते शिवाय जो तमे मने बळात्कारे घरमां राखशो तो शुं रोग आदिथी रक्षण करवामां तमारी शक्ति छे?' त्यारे स्त्रीओए कह्युं के–'हे स्वामिन्! एवो समर्थ कोण होय के जे संसारस्थितिने अटकावी शके ?' त्यारे जंबूकुमारे कह्युं के– जो तेमां तमे असमर्थ छो तो अशुचि वस्तुथी भरेली अने मोहनी कुंडी रूप जे तमे तेना शरीरमां हुं प्रीतिवाळो थतो नथी. कारणके स्त्रीओनो जन्म अनंती पापनी राशिथी प्राप्त थाय छे. कह्युं छे के—

अणंता पावरासीओ, जया उदयमागया ।
तया इथ्थीत्तणं पत्तं, सम्मं जाणाहि गोयमा ॥

"हे गौतम ! अनंती पापनी राशिओ ज्यारे उदयमां आवे छे त्यारे स्त्रीपणुं प्राप्त थाय छे एम बराबर जाणजे" वळी कह्युं छे के—

दर्शने हरते चित्तं स्पर्शने हरते बलं ।
संगमे हरते वीर्यं, नारी प्रत्यक्षराक्षसी ॥

"दर्शन थतां चित्तने हरे छे, स्पर्श थतां बळने हरे छे, संगम थतां वीर्यने हरे छे– एवी रीते नारी साक्षात् राक्षसी छे." 'माटे हुं ललितांगकुमारनी पेठे मोहमां निमग्न थयेलो नथी, के जेथी अपवित्र वस्तुना कूवा रूप आ भवकूपनी अंदर पडुं.' त्यारे स्त्रीओए कह्युं के–'हे स्वामिन् ! ललितांगकुमार कोण हतो ? के जेने आपे उपनय (दृष्टांत) तरीके ग्रहण कर्यो छे.' जंबूकुमारे कह्युं के सांभळो—

वसंतपुर नगरमां **शतप्रभ** नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने **रूपवती** नामे पट्टराणी हती. ते घणी रूपवती, यौवन आदि गुणोथी युक्त अने मोहराजानी राजधानी जेवी अति मोहक हती. ते राजाने घणी वहाली हती परंतु व्यभिचारिणी हती. एक दिवसे ते रूपवती राणी बारीमां बेसी नगरकौतुक जोती हती; ते समये **ललितांग** नामना अति रूपवान युवकने मार्गे जतां तेणे जोयो. तेनुं रूप जोइ मोह उत्पन्न थवाथी ते अति कामातुर थइ गइ, तेथी तेणे दासीने कह्युं के–' अरे ! तुं आ युवकने अहीं लाव.' दासीए जइने ललितांगने कह्युं के–' तमने मारी राणी बोलावे छे, माटे मारी साथे मारी राणीना मकाने पधारो.' ते पण विषय रूपी भिक्षाने माटे भटकनार व्यभिचारी हतो तेथी ते राणीना महेलमां गयो. ललितांगने जोइ हावभाव विलास आदिने विस्तारती, आळस मरडती, हस्तना मूळ भागने बतावती अने नाभिमंडळने वस्त्ररहित करती राणीए तेना मनने वश कर्युं. कह्युं छे के—

निज वधूना संबंधने पण छोडी दइ अति आदरथी मुक्ति रूपी स्त्रीना श्रेष्ठ संगमथी उत्पन्न थयेला शाश्वत सुख (मोक्ष) ने हर्षपूर्वक मेळव्युं."

ए प्रमाणे जंबूकुमार जेवा पुरुषो क्षणभंगुर विषयसुखोने छोडी दइ शाश्वत सुखमां रमण करे छे, अने तेमनी प्रतीतिथी प्रभव जेवा सुलभबोधी जीवो पण संसारसागर तरवाने शक्तिवान थाय छे. ए प्रमाणे साडत्रीशमी गाथानो संबंध जाणवो.

इति जंबूकुमार चरित्र.

दीसंति परमघोरावि, पवरधम्मप्पभावपडिबुद्धा ।
जह सो चिलाइपुत्तो, पडिबुद्धो सुसुमाणाए ॥ ३८ ॥

अर्थ—" परमघोर, प्रवर रौद्रध्यानयुक्त एवा पण घणा प्राणीओ प्रवर–विशिष्ट एवो जे धर्मनो प्रभाव तेथी प्रतिबोध पामेला देखाय छे. जेम सुसमाना दृष्टांतमां ते चिलातीपुत्र प्रतिबोध पाम्यो तेम". ३८.

अर्हद्दर्शनना महात्म्यथी मिथ्यात्व निद्रा दूर जवाने लीधे धनावह शेठनी दासीनो पुत्र, अतिरौद्र कर्मनो करनारो चिलातीपुत्र प्रतिबोध पाम्यो. तेनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

चिलातीपुत्रकथा.

प्रथम थोडुं चिलातीपुत्रना पूर्वभवनुं स्वरूप कहे छे.

क्षितिप्रतिष्ठित नगरमां यज्ञदेव नामे ब्राह्मण वसतो हतो. ते व्याकरण, काव्य, तर्क अने मिमांसादि शास्त्रोना विचारमां घणो चतुर हतो अने अनेक शास्त्रोनो पारगामी हतो. तेणे एवी प्रतिज्ञा करी हती के 'जे मने वादमां जीते तेनो हुं शिष्य थाउं.' ए प्रमाणे प्रतिज्ञाने धारण करनार यज्ञदेवे वादमां घणा प्रतिवादीने जीत्या. एक दिवस एक नाना साधुए तेने जीती लीधो. एटले सत्य प्रतिज्ञ ते यज्ञदेवे ते क्षुल्लक पासे दीक्षा लीधी अने भावयुक्त थइ व्रत पाळवा लाग्यो; परंतु जातिगुणने लीधे ते देहवस्त्र आदिनी मलिनता रूप परीसहने निंदे छे. ते विचारे छे के 'अरे! आ मार्गमां सर्व सारुं छे परंतु स्नान आदिनो अभाव छे ते मोटुं जुगुप्सास्थान छे.' ए प्रमाणे मलपरीसहने सहन करवाने अशक्त छतां पण चारित्रभंगना भयथी ते स्नान आदि वडे देहादिनी शुद्धि करतो नथी.

गाथा ३८—सुंसमाणए. * सुसमाज्ञाते—उदाहरणे.

एक दिवसे उपवासना पारणे भिक्षामाटे भटकतां कपोतवृत्तिना न्याये पोतानी स्त्रीने घेर गयो. त्यां मोह रूप पिशाचथी ग्रस्त थयेली ते स्त्रीए पूर्व स्नेहना वशथी मुनिरूपमां रहेला पोताना पतिने कामण कर्युं. ते कामणथी मुनि शरीरे अति क्षीण थया. केटलेक दिवसे ते विहार करवामां पण अशक्त थइ गया, तेथी अनशन ग्रहण करी काळधर्मने प्राप्त थइ स्वर्गमां देव थया.

पेली स्त्रीए मुनिरूपमां रहेला पोताना पतिनी मरणवार्ता सांभळी, तेथी ते पश्चात्ताप करवा लागी के—'अरे! मने धिक्कार छे! पतिने मारवाथी मने मोटुं पाप लाग्युं. साधुनी हत्या करनार मने नरकमां पण स्थान नहि मळे. तेथी अशरण थयेलां मने तेनो वेशज शरण रूप छे.' ए प्रमाणे वैराग्यपरायण थइ तेणे चारित्र ग्रहण कर्युं अने अतिउग्र तप कर्युं. पूर्वकृत पापनी सारी रीते आलोचना ग्रहण करी बहु काळ चारित्र पाळीने ते स्वर्गे गइ.

बीजा भवमां यज्ञदेव ब्राह्मणनो जीव देवलोकथी च्यवीने चारित्रनी जुगुप्साथी बांधेला नीच गोत्रवडे राजगृह नगरमां **धनावह** शेठने घेर **चिलाती** नामनी दासीनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो. तेनुं नाम **चिलातीपुत्र** पाडवामां आव्युं. तेनी स्त्रीनो जीव देवलोकथी च्यवीने तेज शेठने घेर शेठनी स्त्री भद्रानी कुक्षिमां पुत्रीपणे उत्पन्न थयो. ते कन्यानुं नाम **सुसमा** पाड्युं. चिलातीपुत्र ते बाळाने हमेशां रमाडे छे. तेने ते प्राणथी पण अति वहाली थइ. एक वखत ते चिलातीपुत्रने तेनी साथे कुचेष्टा करतो जोइने ते कन्यानां मातापिताए विचार्युं के 'आ दासीपुत्र व्यसनी, मद्यपानमां लुब्ध अने कजीआखोर होवाथी घरमां राखवा योग्य नथी.' एम विचारी तेने घरमांथी काढी मूक्यो. ते चोरनी पाळ (चोरलोकोने वसवानुं स्थान) मां जइ चोरोमां भळी गयो. तेओए तेने साहसिक जाणीने पल्लीपति नीम्यो. ते पाप करवामां अति प्रीतिवाळो होवाथी जीवोनो वध करवामां पाछो हठतो नथी.

एक दिवसे तेणे चोरोने एकठा करी कह्युं के—'चालो आपणे धनावह शेठने घेर चोरी करवा जइए; पण धन मळे ते तमारुं ने सुसिमा कन्या मारी.' ते चोरोए कबुल कर्युं. पछी घणा चोरोने एकठा करीने ते राजगृह नगरमां धनावह शेठने घेर आव्यो. तेओए शेठनुं घर लुंट्युं. चिलातीपुत्रे कन्याने ग्रहण करी अने बीजा चोरोए पुष्कळ धन लीधुं. पछी सर्व पाछा फर्या. त्यारपछी धनावह शेठे बूम पाडी; एटले विकट योधाओना समूह सहित दुर्गपाळ चोरोनी पाछळ दोडयो. शेठ पण पुत्र परिवार सहित दुर्गपाळनी साथे दोडयो. ते चोरो पण घणा लोको पछवाडे लागवाथी अने

माथा उपर बोजो वहन करवाने अशक्त बनवाथी पग धीमा पडवाने लीधे भारने भूमि उपर पडतो मूकी नासवा लाग्या. तेमांथी केटलाक नासी गया, केटलाकने दुर्गपाळे भूमि उपर पाडी दीधा अने केटलाके दांतमां तृण लइ तावे थवाथी धनश्रेष्ठीनी माफी मेळवी.

चिलातीपुत्र सुसमाने लइ कोइ दिशामां पलायन करी गयो. धनावह शेठ पुत्र सहित तेनी पाछळ लाग्यो, दुर्गपाळ धननी रक्षा करवाने त्यांज रह्यो. धनावह शेठना भयथी सुसमाने लइ जवाने अशक्त थइ आगळ चालता चिलातीपुत्रे विचार्युं के—'आ कन्या मने प्राणथी प्रिय छे, तेथी ते अन्यनी न थवी जोइए.' ते दुष्टे तरवारथी तेनुं मस्तक कापी नाख्युं अने धड पडतुं मूकी मस्तक लइने नाठो. धनावह शेठ विगेरे पाछळ दोडवानुं प्रयोजन नाश पामवाथी पाछा फर्या.

आगळ चालतां चिलातीपुत्रे कायोत्सर्गमां रहेला एक मुनिने जोया. मुनि समीप आवी तेणे तेमने शठता पूर्वक कह्युं के—'मने धर्मनो उपदेश आपो.' साधुए ज्ञानना अतिशयथी जाण्युं के 'जोके आ अति पापीष्ठ छे तोपण ते धर्म मेळवी शकशे.' एवुं जाणी मुनिए तेने उपदेश दीधो के 'तारे उपशम, विवेक अने संवर करवा जोइए.' रत्न जेवा आ त्रण पद तेने संभळावीने मुनि आकाशमां उत्पती गया. चिलातीपुत्रे विचार कर्यो के "खरेखर! आ मुनि ए मने ठग्यो नथी पण साचुं कह्युं छे. हुं घणो पापीष्ठ छुं तेथी मारी शुद्धि बीजी कोइ पण रीते थशे नहि, माटे मारे साधुनां वचन प्रमाणे अवश्य करवुं जोइए. साधुए जे कह्युं ते में जाण्युं. उपशम एटले क्रोध आदिनो मारे त्याग करवो जोइए. क्रोधथी अंध बनी जइने अनर्थ करनार एवा मने धिक्कार छे! वळी विवेक एटले बाह्य वस्तुनो मारे त्याग करवो जोइए. ए प्रमाणे विचारी तरवार सहित हाथमां रहेलुं मस्तक छोडी दीधुं. वळी 'संवर एटले मारे दुष्ट योगोनो संवर करवो जोइए.' एम विचारी तेणे दुष्ट मन वचन ने कायाना व्यापारने रोकी दीधो; अने तेज त्रण पद मनमां चिंतवतो त्यांज कायोत्सर्गमां स्थित थयो. लोहीनी वासथी वज्र-मुखी कीडीओ त्यां आवी अने चिलातीपुत्रनुं रुधिर ने मांस खावा लागी. तेओए चारे बाजुएथी तेनुं आखुं शरीर चालणी जेवुं करी नाख्युं; परंतु 'आ देह मारो नथी अने हुं कोइनो नथी' एम चिंतन करतो ते ध्यानथी चलित थयो नहि. ए प्रमाणे अढी दिवसे बहु पापनो क्षय करी चिलातीपुत्र देवलोके गयो.

आ धर्मने धन्य छे के जेना प्रभावथी चिलातीपुत्र जेवो दुष्ट माणस पण स्वर्गे सुखभागी थयो. कह्युं छे के—

दुर्गतिप्रपतत्प्राणिधारणाद्धर्म उच्यते।
संयमादिदशविधः सर्वज्ञोक्तो हि मुक्तये ॥

" दुर्गतिमां पडता प्राणीने धारण करी राखे—दुर्गतिमां पडवा न दे तेथी ते धर्म कहेवाय छे; संयम आदि दश प्रकारनो सर्वज्ञ भगवाने कहेलो ते धर्म निश्चय पूर्वक मुक्तिने माटे छे." माटे बहु पापवाळा प्राणीओने धर्म तारतो नथी, ए प्रकारनी मुग्ध लोकोनी शंका दूर करवा माटे धर्मना प्रभाव उपर चिलातीपुत्रनुं दृष्टांत कहेवामां आव्युं छे.

जेवी रीते चिलातीपुत्रे पोतानी प्रतिज्ञा पाळी तेवी रीते अन्य विवेकी लोकोए प्रवर्तवुं ते विषे कहेछे—

पुप्फिए[1] फलिए[2] तह[3] पिउ[4]–घरंमि[5] तन्हा[6] छुहा[7] समणुबद्धा[8]।
ढंढेण[9] तहा[10] विसढा, विसढा[11] जह[12] सफलया[13] जाया[14] ॥ ३९ ॥

अर्थ—" पुष्पित अने फलित एवुं तथाप्रकारनुं प्रसिद्ध पितानुं घर छतां अर्थात् सर्व प्रकारनां सुखसंयुक्त कृष्ण वासुदेवने त्यां जन्म्या छतां ढंढण कुमारे (मुनिपणामां) तृषा अने क्षुधा निरंतरपणे एवी सहन करी के जे सहन करेली सफलताने पामी." ३९. अर्थात् ढंढणकुमारे अलाभ परीसह एवो सह्यो के जेना परिणामे केवळज्ञानरूप फळ प्राप्त थयुं. तेनी कथा आ प्रमाणे—

श्रीढंढण कुमार कथा.

ढंढणकुमारनो जीव पूर्व भवमां कोइ राजाना पांचसे खेडुतोनो अधिकारी हतो. ज्यारे मध्याह्न वखते सघळाओने माटे भात आवता हता त्यारे ते तेओनी पासे पोतांना क्षेत्रमां एक एक चास हळथी कढावतो हतो. आ प्रमाणे करवाथी ते दररोज पांचसे खेडुतो अने एक हजार बळदोने भातपाणीमां अंतराय करतो हतो. तेम करवाथी ते भवमां तेणे घणुं अंतरायकर्म बांध्युं. त्यांथी काळ करीने घणा काळ सुधी अनेक भवमां भटकीने ते द्वारिका नगरीमां कृष्ण वासुदेवने घेर ढंढणा राणीनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो. ते ढंढण कुमारना नामथी प्रसिद्ध थयो. युवान वय पामतां तेने पिताए परणाव्यो. त्यार पछी स्त्रीसंगना सुखमां लीन थइ तेणे घणा दिवसो व्यतीत कर्या.

गाथा ३९. २ पुप्फियफलिय. २ पीउहरंमि. २ तण्हा. ३ सफला.

अन्यदा भगवान श्री अरिष्टनेमी अढार हजार साधुओथी परिवृत्त थइ द्वारकापुरीना मोटा उद्यानमां समवसर्या. तेमने वांदवाने माटे **कृष्ण वासुदेव ढंढण कुमार** सहित नीकळ्या. वांदीने योग्य स्थाने बेठा. एटले प्रभुए कुमतरूप अंधकारने दूर करनारी, पतित जनोनो उद्धार करनारी, अमृतना निझरणा जेवी, मोह मल्लनो नाश करनारी, सर्व जनने आनंद आपनारी, मालव कोशिक रागनो अनुवाद करनारी अने समग्र क्लेशने नष्ट करनारी देशना आपवी शरु करी. ते सांभळतां **ढंढण कुमारनुं** मन वैराग्यरसथी व्याप्त थइ जवाने लीधे तेणे श्री नेमिनाथ स्वामी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. चारित्र ग्रहण कर्या पछी ते द्वारिकापुरीमां भिक्षार्थे फरेछे, परंतु कृष्ण वासुदेवना पुत्र तरीके तेमज श्री नेमिनाथ स्वामीना शिष्य तरीके प्रसिद्ध छतां पण तेने शुद्ध भिक्षा मळती नथी अने अशुद्ध भिक्षा ते ग्रहण करता नथी. एकदा श्री नेमिश्वर भगवाने तेने कह्युं के–'हे ढंढण ! तें पूर्वभवमां बांधेलुं अंतराय कर्म उदयभावमां आवेलुं छे, तेथी तने शुद्ध आहार मळतो नथी; माटे बीजा मुनिए आणेलो आहार ग्रहण कर.' त्यारे हाथ जोडी ते ढंढण कुमारे कह्युं के–'हे त्रिलोकनाथ! ज्यारे मारुं अंतराय कर्म क्षय पामशे त्यारेज मारी पोतानी लब्धिथी मळेलो शुद्ध आहार हुं ग्रहण करीश, बीजाए लावेलो आहार ग्रहण करवो मने उचित नथी.' आ प्रमाणे कहीने तेणे तेवो अभिग्रह स्वामीनी साक्षीए लीधो. पछी प्रतिदिवस अव्याकुळ मने भिक्षार्थे फरेछे, परंतु तेने शुद्ध आहार मळतो नथी. तेथी ते तृषा अने क्षुधा सहन करे छे. आ प्रमाणे तेने केटलोक काळ व्यतीत थयो.

एक दिवस नेमीश्वर भगवानने वांदवाने माटे कृष्ण वासुदेव आव्या. प्रभुने वांदीने कृष्ण वासुदेवे पूछ्युं के–'आपना अढार हजार साधुओमां दुष्कर कार्य करनारो कयो साधु छे?' ते वखते भगवाने कह्युं के– 'दुष्कर करनार तो सर्व साधुओ छे, पण तेमां ढंढण मुनि विशेष छे.' वासुदेवे कह्युं के–'हे भगवन्! कया गुणथी ते विशेष छे ?' त्यारे भगवाने तेनो सर्व अभिग्रह कह्यो. ते सांभळी अति हर्षित थइ कृष्ण बोल्या के–'ते धन्य एवा ढंढण मुनि क्यां छे ? तेने वांदवानी मने तीव्र इच्छा थइ छे.' भगवाने कह्युं के–'भिक्षार्थे शहेरमां गयेला छे, ते तमने सामाज मळशे, पछी स्वामीने वांदीने द्वारिकापुरीमां पाछा आवतां गजेंद्र उपर आरूढ थयेला कृष्णे ढंढण मुनिने वजारमांथी सामे आवता जोया; कृष्णे हाथी उपरथी उतरी ढंढण मुनिनी त्रण प्रदक्षिणा करी घणा भाव पूर्वक तेमने वांद्या अने कह्युं के–'हे मुनि ! तमने धन्य छे! तमे पुण्यशाली छो. अति भाग्य शिवाय तमारा दर्शन थवा सुलभ नथी.' ते समये सोळ हजार राजाओ पण ते मुनिना चरणमां पड्या. ते वखते बारीमां बेठेला एक वणिके

त जोइने चिंतव्युं के 'अहो! आ मुनि महानुभाव देखाय छे, जेथी महा समृद्धिवान कृष्ण आदि राजाओ पण तेमना चरणकमलमां पडेछे. माटे मारे तेमने शुद्ध मोदक व्होरावीनं लाभ लेवो. तेमने व्होराववाथी मने मोटुं पुण्य थशे.' आ प्रमाणे विचारीने ढंढण मुनिने पोताने घरे तेडी लावी तेणे बहुभावथी मोदक व्होराव्या.

ढंढण मुनिए भगवाननी समीपे आवीने पूछ्युं के–'हे भगवन्! मारुं अंतराय कर्म आजे नष्ट थयुं?' भगवाने कह्युं के–'हे मुनि! हजु ते नष्ट थयुं नथी.' ढंढण मुनिए पूछ्युं के–'हे स्वामिन्! त्यारे आजे मने भिक्षानो लाभ केम थयो?' स्वामीए कह्युं के–'कृष्ण वासुदेवनी लब्धिथी तने आ आहार मळेलो छे, पण अंतरायकर्मना क्षयथी उत्पन्न थयेली तमारी लब्धिथी मळेलो नथी.' आ प्रमाणेनां भगवाननां वचन सांभळीने ढंढण मुनि ते आहारने शुद्ध भूमिमां परठववाने गया. त्यां शुद्ध अने अतिशुद्ध अध्यवसायथी प्रबल शुक्ल ध्यानरूपी अग्निवडे कर्मरूपी इंधनने बाळी दइ पोतानां पूर्वकृत कर्मोनो समूह होयनी तेम मोदकने चूर्ण करतां करतां तेमने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं. ते वखते देवोए दुंदुभि वगाडी चारे तरफ जय जय शब्द कर्यो अने कृष्ण आदि सर्व भव्य जनो खुशी थया. घणा काळ सुधी केवळीपणे विहार करीने प्रांते ढंढण मुनिए मुक्ति प्राप्त करी. आ प्रमाणे अन्य महात्माए पण वर्तवुं.

इति ढंढण मुनि कथा.

आहारेसु सुहेसुअ; रम्मावसहेसु काणणेसु च।
साहूण नाहिगारो; अहिगारो धम्मकज्जेसु ॥ ४० ॥

अर्थ—"शुभ एवा आहारने विषे, रम्य एवा उपाश्रयने विषे अने (विचित्र एवा) उद्यान–बागबगीचाने विषे साधुने अधिकार (आसक्तपणुं) नथी; निर्ममत्व होवाथी. तेओने तो मात्र धर्मकार्यमां अधिकार छे. मुनिने इंद्रियोने सुखकारी बाह्य पदार्थोमां आसक्ति होती नथी." ४०

साहू कांतार महाभएसु, अवि जणवएवि मुइयम्मि।
अवि ते सरीरपीडं, सहंति न लहंति य विरुद्धम् ॥ ४१ ॥

अर्थ—"अटवीमां के राज्यविप्लवादि महा भयमां पण मुनि ऋद्धिवाळा निरूपद्रव जनपदमां होय तेम निर्भयपणे वर्ते छे. वळी ते मुनिओ शरीरनी पीडाने सहन करेछे पण विरुद्ध वस्तु ग्रहण करता नथी." ४१. अर्थात् मुनि गमे तेवा

गाथा ४०–रम्या आवसथा=उपाश्रयाः
गाथा ४१–कतार. मुइअमि. नयलतिअ.

कष्टमा पण अनेषणीय आहार पाणी विगेरे ग्रहण करता नथी अने बीजानुं ग्रहण करेलुं तेवुं होय तो वापरता नथी, अर्थात् तेमने आहारादिने विषे प्रतिबंध नथी धर्मकार्यने विषेज प्रतिबंध वर्तेछे.

जंतेहि पीलियाविहु, खंदगसीसा न चेव परिकुविया।
विइय परमत्थसारा, खमंति जे पंडिया हुंति ॥ ४२॥

अर्थ—"यंत्रवडे पीलया छतां पण स्कंदकाचार्यना ५०० शिष्य कोपायमान नज थया. कारणके जेमणे परमार्थनो सार (तत्वरहस्य) जाण्योछे एवा पंडितो जे होय छे ते गमे तेवुं कष्ट पण खमेज छे, प्राणांते पण मार्गथी चलता नथी." ६२. अहीं स्कंदक शिष्योनुं दृष्टांत जाणवुं. १४.

श्री स्कंदक शिष्य दृष्टांत.

श्रावस्ती नगरीमां जितशत्रु नामनो राजा राज्य करता हतो. तेने धारिणी नामे पट्टराणी हती. तेने स्कंदक नामनो कुमार हतो. ते कुमारने पुरंदरयशा नामनी बेन हती तेने कुंभकारकटक नगरना स्वामी दंडक राजानी साथे परणावी हती. ते दंडक राजाने पालक नामनो पुरोहित हतो. एक दिवस दंडक राजाए कोइ कार्यने माटे पालकने पोताना सासरा जितशत्रु राजा पासे मोकल्यो. ते वखते जितशत्रु राजानी सभामां जइने पालके वार्तांना प्रसंगमां धर्मचर्चा चलावी तेमां ते पोतानो नास्तिक मत स्थापन करवा लाग्यो. ते वखते पासे बेठेला जैनधर्मना तत्त्वोना जाण स्कंदक कुमारे जैनधर्ममां कहेली युक्तिओथी ते पालकने निरुत्त, करी दीधो एटले ते मानभ्रष्ट थयो. तेथी ते क्रोधथी घणो प्रज्वलित थइ गयोर परंतु त्यां कांइ करी शक्यो नहि. पछी पोतानुं कार्य करीने ते कुंभकारकटक नगरे पाछो आव्यो.

एक दिवस मुनिसुव्रतस्वामी प्रभु विहार करतां श्रावस्ती नगरीए पधार्या. स्कंदक कुमार वांदवाने माटे आव्यो, प्रभुए देशना दीधी. ते सांभळी स्कंदक कुमारे पांचसो राजपुत्रो सहित दीक्षा लीधी. अनुक्रमे ते उग्रविहारी थया. तेमणे सकळ सिद्धांतनो सार ग्रहण करेलो होवाथी गुरुए तेने पांचसे साधुओना आचार्य बनाव्या.

एक दिवस मुनिसुव्रतस्वामीनी पासे आवीने स्कंदक कुमारे कह्युं के-'हे भगवन्! आपनी आज्ञा होय तो मारी बेन पुरंदरयशाने अने मारा बनेवी दंडक

* विइय=विदित.

राजा विगेरेने प्रतिबोध पमाडवाने माटे हुं कुंभकारकटक नगरे जाउं. त्यारे भगवाने कह्युं के–'हे स्कंदाचार्य! तमने त्यां प्राणांतिक (प्राणनी हानि थाय तेवो) उपसर्ग थशे.' स्कंदकाचार्ये पूछ्युं के–'हुं आराधक[1] थइश के नहि?' प्रभुए कह्युं के 'तमारा शिवाय सर्व आराधक थशे.' ते सांभळीने स्कंदकाचार्ये कह्युं के–'हे स्वामी! जो मारी सहायथी बीजा मुनिओ आराधक थशे तो मने सघळुं मळ्युं एम हुं मानीश.' ए प्रमाणे कही स्वामीने वांदीने पांचसे साधुनी साथे ते कुंभकारकटक नगरे आव्या. तेओ आवेछे एवा खबर सांभळीने तेना आवतां पहेलां साधुजनोने उतरवा योग्य वनभूमिमां पूर्ववैरी पालके नाना प्रकारनां शस्त्रो दाटी राख्यां. पछी स्कंदाचार्य आव्या. एटले दंडक राजा नगरवासी लोकोनी साथे तेमने वांदवाने माटे आव्यो, आचार्ये क्लेशनो नाश करनारी देशना दीधी, तेमां संसार स्वरूपनी अनित्यता बतावी, लोको आनंदित थया.

हवे पालके एकांतमां राजा पासे आवीने कह्युं के–'हे स्वामिन्! आ स्कंदकाचार्य पाखंडी छे, ते साधु नथी; ते पोताना आचारथी भ्रष्ट थयेलो छे, अने हजार हजार योधाओनी साथे लडी शके एवा पांचसे पुरुषोने साथे लइने तमारुं राज्य लेवाने माटे आव्यो छे.' ते सांभळी दंडक राजाए कह्युं के–'तुं ते वात शीरीते जाणेछे?' पालके कह्युं के–'हुं आपने तेओनी ठगाइ बतावी आपुं.' पछी कोइ कार्यनुं व्हानुं बतावी साधुओने अन्य वनमां मोकल्या, अने राजाने उपवनमां लइ जइ पालके पोते भूमिमां दाटेलां शस्त्रो काढीने बताव्यां. शस्त्रो जोइ राजानुं मन चलित थयुं, अने पालकने हुकम आप्यो के 'तुं ते साधुओने तने योग्य लागे ते शासन कर.' ए प्रमाणे कहीने राजा घेर गयो. पछी पूर्ववैरी पालके माणसोने पीलवानुं यंत्र लावीने वनमां खडुं कर्युं, अने तेनी अंदर एक एक मुनिने नाखवा लाग्यो. स्कंदकाचार्य दरेक मुनिने आलोचना करावे छे अने तेओना मनने समाधि पमाडेछे. तेथी जेओए कायापरनी मूर्छानो सर्वथा त्याग करेलो छे, कर्म खपाववामांज जेओनी दृष्टि निबद्ध थइछे, भोगव्या वगर कर्मनो क्षय थतो नथी एवो जेओना मनमां निश्चय थयेलोछे, रागद्वेषरहित जेओनुं मन थयेलुं छे अने जेओनुं अंतःकरण परम करुणारसथी भावित थयेलुंछे एवा ते पूज्य मुनिओ शुक्ल ध्यानवडे कर्मरूपी इंधनने बाळी दइ क्षपकश्रेणी उपर आरूढ थई दुष्ट पालकना लावेला यंत्रमां पीलाता सता अंतावस्थामां केवळज्ञान पामीने (अंतकृत् केवळी थइने) मोक्षे गया. ए प्रमाणे अनुक्रमे चारसे नवाणुं साधुओ मुक्ति पाम्या.

---

१ मोक्षमार्गनी आराधना करी शके ते.

पछी एक नानो शिष्य बाकी रह्यो. तेने पण पापात्मा पालके पीलवानी तैयारी करी त्यारे स्कंदकाचार्ये कह्युं के–'अरे पालक! प्रथम मने पील, पछी आ लघु शिष्यने पीलजे.' ए प्रमाणे कहेतां छतां पण दुष्ट पालके ते शिष्यनेज जलदीथी प्रथम पील्यो. तेथी 'अरे! आ दुरात्मानी केवी दुष्टता छे!' एम विचारतां स्कंदकाचार्यने अति तीव्र क्रोधाग्नि प्रगट थयो; ते क्रोधाग्निमां क्षणमात्रमां तेमना गुणरुपी इंधन बळी गयां. पछी 'अरे! मारी नजर आगळ आ दुरात्माए केवुं नीच कृत्य कर्युं! आ पालक पुरोहित अति दुष्ट छे, आ दंडक राजा पण अति अधम छे अने आ नगरनां लोको पण अति निर्दय छे.' ए प्रमाणे विचारतां क्रोधथी ज्वलित थयेला स्कंदकाचार्ये पालकने उद्देशीने कह्युं के–'अरे दुरात्मन्! हुं तारा वधनो करनार थइश.' ए प्रमाणे तेमणे नियाणुं कर्युं; तेथी विशेष क्रोधयुक्त बनेला पालके स्कंदकाचार्यने पण यंत्रमां पीली नांख्या. तेथी जेमणे संयमनी विराधना करीछे एवा स्कंदकाचार्य मरण पामीने अग्निकुमार निकायमां देवपणे उत्पन्न थया.

हवे ए समये स्कंदकाचार्यनो ओघो 'रुधिरथी लेपायेलो आ हाथ छे' एवी भ्रान्तिथी कोइ गीध पक्षीए उपाड्यो. पछी तेने माटे परस्पर लडतां पक्षीना मुखमांथी ते ओघो स्कंदकाचार्यनी व्हेन पुरंदरयशाना आंगणामां पड्यो. पुरंदरयशाए ते ओघो ओळख्यो, अने लोकोना मुखथी सघळी हकीकत सांभळी; तेथी पुरंदरयशाए राजाने कह्युं के–'अरे पापी दुरात्मन्! महा अनीति करनार! तें आ शुं कुकर्म कर्युं? साधुहत्याथी थयेलुं पाप सात कुळने बाळी नांखेछे. साधुनी हत्या ते मोटामां मोटी हत्या छे.' ए प्रमाणे वारंवार राजाने तिरस्कार पूर्वक कहेती ते संसारथी पराङ्मुख थइ वैराग्यपरायण बनी. एटले शासनदेवताए तेना परिवार सहित तेने उपाडीने श्रीमुनिसुव्रतस्वामी पासे मूकी. त्यां तेणे दीक्षा ग्रहण करीने पोतानो स्वार्थ साध्यो.

हवे अग्निकुमार निकायमां उत्पन्न थयेला स्कंदकाचार्यना जीवे अवधिज्ञानथी जोयुं, एटले तेने तीव्र क्रोध उत्पन्न थवाथी पालक सहित दंडक राजाना बधा देशने बाळीने भस्म कर्यो. ते उपरथी लोकप्रसिद्धिमां ते हाल दण्डकारण्य कहेवायछे.

स्कंदकाचार्यना शिष्यो, पालके पोताना प्राणनो नाश कर्यो छतां पण तेना उपर क्रोधवाळा थया नहि तो तेज भवमां ते सर्व मोक्षे गया. एटलामाटे सिद्धांतमां पण कह्युं छे के– 'उवसमसार खु सामण्णम्' श्रमणपणानो सार उपशम छे. वळी—

क्षमाखड्गं करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति ।
अतृणे पतितो वह्निः, स्वयमेवोपशाम्यति ॥

" जेना हाथमां क्षमारूपी खड्ग छे तेने दुर्जन शुं करनार छे ? तृण विनानी जग्यामां पडेलो अग्नि पोतानी मेळेज शांत थइ जायछे."

आ कथानो ए उपनय छे के 'आवो उत्कृष्ट क्षमागुण धारण करवो ते साधुओने मुक्ति मेळववानुं मूळ कारण छे.'

इति स्कंदकाचार्य कथा.

जिणवयणसुइ सकन्ना, अवगय संसार घोर पेयाला ।
बालाण खमंति जइ, जईत्ति किं इत्थ अच्छेरं ॥ ४३ ॥

अर्थ—"जे कारणमाटे जिनवचन सांभळवाथी सकर्ण एवा अने घोर संसारनो विचार जेणे जाण्योछे एवा यति (मुनि) बाळ—अज्ञानी मिथ्यादृष्टिओनां करेलां दुष्ट चेष्टितने स्कंदकशिष्योनी जेम खमे छे तेमां शुं आश्चर्य छे ? अर्थात् कांइ आश्चर्य नथी. केमके मुनिए दुष्टोनो करेलो अपराध सहन करवो ते ज युक्त छे." ४३

लोकरुढिमां कानवाळा होय ते सकर्ण कहेवाय छे ते खरा सकर्ण नथी, परंतु जेमणे जिनवचन सांभळ्यां छे ने हृदयमां धार्यां छे ते ज खरा सकर्ण छे. तेवा सकर्ण आ संसारना स्वरूपने असार जाणे छे.

न कुलं इत्थ पहाणं, हरिएसबलस्स किं कुलं आसि ।
आकंपिया तवेणं, सुरावि जं पज्जुवासंति ॥ ४४ ॥

अर्थ—"अहीं धर्मना विचारमां कुळनुं प्रधानपणुं नथी; एटले उग्र भोगादि कुळ विना धर्म न होय एवो कांइ निश्चय नथी. ते विषे दृष्टांत कहेछे— हरिकेशी बळने शुं उत्तम कुळ हतुं ? नहोतुं. तेओ तो चंडालना कुळमां उत्पन्न थयेला हता, छतां तेमना तपे करीने आकंपित थयेला—वश थयेला देवताओ पण तेमनी सेवा करेछे." ४४

ज्यारे देवताओ सेवा करे त्यारे पछी मनुष्यनी तो वात ज शी ! माटे धर्मविचारमां कुळनी प्राधान्यता नथी, गुणनी छे. अहीं हरिकेशि बळनुं दृष्टांत जाणवुं. १९

गाथा ४३—+ पेयाला—विचाराः १ जयात्ति. गाथा ४४—१ हरिएसिवलस्स

हरिकेशि मुनिनी कथा.

प्रथम हरिकेशि मुनिना पूर्व भवनुं वृत्तांत आ प्रमाणे—

मथुरा नगरीमां शंख नामे राजा हतो. ते न्यायमां घणो निपुण हतो. अन्यदा ते शंख राजाए गुरुनी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. विहार करतां करतां ते शंख राजर्षि हस्तिनापुर आव्या. त्यां भिक्षार्थे शहेरमां प्रवेश करतां मार्ग नहि जाणवाथी तेमणे **सोमदेव** नामना पुरोहितने नगरनो मार्ग पूछ्यो. मुनिवेषना द्वेषी सोमदेव पुरोहिते व्यंतरथी अधिष्ठित थयेलो अग्नि जेवो तपेलो मार्ग तेने वताव्यो. ते मार्ग एवो हतो के जे कोइ अजाणतां ते मार्गे जाय तो ते भस्म थइ जायछे. ब्राह्मणे विचार कर्यो के–'जो मुनि प्रज्वलित मार्गे जशे तो ते बळीने भस्म थइ जशे; ते वखते हुं कौतुक जोइश.' हवे साधु तो ते दुष्टे वतावेला मार्गे चाल्या. परंतु ते समये ते साधुना धर्मना महात्म्यथी ते व्यंतर त्यांथी नासीज गयो, तेथी मार्ग शीतळ थइ गयो. शंख राजर्षि तो इर्यासमितिथी[1] ते मार्गे धीमे धीमे चाल्या जता हता. गोखमां वेठेला सोमदेव पुरोहिते ते जोइ विचार कर्यो के "अहो! आ जैन धर्मनो प्रभाव घणो मोटो जणाय छे के जेथी आ व्यंतरथी अधिष्ठित थयेलो अग्नि जेवो तपेलो मार्ग पण आ मुनिना पुण्यप्रभावथी शीतळ थइ गयो. माटे आ साधुवेषने धन्य छे तेमज आ मार्गने पण धन्य छे!" पछी गोखमांथी नीचे उतरीने ते साधुना चरणमां पड्यो अने बोल्यो के–'हे स्वामी! में अज्ञानपणाथी आ दुष्कृत्य कर्युं छे ते मारो अपराध क्षमा करो.' साधुए तेने योग्य जीव जाणी धर्मदेशना आपी. ते सांभळीने ते प्रतिबोध पाम्यो अने मनमां विचार करवा लाग्यो के–' अहो! आ साधुनुं केवुं परम उपकारीपणुं छे के जेथी अपकार करनार उपर पण तेमनी उपकारबुद्धि छे.' पछी पुरोहिते कह्युं के–'हे भगवन्! भवसागरमां डुवता एवा मने चारित्रधर्म रूपी नाव आपीने तारो.' गुरुए तरतज तेने दीक्षा आपी. ते निर्दोष चारित्र पाळवा लाग्यो, परंतु ब्राह्मण जातिने लीधे नीच गोत्रमां जन्म आपनार जातिमद करेछे. ए प्रमाणे घणा काळ सुधी चारित्र पाळीने छेवटे जातिमदनी आलोचना कर्या शिवाय मरण पामी देवपणाने प्राप्त थयो.

देवगतिमां घणा काळ सुधी भोग भोगवी नीच गोत्रकर्म जेणे बांधेलुं छे एवा ते सोमदेव पुरोहितनो जीव त्यांथी च्यवीने गंगातट उपर **बलकोट** नामना चंडाळने घेर तेनी स्त्री **गौरीनी** कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो, माताए स्वप्ननी अंदर लीला रंगनो आंवो जोयो, अनुक्रमे तेनो प्रसव थयो. मातापिताए तेनुं नाम **हरिके-**

[1] जीवजंतु जोइने चालवुं ते.

शिबळ पाड्युं. अनुक्रमे मोटो थतां एकवार वसंतोत्सवमां समान वयवाळा बाळकोनी साथे क्रीडा करतां ते अति चपळ होवाथी बीजा बाळकोनी तर्जना करेछे. कारणके बाळकोनो ए स्वभाव ज छे. कह्युं छे के—

न सहंति इक्कमिक्कं, न विणा चिट्ठंति इक्कमिक्केण ।
रासह वसह तुरंगा, जूआरी पंडिया डिंभा ॥ १ ॥

"रासभ, वृषभ, घोडा, जुगारी, पंडितो ने बालको एक बीजाने सहन करी शकता नथी अने पाछा एक बीजा शिवाय एकला रही शकता नथी."

पछी घणा बाळकोए मळीने हरिकेशिबलने पोताना मंडळमांथी हांकी काढ्यो. हवे ए अवसरे एक झेरी सर्प नीकळ्यो. तेने घणा माणसोए मळीने मारी नाख्यो, तेवामां एक बीजो सर्प नीकळ्यो; पण ते निर्विष हतो तेथी लोकोए विचार्युं के 'आ सर्प विष वगरनो छे तेथी तेने मारवो न जोइए, एम विचारी तेने जीवतो छोडी दीधो. ए स्वरूप जोइने लघुकर्मी हरिबळ बाळके विचार्युं के— 'अरे ! आ अगाध भवकूपमां आ जीव पोताना कर्मथीज दुःखी थायछे, अन्य तो निमित्त मात्र छे, कह्युं छे के—

रे जीव सुहदुहेसु, निमित्तमित्तं परं वियाणाहि ।
सकयफलं भुंजंतो, कीस मुहा कुप्पासि परस्स ॥

"हे जीव! सुख अने दुःखनी अंदर अन्य तो निमित्त मात्र छे एम तुं जाण. स्वकृत एटले पोतानां करेलां कर्मना फळने भोगवतां तुं शामाटे बीजा उपर गुस्से थाय छे ?"

वळी आ जीव पोताना गुणथीज सुखी थाय छे. सुख अने दुःखनुं मूळ कारण पोतानो आत्माज छे; माटे निर्विषपणुंज वधारे सारुं छे. विषय रूप विषवाळा पुरुषो मरण पामेछे; तेथी जेओ विषयरूप विषथी रहित छे तेओने धन्य छे. ए प्रमाणे जेनां हृदयचक्षु विकस्वर थयां छे एवा हरिकेशीने अनादि भवप्रपंचने चिंतवतां भवतापने हरनार जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न थयुं. तेणे सम्यक् प्रकारे पूर्व भवनुं स्वरूप जोयुं. 'अरे ! में पूर्वे सोमदेवना भवमां चारित्र पाळ्युं छे, परंतु जातिमद करवाने लीधे में तेने सदोष करेलुं छे. अहो ! विशुद्ध एवो आ चारित्र धर्म निर्विषपणे आराध्यो सतो अवश्य स्वर्गादि सुखने आपेछे'. सिद्धांतमां पण कह्युं छे के—

तए संथारनिविट्ठो वि, मुणिवरो भट्ठरागमयमोहो ।
जं पावइ मुत्तिसुहं, कत्तो तं चक्कवट्टीवि ॥

"जेना राग मद ने मोह नाश पामेला छे एवा मुनिवर ते अवसरे संथारा पर रह्या सता पण मोक्षसुखने प्राप्त करेछे तो तेने चक्रवर्तीपणुं पामवुं तेमां तो शुं आश्चर्य ! "

ए प्रमाणे संवेगरूपी रंगथी जेनुं मन रंगायेलुं छे एवा हरिकेशिबले गुरुनी पासे जिनवाणी सांभळीने चारित्र ग्रहण कर्युं अने दुष्कर छठ्ठ अट्ठम आदि तप करवा लाग्या, तेमज विषयनो त्याग करीने विचरवा लाग्या.

एकदा एक मासना उपवासनुं तप करीने ते वाराणसी नगरीना तिंदुक नामना वनमां तिंदुक यक्षना मंदिरमां कायोत्सर्ग करीने रह्या. तेना तपगुणथी रंजित थइ तिंदुक यक्ष पण ते साधुनी सेवा करवामां तत्पर थयो. अहो ! तपनुं अत्यंत महात्म्य छे ! कह्युं छे के—

यद्दूरं यद्दूराराध्यं, यत्सुरैरपि दुर्लभम् ।
तत्सर्वं तपसा साध्यं, तपो हि दुरतिक्रमम् ॥

"जे दूर छे, जे दुःखथी आराधी शकाय तेवुं छे, जे देवोने पण दुर्लभ छे ते सर्व तपथी मेळवी शकाय छे. माटे तपनुं कोइ अतिक्रम करी शके—तेनाथी वधी शके तेम नथी."

ए वखते वाणारसी नगरीना राजानी पुत्री सुभद्रा नामनी राजकन्या घणी दासीओथी परिवृत्त थइ पूजानी सामग्री लइने यक्षराजने पूजवाने माटे आवी. यक्षमंदिरनी प्रदक्षिणा करतां ते राजकन्याए मलमलिन देहवाळा मुनिने जोया. एटले 'अरे ! निंद्य देहवाळो प्रेत जेवो आ कोण छे ?' ए प्रमाणे कही तेणे थुथुकार कर्यो. ते तपस्वी मुनिनी मोटी आशातना करी. एवुं राजकन्यानुं चेष्टित जोइने कुपित थयेला तिंदुक यक्षे विचार्युं के—'अरे ! आ राजकन्या दुष्कर्म करनारी छे, कारणके सुर अने असुरे जेना चरणनी पूजा करी छे एवा आ मुनिनी ते अवज्ञा करेछे; तेथी आ पूज्य मुनिनी करेली अवज्ञानुं फल आ राजकन्याने बतावुं.' ए प्रमाणे विचार करीने तेणे तेना शरीरमां प्रवेश कर्यो. एटले तेना प्रवेशथी नाना प्रकारना बकवाद करती, हार विगेरेने तोडती अने वस्त्र विगेरेनी शुद्धि नहि जाणती एवी राजकन्याने त्यांथी सेवको तेनां मातापिता पासे लाव्या. पुत्रीस्नेहथी मोहित थयेला राजाए तेनी घणी चिकित्सा करावी. अनेक मांत्रिको अने वैद्योने बोलाव्या, परंतु कंइ फेर पड्यो नहि; तेथी वैद्यो खिन्न थया. पछी यक्षे प्रत्यक्ष थइने कह्युं के—' हे राजन् !

पोताना रूपथी गर्वित थयेली आ तारी पुत्रीए मारा पूज्य मुनिनो उपहास करेलो छे, तेथी जो तेज मुनिनी ते स्त्री थाय तोज हुं तेने मुक्त करुं; बीजो कोइ उपाय नथी.' ते सांभळी राजाए विचार कर्यो के-'आ प्रमाणे थवाथी मारा प्राणथी पण वधारे वहाली एवी आ कन्याने हुं जीवती तो जोइश; माटे आ कन्या मुनिराजने अर्पण करवी.' ए प्रमाणे विचार करी परिजनो साथे सुभद्राने ते मुनि पासे मोकली. ते कन्याए पण पोताना पितानी आज्ञाथी यक्षमंदिरमां जइ मुनिने वांदीने कह्युं के-'हे महर्षि! आपना हाथवडे मारो हाथ ग्रहण करो. हुं स्वयंवरा थइने आपनी पासे आवेली छुं.' मुनिए कह्युं के-'हे भद्रे! मुनिओ विषयसंगथी रहित होय छे, माटे आ वात साथे मारे कांइ पण प्रयोजन नथी.' मुनिए आ प्रमाणे कह्या छतां कुतुहळमां प्रीतिवाळा तिंदुक यक्षे मुनि शरीरमां दाखल थइ ते कन्यानुं पाणिग्रहण कर्युं अने तेने विटंबणा करीने छोडी दीधी. ते बधुं स्वप्न जेवुं जोइने निस्तेज थइ पिता पासे आवी, अने स्वप्न जेवुं सघळुं रात्रिनुं स्वरूप कही बताव्युं. ते समये रुद्रदेव पुरोहिते कह्युं के-"हे स्वामिन्! आ कन्या ऋषिपत्नी थयेली छे; अने अमारा शास्त्रमां कह्युं छे के 'तजायेली ऋषिपत्नी ब्राह्मणने आपवी' आवो वेदनो अर्थ छे, माटे आ कन्या ब्राह्मणने अर्पण करवी जोइए." ए प्रमाणे सांभळीने राजाए ते रुद्रदेव पुरोहितने ज ते कन्या अर्पण करी.

एकवार रुद्रदेव पुरोहिते यज्ञ करतां सुभद्राने यज्ञपत्नी करी. यज्ञमंडपमां घणा ब्राह्मणो आवेला हता. यज्ञकर्ममां कुशळ याज्ञिको यज्ञ करवा लाग्या हता अने तेओने योग्य पुष्कळ भोजन विगेरे तैयार कर्युं हतुं. ते समये मासखमणना पारणे हरिकेशिबल मुनि यज्ञमंडपमां दाखल थया. तेमने सन्मुख आवतां जोइने ब्राह्मणोए कह्युं के-'अरे! आ प्रेत जेवो, मळथी मलिन देहवाळो अने निंद्य वेष धारण करवा वाळो कोण यज्ञमंडपने मलिन करवाने आवेलो छे?' ते वखते मुनिए आवीने भिक्षाने माटे ब्राह्मणो पासे याचना करी. ते सांभळीने अनार्य ब्राह्मणोए कह्युं के-"अरे! दैत्यरूप! यज्ञमंडपमां तैयार करेलुं अन्न ब्राह्मणोने देवा योग्य छे, शुद्र करतां पण अधम एवा तने ए अन्न केम अपाय? वळी जे अन्न ब्राह्मणोने अपाय छे तेनुं पुण्य तो सहस्रगणुं थाय छे, अने तने आपेलुं अन्न तो राखमां घी होमवा जेवुं थाय छे, माटे अहींथी चाल्यो जा, तुं अहीं शामाटे उभो छे?" ए प्रमाणे ब्राह्मणोए मुनिनो उपहास कर्यो. ते सांभळी यक्षे मुनिना शरीरमां प्रवेश करीने कह्युं के-"अरे! सांभळो, हुं श्रमण (जैन साधु) छुं, यावज्जीव ब्रह्मचर्य पाळनारो छुं, अहिंसादि व्रतोने धारण करुं छुं; तेथी हुंज सुपात्र छुं, ब्राह्मणो सुपात्र नथी. केमके तमे तो पशुवध आदि पापना

करनारा छो, मुखथी न कहेवाय एवा स्त्रीना गुह्य स्थानना मर्दन करनारा छो अने उत्तम प्रकारना ज्ञानथी दूर करायेला छो, माटे हुंज सुपात्र छुं. तमारा भाग्यथी ज हुं तमारा यज्ञमंडपमां आवेलो छुं; माटे मने शुद्ध अन्न आपो. ” एवां वाक्योथी तिरस्कार करायेला ब्राह्मणो ते मुनिने मारवा तैयार थया. तेओए लाकडी अने मुष्टिवडे मुनिने केटलाक प्रहारो कर्या. एटले रुष्टमान थयेला यक्षे ते ब्राह्मणोने प्रहारादि वडे मुखमांथी रुधिर वमता करी दीधा, अने शरीरना सांधा शिथिल करी नाख्या, जेथी तेओ पृथ्वी उपर पड्या. मोटो कोलाहळ थइ गयो, एटले सघळा त्यां एकठा थया. कोलाहळ सांभळीने सुभद्रा राजकन्या पण बहार नीकळी. तेणे मुनिने जोया एटले तरत ओळख्या. पछी भयथी विह्वल बनी जइने तेणे रुद्रदेव विगेरेने कह्युं के–‘ अरे दुर्बुद्धिवाळाओ ! आ मुनिने पीडशो तो यममंदिरमां पहोंची जशो. आ तो तिंदुक यक्षे पूजेला महा प्रभाववाळा तपस्वी मुनि छे, में पूर्वे तेमने चलित करवा माटे घणो यत्न कर्यो हतो; परंतु ते जरा पण ध्यानथी चलित थया नहोता. माटे आ मुनिने धन्य छे धन्य छे. ’ एम बोलती सुभद्रा मुनिना चरणमां पडी अने कह्युं के–‘ हे कृपासिंधु ! हे जगत्जनबंधु ! मारा आग्रहथी आ मूर्ख लोकोए करेलो अपराध क्षमा करो. ’ मुनिए कह्युं के–“ मुनिने कोप करवानो अवकाश नथी. कारणके क्रोध महा अनर्थकारी छे. कह्युं छे के–

जं अज्जियं चरित्तं, देसूणाए य पुव्वकोडी ए ।
तंपिअ कसायमित्तो, हारेइ नरो मुहुत्तेण ॥

“ देशे उणा क्रोड पूर्व पर्यंत जे चारित्र पाळ्युं होय तेने पण प्राणी एक मुहूर्त मात्र कषाय करवाथी हारी जाय छे.”

माटे साधुने कोप करवो योग्यज नथी. तेथी ते कोप करेज नहि, परंतु तमारा पर कोप करनार यक्षने तमे प्रसन्न करो.” मुनिना कहेवाथी ब्राह्मणोए ते यक्षने संतुष्ट कर्यो, एटले ते सर्व ब्राह्मणो साजा थया. पछी तेओ यज्ञकर्म छोडी दइने मुनिना चरणमां पड्या अने शुद्ध अन्नवडे मुनिने पडिलाभ्या. ते वखते त्यां पंच दिव्य प्रगट थया. ते जोइ ‘आ शुं ! ’ एम बोलतां कुतुहळ जोवा माटे घणा लोको एकठा थया. राजा पण ए हकीकत जाणीने त्यां आव्यो. सघळाओ सुपात्र दाननी प्रशंसा करवा लाग्या. कह्युं छे के–

व्याजे स्याद्द्विगुणं वित्तं, व्यवसाये स्याच्चतुर्गुणम् ।
क्षेत्रे शतगुणं प्रोक्तं, पात्रेऽनंतगुणं तथा ॥ १ ॥

" व्याजमां धन बमणुं थाय छे, व्यापारमां धन चोगणुं थायछे, क्षेत्रमां वाववाथी सोगणुं थायछे, अने सत्पात्रने आपवाथी अनंतगणुं थायछे. "

वळी—

मिथ्यादृष्टिसहस्रेषु, वरमेकोह्यणुव्रती ।
अणुव्रतिसहस्रेषु, वरमेको महाव्रती ॥ २ ॥
महाव्रतिसहस्रेषु, वरमेको हि तात्विकः ।
तात्त्विकस्य समं पात्रं, न भूतं न भविष्यति ॥ ३ ॥

" हजार मिथ्यात्वीओ करतां एक श्रावक व्रतधारी वधारे श्रेष्ठ छे, हजार श्रावक व्रतधारीओ करतां एक महाव्रती (साधु) वधारे श्रेष्ठ छे; हजार महाव्रतीओ करतां एक तत्त्ववेत्ता मुनि (गणधर महाराजा) वधारे श्रेष्ठ छे, एवा तात्विक मुनिनी बरोबरी करनारुं पात्र बीजुं कोइ थयुं नथी अने थशे पण नहि. "

माटे आ जैन साधुने दान देवुं ए धन्य छे. पछी त्यां मुनिए देशना आपी. घणा माणसो मुनिनी देशनाथी प्रतिबोध पाम्या अने सघळा ब्राह्मणो पण श्रावक थया.

हरिकेशि मुनि शुद्ध व्रत आराधी केवलज्ञान पामीने मोक्षे गया. माटे कुळनुं प्राधान्य नथी, पण गुणोनुंज प्राधान्य छे; गुण न होय तो कुळ कंइ करी शकतुं नथी. वळी आ आत्मा नटनी माफक नवां नवां रूप धारण करी संसारमां परावर्तन कर्या करेछे (अनेक देह धारण करेछे). माटे कुळाभिमाननो अवकाशज क्यां छे ? आ हकीकतने त्रण गाथा वडे स्पष्ट करेछे—

देवो[१] नेरइउ[२]त्तिय, कीड पयंग[३]त्ति माणुसो[४]वेसो ॥
रूवस्सी[५]अ विरूवो[६], सुह[७]भागी दुक्ख[८]भागीअ ॥ ४५ ॥
राउ[१]त्तिय दमग[२]त्तिय, एस[३] सपाग[४]त्ति एस[५] वेयविऊ[६] ॥
सामी[७] दासो[८] पुज्जो[९], खलं[१०]त्ति अधणो[११] धणवइ[१२]त्ति ॥ ४६ ॥

गाथा ४६—स्वपाकश्चंडाल. । खलुत्ति.

नवि इत्थं कोवि नियमो, सकम्म विणिविट्ठ सरिसकयचिट्ठो॥
अनुन्न रूववेसो, नडुव्व परियत्तए जीवो ॥ ४७ ॥

अर्थ—"आ जीव देवता थयो, नारकी थयो, कीडो अने पतंगीयो थयो, उपलक्षणथी अनेक प्रकारनो तिर्यंच थयो, मनुष्यरूप वेषवाळो अर्थात् मनुष्य थयो, रूपवंत थयो, विरूप एटले कद्रुप पण थयो, सुखनो भाजन थयो, दुःखनो भाजन—दुःख भोगवनार पण थयो. ४५. राजा थयो, द्रमक एटले भिक्षुक पण थयो, एज जीव चंडाल थयो, एज वेदनो जाणनारो प्रधान ब्राह्मण पण थयो, स्वामी थयो, सेवक थयो, पूज्य एवो उपाध्यायादि थयो, खळ दुर्जन पण थयो, निर्धन थयो, अने धनवान पण थयो. ४६. आ संसारमां कोइ प्रकारनो नियम नथी अर्थात् मनुष्य मरीने मनुष्यज थाय, पशु मरीने पशु थाय ने देवता चवीने देवता थाय एम केटलाको कहेछे पण एवो बिलकुल नियम नथी. पोतानां कर्मोनो जेवो उदय होय ते प्रमाणे चेष्टा करनारो आ जीव नवां नवां रूप ने वेष धारण करनारा नटनी जेम आ संसारमां (नवा नवा रूपे) परिभ्रमण पण करे छे." ४७. आ प्रमाणेनुं संसारनुं स्वरूप जाणीने विवेकी मनुष्यो मोक्षना अभिलाषीज होयछे, धनादिना इच्छक होता नथी. ते उपर कहे छे—

कोडीसएहिं धणसंचयस्स, गुणसुभरियाए कन्नाए ॥
नवि लुद्धो वयररिसी, अलोभया एस साहूणं ॥ ४८ ॥

अर्थ—"द्रव्यसमूहना सेंकडो कोडीए सहित आवेली, रूप लावण्यादि गुणोए भरेली एवी कन्या (अपरिणीता) ने विषे पण वैरऋषि (वज्र स्वामी मुनि) लोभाणा नहीं, लुब्ध थया नहीं. आवी अलोभता सर्व साधुओए करवी." ४८. अर्थात् एवा निर्लोभी थवुं.

पुष्कळ द्रव्य सहित अत्यंत रूपवंत रुक्मिणि नामनी कन्या वज्रस्वामीना गुणोथी मोह पामीने तेमने वरवा आव्या छतां वज्रस्वामीए किंचित् पण द्रव्यमां के स्त्रीमां न लोभातां तेने उपदेश आपी धर्म पमाडी चारित्र आप्युं. आवी निर्लोभता सर्व मुनि महाराजाए राखवा योग्य छे. अहीं वज्रमुनिनुं दृष्टांत कहे छे—

गाथा ४७—स्वकर्मविनिविष्टसदृशकृतचेष्ट. । अन्नन. गाथा ४८—गुणस्सुभरियाए.

श्री वज्रमुनिनुं दृष्टांत.

तुंबवन गाममां धनगिरि नामनो एक व्यापारी वसतो हतो. ते अति भद्रिक हतो. तेने सुनंदा नामनी स्त्री हती. तेनी साथे भोग भोगवतां तेणे घणा दिवसो सुखथी व्यतीत कर्या. एक दिवस वैराग्य उत्पन्न थवाथी धनगिरिए सगर्भा भार्याने छोडीने सिंहगिरि गुरु पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. ते उग्र तप करवा लाग्या; अने गुरुसेवाना रसिक थइ सारणा, वारणा, चोयणा, पडिचोयणा विगेरे[1] ग्रहण करवामां कुशळ थया.

पाछळ सुनंदाने पुत्र प्रसव थयो. ते वखते 'आना पिताए दीक्षा लीधेली छे अने ते धन्यवाद आपवा लायक मुनि थयेल छे' एवुं ते पुत्र जन्मतांज स्वजनमुखथी सांभळीने मनमां चिंतन करवा लाग्यो के–'अरे! आ लोको शुं बोले छे? आ दीक्षाधर्म केवो होय छे? में कोइ पण वखत तेनो अनुभव करेलो लागे छे.' ए प्रमाणे ध्यानमां तत्पर थएला ते बाळकने जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न थयुं एटले तेणे पूर्वे अनुभवेलुं चारित्रधर्मनुं स्वरूप जाण्युं. तेथी संसारथी विरक्त थइने ते विचार करवा लाग्यो के–'आ जन्म जरा आदिनी दुःखपरंपराथी व्याप्त एवो संसारनो विलास क्यां! अने शाश्वत सुखनो ज्यां प्रकाश एवो चारित्र धर्मने विषे निवास क्यां! अरे! अनंतीवार भोगव्या छतां पण आ जीव विषयोमां तृप्ति पामतो नथी.' कह्युं छे के—

> धनेषु जीवितव्येषु, भोगेष्वाहारकर्मसु।
> अतृप्ताः प्राणिनः सर्वे, याता यास्यन्ति यान्ति च॥

"द्रव्यमां, जीवितव्यमां, भोगमां अने आहारकर्ममां अतृप्त रह्या सताज सर्वे प्राणीओ गयेला छे, जशे अने जायछे."

वळी कह्युं छे के—

> भोगा न भुक्ता वयमेवभुक्ता–स्तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।
> कालो न यातो वयमेव याता–स्तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा॥

"भोगो भोगवाया नथी पण अमे ज भोगवाया छीए, तप तप्युं नथी, पण अमे ज तप्या छीए, काळ गयो नथी पण अमे ज गया छीए, अने अमारी तृष्णा जीर्ण थइ नथी पण अमे पोते ज जीर्ण थया छीए." माटे सांसारिक सुखो सुलभ छे, परंतु आ बोधिरत्न परम दुर्लभ छे. कह्युं छे के—

---

[1] सारणा–समारी आपवु, वारणा–अशुद्ध भणता वारवु, चोयणा–प्रेरणा करवी, पडिचोयणा–वारवार प्रेरणा करवी इत्यादि.

सुलहो विमाणवासो, एगच्छत्तावि मेइणी सुलहा ।
दुलहो पुण जीवाणं, जिणंदवरसासणे बोहि ॥

"विमानवासी एटले देवता थवुं ते सुलभ छे अने एकछत्र पृथ्वी पण सुलभ छे. अर्थात् चक्रवर्ती थवुं ते सुलभ छे, परंतु जिनेंद्रना श्रेष्ठ शासनमां बोधिबीज पामवुं ते जीवोने परम दुर्लभ छे."

आ प्रमाणे विचार करीने ते बाळक पोतानी माताने उद्वेग पमाडवा माटे गाढ स्वरथी रुदन करवा लाग्यो. माताए घणा उपायो कर्या, परंतु ते जरा पण रोतो बंध थतो नथी. जो के मातानुं मन तेना पर स्नेहयुक्त हतुं तोपण आथी विरक्त थइ गयुं. बाळक पण जेम जेम मातानुं मन विरक्त थतुं जाणवा लाग्यो तेम तेम ते बमणुं रुदन करवा लाग्यो. ए प्रमाणे छ मास व्यतीत थया. ए समये श्री सिंहगिरि सूरि त्यां पधार्या. नगरना लोको तेमने वंदन करवाने गया. गुरुए देशना दीधी. देशनाने अंते सभा वीखराइ जतां धनगिरिए गुरु पासे आवीने भिक्षा माटे जवानी आज्ञा आपी. त्यारे गुरुए कह्युं के–'आज गोचरीमां सचित्त के अचित्त जे मळे ते सघळुं ग्रहण करवुं.' ए प्रमाणेनुं गुरुनुं वाक्य स्वीकारीने धनगिरि भिक्षा माटे नगरमां गया. गोचरी माटे फरतां फरतां ते पोतानी स्त्री सुनंदाने घेर आव्या अने धर्मलाभ आप्यो. त्यारे सुनंदाए कह्युं के–'हे स्वामी! आ पुत्रने ग्रहण करो, आ पुत्रे मने घणो संताप उपजाव्यो छे.' एवुं सांभळीने गुरुनुं वचन जेमणे स्मृतिमां राखेलुं छे एवा धनगिरिए सुनंदाए आपेला पुत्रनी भिक्षा स्वीकारी. झोळीमां पुत्रने लइने ते गुरु समीपे पाछा आव्या. गुरुए वज्र जेवो ते बाळकमां भार जाणीने तेनुं नाम वज्र पाड्युं. ते बाळकने साध्वीओना उपाश्रये सोंप्यो. त्यां घणी श्राविकाओ तेनी सेवा करवा लागी. श्रीसंघने पण ते अति प्रिय थयो. त्यां पारणामां सुतां सुतां ते बाळके अनेक प्रकारनां सिद्धांतोनो अभ्यास करती साध्वीओना मुखथी सांभळीने अग्यार अंगोनुं अध्ययन कर्युं. अनुक्रमे ते त्रण वर्षनो थयो. तेनी माता त्यां दररोज आवती हती. ते पुत्रने दिव्य रूपवाळो जोइने मोहथी मन विह्वल करी तेने लेवाने आवी. तेणे कह्युं के–'हुं मारो पुत्र लइ जइश.' धनगिरिए कह्युं के–'हुं तेने आपीश नहि, कारणके तमे मने आ बाळक तमारा हाथथीज अर्पण कर्यो छे.' आ प्रमाणे परस्पर वाद थयो. विवाद करती सुनंदा गुरु सहित राजानी कचेरीमां गइ. राजाए कह्युं के–'तमो बंनेने आ पुत्र सरखो छे, माटे बोलाववाथी जेनी पासे जाय तेनो आ पुत्र, एवो न्याय ठीक लागे छे.' ते सांभळीने सुनंदा अनेक सारी सारी

खावानी चीजो, सुखडी, विचित्र प्रकारनां आभरणो अने बाळकना चित्तने रंजित करे एवी वस्तुओ (रमकडांओ) मोढा आगळ मूकीने पुत्रने बोलाववा लागी के-'हे पुत्र! आ ले, आ ले.' परंतु तेणे ए प्रमाणे बोलती मातानी सन्मुख पण जोयुं नहि तेथी ते खिन्न थइ. पछी धनगिरिए कह्युं के-'हे बाळक! अमारी पासे तो आ धर्मध्वज (रजोहरण) छे, जो तने पसंद पडे तो ते ग्रहण कर.' एवुं सांभळी ते बाळक दोडतो गुरु पासे जइ धर्मध्वजने माथे चडावी प्रफुल्लित नेत्र करीने नृत्य करवा लाग्यो. राजाए कह्युं के-'आ पुत्र गुरुनो ज छे.' सर्व लोको ते जोइने आश्चर्य पाम्या के 'अरे! आ त्रण वर्षना बाळकनुं ज्ञान तो जुओ!' पछी सघळा संघना माणसो गुरु सहित उपाश्रये आवीने पोतपोताना स्थाने गया.

अनुक्रमे ते बाळक आठ वर्षनो थयो एटले गुरुए तेने दीक्षा दीधी. पुत्रना मोहथी मुग्ध थयेली सुनंदाए पण चारित्र ग्रहण कर्युं. पछी गुरुए 'आ बाळक योग्य छे' एम जाणी पोताना स्थाने (आचार्यपदे) स्थापित कर्यो. दश पूर्व जाणनार अने उग्र तप करनार एवा वज्रमुनिने पूर्वभवना मित्र कोइ देवे आवीने वैक्रिय लब्धि अने आकाशगामिनी विद्या आपी.

एकदा विद्या आदि अतिशयोथी युक्त श्री वज्रस्वामी पाटलीपुत्र नगर (पटणा)-मां समवसर्या. वांदवाने माटे नगरना लोको आव्या. वज्रस्वामीए पण विद्याना बळथी पोतानुं रूप विशेष करीने धर्मदेशना आपी. ते देशनावडे लोकोनां चित्त बहु आकर्षायां अने परस्पर बोलवा लाग्या के-'अहो! आ गुरुमहाराजनो रूपने अनुसरतोज वाणीविलास छे!' पछी देशनानी समाप्ति थये सर्व लोको स्वस्थाने गया अने ते दिवस व्यतीत थयो.

हवे ते नगरमां धनावह नामनो एक शेठ वसे छे. तेने रुक्मिणी नामे पर्णी रूपवती पुत्री छे. तेणे एक दिवस कोइ आर्याना मुखथी वज्रस्वामीना गुणो सांभळ्या हता, अने आर्या पण रुक्मिणीनी पासे वारंवार वज्रस्वामीना गुणोनुं कथन करती हती. तेथी तेना रूप, लावण्य, विद्या विगेरे अतिशयोथी मोहित थइने रुक्मिणीए प्रतिज्ञा करी के-'वज्रस्वामी शिवाय अन्यने हुं परणीश नहि.' तेणे पोताना पिताने पण कह्युं के-'हुं वज्रस्वामी शिवाय अन्यने वरवानी नथी.' आ प्रमाणे केटलोक काळ व्यतीत थया पछी वज्रस्वामीनुं आगमन सांभळीने धनावह शेठ पुत्री उपरना स्नेहने लीधे बीजे दिवसे अनेक कोटि रत्नो सहित देवांगनाओना करतां पण वधारे सुंदर एवी अने अलंकृत करेली पोतानी पुत्रीने लइने भगवान् वज्रस्वामी पासे आव्या. शेठ

हाथ जोडी बोल्या के–'हे भगवन् ! प्राणथी पण अधिक वहाली एवी आ मारी कन्यानुं रत्नराशि सहित पाणिग्रहण करवा कृपा करो.' भगवान् वज्रस्वामीए कह्युं के "हे भद्र ! आ कन्या मुग्ध छे. ते कंइ पण समजती नथी. अमे तो मुक्तिरूपी कन्याना आलिंगनमां उद्युक्त होवाथी अशुचिथी भरेली एवी स्त्रीओमां रति पामता नथी. स्त्रीनुं शरीर मळमूत्रनी खाण छे. तेने स्पर्श करवो ए पण अनर्थकारी छे." कह्युं छे के–

वरं ज्वलदयस्तंभःपरिरंभो विधीयते ।
न पुनर्नरकद्वाररामाजघनसेवनम् ॥

"प्रज्वलित लोढाना थांभलाने आलिंगन करवुं ए वधारे सारुं छे, पण नरकना द्वाररूप स्त्रीना जघननुं सेवन करवुं सारुं नथी." माटे आ मोहना निवासरूप स्त्रीनो देह प्राणीओने पाशरूपज छे. कह्युं छे के—

आवर्त्तः संशयानामविनयभवनं पत्तनं साहसानां
दोषाणां सन्निधानं कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम् ।
स्वर्गद्वारस्य विघ्नं नरकपुरमुखं सर्वमायाकरंडं
स्त्रीयंत्रं केन सृष्टं विषममृतमयं प्राणिनामेकपाशः ॥

"संशयोनुं वमळ, अविनयनुं घर, साहसनुं नगर, दोषोनो भंडार, हजारो कपटथी भरेलुं, अविश्वासनुं क्षेत्र, स्वर्गद्वारनुं विघ्न, नरकपुरनो दरवाजो, सर्व प्रकारनी मायानो कंडीयो–एवुं आ स्त्रीरूप यंत्र कोणे सर्ज्युं हशे ? के जे प्राणीओने विषमय छतां अमृतमय देखातुं पाशरूप छे." माटे ब्रह्मचारीओने स्त्रीनो संगज करवो योग्य नथी अने तेनां अंगोपांग पण जोवां योग्य नथी. वळी–

स्नेहं मनोभवकृतं जनयंति भाव
नाभीभुजस्तनविभूषणदर्शितानि ।
वस्त्राणि संयमनकेसविमोक्षणानि
भ्रूक्षेपकंपितकटाक्षनिरीक्षणानि ॥

"स्त्री कामदेवथी उत्पन्न थयेला स्नेहने पेदा करेछे, हावभावथी भुजा, स्तन, विभूषण, वस्त्र अने छुटा करेला केश देखाडेछे, तेमज भ्रगुटीना आक्षेपथी कंपित कटाक्ष

पूर्वक जुअेछे." विषथी पण अधिक विषम एवा आ विषयोनुं वर्णन करवाथी पण सर्युं, वळी मानस सरोवर उपर प्राप्त थयेलो, बंने पक्षथी शुद्ध, सुमति हंसीथी युक्त निर्मळ ध्यानरूप मुक्ताफळमां आसक्त, जड अने चैतन्यना तफावतने जाणनार अने भाव अने विभावनुं प्रथक्करण करनार एवा राजहंस तुल्य आत्माने रुधिर, मज्जा ने चरबी वडे पूर्ण एवा अपवित्र स्त्रीना देहरूपी कूपमां वसवुं उचित नथी, तेथी आ विवेक रहित जनोने योग्य एवी कथाथी पण सर्युं. हे श्रेष्ठी ! जो मारा उपर तारी आ कन्यानो खरो प्रेम होय तो ते पोतानो अर्थ साधवा वडे मारा चित्तने भले आनंदित करे. ए प्रमाणेनां श्रीवज्रस्वामीनां वचन सांभळीने ज्ञानरूपी दीपक जेने प्रदीप्त थयोछे, स्वभाव अने विभावनुं स्वरूप जेणे जाणेलुंछे अने अति हर्षथी अश्रुजळ जेनां नेत्रमांथी स्रवे छे एवी रूक्मिणीए हाथ जोडीने कह्युं के 'हे स्वामी! आपनां कहेलां वचन प्रमाणे वर्तवाथी पण हुं कृतार्थ छुं.' पछी धन सार्थवाहे तेने आज्ञा आपी एटले तेणे वज्रस्वामीनी पासे दीक्षा ग्रहण करी अने सम्यक् प्रकारे चारित्र पाळीने स्वर्गे गइ.

दश पूर्वने धारण करनार वज्रस्वामी अनेक भव्य जीवोनो उपदेश देवावडे उद्धार करी आठ वर्ष गृहस्थपणामां रही, चुंमाळीश वर्ष गुरुसेवामां काढी, छत्रीश वर्ष युगप्रधानपणे विचरी अट्ठाशी वर्षनुं आयुष्य पूर्ण करी श्री महावीर स्वामीना निर्वाणथी पांचसो चोराशी वर्ष व्यतीत थयां पछी देवपणाने प्राप्त थया.

आनुंज नाम धर्म कहेवाय के जेमां आटला बधा प्रभाववाळामां पण आवा प्रकारनी निर्लोभता होयछे. अन्य जनोए पण वज्रस्वामीनी पेठे निर्लोभी थवुं एवो आ कथानो उपनय छे.

इति वज्रस्वामी कथा १६.

अंतेउर पुरबल वाहणेहिं, वरसिरिघरेहिं मुनिवसहा ।
कामेहिं बहुविहेहिय, छंदिज्जंता वि नेच्छंति ॥ ४९ ॥

" रमणिक स्त्रीओ, नगरो, चतुरंगिणी सेना अने हस्ति अश्वादि वाहनोए करीने, वरश्रीगृह एटले प्रधान द्रव्य भंडारे करीने अने बहु प्रकारना काम जे पांच इंद्रियोना विषयो तेणे करीने निमंत्रित कर्या छतां पण मुनिवृषभो (मुनिश्रेष्ठो) तेने इच्छता नथी." ४९. एओ पोताना चारित्रधर्मनेज इच्छेछे.

छेओ भेओ वसणं आयास किलेस भयं विवागो अ ॥
मरणं धम्मभ्भंसो अरई अत्थाओ सव्वाइं ॥ ५० ॥

गाथा ४९–मुणिवसभा. बहुविहेहिं गाथा ५०–विवाद कलह । अथ्थाट.

" छेदन, भेदन, व्यसन ते कष्ट, आयास ते प्रयास, क्लेश, भय अने विवाद ते कलह, मरण, धर्मभ्रंश अने अरति आ सर्व (अर्थथी) द्रव्यथी प्राप्त थायछे. ए कारण माटे अर्थ अनर्थोनुं मूळ छे." ५०

कान विगेरे कपावां ते छेदन, तरवार विगेरेथी भेदावुं ते अथवा स्वजनादिक साथे चित्तमां भेद पडवो ते भेदन, व्यसन ते अनेक प्रकारनी आपत्ति, आयास ते द्रव्योपार्जन माटे पोताथी करातो शरीरनो क्लेश, भय ते त्रास ते परिग्रहथीज उत्पन्न थाय छे, द्रव्यने ज भय होयछे, विवाद ते परस्पर कलह द्रव्यना कारणथी उत्पन्न थायछे, मरण ते प्राणत्याग, धर्मभ्रंश ते ज्ञान चारित्ररूप धर्मथी पतित थवुं अथवा सदाचारनो लोप थवो ते अने अरति ते चित्तोद्वेग,आ सर्व द्रव्यना कारणथीज उत्पन्न थायछे. माटे द्रव्य सर्वथा त्याज्य छे.

दोससयमूल जालं, पुव्वरिसिविवज्जियं जइ वंतं ॥
अत्थं वहसि अणत्थं, कीस अणत्थं तवं चरसि ॥ ५१॥

" हे मुनि ! जो सैंकडो दोषोनुं मूळ कारण, मत्स्यबंधनभूत जाळनी जेवुं कर्मबंधनुं हेतुभूत होवाथी जाळ, पूर्व मुनिओए विशेष प्रकारे वर्जेलुं, दीक्षा ग्रहण करती वखते वमेलुं—तजेलुं अने नरकपातादि अनर्थनुं कारण होवाथी अनर्थरूप एवुं अर्थ जे द्रव्य तेने वहन करेछे, राखेछे तो पछी शामाटे फोगट तप विगेरे कष्ट करेछे?" ५१ अर्थात् जो द्रव्य पासे राखेछे तो पछी तपानुष्ठानादि निष्फळ छे; माटे साधुने तो परिग्रहनो सर्वथा त्याग एज श्रेष्ठ छे. अहीं पूर्व मुनि महाराजाओए एटले वज्रस्वाम्यादिके वर्जेलुं तजेलुं कह्युं एटला उपरथी आधुनिक समयना कर्मकालादि दोषथी अर्थनुं वहन करवामां तत्पर थयेलाओनुं विवेकीओए आलंबन न लेवुं; आलंबन तो पूर्वपुरुषोनुंज लेवुं.

वह बंध मारण सेहणाओ, काओ परिग्गहे नत्थि ।
तं जइ परिग्गहुच्चिय, जइधम्मो तो णणु पवंचो ॥ ५२ ॥

"वध, बंधन, मारण अने कदर्थनाओ विगेरे परिग्रह मेळववामां शुं नथी जो बधुं छे तो एम जाण्या छतां पण परिग्रह राखवामां आवे तो पछी निश्चये यतिधर्म ते प्रपंच—विडंबना मात्रज छे अर्थात् द्रव्य राखवुं ने यतिपणुं बतावबुं ते निःकेवळ ठगाइ छे." ५२

विज्जाहरीहिं सहरिसं, नरिंददुहियाहिं अहमहंतीहिं ॥
जं पत्थिज्जइ तइया, वसुदेवो तं तवस्स फलं ॥ ५३ ॥

गाथा ५१—वांतं त्यक्तं. गाथा ५२—सेहणा कदर्थना, पवंचो, पपञ्चो.

गाथा ५३—नरिंददुहियाहिं, अहमहमिकया.

"हर्ष सहित विद्याधरीओए अने एक बीजानी स्पर्धावडे राजपुत्रीओए ते अवसरे वसुदेव कुमारनी (पाणिग्रहण निमित्ते) जे प्रार्थना करी ते तेणे पूर्व भवे करेला (वैयावच्चरूप अभ्यंतर) तपनुं फल जाणवुं. ते कारण माटे परिग्रहने तजी दइने बाह्य अभ्यंतर तप करवो तेज श्रेष्ठ छे". ५३

किं आसि नंदिसेणस्स, कुलं जं हरिकुलस्स विउलस्स ।
आसी पियामहो सुचरिएण वसुदेवनामुत्ति ॥ ५४ ॥

"शुं नंदिषेणनुं कुळ हतुं ? नहोतुं, ते तो दरिद्री तुच्छ कुळवाळा ब्राह्मण हता. परंतु ते सदनुष्ठानथी विशाळ एवा हरिवंश कुळना यादवोना वसुदेव नामे पितामह थया ते कारण माटे कुळथी शुं ? सदनुष्ठान ज आचरवा योग्य छे." ५४

अहीं नंदीषेणनुं दृष्टांत जाणवुं. १७

नंदिषेणनी कथा.

मगध देशमां नंदि नामना गाममां चक्रधर नामे चक्रने धारण करनार एक दरिद्री विप्र रहेतो हतो. तेने सोमिला नामे स्त्री हती. तेने नंदिषेण नामे पुत्र थयो. ते पुत्रनो जन्म थतांज तेना मातापिता मरण पाम्या. तेथी तेना मामाए तेने पोताने घेर लावी मोटो कर्यो. परंतु युवावस्थामां पण ते कद्रूपो, मोटा माथावाळो, मोटा पेटवाळो, वांका नाकवाळो, ठींगणो, विकृत नेत्रवाळो, तुटेला कानवाळो, पीळा केशवाळो, पगे लंगडो, पीठ उपर व्रणवाळो, दौर्भाग्यनुं निधान अने स्त्रीओने अप्रीतिपात्र थयो. ते बाळक मामाने घेर चाकरनुं काम करतो हतो ते जोइ लोकोए तेने कह्युं के-'अरे! निर्भाग्य शिरोमणि ! तुं पर घरे दासत्व शामाटे करेछे ? विदेश जइ, पैसो मेळवीने स्त्री परण. लोकोक्ति पण एवी छे के 'स्थानांतरितानि भाग्यानि' पुरुषनुं प्रारब्ध स्थानांतरित होयछे एटले ते स्थानने फेरफार करवाथी प्रगट थाय छे.' आ प्रमाणेनां लोकोनां वचन सांभळीने अन्य स्थाने जवाने उत्सुक थयेला भाणेजने तेना मामाए कह्युं के--'तुं परदेश शामाटे जाय छे ? मारा घरनी अंदर सात पुत्रीओ छे. तेमांनी एकनी साथे तारो विवाह करीश, माटे अहींज मारा घरमां रहे.' ते सांभळी नंदिषेण तेना मामाने घेरज रह्यो अने पूर्ववत् काम करवा लाग्यो. एक दिवस नांदिषेणने तेना मामाए पोतानी साते कन्याने बताव्यो अने तेने पसंद करवानुं कह्युं. साते कन्याओए कह्युं के--'हे तात ! अमे आत्महत्या करशुं पण नांदिषेणने वरशुं नहि.' आ प्रमाणेनां वचनो सांभळीने नंदिषेण मनमां विचार करवा लाग्यो के 'अरे ! आमां मारां कर्मनोज दोष छे, एनो कांइ दोष नथी. करेलां कर्म भोगव्या विना क्षय पामतां नथी.' कह्युं छे के-

---

गाथा ५४ वसुदेवो नामुत्ति.

कर्मणो हि प्रधानत्वं, किं कुर्वन्ति शुभा ग्रहाः ।
वसिष्ठदत्तलग्नोऽपि, रामः प्रव्रजितो वने ॥

" कर्मनुंज प्रधानत्व छे, तेमां शुभ ग्रहो पण शुं करे ? रामने गादीए बेसवाने माटे वशिष्ठ मुनिए मुहूर्त्त आपेलुं हतुं छतां पण ते मुहूर्त्ते तेने वनमां जवुं पड्युं."

आ प्रमाणे विचारी दुःखगर्भित वैराग्यवडे ते मामाना घरमांथी नीकळी फरतो फरतो रत्नपुर नगरे गयो. त्यां उपवनना कोइ एक भागमां वस्त्ररहित थइ क्रीडा करतुं कामरसथी उन्मत्त थयेलुं, परस्पर गाढ आलिंगनथी जोडायेलुं स्त्रीपुरुषनुं जोडुं जोइ नंदिषेण मनमां बहुज खिन्न थयो अने आत्महत्या करवा माटे वनमां गयो. त्यां तेने सुस्थित नामना मुनि मळ्या. मुनिए कह्युं के–'हे मुग्ध ! आवा अज्ञान मृत्युथी तने शो लाभ थवानो छे ? पूर्वे अनंतीवार विषयादिकना सेवनथी कोइ पण प्रकारनी सिद्धि थइ नथी; माटे कांइक धर्मकार्य कर के जेथी कार्यसिद्धि थाय. आ सर्पनी फण जेवा भयंकर अने परिणामे अति कटु एवा विषयसुखथी शो लाभ छे ? वळी रोगनो भंडार एवुं आ शरीर पण अनित्य छे.' कह्युं छे के—

पणकोडी अडसट्ठी, लक्खा नवनवइ सहस्स पंचसया ।
चुलसी अहिआ निरए, अपइट्ठाणंमि वाहिओ ॥

" सातमी नरकना अप्रतिष्ठान नामना नरकावासमां पांच क्रोड अडसठ लाख नवाणुं हजार पांचसें ने चोराशी व्याधिओ छे[1]. "

तेथी आ अनित्य देहवडे सारभूत एवा धर्मने अंगीकार कर. कारणके आ मनुष्यभव अत्यंत दुर्लभ छे अने ते धर्म विना व्यर्थ छे. कह्युं छे के–

संसारे मानुष्यं सारं, मानुष्ये च कौलिन्यम् ।
कौलिन्ये धर्मित्वं, धर्मित्वे चापि सदयत्वम् ॥

" संसारमां मनुष्यजन्म साररूप छे, मनुष्यजन्ममां कुलिनपणुं साररूप छे, कुलिनपणामां धर्म पाळवो ए साररूप छे अने धर्म पाळवामां पण दयायुक्त थवुं ए सारभूत छे. "

---

१ आ प्रमाणेना व्याधि सत्तागत सर्व शरीरमां रहेला होय छे. फक्त सातमी नरकना नारकीने विपाकोदये वर्तेछे अने अन्य जीवोने विपाकमां वर्तता नथी, परतु मनुष्यशरीरना साडात्रण क्रोड रोमराय कहेवायछे तेनी साथे संबंध करता एकेक रोमराये पोणाबबे व्याधिओ गणी शकाय छे.

आ प्रमाणेनी गुरुमहाराजनी अमृत तुल्य देशना सांभळीने विषयतापथी निवृत्त थइ तेणे गुरु पासे दीक्षा लीधी, अने उग्रविहारीपणे गुरुनी सेवा करतां विचरवा लाग्या. तेओ छट्ठ छट्ठने अंते पारणुं करवा लाग्या अने अत्यंत वैराग्यथी मनने पूर्ण करी 'दररोज मारे पांचशें साधुओनी वैयावच्च करवी' एवो नियम ग्रहण कर्यो. साधुनी वैयावच्चनुं मोटुं पुण्य छे. कह्युं छे के–

वेयावच्चं निययं, करेह उत्तमगुणे धरंताणं ।
सव्वं किर पडिवाई, वेयावच्चं अप्पडिवाई ॥

"उत्तम गुण धारण करनाराओनी वैयावच्च निरंतर कर. कारणके सर्व गुण प्रतिपाति छे अने वैयावच्च गुण अप्रतिपाति छे."

आ प्रमाणे विचारीने नंदिषेण मुनि गाममां आहार पाणी वहोरी लावी पछी पोते साधुओने अर्पण करीने पारणुं करे छे. आ कारणथी संघनी अंदर तेनी घणी प्रशंसा थइ. एक दिवस सौधर्म इंद्रे नंदिषेणना नियमनी प्रशंसा करी, तेने नहि सर्दहता बे देवो नंदिषेणना नियमनी परीक्षा करवाने माटे रत्नपुरे आव्या. एक देव नगर बहार उद्यानमां ग्लान मुनिनुं रूप धारण करीने रह्यो, अने बीजो देव मुनिने रूपे नगरनी अंदर ज्यां नंदिषेण मुनि छट्ठनुं पारणुं करवा बेसेछे त्यां आव्यो. जेवामां पहेलो ग्रास (कोळीओ) मुखमां मुकेछे तेवामां पेलो साधुवेषवाळो देव त्यां आवीने बोल्यो के–'अरे! नंदिषेण! मारा गुरु नगरनी बहार उद्यानमां अतिसारना रोगथी पीडा पामेछे अने तुं वैयावच्च करनार कहेवाय छे छतां निश्चिंतपणे भोजन करवा केम बेठोछे?' तेवां वचन सांभळतांज हाथमां लीधेलो ग्रास छोडी दइ आहार उपर वस्त्र ढांकीने ते साधु साथे नंदिषेण मुनि बहार चाल्या. साधुदेवे कह्युं के 'अरे! प्रथम देहशुद्धि करवाने माटे तुं जळ लइ ले.' एटले नंदिषेण जळ व्होरवा चाल्या. परंतु ते ज्यां ज्यां जायछे त्यां त्यां अशुद्ध जळ मळेछे तोपण ते खिन्न थता नथी. ए प्रमाणे आखा नगरमां बेवार फरतां छतां देवना उपरोधथी तेने शुद्ध जळ मळ्युं नहि. त्रीजी वार जळ लेवा फरतां लाभांतराय कर्मना क्षयोपशमनी प्रबळता थवाथी अने तपलब्धिथी देवे करेलो उपरोध निवृत्त थतां शुद्ध जळ मळ्युं, ते जळ लइने देवमुनिनी साथे वननी अंदर ग्लान मुनि पासे आव्या. ग्लान मुनिए नंदिषेणने घणां कर्कश वचनो कह्यां, परंतु नंदिषेण पोतानोज दोष जुएछे. मननी अंदर जराए क्रोधथी कलुषित थता नथी. तेणे कह्युं के 'हे ग्लान मुनि! मारो अपराध क्षमा करो.' एटलुं बोली तेनुं शरीर जळवडे साफ करी कह्युं के 'हे स्वामी! आप उपाश्रये पधारो, जेथी औषध करवा

वडे समाधि पमाडी शकाय.' देवरूप साधुए कह्यु के–' हे नंदिषेण! मारा शरीरमां चालवानी शक्ति नथी तेथी हुं केवी रीते आवुं ?' त्यारे नंदिषेण ग्लान मुनिने पोतानी खांध उपर बेसाडीने चाल्या. मार्गमां तेणे तेना उपर अति दुर्गंधवाळी अशुचि करी; अने ' अरे नंदिषेण ! तने धिक्कार छे। कारणके तुं उतावळो उतावळो चाले छे, तेथी मने बहु कष्ट थायछे.' इत्यादि कटु वाक्यथी तेनी बहु तर्जना करे छे, परंतु नंदिषेण तो तीव्रतर शुभ परिणामवाळा थया सता चिंतवेछे के ' आ महात्मा केवी रीते स्वस्थ (निरोगी) थशे?' आम विचारीने ते बोल्या के–' अरे ग्लान मुनि ! मारुं दुष्कृत्य मिथ्या थाओ. हवे हुं तमने सारी रीते लइ जइश' एम बोलता आगळ चालवा लाग्या. पछी देवे विचार कर्यो के ' अहो ! आ मुनिने धन्यछे! के में तेने अत्यंत खेद पमाड्या छतां ते जरा पण चालित थया नहि. माटे इंद्रनुं वचन सत्य छे.' आ प्रमाणे विचार करी देवमायाने संहरी लइ दिव्य रूप धारण करीने बोल्यो के– ' हे स्वामी ! इंद्रे जेवी रीते तमारुं वर्णन कर्युं हतुं तेवुंज में जोयुं. पवित्र आत्मावाळा तमने धन्य छे ! तमेज क्रोधने जीत्योछे. मारो अपराध क्षमा करो.' आ प्रमाणे वारंवार कही नंदिषेण मुनिना पगमां पडी ते देव पोताने स्थाने गयो.

गोशीर्षचंदनथी जेना शरीर उपर लेप करायेलो छे एवा नंदिषेण मुनि पोताने स्थाने आव्या. पछी घणा काळ सुधी वैयावच्च करी नाना प्रकारना अभिग्रहोने पाळतां दुष्कर तप कर्युं. बार हजार वर्ष पर्यंत चारित्रधर्म पाळी प्रांत समये संलेखना करीने दर्भना संथारा उपर बेसी चतुर्विध आहारनो त्याग कर्यो. हवे ते समये तेवा कोइ प्रकारना कर्मनो उदय थवाथी पोतानुं संसारीपणानुं दुर्भाग्य याद करी नंदिषेण मुनिए एवुं नियाणुं कर्युं के 'आ तपचारित्रादिना प्रभावथी हुं आवता मनुष्यभवमां स्त्रीप्रिय थउं.' ए प्रमाणे निदान करी, मरण पामीने आठमा सहस्रार देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थया.

देवलोकथी च्यवीने नंदिषेणनो जीव सोरीपुर नगरमां अंधकविष्णु राजानी सुभद्रा राणीनी कुक्षिमां समुद्रविजय आदि नव मोटा भाइओ पछी वसुदेव नामे नाना भाइ तरीके जन्म्यो. तेणे पाछला भवमां निदान करेलुं होवाथी ते अति सौंदर्यवान, सुभग अने लोकप्रिय थयो. ते निश्चितपणे नगरमां स्वेच्छाए फरेछे. तेनुं रूप जोइ मोह पामेली नगरवासी स्त्रीओ घरकाम छोडी तेनी पाछळ भम्या करे छे. लाजवाळी कुळवान स्त्रीओ पण पोतानो धर्म तजी देछे. आ प्रमाणे स्त्रीओनुं व्याकुळपणुं जाणी आकुळ थयेला नगरवासी लोकोए समुद्रविजय पासे आवी अरज करी के " स्वामिन् ! आ

वसुदेवने घरनी अंदरज राखवा जोइए. कारणके तेना रूपथी मोहित थयेली पौरस्त्रीओए कुलाचार आदिनो पण त्याग करेल छे. तेने लीधे कुलांगनाना आचारनी हानि थाय छे, अने आ अनाचारने नहि अटकाववाथी तमारो पण दोष गणाय छे." ए प्रमाणे सांभळीने समुद्रविजये वसुदेवने योग्य रीते शिखामण आपीने महेलनी अंदर राख्या. ते त्यां कलाभ्यास करवा लाग्या.

एक दिवसे उनाळानी ऋतुमां शिवादेवीए गोशीर्षचंदन घसी सोनानुं कचोळुं भरी दासीना हाथे पोताना पति समुद्रविजयने मोकल्युं. मार्गमां वसुदेवे बळात्कारथी लइ तेनुं पोताना शरीर उपर विलेपन कर्युं. तेथी दासीए कह्युं के– अटकचाळा छो तेथीज आवा गुप्तिस्थानमां[1] राखवामां आव्या छे. पछी ते संबंधी बधो व्यतिकर सांभळीने पाछली रात्रे एकाकी नगरनी बहार नीकळी कोइ स्थानेथी एक मृतक लइ आवी दरवाजा पासे तेने बाळीने पछी लख्युं के–'वसुदेव अत्र बळी मुओछे, तेथी हवे नगरना सर्व लोकोए सुखेथी रहेवुं.' आ प्रमाणे लखीने ते नगरमांथी नीकळी गया. प्रातःकाळे समुद्रविजये ते वात सांभळीने अति शोक कर्यो अने विचारवा लाग्या के–' अरे ! आ मानीए दुष्कुलने उचित शुं कर्युं ? पण हवे शुं करीए ? भावि कोइ प्रकारे अन्यथा थतुं नथी.' वसुदेव पण पृथ्वीमां भ्रमण करता सता नवां नवां रूप, नवा नवा वेष ने नवां नवां आचरणोथी भाग्यवशात् हजारो विद्याधरनी कन्याओ अने हजारो राजकन्याओ परण्या. ए प्रमाणे एकसो वीश वर्ष पर्यंत देशाटन करतां तेणे ७२००० स्त्रीओनुं पाणिग्रहण कर्युं. पछी रोहिणीना स्वयंवरमां आवीने कुब्जरूपथी तेने परणी, यादवो साथे युद्ध करी, चमत्कार देखाडी, पोतानुं स्वरूप प्रगट करी समुद्रविजय आदिने आनंद उत्पन्न कर्यो. लोको आश्चर्य पाम्या अने कहेवा लाग्या के "अहो ! आना पूर्व पुण्यनो प्राग्भार तो बहु विशेष जणाय छे." पछी स्वजनोनी साथे वसुदेव सोरीपुर नगरे आव्या अने छेवटे देवक राजानी पुत्री देवकीनुं पाणिग्रहण कर्युं. ते देवकीनी कुक्षिथी श्रीकृष्ण वासुदेव उत्पन्न थया अने तेना पुत्रो शांब, प्रद्युम्न विगेरे थया. आ प्रमाणे वसुदेव हरिवंशना पितामह थया.

आ सघळुं पूर्व भागमां आचरेला वैयावच्च रूप अभ्यंतर ने छठ्ठ अठ्ठमादि बाह्य तपनुं फळ जाणवुं. ए प्रमाणे बीजाओए पण बंने प्रकारनां तपने विषे प्रयत्न करवो.

सपरक्कम राउलवाइएण, सिंसे पलाविए निअए ।
गयसुकुमालेण खमा, तहा कया जह सिवं पत्तो ॥ ५५ ॥

[1] वदीखानामां.

"पराक्रमवाळा अने राजाना बंधु बहु लालनपालन करेला एवा गजसुकमाळ मुनिए पोतानुं मस्तक बळते सते पण एवी क्षमा करी के जेथी तेओ मोक्ष प्रत्ये पाम्या." अहीं गजसुकमाळनुं दृष्टांत जाणवुं. १८.

गजसुकमाळनी कथा.

द्वारिका नगरीमां श्री कृष्ण नामे वासुदेव राजा हता. तेनी माता देवकी नामे हती. त्यां श्री नेमिनाथ जिनेश्वर समवसर्या. देवोए आवीने समवसरण कर्युं. नेमिनाथ भगवाने देशना आपी. सभाजनो पोतपोताना स्थाने जतां भद्दिलपुरमां रहेनारा छ भाइ साधुओ भगवाननी आज्ञा लइ छठ्ठने पारणे बबेना संघाडे त्रण भागे नगरीमां भिक्षा अर्थे नीकळ्या. तेमांना पहेला बे मुनि फरतां फरतां देवकीना मंदिरे आव्या. तेमने जोइने मनमां अति हरखाती देवकीए लाडुवडे प्रतिलाभ्या. तेओना गया पछी बीजा बे मुनि पण त्यांज आव्या. तेमनुं पण देवकीए भाव पूर्वक मोदक वहोरावी सन्मान कर्युं. तेओना गया पछी दैवयोगे त्रीजा बे मुनि पण आव्या. सरखी आकृतिवाळा अने अति उल्लास उत्पन्न करनारा तेमने जोइने देवकी विचार करवा लाग्या के 'आ प्रमाणे एक ने एक ठेकाणे त्रीजीवार आहारमाटे आववुं शुद्ध साधुओने घटतुं नथी; तेथी आनुं शुं कारण हशे ?' ए प्रमाणे विचार करी तेमने पूछ्युं के—"हे महानुभाव! आ द्वारका नगरी बहु विशाळ छे, तेमां श्रावको पण घणा छे; ते छतां वारेवारे अहीं आववानुं प्रयोजन शुं छे? शुं आ नगरीमां आहार मळतो नथी? अथवा शुं साधुओ वधारे छे? के भूलथी आववुं थयुं छे ?" ए प्रमाणे देवकीए पूछवाथी ते साधु बोल्या के—'हे सुश्राविका! अमे छ भाइओ छीए. छठ्ठने पारणे प्रथक् प्रथक् वहोरवा नीकळतां जुदा जुदा तमारे घेर आवेला छीए. अमे एक सरखी आकृतिवाळा होवाथी तमने संशय उत्पन्न थयेलो छे.' ते सांभळी देवकीए विचार कर्यो के "आ छए मुनि सरखी आकृतिवाळा छे अने कृष्ण जेवा देखाय छे. मने पण एओने जोवाथी पुत्रदर्शन तुल्य आनंद थायछे. पूर्वे पण अतिमुक्त मुनिए मने कह्युं हतुं के 'तने आठ पुत्र थशे.' तेथी आ मारा पुत्रो तो नहि होय ?" एवो संदेह तेने थयो. बीजे दिवसे ते नेमीश्वर भगवान पासे गइ अने वांदीने पूछवा लागी के—'हे स्वामिन्! गइ काले छ साधुओना दर्शनथी मने घणो आनंद थयो, तेथी ते उपरना अति स्नेहनुं शुं कारण छे?' भगवाने कह्युं के—"ए छए साधुओ तारा पुत्रो छे. कंसना भयथी हरिणगमेषी देवे तेने जन्मतांज उपाडी तेने बदले सुलसाना मृतक पुत्रो मूकीने भद्दिलपुरमां नागपत्नी सुलसाना घरे तेमने सोंप्या हता. त्यां

तेओ मोटा थया. युवान वय पामतां तेओने बत्रीश बत्रीश कन्याओ परणावी. तेओए मारी देशना सांभळीने वैराग्य प्राप्त थवाथी संसारनो त्याग करी चारित्र ग्रहण कर्युं. तेओ कायम छट्ठनो तप करवा लाग्या. आजे छट्ठने पारणे मारा आदेशथी नगरीमां आहार अर्थे नीकळ्या, अने तमारे घेर पृथक् पृथक् जोडले आव्या. तेमने जोवाथी पुत्रसंबंधने लीधे तमने हर्ष उत्पन्न थयो."

आ प्रमाणे भगवानना वचन सांभळीने देवकी घरे आवी पश्चात्ताप करती सती मनमां विचारवा लागी के 'विकसित मुखवाळा अने कोमळ हाथ पगवाळा पोताना पुत्रने जे रमाडे छे अने खोळामां बेसाडेछे ते स्त्रीने धन्य छे! हुं तो अधन्य अने दुर्भागी छुं; कारणके में मारा एक पुत्रने पण रमाड्यो नथी.' आ प्रमाणे चिंतायुक्त थइने भूमि तरफ दृष्टि राखी रहेला पोतानी माता देवकीने कृष्णे दीठा, एटले तेमणे चिंतानुं कारण पूछ्युं. देवकीए चिंतानुं कारण कही बताव्युं. पछी मातानो मनोरथ पूर्ण करवा माटे अट्ठम तप करीने तेणे देवनुं आराधन कर्युं. देवे आवीने वरदान आप्युं के 'देवकीने पुत्र थशे, पण ते घणा काळ सुधी घरमां रहेशे नहि.' एवुं कही देव स्वस्थाने गयो.

अनुक्रमे सिंहना स्वप्नथी सूचित पुत्र थयो. तेनुं नाम गजसुकमाल राखवामां आव्युं. क्रमे करीने ते आठ वर्षनो थयो. माताना आग्रहथी तेने सोमिल ब्राह्मणनी आठ पुत्री परणावी. पछी नेमीश्वर भगवाननी देशना सांभळी संसारनी असारता जाणी गजसुकमाले चारित्र ग्रहण कर्युं; अने प्रभुनी आज्ञा लइ स्मशानभूमिमां कायोत्सर्ग मुद्राए रह्या.

ते अवसरे फरतां फरतां त्यां आवेला सोमिले तेने जोइने कह्युं के—'आ दुष्टे मारी निरपराधी बाळाओने फोगट परणीने वगोवी.' आ प्रमाणे उत्पन्न थयेल छे द्वेष जेने एवा सोमिले तेना मस्तक उपर माटीनी पाळ बांधीने तेमां धगधगता अंगारा भर्या. अग्निवडे मस्तक बळतां छतां पण गजसुकमाले अपूर्व क्षमा धारण करी अने शुक्ल ध्यानवडे अंतकृत् केवली थइने मोक्षे गया.

बीजे दिवसे श्रीकृष्ण प्रभुने वांदवा आव्या. तेणे प्रभुने पूछ्युं के—'गजसुकमाल क्यां छे?' भगवाने कह्युं के—'तेणे पोतानुं काम साधी लीधुं.' एम कहीने पछी तेनुं सघळुं वृत्तांत कह्युं. कृष्णे कह्युं के—'हे स्वामिन्! आ कुकर्म कोणे कर्युं?' भगवाने कह्युं के—'तने जोइने जेनुं हृदय फाटी जाय ने मृत्यु पामे तेनाथी ए कार्य थयुं छे एम समजजे.' शोकमग्न थयेल कृष्ण नगर तरफ पाछा आवता हता तेवामां तेने सोमिल

सामो मळ्यो. भयथी नासतां तेनुं हृदय फाटी जवाथी ते मरण पामीने ऋषिहत्याना पापथी सातमी नरके गयो.

धैर्यवान गजसुकमाले जे प्रमाणे क्षमा धारण करी ते प्रमाणे अन्य प्राणीओए पण समग्र सिद्धिने देनारी क्षमा धारण करवी एवो आ कथावडे उपदेश छे.

रायकुलेसुवि जाया, भीया जरमरणगब्भवसहीणं ।
साहु सहंति सव्वं, नीयाणवि पेसपेसाणं ॥ ५६ ॥

अर्थ—" राजकुळमां उत्पन्न थएला छतां पण जरा मरण ने गर्भावासनां दुःखथी भय पामेला एवा मुनि पोताना दासना करेला सर्व उपसर्गो पण सहन करे छे." ॥ ५६ ॥

पणमंति य पुव्वयरं, कुलया न नमंति अकुलया पुरिसा ।
पणओ पुव्विं इह जइ—जणस्स जह चक्कवट्टिमुणी ॥ ५७ ॥

अर्थ—" कुळवान पुरुषो प्रथम नमे छे, अकुलीन नमता नथी. अहीं जेम चक्रवर्ती मुनि (पूर्वना) यतिजनने प्रथम नम्या (तेनुं दृष्टांत जाणवुं). ५७. अर्थात् पोते छ खंडनी ऋध्धि छोडीने मुनि थयेला छतां पूर्वना—दीक्षा पर्याये ज्येष्ठ मुनिने चक्रवर्ती मुनि प्रथम नम्या ". ५७.

जह चक्कवट्टीसाहू, सामाइअ साहूण निरुवयारं ।
भणिओ नचेव कुविओ, पणओ बहूअत्तण गुणेणं ॥ ५८ ॥

अर्थ—"जेम चक्रवर्ती साधुने (प्रथम बीजा मुनिओने नमस्कार न करवाथी) सामान्य साधुए निष्टुरपणे तुंकारो करीने कह्युं के (तुं आ ताराथी दीक्षापर्याये मोटा मुनिओने वंदना कर) तथापि ते विलकुल कोपायमान थया नहि अने ज्ञान दर्शन चारित्र गुणवडे श्रेष्ठ—वहुपणावाळा मुनिओने नम्या. " ५८.

अहीं सामान्य साधु ते दीक्षापर्याये लघु समजवा.

ते धन्ना ते साहू, तेसिं नमो जे अकज्ज परिविरया ।
धीरा वयं मसिहारं—चरंति जह थूलिभद्दमुणी ॥ ५९ ॥

गाथा ५६—भीताः त्रस्ताः.साहु.

गाथा ५८—चक्कवट्टि. साहु. साहुणा, साहुण. निरूवयारं.

गाथा ५९—परिवड्डिया. थूलभद्दमुणी.

अर्थ—" ते पुरुष धन्य—कृतपुण्य, ते साधु—सत्पुरुष, ते पुरुषने नमस्कार थाओ के जे अकार्यथी निवृत्त थया छे. एवा धीर पुरुषो जेम थूलिभद्र मुनिए आचर्युं तेम व्रत जे चतुर्थ व्रत ते असिधार सदृश—खड्गनी धार उपर चालवानी जेवुं आचरे छे—पाळे छे."५९. अहीं श्रीस्थूलिभद्रनुं दृष्टांत जाणवुं. १९.

श्री स्थूलिभद्रनुं दृष्टांत.

पाटलीपुरमां नंद नामे राजा हतो.तेने शकडाल नामे नागरब्राह्मण ज्ञातिनो मंत्री हतो. तेने लाच्छलदे नामनी स्त्री हती. तेने स्थूलिभद्र नामे मोटो पुत्र हतो अने बीजो श्रीयक नामे हतो, तथा यक्षा आदि सात पुत्रीओ हती.स्थूलिभद्र युवावस्थामां विनोद करतो सतो एक दिवस मित्रोथी परिवृत्त थइ वन जोवाने गयो. पाछो आवतां तेने कोशा नामनी वेश्याए जोयो. तेना रूपथी मोहित थयेली ते वेश्याए तेने वात करवाना मिषथी खोटी करी चातुर्यगुणथी तेनुं चित्त वश करी लीधुं. स्थूलिभद्र पण तेना गुण ने रूपथी रंजित थइ ते वेश्याने घेर रह्यो; अने तेनी साथे विषयसुख भोगवतो सतो ते नवा नवा विनोद करवा लाग्यो. तेना पिता पण पुष्कळ द्रव्य मोकलवा वडे तेनुं इच्छित पूर्ण करवा लाग्या.ए प्रमाणे त्यां बार वर्ष सुधी रहेला स्थूलिभद्रे साडीबार क्रोड सोनामहोरनो व्यय कर्यो. ते अवसरे वररुचि ब्राह्मणे करेला प्रयोगथी शकडाल मंत्रीनुं मरण थयुं. ते वखते नंद राजाए श्रीयकने प्रधानपद आपवाने माटे बोलाव्यो. त्यारे श्रीयके कह्युं के—' हे स्वामी ! मारो मोटो भाइ कोशा वेश्याने घरे छे, ते प्रधानपदने योग्य छे.' नंदे तेने बोलाववाने सेवको मोकल्या. ते आव्यो. तेने मंत्रीपद आपतां तेणे एकाएक न स्वीकार्युं. राजाए कारण पूछतां स्थूलिभद्रे कह्युं के—'स्वामिन्! विचार करीने ग्रहण करीश.' राजाए विचार करवानी रजा आपी, एटले अशोकवाटिकामां एकांत स्थले जइने विचार करवा लाग्यो के—' आ संसारमां कोइ कोइनुं नथी. सर्व स्वार्थी छे.' कह्युं छे के—

> वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विहगाः शुष्कं सरं सारसाः ।
> पुष्पं पर्युषितं त्यजन्ति मधुपा दग्धं वनांतं मृगाः ॥
> निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका भ्रष्टं नृपं सेवकाः ।
> सर्वः स्वार्थवशाज्जनोभिरमते नो कस्य को वल्लभः ॥

" पक्षीओ फळ विनाना वृक्षनो, सारस पक्षीओ जळ विनाना सरोवरनो, भ्रमरो करमायेलां पुष्पोनो, मृगो बळेला वननो, गणिका निर्धन पुरुषनो अने सेवकलोको

राज्यभ्रष्ट थयेला राजानो त्याग करे छे. माटे सर्व स्वार्थने वश थइने रम्या करे छे. बाकी वास्तविक रीते कोइ कोइने प्रिय नथी." "ज्यारे मारा पिता राज्यनां अनेक कार्यो कर्यां छतां अंते कुमृत्युथी मरण पाम्या तो मने आ राज्यमुद्राथी शुं सुख मळशे. माटे आ अनर्थना कारणभूत राज्यमुद्राने धारण करवी तेने धिक्कार छे! अने आ विषयसुखने पण धिक्कार छे! के जेथी तेने वश थयेला एवा मने पिताना मरणनी पण खबर पडी नहि." ए प्रमाणे विचार करी, वैराग्यपरायण थइ, पंचमुष्टि लोच करी, शासनदेवीए आपेला साधुवेषने धारण करी, राजानी सभामां आवीने तेणे धर्मलाभ आप्यो. आ जोइ सकल सभा आश्चर्य पामी. नंद राजाए पूछ्युं के–'आ शुं कर्युं?' स्थूलिभद्रे कह्युं के–'में सारी रीते विचार्युं अने पछी करवा योग्य लाग्युं ते कर्युं.' एम कही श्री संभूतिविजय आचार्य पासे जइ विधिपूर्वक चारित्र ग्रहण कर्युं.

आ हकीकत सांभळी कोशा अति दुःखित थइ आंखमां अश्रु लावी विरहातुरपणे विविध प्रकारना विलाप करवा लागी के–'हे चतुर चाणाक्य! तमे राज्यमुद्रा तजीने भिक्षुमुद्रा शामाटे अंगीकार करी? हे प्राणनाथ! मारे तमारा विना कोनो आधार छे? हवे हुं शुं करुं? केवी रीते जीवुं?' एवी रीते अनेक प्रकारनां विरहवाक्यो बोलवा लागी.

अहीं स्थूलिभद्रने घणा दिवसो व्यतीत थतां चातुर्मास उपर एक साधुए गुरु पासे आवीने कह्युं के–'सिंहगुफा पासे चातुर्मास करवा इच्छुं छुं.' ए प्रमाणे आज्ञा मागी एटले बीजा मुनिए कह्युं के–'हुं सर्पना बील पासे चातुर्मास करवा इच्छुं छुं.' त्रीजा मुनिए कह्युं के–'हुं कुवानी अंतराळे रहेल लाकडा उपर (भारवट उपर) चातुर्मास करवा इच्छुं छुं.' त्यारे चोथा साधु स्थूलिभद्रे कह्युं के–'हुं कोशा वेश्याना घरमां चातुर्मास करवा इच्छुं छुं.' गुरुए योग्यता जाणीने चारे मुनिने आज्ञा आपी.

स्थूलिभद्र गुरुने नमीने कोशा वेश्याने घेर गया. तेने आवतां जोइ कोशा अति हर्षित थइ अने सामे आवीने पगमां पडी. तेनी आज्ञा लइ स्थूलिभद्र तेनी चित्रशालामां चातुर्मास रह्या. ते हमेशां षट्रसनो आहार करे छे, समय पण वर्षा ऋतुनो छे, निवास चित्रशाळामां छे, प्रीति कोशानी छे, अने परिचय बार वर्षनो छे. वळी नेत्र ने मुखनो विलास, हावभाव, गान, तान, मान, वीणा ने मृदंगना मधुर शब्दो सहित नाट्यविनोद विगेरे नाना प्रकारना विषयोने स्थूलिभद्र आगळ प्रगट करती अने पोतानो हावभाव बतावती कोशा कहे छे के–'हे स्वामिन्! स्वाधीन एवी कामिनीनां कुचस्पर्श अने आलिंगन आदि छोडीने आवुं कठोर तप शामाटे करो छो?' कह्युं छे के–

संदष्टेऽधरपल्लवे सचकितं हस्ताग्रमाधुन्वती ।
मामा मुंच शठेति कोपवचनैरानर्त्तितभ्रूलता ॥
सीत्कारांचितलोचना सरभसं यैश्चुंबितो मानिनी ।
प्राप्तं तैरमृतं श्रमाय मथितो मूढैस्सुरैः सागरः ॥

"अधर पल्लवनो दंश करतां चकित थइने हस्तना अग्र भागने धूणावती, अने 'नहि नहि, हे शठ! छोडी दे' ए प्रमाणे कोपवचन बोलवा साथे भ्रूलताने नचावती तथा सीत्कारथी सत्कार करायेलां जेनां नेत्र छे एवी मानिनीने जुस्साथी जेणे चुंबन करेलुं छे तेओए खरुं अमृत मेळव्युं छे एम हुं मानुं छुं, बाकी मूढ देवताओए तो फोगट श्रमने माटेज समुद्र मथेलो छे." तेथी हे स्थूलिभद्र! आ त्याग साधवानो समय नथी, माटे मारी साथे यथेच्छ विषयसुख भोगवी तेनो स्वाद ल्यो. फरीथी आ मनुष्यजन्म पामवो दुर्लभ छे अने आ यौवन पण दुर्लभ छे. माटे हे स्वामिन्! हमणा तो मारा अंगसंगथी उत्पन्न थयेलुं सुख भोगवो. पाछळथी वृद्धावस्थामां आ तप करवो ते उचित छे." ते सांभळीने स्थूलिभद्र बोल्या–'हे भद्रे! अपवित्र अने मलमूत्रनुं पात्र एवा कामिनीना शरीरने आलिंगन करवाने कोण इच्छे? कह्युं छे के–

स्तनौ मांसग्रंथी कनककलशावित्युपमितौ ।
मुखं श्लेश्मागारं तदपि च शशांकेन तुलितम् ॥
स्रवन्मूत्रक्लिन्नं करिवरशिरःस्पर्द्धिजघनं ।
मुहुर्निंद्यं रूपं कविजनविशेषैर्गुरुकृतम् ॥

"स्तनो मांसनी गांठ छे छतां कविजनोए तेने सोनाना कळशनी उपमा आपीछे, मुख श्लेश्म (कफ) नुं स्थान छे तोपण कविओए तेनी चंद्र साथे सरखामणी करी छे अने स्रवता मूत्रथी व्याप्त एवा जघनने हाथीना गंडस्थलनी साथे सरखाव्युं छे. ए प्रमाणे वारंवार निंदवा लायक स्त्रीना स्वरूपने कविओएज विशेष महत्वता आपी छे." वळी–

वरं ज्वलदयस्तंभः परिरंभो विधीयते ।
न पुनर्नरकद्वाररामाजघनसेवनम् ॥

"तपावेला लोढाना थांभलाने आलिंगन करवुं ए सारुं छे, परंतु नरकना द्वार रूप स्त्रीना जघननुं सेवन करवुं ए सारुं नथी." वळी एक वखतना स्त्रीसंभोगथी अनेक जीवोनो घात थाय छे. कह्युं छे के–

मेहुणसन्नारूढो, नवलक्ख हणेइ सुहुमजीवाणं ।
तित्थयराणं भणियं, सद्दहियव्वं पयत्तेणं ॥

"मैथुनसंज्ञाने विषे आरूढ थयेलो जीव नव लाख सूक्ष्म जीवोने हणेछे एम तीर्थंकर भगवंते कहेलुं छे तेने प्रयत्न पूर्वक सर्दहवुं."

वळी हे कोशा! आ विषयो अनेकवार भोगव्या छतां तेनाथी तृप्ति थती नथी. कह्युं छे के—

अवश्यं यातारश्चिरतरमुषित्वापि विषया ।
वियोगे को भेदस्त्यजति न जनो यत्स्वयममून् ॥
व्रजंतः स्वातंत्र्यादतुलपरितापाय मनसः ।
स्वयं त्यक्त्वा ह्येते शिवसुखमनंतं विदधति ॥

"आ विषयो लांबा वखत सुधी रहीने पण छेवटे जनारा छे ए तो नक्की छे, तो पछी तेना वियोगमां फेर शो छे के जेथी माणसो पोतानी मेळे विषयोने छोडता नथी; केमके जो ए विषयो पोतानी मेळे आपणाथी छुटा पडे छे तो मनने अति परिताप उत्पन्न करे छे, पण जो आपणे पोतेज खुशीथी तेनो त्याग करीए छीए तो ते मोक्षसुख आपे छे." एटलामाटे सर्पनी फण जेवा आ विषयोने छोडी दइ शील रूपी अलंकारथी तारा सुंदर अंगने अलंकृत कर. आ मनुष्यभव फरीथी मळवो मुस्केल छे, अने ते भव धर्म विना हारी जइश. कारणके सर्व कार्योमां उत्तम कार्य धर्म छे. कह्युं छे के—

न धम्मकज्जा परमत्थि कज्जं, न पाणिहिंसा परमं अकज्जं ।
न पेमरागा परमत्थि बंधो, न बोहिलाभा परमत्थि लाभो ॥

"धर्मकार्यथी उत्कृष्ट वीजुं कोइ कार्य नथी, प्राणीनी हिंसा उपरांत वीजुं कोइ अकार्य नथी, प्रेमरागथी विशेष कोइ वंधन नथी अने वोधि (सम्यक्त) ना लाभ उपरांत वीजो कोइ परम लाभ नथी." इत्यादि उपदेश आपीने जेनुं मन वाळेलुं छे एवी कोशा वोली के—'हे कंदर्पनुं विदारण करनार! हे शासननो उद्योत करनार! हे मिथ्यात्वने निवारनार! तमने धन्य छे, तमेज खरेखरुं जीवितनुं फळ मेळव्युं छे. हुं अधन्य छुं, में तमने वहु रीते चळाववा प्रयास कर्यो पण तमे चळ्या नहि. हवे कृपा करीने सम्यक्त्व आपीने मारो उद्धार करो.' आ प्रमाणे कहीने स्थूलिभद्रनी पासे सम्यक्त्वना उच्चार पूर्वक वार व्रत अंगीकार करी ते कोशा परम श्राविका थइ. ते साथे

'राजाए मोकलेल पुरुष शिवाय अन्य पुरुषनो वचनथी पण हुं स्वीकारकरीश नहि' ए प्रमाणे भोग संबंधी पच्चख्खाण लीधुं, तेमज जीव अजीव आदि तत्त्वोनी पण जाणकार थइ.

ए प्रमाणे कोशा वेश्याने प्रतिबोध पमाडी चातुर्मास पूर्ण करी स्थूलिभद्र मुनि श्री संभूति विजयाचार्यनी पासे आव्या. पेला त्रण मुनिओ स्थूलिभद्रनी पहेलां आव्या हता. गुरुए ते त्रणेने 'दुष्कर कार्य कर्युं' ए प्रमाणे एकवार कहीने मान आप्युं हतुं; परंतु स्थूलिभद्र मुनिने 'दुष्कर कार्य कर्युं' एम त्रणवार कही घणा आदर पूर्वक मान आप्युं. ते जोइ सिंह-गुफावासी मुनिना मनमां मत्सर आव्यो के "गुरुनो विवेक तो जुओ के तेओए क्षुधा ने तृषाथी पीडायेला अमोने 'दुष्कर कर्युं' एम मात्र एक वखत कह्युं, अने षट्रसने खानार तथा मोह उपजावे एवा स्थाननी अंदर रहेनारने 'दुष्कर दुष्कर कर्युं' एम त्रण वखत कह्युं." ए प्रमाणे तेणे मनमां मत्सर धारण कर्यो.

हवे एक दिवस नंद राजानी आज्ञाथी कोइ रथकार कोशा वेश्याना मंदिरे आव्यो. तेनी बारीमां रहीने तेणे बाणसंधान विद्याथी आम्रफळनी लुंब त्यां बेठा बेठा आणी पोतानी कळा बतावी, एटले कोशाए पण पोताना आंगणामां सरसवनो ढगलो करावी, तेना उपर सोय मूकी, तेना उपर एक पुष्प मूकीने तेना उपर नृत्य कर्युं. ते जोइ रथकार चमत्कार पामीने बोल्यो के–'आ अति कठिन काम छे.' त्यारे कोशाए कह्युं के–

न दुक्करं अंबयलुंबतोडणं, न दुक्करं सिरसव नच्चिआए ॥
तं दुक्करं तं च महानुभावं, जं सो मुणी पमयवणंमि वुच्छो ॥१॥

"आंबानी लुंब तोडवी ते दुष्कर नहि तेमज सरसव उपर नाचवुं ते पण दुष्कर नहि; दुष्कर तो ए छे के जे ते महानुभाव स्थूलिभद्रे कर्युं अने प्रमदा रुपी वनमां मोह न पामतां शुद्ध रह्या."

गिरौ गुहायां विजने वनान्तरे, वासं श्रयंतो वशिनः सहस्रशः ।
हर्म्येति रम्ये युवतीजनांतिके, वशी स एकः शकडालनंदनः॥२॥

"पर्वतमां, गुफामां, एकांतमां अने वननी अंदर निवास करीने इंद्रियोने वश राखनारा हजारो छे, पण अति रम्य हवेलीमां अने स्त्रीजननी समीपमां रहीने इंद्रियोने वश राखनार तो ते शकडालनंदन एकज छे."

योऽग्नौ प्रविष्टोऽपि हि नैव दग्धश्छिन्नो न खड्गाग्रकृतप्रचारः ।
कृष्णाहिरंध्रेऽप्युषितो न दृष्टो नोक्तोंजनागारनिवास्यहो यः ॥३ ॥

" जे अग्निमां प्रवेश कर्या छतां पण बळेल नथी, खड्गनी धार उपर गति करतां छतां छेदायल नथी, काळा सर्पना दर पासे वास करतां छतां जेने दंश थयो नथी अने अंजनना घरमां वास कर्या छतां पण जेने डाघ लाग्यो नथी एवा तो ते स्थूलिभद्र एकज छे. "

वेश्या रागवती सदा तदनुगा षड्भीरसैर्भोजनम्
शुभ्रं धाम मनोहरं वपुरहो नव्यो वयःसंगमः ।
कालोयं जलदाविलस्तदपि यः कामं जिगायादरात्
तं वंदे युवतिप्रबोधकुशलं श्रीस्थूलिभद्रं मुनिम् ॥ ४ ॥

" पूर्वनी प्रीतिवाळी वेश्या अने ते पण सर्वदा अनुकूळ वर्तनारी, षट्रसयुक्त भोजन, सुंदर महेल, मनोहर शरीर, युवावस्था अने वर्षाऋतु—आटलां वानांनो योग छतां पण जेणे आदरथी कामने जीत्यो एवा युवतिजनने प्रतिबोध पमाडवामां कुशल स्थूलिभद्र मुनिने हुं वंदुं छुं."

रे काम वामनयना तव मुख्यमस्त्रं
वीरा वसंतपिकपंचमचंद्रमुख्याः ।
त्वत्सेवका हरिविरंचिमहेश्वराद्या
हा हा हताश मुनिनापि कथं हतस्त्वम् ॥ ५ ॥

" हे काम ! वामनयना तारुं मुख्य अस्त्र छे, वसंतऋतु, कोकिल, पंचम स्वर अने चंद्र विगेरे तारा सुभटो छे, अने ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वरादि तारा सेवको छे, छतां दिलगीरीनी वात छे के हे भग्नाश ! तुं एक मुनिथी केवी रीते हणायो ?"

श्रीनंदीषेणरथनेमिमुनीश्वराद्रै
बुद्ध्या त्वया मदन रे मुनिरेष दृष्टः ।
ज्ञातं न नेमिमुनिजंबूसुदर्शनानाम्
तुर्यो भविष्यति निहत्य रणांगणे माम् ॥ ६ ॥

"हे कामदेव! तें नंदीषेण, रथनेमि अने आर्द्रकुमार मुनीश्वरनी बुद्धिथी आ स्थूलिभद्र मुनिने जोयेला के ते त्रणनी साथे आ चोथा थशे; पण तें एम न जाण्युं के आ तो रणांगणमां मने हणीने नेमिनाथ, जंबूमुनि ने सुदर्शन शेठ ए त्रणनी साथे चोथा थशे?"

श्रीनेमितोपि शकडालसुतं विचार्य
मन्यामहे वयमसुं भटमेकमेव ।
देवोऽद्रिदुर्गमधिरुह्य जिगाय मोहं
यन्मोहनालयमयं तु वशी प्रविश्य ॥ ७ ॥

"श्री नेमिनाथथी पण विचार करतां अमे तो स्थूलिभद्रनेज एक महान योधो गणीए छीए; कारणके श्री नेमिनाथे तो गिरनार दुर्गनो आश्रय करीने मोहने जीत्योछे, पण इंद्रियोने वश राखनार आ स्थूलिभद्रे तो मोहना घरमां प्रवेश करीने तेने जीती लीधोछे."

आ प्रमाणे स्तुति करीने कोशाए स्थूलिभद्र मुनिनुं बधुं स्वरूप रथकारने कही बताव्युं के बार वर्षनो मारी साथे पूर्व परिचय छतां मारा घरमां आवीने किंचित्मात्र पण चलित थया नहि; माटे खरेखरा तो तेज दुष्कर कार्यना करनारा छे. कह्युं छे के—

पुप्फफलाणं च रसं, सुराई महिलयाणं च ॥
जाणंतो जे विरइया, ते दुक्करकारए वंदे ॥

"पुष्प फलादिकनो रस, मदिरा विगेरेनो स्वाद अने स्त्रीओनो विलास, तेने जाणतां छतां अर्थात् जाणीने पण जे विरम्या तेज दुष्करकारक छे तेने हुं नमस्कार करुं छुं."

इत्यादि स्थूलिभद्रनां स्तुतिवचनोथी प्रतिबोध पामेला रथकारे स्थूलिभद्र मुनि पासे जइने चारित्र लीधुं. स्थूलिभद्र मुनि पण अनुक्रमे अर्थ सहित दश पूर्वनुं अने सूत्र मात्रथी बाकीना चार पूर्वनुं अध्ययन करी, चतुर्दश पूर्वीमां छेल्ला थइ, घणा भव्य जीवोने प्रतिबोध पमाडी, पोतानी निर्मळ कीर्तिथी आखा जगतने उज्वल करी अने सर्व जनोमां प्रसिद्धि पामी, त्रीश वर्ष घरमां, चोवीश वर्ष व्रतमां अने पीस्ताळीश वर्ष युग प्रधान-पणामां—ए प्रमाणे नवाणुं वर्षनुं आयुष्य पाळीने महावीर स्वामीथी बसो पंदरमा वर्षे स्वर्गे गया.

ए प्रमाणे जेम स्थूलिभद्रे दुर्धर व्रतने धारण करी चोराशी चोवीशी सुधी पोतानुं नाम राख्युं तेम अन्य मुनिओए पण गुरुनी आज्ञाने अनुसरी ग्रहण करेला व्रतने पाळीने कीर्तिवंत थवुं.

विसयासिपंजरमिव, लोए असिपंजरंमि तिख्खंमि ॥
सिंहा व पंजरगया, वसंति तवपंजरे साहू ॥ ६० ॥

अर्थ—" लोकने विषे जेम तीक्ष्ण खड्गना पंजरथी भय पामेल सिंह काष्ठना पांजरामां वसे छे तेम विषय रूप खड्गपंजरथी भय पामेला मुनिओ तप रूप पंजरमां वसे छे, अर्थात् वार प्रकारनो तप आचरे छे." ६०

विषय पांच इंद्रियोना शब्दादि जाणवा. तद्रुप पंजरथी अथवा तत्तुल्य जे स्त्रीलोक तेथी भय पामेला मुनिओ संसार तजी दइ चारित्र अंगीकार करीने बाह्य अभ्यंतर तपने आचरे छे, एटले तप रूप पंजरमां वसे छे.

जो कुणइ अप्पमाणं, गुरुवयणं नय लहेइ उवएसं ।
सो पच्छा तह सोअइ उवकोसघरे जह तवस्सी ॥ ६१ ॥

अर्थ—" जे प्राणी आत्ममान करे छे अर्थात् पोताना गुणनुं अभिमान करे छे अने गुरुना वचनने—उपदेशने—आज्ञाने अंगीकार करतो नथी ते प्राणी पाछळथी एवो शोक करे छे के जेवो उपकोशाने घरे गयेला तपस्वी मुनिए कर्यो." ६१

' अहीं जे गुरुना वचनने अप्रमाण करे छे ' एम कह्युं छे त्यां ' जे गुरुना उपदेशने मानतो नथी—आज्ञाने मानतो नथी ' एवो अर्थ पण थाय छे.

स्थूलिभद्रजीनी ईर्ष्याथी कोशा वेश्यानी व्हेन उपकोशा वेश्याने घरे गयेला सिंहगुफावासी मुनि जे चातुर्मासमां चारे मासना उपवास करीने सिंहनी गुफाने मुखे कायोत्सर्गे रहेता हता तेमनुं दृष्टांत अहीं जाणवुं. २०

सिंहगुफावासी मुनिनुं दृष्टांत.

एक दिवस पाडलीपुरमां श्री संभूतिविजय आचार्यना सिंहगुफावासी शिष्ये स्थूलिभद्र उपर ईर्ष्या करी वीजुं चातुर्मास कोशा वेश्यानी वेन उपकोशा वेश्याने घेर करवानी गुरु पासे आज्ञा मागी. गुरुए अयोग्यता जाणी आज्ञा आपी नहि. गुरुए कह्युं के—

गाथा ६०—सिहा. गाथा ६१—नयलएइ. न लहेइ.

' हे महानुभाव ! त्यां तमारुं चारित्र रहेशे नहि.' ए प्रमाणे गुरुए वार्या छतां पण ते त्यां गया अने चातुर्मास निवासने माटे याचना करी; ते साथे कह्युं के 'जेवुं स्थूलिभद्रने रहेवा आप्युं हतुं तेवुं स्थान मने रहेवा आपो.' तेणे ते आप्युं. पाछळथी उपकोशाए जाण्युं के 'आ मुनि स्थूलिभद्रनी ईर्ष्या करीने अहीं आवेला छे; तेथी हुं स्थूलिभद्रना गुणमां ईर्ष्या कर्यानुं फळ तेने बतावुं.' ए प्रमाणे विचार करी रात्रिए तमाम प्रकारनां अलंकारो धारण करी, कामदेवने जेणे सजीवन कर्यो छे, जेनां पद्मलोचन प्रफुल्लित थयां छे, जेनां मणिजडित नूपुरो रणकार करे छे, जेणे कटितटमां शब्द करती मेखला धारण करी छे, मुखमां तांबूल चावी रही छे,मधुर स्वरथी जेणे कोकिलना स्वरने पण जीती लीधो छे एवी ते उपकोशो हावभाव बतावती मुनि आगळ आवी. कटाक्ष नांखती अने अंगोपांगने मरडती एवी ते मृगलोचनाने जोइ मुनिनुं मन सुस्थिर हतुं छतां पण परवश थइ गयुं. अहो ! कामविकार खरेखर दुर्जय छे. कह्युं छे के—

विकलयति कलाकुशलं, हसति शुचिं पंडितं विडंबयति ।
अधरयति धीरपुरुषं, क्षणेन मकरध्वजो देवः ॥

" कामदेव क्षणमात्रमां कलाकुशलने विकल बनावे छे, पवित्रने हसी कहाडे छे, पंडितने विटंबणा पमाडे छे अने धीर पुरुषने पण अधैर्य बनावी देछे. "

वळी कह्युं छे के—

मत्तेभकुंभदलने भुवि संति शूराः
केचित्प्रचंडमृगराजवधेऽपि दक्षाः ।
किंतु ब्रवीमि बलीनां पुरतः प्रसह्य
कंदर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः ॥

" आ पृथ्वी उपर मदोन्मत्त गजेन्द्रना कुंभस्थलने दळी नांखवामां शक्तिवान—शूरवीर एवा मनुष्यो पण होय छे, तेमज प्रचंड केसरीसिंहनो वध करवामां कशल एवा मनुष्यो पण होय छे; परंतु बलवानोनी आगळ हुं आग्रह पूर्वक कहुं छुं के कामदेवना दर्पनुं दलन करवामां कुशळ—शक्तिमान एवा मनुष्यो तो विरलाज होय छे. "

पछी ते सिंहगुफावासी मुनिए कामथी परवश बनी जइने उपकोशा पासे भोगनी प्रार्थना करी. त्यारे तेणे कह्युं के—' अमे निर्धननो आदर करता नथी, माटे प्रथम धन लावो अने पछी इच्छा मुजब वर्तो.' ए प्रमाणे सांभळी धन मेळववाना उपाय

संबंधी चिंतन करतां तेने याद आव्युं के 'उत्तर दिशामां नेपाल देशनो राजा अपूर्व (नवा) साधुने लक्ष मूल्यनुं रत्नकंबल आपेछे, माटे त्यां जइ, रत्नकंबल लावी, आनी साथे विषयसुख सेवीने मनइच्छित परिपूर्ण करुं.' आ प्रमाणे विचारी वर्षाकालमां मेघनी पुष्कळ वृष्टि थती हती छतां नेपाल देश प्रति प्रयाण कर्युं. घणा जीवोनुं उपमर्दन करतो अने अनेक कष्टो सहन करतो केटलेक दिवसे ते नेपाळ देशे पहोंच्यो, अने आशिर्वाद पूर्वक राजानी पासे रत्नकंबल माग्युं. राजाए ते आप्युं. ते लइने पाछा फरतां मार्गमां चोरोए लुंटी लीधुं, तेथी तेणे फरीवार नेपाळ जइ राजाने अरज करी एटले तेने फरीथी रत्नकंबल आपवामां आव्युं. ते रत्नकंबलने वांसमां नाखी गुप्त रीते लावतां चोरनी पाळना पोपटे चोरोने ते जणाववाथी तेओए तेने घेरी लीधो अने कह्युं के 'एक लाखनी किमतनुं रत्नकंबल तारी पासेछे ते बताव.' तेणे कह्युं के–'मारी पासे कंइ नथी.' चोरोए कह्युं के–'अमारो आ पोपट खोटुं बोले नहि माटे सत्य बोल, अमे ते लइशुं नहि.' तेथी तेणे सत्य कहेवाथी भिक्षुक जाणीने तेने जवा दीधो. अनुक्रमे ते पाडलीपुर आव्यो अने रत्नकंबल उपकोशाने आप्युं. तेणे तेनावडे पोताना पग लुंछीने तेने दूर अपवित्र स्थानमां फेंकी दीधुं. त्यारे साधुए कह्युं के 'अरे निर्भागिणी ! आ तें शुं कर्युं ? आ रत्नकंबल अतिदुर्लभ छे.' ते सांभळी वेश्याए कह्युं के–"ताराथी वळी बीजो कोण निर्भागीमां शिरोमणि छे ? में तो आ लक्ष्य मूलनुं रत्नकंबळ अपवित्र जग्यामां नाखी दीधुंछे, पण तें तो अमूल्य एवा ज्ञान दर्शन चारित्र रूप रत्नत्रय के जे अनंत भवमां पण पामवा दुर्लभ ते नट वीट पुरुषने थुंकवाना पात्र जेवा अने अपवित्र मळमूत्रथी भरेला एवा मारा देहमां फेंकी दीधा छे; माटे वगर विचार्युं करनार एवा तने धिक्कार छे ! आ मनुष्यभव दुर्लभ छे, तेमां पण उत्तम कुळ दुर्लभ छे; तेमां धर्मनुं श्रवण दुर्लभ छे, तेमां श्रद्धा रूप तत्त्व दुर्लभ छे, अने तेमां पण साधुधर्माचरण तो अति दुर्लभ छे. ते छतां मुक्तिने देनारा साधुत्वने तजी दइ मारा अंगमां मोह पामी वर्षाकाळे नेपाळ देशमां गमन करी बहु जीवोनो घात करवा पूर्वक चारित्रनो त्याग करवाथी दीर्घ काळ पर्यंत नरकादि दुर्गतिनी वेदनाने तुं केवी रीते सहन करीश !" इत्यादि वाक्यो सांभळीने पुनः वैराग्य प्राप्त थवाथी ते मुनि कहेवा लाग्या के–' तने धन्य छे ! भवकूपमां पडतां मारो तें उद्धार कर्यो. हवे हुं अकृत्यथी निवृत्त थयोछुं.' त्यारे वेश्याए कह्युं के–'तमारा जेवाने एमज घटेछे.'

पछी ते मुनि गुरु पासे आव्या, चरणमां पडीने स्थूलिभद्र मुनिने खमाव्या अने कह्युं के–'तमने धन्य छे ! आ पतुं काम आपज जाणो. अमारा जेवा सत्वहीन जाणी शके नहि.' पछी तेणे गुरुने जणाव्युं के "हे स्वामिन् ! आपे त्रणवार 'दुष्कर करनार

एम स्थूलिभद्रने जे कह्युं ते सत्य छे. ' ए प्रमाणे कही पापनी आलोचना करी, फरीथी चारित्र ग्रहण करीने ते मुनि सद्गतिए गया. माटे गुरुनी आज्ञा पूर्वक जे आचरवुं तेज श्रेष्ठ छे, एवो आ कथानो उपदेश छे.

जिट्ठव्वयपव्वयभरं–समुव्वहणववसिअस्स अच्चंतं ।
जुवइ जणं संवइयरे, जइत्तणं उभओ भट्ठं ॥ ६२ ॥

अर्थ–" ज्येष्ठव्रत जे महाव्रत ते पर्वतना भार सदृश छे, तेने वहन करवामां अत्यंत उद्यमी एवा मुनि पण युवतिजननो संसर्ग कर्ये सते द्रव्यथी ने भावथी बंने प्रकारना यतिपणाथी भ्रष्ट थाय छे." ६२.

जई ठाणी जई मोणी, जई मुंडी वक्कली तवस्सी वा ।
पत्थिंतो अ--अबंभं, बंभावि न रोचए मझ्झं ॥ ६३ ॥

अर्थ–"जो स्थानी के० कायोत्सर्ग करनारो होय, जो मौनी के० मौन धारण करनार होय, जो मुंडि के० माथे मुंडन करावनारो होय, अथवा वल्कली के० झाडनी छालनां वस्त्र पहेरनारो होय के तपस्वी के० अनेक प्रकारनां तप करनारो होय तो पण अब्रह्म जे मैथुन तेने प्रार्थतो–वांछतो होय तो ते कदि ब्रह्मा होय तो पण ते मने रुचतो नथी. अर्थात् गमे तेवुं कष्ट करनार होय पण जो ते मैथुनाभिलाषी होय तो ते श्रेष्ठ नथी."६३.

तो पढियं तो गुणियं तो मुणियं तो अ चेइओ अप्पा ।
आवडिय पल्लिया मंतिओवि, जई न कुणइ अकज्जं ॥ ६४ ॥

अर्थ–" जो अकुलिनना संसर्ग रूप आपदामां पड्यो सतो एटले कुमित्रे प्रेर्यो सतो अने स्त्रीए आमंत्रित कर्यो सतो–बोलाव्यो सतो पण जे अकार्य प्रत्ये जतो नथी-आचरतो नथी तो तेनुं भणेलुं प्रमाण, गणेलुं प्रमाण, जाणेलुं प्रमाण अने आत्म स्वरूपनुं चिंतवन पण प्रमाण समजवुं." ६४. नहीं तो ते बधुं अप्रमाण जाणवुं.

पागडिय सव्वसल्लो, गुरुपायमूलंमि लहइ साहू पयं ।
अविसुद्धस्स न वड्ढइ, गुणसेढी तत्तिया ठाइ ॥ ६५ ॥

गाथा ६२—स्त्रीजनससर्गेकृते
गाथा ६३—ठाणि. पथ्थतो. रोयए.
गाथा ६४—मुणीय. पिल्लिया.
गाथा ६५—पादमुलमि. साहुपयं. तित्तिया.

अर्थ–"गुरु महाराजना पादमूळे–गुरुसमीपे जेणे सर्व शल्य प्रगट कर्या छे–सर्व पाप आळोव्यां छे ते प्राणी साधुताने पामे छे; अने अविशुद्धनी–अनालोचित पापकर्मवाळानी गुणश्रेणि तेटलीज रहे छे–वृद्धि पामती नथी." ६५. अर्थात् पापकर्म आळोचीने निःशल्य थया विना गुणो वृद्धि पामता नथी; तेटलेज अटकी रहे छे.

जइ दुक्कर दुक्करकारउत्ति, भणिओ जहट्ठिओ साहू ।
तो कीस अज्जसंभूअ–विजयसीसेहिं नवि खमियं ॥ ६६ ॥

अर्थ–"जो यथास्थित एवा श्री स्थूलिभद्र नामना साधुने गुरुए (कोशाने त्यां चोमासुं रहीने आव्या त्यारे) 'दुष्कर दुष्कर कारक' एवा बहुमानपूर्वक बोलाव्या तो ते गुरुवचनने श्री संभूतिविजयना शिष्य सिंहगुफावासी मुनिए शामाटे न खम्युं–न सहन कर्युं ?" आ तेमनुं निर्विवेकीपणुं छे; माटे यथास्थित गुणोने जोइने के सांभळीने तेना पर तो अनुरागज करवो; द्वेष न करवो.

जइ ताव सव्वओ सुंदरत्ति, कम्माण उवसमेण जइ ॥
धम्मं वियाणमाणो, इयरो किं मच्छरं वहइ ॥ ६७ ॥

अर्थ–"जो कोइ प्रथम कर्मना उपशमवडे करीने सर्व प्रकारे सुंदर कहेवाय तो बीजो यतिधर्मने जाणतो सतो शामाटे तेना उपर मत्सर वहन करे?" ६७. अर्थात् विरुद्ध कर्मना क्षयोपशमवडे कोइ जीवनी 'आ सर्व प्रकारे सारो छे' एवी ख्याति थाय तो ते सांभळीने धर्मना जाण एवा मुनिए तेना प्रत्ये मत्सर धरवो ते योग्य नथी; निर्गुणीए गुणवंत उपर मत्सर धारण करवो ते व्यर्थज छे.

अइ सुट्ठिओत्ति गुणसमुइओत्ति, जो न सहइ जइ पसंसं ।
सो परिहाइ परभवे, जहा महापीढपीढ रिसी ॥ ६८ ॥

अर्थ–"आ सुस्थित छे–चारित्रविषये सुदृढ छे, आ वैयावृत्यादि गुणोवडे समुदित छे-भरेलो छे; एवी यतिनी प्रशंसाने जे सहन न करे ते पुरुष परभवे परिहीण थाय छे अर्थात् हीनभावने पामे छे–पुरुषवेद त्यजीने स्त्रीवेदने पामे छे: जेम महापीठ ने पीठ मुनि पाम्या तेम." ६८. अहीं ब्राह्मीसुंदरीना जीव जे पूर्वे पीठ ने महापीठ नामना मुनि हता तेनुं दृष्टांत जाणवुं. २१.

गाथा ६७—पुव्वओसुंदरत्ति, सव्वओसुदरात्ति वियाणमाणे.

पीठ अने महापीठ मुनिनी कथा.

महाविदेह क्षेत्रमां वज्रनाभ चक्री राज्य छोडी चारित्र ग्रहण करी चौदपूर्वधारी थया. तेना बीजा चार नाना भाइओ बाहु, सुबाहु, पीठ अने महापीठ पण दीक्षा लइ अग्यार अंगने धारण करनारा थया. तेमां बाहु मुनि पांचसे साधुने आहार लावीने आपता हता, सुबाहु मुनि तेटलाज साधुओनी वैयावच्च करता हता, अने पीठ महापीठ मुनि अध्ययन करता हता. एक दिवसे गुरुए बाहु अने सुबाहु मुनिनी प्रशंसा करी. ते सांभळीने पीठ अने महापीठने इर्ष्या उत्पन्न थइ. तेओ विचारवा लाग्या के–'अहो! गुरुनुं अविवेकीपणुं तो जुओ! तेओ हजु राजस्वभाव तजता नथी. पोतानी वैयावच्च करनार अने अन्न पाणी लावी आपनारने वखाणे छे. आपणे बंने जणा दररोज अध्ययन ने तप करीए छीए, परंतु गुरु आपणी प्रशंसा करता नथी.' ए प्रमाणे इर्ष्याथी चारित्र पाळता छेवटे पांचे साधुओ काळ करीने सर्वार्थसिद्धि विमानमां देवपणे उत्पन्न थया. त्यांथी च्यवी वज्रनाभनो जीव श्रीऋषभदेव थया, बाहु सुबाहुना जीवो ऋषभदेवना पुत्र भरत अने बाहुबलि थया अने पीठ महापीठना जीवो इर्ष्या करवावडे स्त्रीवेद बांधेल होवाथी ऋषभदेवनी पुत्रीओ ब्राह्मी अने सुंदरी थया.

ए प्रमाणे जेओ गुणप्रशंसामां इर्ष्या करे छे तेओ पीठ अने महापीठनी पेठे हीनपणाने पामे छे; तेटलामाटे विवेकीओए कादि पण गुणी प्रत्ये मत्सर धारण करवो नहि.

परपरिवायं[1] गिण्हइ[2], अट्ठमयविरल्लणे[3] सया रमइ[4] ।
डज्झइ[6] य परसिरीए[7], सकसाओ[8] दुक्खिओ[10] निच्चं[9] ॥ ६९ ॥

अर्थ–" जे पारका अपवादने ग्रहण करेछे–बोलेछे, आठ मदने विस्तारवामां सदा रमेछे–मदमां आसक्त रहेछे अने पारकी लक्ष्मी–शोभा देखीने दाझेछे–बळेछे एवो सकषायी पुरुष निरंतर दुःखीओ जाणवो."

विग्गहविवायरुइणो[1], कुलगणसंघेण[2] बाहिरकयस्स[3] ।
नत्थि[4] किर[5] देवलोए[6] वि[7], देवसमिइसु[8] अवगासो[9] ॥ ७० ॥

अर्थ–" विग्रह ने विवादनी रुचिवाळा अने कुळ गण संघे बहार करेला एवाने देवलोकमां देवसभाने विषे पण अवकाश एटले प्रवेश प्राप्त थतो नथी."७०–अर्थात् युद्ध करवामां के मिथ्या विवाद करवामां तत्पर एवा अने कुळ ते नागेंद्रादि, गण ते कुळनो

गाथा ६९—अष्टमदविस्तारणे.
गाथा ७०—देवसभाया अवकाश. प्रवेशः

समुदाय अने संघ चतुर्विध (साधु, साध्वी, श्रावक ने श्राविका) तेमणे अयोग्य जाणीने जेने वहार कर्यो होय—कुळ, गण के संघथी दूर करेल होय तेने स्वर्गमां देवसभामां पण अवकाश मळतो नथी एटले ते किल्विष जातिना नीच देवपणे उपजेछे. तेथी तेने देवसभामां बेसवानो हक मळतो नथी. ए किल्विष देवो मनुष्यमां जेम ढेढ गणाय छे तेम देवताओमां हलकी जातिना देव गणाय छे.

जई तो जणसंववहार-वज्जिय मकज्ज मायरइ अन्नो ।
जो तं पुणो विकत्थइ, परस्स वसणेण सो दुहिओ ॥ ७१॥

अर्थ—"जो प्रथम कोइ अन्य, जनव्यवहार—लोकाचारमां वर्जित—निषिद्ध एवुं चौर्यादि अकार्यने—पापकर्मने आचरे छे अने जे पुरुष ते पापकर्मने (लोकसमक्ष) विस्तारे छे ते पारके दुःखे दुःखीओ थायछे अर्थात् बीजो माणस परनिंदा करवाथी निरर्थक पापनो भाजन थायछे." ७१

सुट्ठुवि उज्जवमाणं, पंचेवं करिंति रित्तयं समणं ।
अप्पथुइ परनिंदा, जिब्भो वत्था कसाया य ॥ ७२ ॥

अर्थ—"तपसंयम क्रियाने विषे भले प्रकारे उद्यमवंत एवा साधुने पण १ आत्मस्तुति, २ परनिंदा, ३ जीह्वा, ४ उपस्थ इंद्रिय अने ५ कषाय ए पांच दोष, गुणथी रिक्त—गुण, रहित करेछे. अर्थात् तप संयम क्रियावान् होय छतां पण जो आ पांच दोषमांथी कोइ दोष होय तो ते मुनि गुणरहित थइ जाय छे." ७२

आत्मस्तुति ते पोतानी प्रशंसा स्वमुखे करवी, परनिंदा ते पारका अपवाद बोलवा, जीह्वा शब्दे रसेंद्रियनुं परवशपणुं, उपस्थ शब्दे पुरुषचिन्ह या स्त्रीचिन्ह तेना विषयनुं अभिलाषीपणुं अने कषाय ते क्रोधादि चार—आ पांच प्रकारना दोषथी गुणरहित थवाय छे.

परपरिवायमईओ, दूसइ वयणेहिं जेहिं जेहिं परं ।
ते ते पावइ दोसे, परपरिवाई इअ अपिच्छो ॥७३ ॥

अर्थ—"पारका अपवाद बोलवामां निपुण बुद्धिवाळो पुरुष जे जे वचनोए करीने

गाथा ७१—करिथइ.

गाथा ७२—सुठ्ठवि उज्जममाणं. करति. अप्पथूइ. जिब्भो तथा जिह्वा उपस्थाः

गाथा ७३—परपरिवायमइय. अपिच्छो—अप्रेक्ष्यो,

परने दोषवंत करेछे ते ते दोषने पोते पामे छे. ए हेतु माटे परपरिवादी पुरुष अमेक्ष्य–अदर्शनीय–न जोवा लायक छे, अर्थात् परनिंदाकारक पुरुषनुं मुख पण जोवा लायक नथी." ७३

थद्धा छिद्दप्पेही, अवन्नवाई सयंमई चवला ।
वंका कोहणसीला, सीसा उव्वेअंगा गुरुणो ॥ ७४ ॥

अर्थ–"स्तब्ध ते अनम्र–अभिमानी, छिद्रान्वेषी ते अवर्णवादि,स्वयंमति ते स्वेच्छाचारी, चपळ स्वभावी, वक्र अने क्रोधस्वभावी–एवा शिष्यो गुरुने उद्वेगना करावनारा होय छे." ७४

जस्स गुरुंमि न भत्ती, न य बहुमाणो न गउरवं न भयं ।
नवि लज्जा नावि नेहो, गुरुकुलवासेण किं तस्स ॥ ७५ ॥

अर्थ–"जे शिष्यने गुरुने विषे भक्ति न होय, बहुमान न होय, गुरुनुं गौरव न होय, गुरुनो भय न होय, गुरुनी लज्जा न होय अने गुरु उपर स्नेह पण न होय तेवा शिष्यने गुरुकुलवासे करीने शुं? अर्थात् तेवा दुर्विनीत शिष्यने गुरु समीपे वसवाथी कांइ पण फळ नथी." ७५

भक्ति एटले विनय–गुरुने आवता देखीने उभा थवुं, आसन आपवुं विगेरे अने बहुमान ते अभ्यंतर भक्ति समजवी.

रूसइ चोइज्जंतो, वहइ हियएण अणुसयं भणिओ ।
नय कम्हिं करणिज्जे, गुरुस्स आलो न सो सीसो ॥ ७६ ॥

अर्थ–"जे शिष्य गुरुए प्रेरणा कर्यो सतो रोष करे छे अने बोलाव्यो सतो अनुशय एटले क्रोधने हृदयमां धारण करे छे तथा कोइ पण कार्यमां काम आवतो नथी. तेवो शिष्य ते गुरुने आळरूप छे, शिष्य नथी." ७६ शिक्षाने ग्रहण करे ते शिष्य कहेवाय जेनामां शिक्षाग्रहणनो अभाव छे ते शिष्य कहेवायज नहि.

उव्विल्लण सूअण परिभवेहिं, अइ भणिय दुठ भणिएहिं ।
सत्ताहिया सुविहिया, नचेव भिंदंति मुहरागं ॥ ७७ ॥

गाथा ७४—उवेअगा–उद्वेगकारकाः   गाथा ७५—गोरव.
गाथा ७६—चोयज्जतो. कम्मि.   गाथा ७७—परभवेहिं. भिंदति.

अर्थ—"उद्वेग पमाडवाथी, सूचना करवाथी एटले वचनवडे दोष प्रगट करवाथी अने परिभव के० तर्जन करवाथी तेमज अति शिक्षावचन कहेवाथी के कर्कश वचन कहेवाथी सत्वाधिक एटले क्रोधादिनो जय करवामां समर्थ एवा सुविहितो—सुशिष्यो मोढानो रंग पण भेद पमाडता नथी अर्थात् तेमना मोढानो रंग पण बदलातो नथी." ७७

माणंसिणो वि अवमाणं, वंचणा ते परस्स ते न करंति ।
सुहदुक्खुगिरणत्थं, साहू उअहिव्व गंभीरा ॥ ७८ ॥

अर्थ—"इन्द्रादिके मानेला छतां पण समुद्रनी जेवा गंभीर साधुओ (परथी) अपमान थये सते सुखदुःखनो उच्छेद करवाने माटे परनी वंचना करता नथी. अर्थात् तेवा मुनिओ शुभाशुभ कर्मोनो छेद करवानाज अर्थी होवाथी अपराधी एवाने पण पीडा उपजावता नथी." ७८

मउआ निहुअसहावा, हासदवविवज्जिया विगहमुक्का ।
असमंजस मइबहुअं, न भणंति अपुच्छिया साहू ॥ ७९ ॥

अर्थ—"मृदुका—सुकुमाळ—अहंकाररहित, निभृत स्वभाववाळा एटले शांत स्वभाववाळा, हास्य अने दव जे इर्ष्या तेथी वर्जित, विकथामुक्त एटले देशकथा, राजकथा, भक्तकथा, स्त्रीकथादि विकथा नहि करनारा एवा साधु वगर पुछ्या सता असंबद्ध एवुं अति प्रचुर बोलता नथी." ७९ पुछ्या सता पण तेओ केवुं बोले छे ते कहे छे—

महुरं निउणं थोवं, कज्जावडिअं अगव्विय मतुच्छं ।
पुव्विंमइसंकलियं, भणंति जं धम्मसंजुत्तं ॥ ८० ॥

अर्थ—"मधुर, निपुणता—चतुराइवाळुं, थोडुं, कार्य पूरतुं, गर्वरहित, अतुच्छ—तुंकारादि रहित, प्रथम बुद्धिपूर्वक विचारेलुं अने ते पण जे धर्म संयुक्त होय ते कहे छे. अर्थात् तेवुं बोले छे." ८०

सट्ठिवाससहस्सा, तिसत्तखुत्तोदयेण धोएण ।
अणुचिन्नं तामलिणा, अन्नाणतवुत्ति अप्पफलो ॥ ८१ ॥

अर्थ—"तामलि तापसे साठ हजार वर्ष पर्यंत (छठ छठने पारणे) त्रिसप्तवार—एकवीश वार उदकवडे धोयेला अन्नवडे (पारणुं करीने) तप आचर्यो, परंतु ते अज्ञान तप

गाथा ७८—करिंति. 'ते' नथी. सुहदुक्खुग्गिरणत्थं, सुहदु खोच्छेदनार्थं साहू.
गाथा ७९—हासदव्व. दवः परेपामिर्ष्यादिकारण अतिवहुल—अतिप्रचुरं.
गाथा ८०—कार्येआपतित—कार्ये सति जल्पति. पुव्व.
गाथा ८१—सट्ठि. तवात्ति.

होवाथी अल्प फळवाळो थयो".८१. एटलो तप जो दयायुक्त कर्यो होत तो तेनुं मुक्ति रूप फळ प्राप्त थात. तेथी जिनाज्ञायुक्त तपज प्रमाण छे.

अहीं आटला बधा तपथी मात्र जेने इशानइंद्रपणानी प्राप्ति थइ एवा तामलि तापसनुं दृष्टांत जाणवुं. २२.

तामलि तापसनी कथा.

तामलिप्ती नगरीमां तामलि नामे शेठ वसतो हतो. एक दिवस तेणे पोताना पुत्रने गृहभार सोंपीने वैराग्यपरायण थइ तापसी दीक्षा लीधी अने नदीना कांठा उपर रहेवा लाग्यो. तेमज कायम छठ्ठ करीने पारणुं करवा लाग्यो. पारणाना दिवसे पण जे आहार लावतो तेने नदीना जळथी एकवीश वार धोइ निरस करीने खातो हतो अने उपर पाछो छठ्ठ करतो हतो. ए प्रमाणे साठ हजार वर्ष सुधी तेणे दुष्कर अज्ञानतप कर्युं. छेवट अनशन अंगीकार कर्युं. ते अवसरे बलींद्र च्यवी गयेल होवाथी बलिचंचा राजधानीना रहेनारा असुरोए आवी, अनेक प्रकारनां नाटय अने समृद्धि बतावी तामलि तापसने विज्ञप्ति करी के–' हे स्वामिन् ! तमे नियाणुं करी अमारा स्वामी थाओ. अमे स्वामी रहित छीए.' ए प्रमाणे त्रणवार कह्या छतां पण तेणे तेमनुं वचन अंगीकृत कर्युं नहि. पछी आयु पूर्ण थये कषाय अल्प होवाथी तेमज अत्यंत कष्ट करेलुं होवाथी तेना प्रभाववडे ते काळ करीने इशान देवलोकमां इंद्रपणे उत्पन्न थया, अने तरतज समकित प्राप्त कर्युं. माटे ज्ञानपूर्वक तप करवुं एज मोक्ष आपनारुं छे. तेथी थोडुं पण तप दया अने ज्ञानयुक्त करवुं; पण तामलि तापसनी पेठे अज्ञान ने हिंसायुक्त करवुं नहि.

छज्जीवकाय[1]वहगा, हिंसक[3]सत्थाइं उवइ[4]संति पुणो ।
सुबहुं[6]पि तवकिलेसो, बालतव[5]स्सीण अप्पफलो ॥ ८२ ॥

अर्थ–"छ जीवकायना वध करवावाळा अने वळी हिंसक शास्त्रोनो उपदेश करे छे एवा बाळ तपस्वीओनो अति प्रचुर एवो तपक्लेश पण अल्प फळवाळो थाय छे. तेथी हिंसाना त्यागवडेज तप महाफळने आपे छे एम समजवुं." ८२

अहीं छ जीवकाय ते पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायु, वनस्पति अने बेइंद्रियादि त्रस जीवो समजवा. बाळतपस्वी ते अज्ञान कष्ट करनारा तापसादि जाणवा.

परिय[5]च्छंति स[4]व्वं, जहट्ठियं[1] अवि[2]तहं असं[3]दिद्धं ।
[6]तो जिणवयण[7]विहिन्नू, सहंति[10] बहुअ[8]स्स बहु[9]आइं ॥ ८३ ॥

गाथा ८३—परियच्छातय. वहूअस्स. वहुआए.

अर्थ—"(जे साधु होय छे ते) यथास्थित, सत्य अने संदेह विनानुं जीवाजीवादि सर्व पदार्थोनुं स्वरूप जाणे छे तेथी तेवा जिनवचननी विधिना जाणवावाळा साधुओ घणा जनोनां घणां दुर्वचनादि सहन करे छे." ८३ तेथी तेमनुं तप मोटा फळने अर्थे थाय छे.

जो जस्स वट्टए हियए, सो तं ठावेई सुंदरसहावं ।
वग्घी छावं जणणी, भद्दं सोमं च मन्नेइ ॥ ८४ ॥

अर्थ—"जे जेना हृदयमां वर्त्ततुं होय छे ते तेने सुंदर स्वभाववाळुं स्थापे छे—माने छे. अहीं दृष्टांत कहे छे के वाघण माता पोताना बाळकने भद्र अने सौम्य माने छे." ८४

जेम वाघण अज्ञानपणाथी अभद्र अने अशांत—सर्व जीवनुं भक्षण करीजनार एवा पोताना बाळकने पण भद्र अने शांत माने छे तेम अज्ञानीओ पोताना चित्तमां गमी गयेला पोताना अज्ञान तपने पण सम्यग् तप जाणे छे—माने छे; परंतु ते मानवुं मिथ्या छे.

मणिकणगरयणधणपूरियंमि, भवणंमि सालिभद्दोवि ।
अन्नोवि किर मज्झंवि, सामिओत्ति जाओ विगयकामो ॥८५॥

अर्थ—"मणि, कंचन, रत्न अने धनवडे पूरित—भरेला एवा भुवनमां रहेतां छतां पण शालिभद्र नामे श्रेष्ठी निश्चये 'मारो पण बीजो स्वामी छे' एम विचारतो सतो विषयाभिलाषरहित थइ गयो." ८५ अर्थात् 'हजु मारे माथे पण बीजो स्वामी छे' एम लक्षमां आवतां, जो एम छे तो तो आ मारा वैभवने धिक्कार छे' एम चिंतवी शालिभद्रे विषयभोग तजी चारित्र अंगीकार कर्युं.

अहीं शालिभद्रनो संबंध प्रसिद्ध होवाथी संक्षेपे कहे छे. २३.

श्री शालिभद्रनुं दृष्टांत.

पूर्व भवमां शालिग्राममां रहेनारी धन्या नामनी कोइ दरिद्री स्त्री हती. ते उदर भरवाने माटे संगम नामना पोताना पुत्रने लइने राजगृह नगरमां आवी, अने पारकुं कामकाज करवा लागी. संगम पण गामना वाछरडाओ चारवा लाग्यो. एक दिवस कोइ पर्व आव्ये सते दरेक घरे क्षीर थती जोइ ते खावानी इच्छा थवाथी संगमे पण पोतानी माता पासे क्षीरभोजन माग्युं. तेणे पण पाडोशणोए आपेल दूध विगेरेथी क्षीर बनावी संगमने थाळीमां पीरसी. ते क्षीर अति उष्ण होवाथी संगम फुंकेछे तेवामां मासक्षपणना

गाथा ८४—छाव—सुत. गाथा ८५—पूरयंमि. अन्नो.

पारणे कोइ साधु त्यां वहोरवा माटे पधार्या. तेमने जोइ संगमने अति हर्ष थवाथी तेणे बहु भावपूर्वक बधी क्षीर ते मुनिने वहोरावी दीधी. पछी ते विचार करवा लाग्यो के–'आजे साधु रूपी सत्पात्र मने प्राप्त थवाथी हुं अति धन्य छुं!' ए प्रमाणे पोताना कार्यनी प्रशंसा करवा लाग्यो. आ प्रमाणे अनुमोदना सहित दान घणुं फळ आपनारुं थायछे. कह्युं छे के—

आनंदाश्रूणि रोमांचो, बहुमानं प्रियंवचः ।
किंचानुमोदना पात्र–दानभूषणपंचकम् ॥

"आनंदथी नेत्रमां आंसु आववां, रोमराय विकस्वर थवा, बहुमान सहित वहोराववुं, प्रिय वचन बोलतां आपवुं अने तेनी अनुमोदना करवी; ए पांच सुपात्र दानमनां भूषण छे."

अहीं संगमे साधुने दान आपवाथी घणुं पुण्य उपार्जन कर्युं. कह्युं छे के–

व्याजेस्याद्विगुणं वित्तं, व्यवसाये चतुर्गुणम् ।
क्षेत्रे शतगुणं प्रोक्तं, पात्रेऽनंतगुणं भवेत् ॥

"व्याजनी अंदर धन बमणुं थाय छे, व्यवसाय (व्यापारादि)थी चारगणुं थायछे, क्षेत्रमां सोगणुं थायछे, अने पात्रमां आपवाथी तो अनंतगणुं थायछे." वळी संगमे जे दान आप्युं ते अति दुष्कर छे. कारणके–

दाणं दरिद्दस्स पहुस्स खंती, इच्छानिरोहोय सुहोइयस्स ।
तारुण्णए इंदियनिग्गहोय, चत्तारि एयाइं सुदुक्कराइं ॥

"दरिद्री छतां दान आपवुं, सामर्थ्य छतां क्षमा राखवी, सुखनो उदय छतां इच्छानो रोध करवो अने तरुणावस्थामां इंद्रियोनो निग्रह करवो–आ चार वानां अति दुष्कर छे."

साधुना गया पछी संगमनी मा आवी. तेणे थाळी खाली जोइने बाकी रहेली क्षीर पीरसी. पछी ते विचार करवा लागी के–"आटली बधी भुखवाळो मारो पुत्र दररोज भुख्योज रहेतो जणाय छे, तेथी मारा जीवितने धिक्कार छे!" ए प्रमाणेनी स्नेहदृष्टिना दोषथी (पुत्रने दृष्टि लागवाथी) तेज रात्रिए शुभ ध्यानथी मृत्यु पामीने संगमनो जीव तेज शहेरमां गोभद्र नामना शेठने घेर तेनी स्त्री भद्रानी कुक्षिमां परिपूर्ण पाकेली शालि (डांगर)थी भरपूर क्षेत्रना स्वप्नथी सूचित पुत्रपणे उत्पन्न थयो.

पिताए तेनुं शालिकुमार नाम पाड्युं. युवावस्था प्राप्त थतां तेने बत्रीश कन्याओ एक लग्ने परणावी. त्यारपछी गोभद्र शेठ चारित्र ग्रहण करी प्रांते अनशन आदरी सौधर्म देवलोकमां देवता थया. पछी अवधिज्ञानथी पोताना पुत्रने जोइने अति स्नेहातुर बनी त्यां आवी तेने दर्शन दीधुं अने भद्राने कह्युं के–'शालिभद्रने सर्व प्रकारनी भोगसामग्री हुं पूरी पाडीश.' एटलुं कहीने ते गयो. पछी गोभद्रनो जीव देवता तेमने मनवांछित पूरवा लाग्यो. दररोज ३२ स्त्रीओ अने शालिभद्रने माटे ३३ पेटी वस्त्रोनी, ३३ पेटी आभूषणोनी अने ३३ पेटी भोजनादि पदार्थोनी कुल ९९ पेटी मोकलवा लाग्यो.

यद्गोभद्रः सुरपरिवृढो भूषणाद्यं ददौ य-
ज्जातं जायापदपरिचितं कंबलिरत्नजातम् ।
पण्यं यच्चाजनि नरपतिर्यच्च सर्वार्थसिद्धि-
स्तद्दानस्याद्भुतफलमिदं शालिभद्रस्य सर्वम् ॥

"देवताओमां श्रेष्ठ एवा गोभद्रे जेने भूषणादि आप्यां, रत्नकंबल जेनी स्त्रीओना पगनी साथे परिचयवाळां थयां, एटले जेनी स्त्रीओए रत्नकंबल तो पग लुछवामां वापर्यां, जेने राजा (श्रेणिक) करियाणा रूप बन्यो अने जेणे प्रांते सर्वार्थसिद्धि विमान प्राप्त कर्युं–आ प्रमाणे शालिभद्रने दाननुं सर्व प्रकारनुं अद्भुत फळ प्राप्त थयुं."

पादांभोजरजः प्रमार्जनमपि क्ष्मापाललीलावती-
दुःप्रापाद्भुतरत्नकंबलदलैर्यद्वल्लभानामभूत् ।
निर्माल्यं नवहेममंडनमपि क्लेशाय यस्यावनी-
पालालिंगनमप्यसौ विजयते दानात्सुभद्रांगजः ॥

"जेनी स्त्रीओना चरणकमल उपर लागेली रजनुं प्रमार्जन राजानी राणी लीलावतीने पण दुष्प्राप्य एवा रत्नकंबलना ककडावडे थयुं, जेने नवीन सुवर्णनां घरेणांओ पण दरेक दिवसे निर्माल्य रूप थयां, अने जेने भूपतिनुं आलिंगन पण क्लेशनेमाटे थयुं एवो सुभद्रानो पुत्र शालिभद्र पूर्वे करेला दानथी विजय पामेछे."

आवी शालिभद्रनी समृद्धि जोइने श्रेणिक राजाए पण आ प्रमाणे विचार कर्यो हतो के–

स्नुही महातरुर्वह्निर्बृहद्भानुर्यथोच्यते ।
सारतेजोवियोगेऽपि नरदेवास्तथा वयम् ॥

"जेम स्नुही नामनुं झाड बहु नानुं होयछे छतां महातरु कहेवायछे, अने अग्नि जरा जेटलो होय छतां पण ते बृहद् भानु (मोटामां मोटो सूर्य) कहेवाय छे, तेवीज रीते अमे सारभूत तेज वगरना छतां पण नरदेव कहेवाइए छीए."

शालिभद्रे पण पोताने घेर आवेला श्रेणिक राजाने पोताना स्वामी जाणीने विचार्युं के–'आ मारी पराधीन लक्ष्मीने धिक्कार छे!' ए प्रमाणे वैराग्यपरायण बनी दररोज एकेक स्त्रीने तजवा लाग्यो. ते हकीकत सांभळीने धन्य नामना तेना बनेवीए आवीने एक साथे सर्व स्त्रीओनो त्याग करी दीक्षा लेवानी तेने प्रेरणा करी. आ प्रमाणेनी प्रेरणाथी उत्साहित बनी श्री महावीर स्वामीनी पासे जइ चारित्र ग्रहण करी दुष्कर तप तपी बार वर्ष पर्यंत दीक्षापर्याय पाळी प्रांते एक मासनी संलेखना करी सर्वार्थसिद्धि विमानमां तेत्रीश सागरोपम आयुष्यवाळा अहमिन्द्र[1] देवपणे उत्पन्न थया.

आ मुनिने धन्य छे के जेमणे सघळुं अनुत्तर (सर्वथी उत्तम) प्राप्त कर्युं.

अनुत्तरं दानमनुत्तरं तपो, ह्यनुत्तरं मानमनुत्तरं यशः ।
श्रीशालिभद्रस्य गुणा अनुत्तरा, अनुत्तरं धैर्यमनुत्तरं पदम् ॥

"तेनां (शालिभद्रनां) दान, तप, मान, यश, गुणो, धैर्य अने पद[2]–ए सर्व अनुत्तर (जेनाथी अन्य श्रेष्ठ नथी एवां) छे."

आ प्रमाणे ज्ञान सहित तप करवामां आवे तो मोटुं फळ प्राप्त थायछे.

न[5] करंति[6] जे[1] तव[2] संजमं[4] च[3] ते[7] तुल्लपाणिपायाणं[8] ।
पुरिसा[9] सम पुरिसाणं[10], अवस्स[11] पेसत्तण[12] मुविंति[13] ॥ ८६ ॥

अर्थ–"जे प्राणी तप (बार प्रकारे) अने संयम (सत्तर प्रकारे) करता–आदरता नथी ते पुरुषो समान हाथपगवाळा अने सदृश पुरुषाकार धारण करनारनुं सेवकपणुं अवश्य प्राप्त करे छे." ८६

शालिभद्रे एज विचार कर्यो हतो के–"श्रेणिकमां ने मारामां कांइ पण हाथपगनुं विशेषपणुं नथी ते छतां ते स्वामी ने हुं सेवक, तेनुं कारण मात्र में पूर्वजन्ममां सुकृत कर्युं नथी ते ज छे." आम विचारीने तेणे चारित्र ग्रहण कर्युं.

सुंदर सुकुमाल[1] सुहोइएण, विविहेहिं[2] तवविसेसेहिं[3] ।
तह[4] सोसविओ[6] अप्पा, जह[7] नवि[8] नाओ[10] सभवणेपि ॥ ८७ ॥

---

[1] जेने स्वामी तरीके इन्द्र होता नथी तेओ पोतेज पोताना विमानना स्वामी होवाथी अहमिंद्र कहेवाय छे. [2] पद ते स्थान—अनुत्तरविमान.

गाथा ८६—करिंति. गाथा ८७—सभवणेवि.

अर्थ–"सुंदर (रूपवान), सुकुमाळ(मृदु शरीरवाळा) अने सुखोचित अर्थात् सुखना अभ्यासी एवा शालिभद्रे विविध प्रकारनां तप विशेषवडे करीने पोताना आत्माने(देहने) एवो शोषव्यो–दुर्बळ कर्यो के जेथी पोताने घेर पण ते ओळखी शकाया नहि." ८७

शालिभद्र मुनि थया पछी पाछा राजगृहीए आव्या त्यारे पोतानी माताने घेर गोचरीनिमित्ते जतां तेना सेवकपुरुषोए पण तेमने ओळख्या नहि एवो तेमणे तपस्यावडे देह सुकवी नाख्यो हतो.

दुक्करं सुद्धोसकरं, अवंतिसुकुमालं महरिसीचरियं ।
अप्पावि नाम तह तज्ज–इत्ति अच्छेरयं एयं ॥ ८८ ॥

अर्थ–"दुष्कर अने सांभळतां पण रोमोत्कंप करे–रुंवाडां उभां थाय एवुं अवंति सुकुमाळ महर्षिनुं चरित्र छे; जे महात्माए पोताना आत्माने पण एवा प्रकारे तर्जित कर्यो के जेमनुं चरित्र संपूर्ण आश्चर्यकारक थयुं." ८८

अहीं अवंतिसुकुमाळनो संबंध जाणवो. २४

अवंतिसुकुमाळ कथा.

अवंती देशमां उज्जयिनी नगरीमां भद्रा नामनी एक शेठनी स्त्री हती. तेने नलिनीगुल्म विमानथी च्यवीने आवेलो अवंतिसुकुमाल नामे पुत्र थयो. ते बत्रीश स्त्रीओनी साथे विषयसुखनो अनुभव करतो हतो. एक दिवस पोताना घरनी नजीक रहेला सुस्थित आचार्यना मुखथी रात्रिनी पहेली पोरषीमां नलिनीगुल्म विमान अध्ययन सांभळी जातिस्मरणज्ञान थवाथी पूर्वभवनुं स्वरूप जाणी, त्यां (नलिनीगुल्म विमानमां) जवाने उत्सुक थयेलो अवंतिसुकुमाल गुरु पासे जइ विनयपूर्वक पूछवा लाग्यो के–'आपे नलिनीगुल्म विमाननुं स्वरूप केवी रीते जोयुं?' गुरुए कह्युं के 'सिद्धांत रूपी नेत्रथी जोयुं छे.' पछी अवंतिसुकुमाले पूछ्युं के 'ते केवी रीते प्राप्त थाय?' त्यारे गुरुए कह्युं के 'चारित्र पाळवाथी. कारणके चारित्र आलोक अने परलोकमां अनेक प्रकारनुं सुख आपे छे.' कह्युं छे के–

नो दुष्कर्मप्रयासो न कुयुवतिसुतस्वामिदुर्वाक्यदुःखम् ।
राजादौ न प्रणामोऽशनवसनधनस्थानचिंता न चैव ॥
ज्ञानाप्तिर्लोकपूजा प्रशममपरिणतिः प्रेत्यनाकाद्यवाप्ति ।
चारित्रे शीवदायके सुमतयस्तत्र यत्नं कुरुध्वम् *॥

गाथा ८८— चरीयं. २ तज्जयत्ति. * आ चोथु पद भूलवाळुं जणाय छे.

" जेनी अंदर दुष्कर्म संबंधी प्रयास नथी, जेनी अंदर खराब स्त्री, पुत्र के स्वामीनां दुर्वाक्यश्रवणनुं दुःख नथी, जेनी अंदर राजा आदिने प्रणाम करवो पडतो नथी, जेनी अंदर भोजन, वस्त्र धन के स्थान माटे चिंता करवी पडती नथी, जेनी अंदर ज्ञाननी प्राप्ति थाय छे, लोको पूजा करे छे, शांतभाव परिणमे छे, अने परभवे स्वर्गादिनी प्राप्ति थाय छे एवा मोक्षदायक चारित्रमां हे विद्वान् पुरुषो ! तमे प्रयत्न करो. "

' माटे चारित्र ग्रहण करी, अनशन करवा वडे नलिनीगुल्म विमान मेळवी शकाय छे. ' ए प्रमाणे गुरुमुखथी सांभळीने अवंतिसुकुमाले कह्युं के ' में चारित्र अने अनशन भावथी अंगीकार कर्युं छे. ' गुरुए ज्ञानथी जाण्युं के ' आनुं कार्य आ प्रमाणेज सिद्ध थवानुं छे तेथी तेने रात्रिएज साधुवेष आप्यो. ते वेष धारण करीने ते शहेरथी बहार स्मशानभूमिए जइ कंथेर (थोर)ना वनमां कायोत्सर्ग मुद्राथी रह्या. त्यां जतां मार्गमां कांटा, कांकरा आदिना प्रहारथी अतिकोमळ एवा तेना चरणना तळीयामांथी रुधिर स्रववा लाग्युं. तेना गंधथी पूर्व भवमां अपमानित करेली स्त्रीनो जीव शियाळणी घणां बच्चांओथी परिवृत्त थइ त्यां आवी अने तेनुं शरीर खावा लागी. परंतु ते मुनि जरा पण क्षुभित थया नहि. तेमनुं चित्त स्थिर होवाथी अति वेदना सहन करता सता काळ करीने ते नलिनीगुल्म विमानमां देवपणे उत्पन्न थया. प्रातःकाळमां ते सघळुं तेनी माता भद्राए जाण्युं. एटले एक गर्भवंती वहुने घरमां राखीने बाकीनी तमाम वहुओ साथे भद्राए चारित्र ग्रहण कर्युं. घर आगळ रहेली वहुने एक पुत्र थयो. ते पुत्रे स्मशानभूमिमां एक जिनप्रासाद चणाव्यो अने तेमां जिनप्रतिमा स्थापी. स्मशाननुं नाम महाकाल पड्युं.

जे प्रमाणे अवंतिसुकुमाले धर्मने अर्थे पोताना शरीरनो त्याग कर्यो परंतु ग्रहण करेला व्रतनो भंग कर्यो नहि, तेवी रीते अन्य जनोए पण धर्मविषयमां यत्न करवो, एवो आ कथानो उपदेश छे.

अच्छूंढ सरीरघरा, अन्नो जीवो सरीर मन्नंति ॥
धम्मस्स कारणे सुविहिया, सरीरंपि छंडुंति ॥ ८९ ॥

अर्थ—" तजी दीधो छे शरीर रूपी घरनो मोह जेणे एवा सुविहितो—उत्तम पुरुषो धर्मने कारणे ' आ जीव अन्य छे अने शरीर अन्य छे ' एवी बुद्धिवडे करीने शरीरने पण तजी दे छे. " ८९

गाथा ८९—उच्छूढ, आच्छूढ.

आ देहनो संबंध एक भवनोज छे अने ते शरीर जन्मे जन्ममां नवुं नवुं मळवानुं छे, पण धर्म जो तजी दीधो तो ते फरीने प्राप्त थवो दुर्लभ छे, तेथी उत्तम पुरुषो धर्मने कारणे शरीरने तजे छे पण शरीरने कारणे धर्मने तजता नथी. माटे प्राणांते पण धर्मने न तजवो.

एकं दिवसंपि जीवो, पवज्जमुवागओ अनन्नमणो ।
जइवि न पावइ मुक्खं, अवस्सं वेमाणिओ होई ॥ ९० ॥

अर्थ– "चारित्र धर्मनुं फळ कहेछे–अनन्य मनवाळो जीव एक दिवस पण प्रव्रज्या (दीक्षा) प्रतिपन्न करे अर्थात् भवप्रांते एक दिवस पण शुद्ध दीक्षा पाळे तो ते यद्यपि संहनन काळादिना अभावथी–मोक्ष न पामे, परंतु अवश्य वैमानिक देव तो थाय." ९०

एक दिवसना विशुद्ध मनयुक्त चारित्रनुं फळ आ काळमां पण वैमानिक देवपणानी प्राप्ति थवा रूप छे.

सीसावेढेण सिरंमि–वेढिए निग्गयाणि अच्छीणि ।
मेयज्जस्स भगवओ, नय सो मणसावि परिकुविओ ॥९१॥

अर्थ–" लीली चामडानी वाधरवडे मस्तकने वेष्टित कर्ये सते (ते सुकाइने खेंचावाथी आखो नीकळी पडी, परंतु ते मेतार्य भगवंत मनथी (लेश मात्र) पण (सोनी उपर) कोपायमान थया नहि." ९१

मेतार्य मुनिना मस्तके सोनीए लीली वाधर वींटी ते सुकावाथी नसोनुं खेंचाण थवाने लीधे बंने नेत्र नीकळी पड्यां, परंतु मेतार्य मुनि किंचित् मात्र पण ते सोनी उपर कोपायमान थया नहि. एवी रीते बीजा मुनिराजोए पण क्षमा करवी.

अहीं मेतार्य मुनिनुं दृष्टांत जाणवुं. २९

मेतार्यमुनिनी कथा.

साकेतनपुरमां चंद्रावतंसक नामे अत्यंत धार्मिक राजा हतो. तेने सुदर्शना नामनी स्त्री हती. ते स्त्रीनी कुक्षिथी सागरचंद्र ने मुनिचंद्र नामे बे पुत्र उत्पन्न थया हता. ते बेमां मोटाने युवराजपद आप्युं अने नानाने उज्जायिनी राज्य आप्युं हतुं. बीजी प्रियदर्शना नामे राणीथी गुणचंद्र अने बालचंद्र नामे बे पुत्र थया हता. ए प्रमाणे चार पुत्र विगेरेथी परिवृत्त थइ ते राजा राज्य करतो हतो.

गाथा ९०–जइ नवि. अवस्स.
गाथा ९१—सिरांमि. आर्द्रचर्मवध्रावेष्टनेन.

एक दिवस चंद्रावतंसक राजाए पौषध कर्यो हतो. ते रात्रिए एकांतवासमां रह्या सता तेणे एवो अभिग्रह कर्यो के 'ज्यांसुधी आ दीवो बळे त्यांसुधी मारे कायोत्सर्गमां स्थित रहेवुं.' ते अभिग्रहने नहि जाणनारी कोइ दासीए ते दीवामां तेल पूर्या कर्युं. घणो वखत कायोत्सर्गमां स्थित रहेवाथी राजाने शिरोवेदना थइ, तेथी ते मृत्यु पाम्यो अने देवलोकमां गयो. ते जोइ सागरचंद्रे विचार्युं के–'आ देहनो संबंध कृत्रिम छे, जे प्रातःकालमां जोवामां आवेछे ते मध्यान्हे जोवामां आवतुं नथी अने जे मध्यान्हे जोवामां आवेछे ते रात्रिए नाश पामेछे. वायुए कम्पावेला पत्र जेवुं आ आयुष्य क्षणे क्षणे क्षीण थतुं जाय छे. कह्युं छे के–

आदित्यस्य गतागतेरहरहः संक्षीयते जीवितम्
व्यापारैर्बहुकार्यभारगुरुभिः कालो न विज्ञायते ।
दृष्ट्वा जन्मजराविपत्तिमरणं त्रासश्च नोत्पद्यते
पीत्वा मोहमयीं प्रमादमदिरामुन्मत्तभूतं जगत् ॥

"सूर्यना गमन ने आगमनथी आयुष्य दररोज क्षय पामेछे, बहु प्रकारना कार्यवाळा मोटा मोटा व्यवसायोथी काळ केटलो गयो ते जणातुं नथी, अने जन्म, वृद्धावस्था, विपत्ति ने मरण जोइने माणसोने त्रास उत्पन्न थतो नथी; तेथी (जणायछे के) मोहमयी प्रमाद रूपी मदिरानुं पान करीने आ जगत उन्मत्त थयेलुं छे."

त्यादि कारणथी जेनुं चित्त वैराग्यवान थयेलुं छे एवो सागरचंद्र राज्यथी पराङ्मुख हतो छतां पण तेनी ओरमान माताए कह्युं के 'मारा बंने पुत्रो हाल राज्यभार वहन करवाने अशक्त छे, तेथी तुं आ राज्यधुराने ग्रहण कर.' ए प्रमाणे बलात्कारथी सागरचंद्रने राज्य उपर स्थापित कर्यो, परंतु ते विरक्त मनथी राज्यनुं पालन करेछे. अनुक्रमे तेने समृद्धि ने कीर्तिथी वधी गयेलो जोइने तेनी ओरमान माता दुभाणी, तेथी ते दररोज तेनी इर्ष्या करेछे अने छिद्र खोळेछे. एक दिवस क्रीडाने वास्ते वनमां गयेला सागरचंद्रने माटे तेनी माताए दासी मारफत एक लाडु मोकल्यो. ते दासी लाडु आपवा जती हती ते वखते तेने बोलावीने ओरमान माताए पूछ्युं के–'आ शुं छे?' तेणे कह्युं के–'हुं राजाने माटे लाडु लइ जाउंछुं.' तेणे कह्युं के–'जोउं, ते केवो छे?' दासीए तेने आप्यो, एटले ते ओरमान माताए विषथी खरडायेला हाथवडे ते लाडुने सारी रीते स्पर्श करी विषमिश्रित करीने दासीने पाछो आप्यो. दासीए ते लाडु लइ जइने राजा पासे मूक्यो. राजाए ते मनोरंजक लाडु ग्रहण कर्यो. परंतु ते अवसर

पोतानी आगळ हाथ जोडीने उभेला पोताना बे सावका भाइने जोइने स्नेहवश थइ तेणे विचार कर्यो के 'मारा लघु बंधुओने छोडी मारे लाडु खावो ते उचित नथी.' एम विचारी तेणे लाडुना बे भाग करी बंनेने वहेंची दीधो. पोते खाधो नहि. थोडा वखतमां पेला बंनेने विष चडवाथी भूमि उपर पडेला जोइने राजा घणो खिन्न थयो, अने मणि मंत्र आदि प्रयोगोवडे तेमनुं झेर उतार्युं. पछी (तेनुं कारण शोधतां) दासीना मुखथी ओरमान माताना हस्तस्पर्शथी थयेल विषप्रयोग जाणीने तेनी पासे जइ सागरचंद्र उपालंभ आपवा लाग्यो के–'तने धिक्कार छे! पहेलां मारा आपतां छतां पण तें राज्य अंगीकार कर्युं नहि, अने सांप्रत समये आवुं अकार्य कर्युं! स्त्रीओना चारित्रने धिक्कार छे!' कह्युं छे के–

नितंबिन्यः पतिं पुत्रं, पितरं भ्रातरं क्षणम् ।
आरोपयंत्यकार्येऽपि, दुर्वृत्ताः प्राणसंशये ॥

"दुराचरणी स्त्रीओ पोताना पतिने, पुत्रने, पिताने अने भाइने क्षणवारमां प्राणनो संशय थाय तेना अकार्यमां पण जोडी दे छे." 'हवे दुर्गतिना कारणभूत आ राज्यथी मारे सर्युं.' ए प्रमाणे विचार करी ते ओरमान माताना पुत्र गुणचंद्रने राज्य आपी पोते दीक्षा लइ चाली नीकळ्या.

अनुक्रमे उग्र विहार करतां करतां शास्त्रना पारगामी थया. एकदा उज्जयिनीथी आवेला एक साधुए सागरचंद्र मुनिने कह्युं के 'हे स्वामिन्! उज्जयिनीमां तमारो भ्रातृपुत्र (भत्रीजो) अने पुरोहितपुत्र बंने मळी साधुओनी मोटी हीलना करे छे. विशेष कहेवाथी शुं!' ते सांभळी गुरुनी आज्ञा लइने तेमने प्रतिबोध करवाने माटे सागरचंद्र मुनि उज्जयिनी आव्या अने ज्यां राजपुत्र अने पुरोहितपुत्र हता त्यां जइ उच्च स्वरे धर्मलाभ आप्यो. ते सांभळी पेला बंने जणा खुशी थतां थतां तेनी पासे आव्या, अने 'चालो आजे धर्मलाभ आप्योछे तेने आपणे नचावीए.' एटलुं कही ते मुनिने हाथथी पकडीने महेल उपर लइ गया. पछी बारणुं बंध करीने तेओ साधुने कहेवा लाग्या के–'तुं नाच, नहितो अमे तने मारशुं.' त्यारे सागरचंद्रे कह्युं के–'तमे वाजित्र वगाडो एटले ते प्रमाणे हुं नृत्य करुं.' तेओए कह्युं के 'अमने वाजित्र वगाडतां आवडतुं नथी.' त्यारे साधुए कह्युं के–'मने नृत्य करतां पण आवडतुं नथी.' त्यारे तेओए कह्युं के–'तो अमारी साथे मल्लयुद्ध कर.' साधुए कह्युं के 'भले एम हो.' पछी सागरचंद्र मुनिए मल्लयुद्ध करतां ते कळानो पूर्वे अभ्यास करेलो होवाथी ते बंने जणना शरीरसंधि जुदा करी नांख्या, अने बारणुं उघाडी पोतानां

उपकरणो लइ नगरनी बहार नीकळी वनमां कायोत्सर्गमुद्राए स्थित थया. अहीं राजपुत्र अने पुरोहितपुत्र बंनेने घणी वेदना थवाथी ते पोकार करवा लाग्या. एटले राजाए आवीने पूछ्युं के-'तमने शुं थयुंछे?' त्यारे बीजा लोकोए कह्युं के-'अहीं एक मुनि आव्या हता तेणे कंइक करेलुं जणायछे.' एटले राजा ते मुनिने खोळतो खोळतो वनमां गयो. त्यां पोताना मोटा भाइने जोइ वांदीने अरज करवा लाग्यो के-'हे स्वामी! आपनी जेवा महात्माओने बीजाने पीडा करवी घटती नथी.' ते सांभळीने सागरचंद्रे कह्युं के-'तुं चंद्रावतंसक राजानो पुत्र पांचमो लोकपाळ छे, छतां साधुओने दुःख देतां तारा पुत्रने तेमज पुरोहितपुत्रने शामाटे अटकावतो नथी? आवो अन्याय केम प्रवर्तावेछे?' त्यारे मुनिचंद्र राजाए कह्युं के-"मारो अपराध क्षमा करो. ते पुत्रोए जेवुं कर्युं तेवुं तेनुं फळ भोगव्युं. परंतु आप पिताने स्थाने छो, माटे कृपा करीने ते बंनेने साजा करो. आपना शिवाय तेओनां अस्थि ठेकाणे लाववाने बीजो कोइ शक्तिवान नथी." एम कहीने बंनेने सागरचंद्र मुनि समीपे लाववामां आव्या. त्यारे तेमणे कह्युं के-'जो जीववानी इच्छा करता हो तो संयम लेवानुं कबुल करो.' तेमणे ए प्रमाणे कबुल करवाथी तरतज तेओने साजा करवामा आव्या, एटले चारित्र ग्रहण करीने तेओ साथेज चाली नीकळ्या.

ए बे मुनिमां पुरोहितपुत्र जाते ब्राह्मण होवाथी तेणे जातिमद करवाने लीधे नीच गोत्र बांध्युं. चारित्र पाळीने प्रांते ते बंने देवता थया. तेओ परस्पर स्नेहवाळा हता तेथी तेओए संकेत कर्यो के 'आपणामांथी जे प्रथम च्यवीने मनुष्य थाय तेने स्वर्गमां रहेला बीजाए प्रतिबोध पमाडवो.' पछी काळांतरे प्रथम पुरोहितजीव च्यवीने राजगृह नगरमां मेहेर नामना चंडालना घरमां मेती नामनी भार्यानी कुक्षिमां जातिमद करवाथी अवतर्यो. ते चंडालनी भार्या ते शहेरमां कोइ शेठने घेर हमेशां आवेछे. तेने शेठनी स्त्री साथे अत्यंत मैत्री थइछे. शेठाणी मृतवत्सा (छोकरां जीवे नहि ते) ना दोषवाळी होवाथी तेने छोकरां जीवतां नथी. ते वात तेणे चांडालनी स्त्रीने कही. तेणे कह्युं के-'आ वखते जो मने पुत्र थशे तो हुं तमने आपीश.' काळे करीने तेने पुत्र जन्म्यो एटले ते पुत्र तेणे शेठाणीने गुप्तपणे आप्यो. शेठाणीए पुत्रजन्मनो महोत्सव कराव्यो, अने मेतार्य एवुं ते छोकरानुं नाम पाड्युं. अनुक्रमे ते सोळ वर्षनो थयो. ते अवसरे मित्रदेव (राजपुत्रनो जीव) पूर्वनो संकेत होवाथी तेनी पासे आवीने तेने बोध करवा लाग्यो, पण ते प्रतिबोध पाम्यो नहि. अन्यदा तेना पिताए आठ वणिकपुत्रीओनी साथे तेनो विवाह कर्यो. तेना लग्नवखते मित्रदेवे आवी चांडालस्त्रीना शरीरमां प्रवेश कर्यो. तेथी ते लोकोने कहेवा लागी के-'आ मारो पुत्र छे. तमे

तेने पोतानी पुत्रीओ शामाटे आपोछो ? एनो विवाह तो हुं करीश.' ए प्रमाणे कही बळात्कारे ते पुत्रने पोताने घेर लइ गइ. पछी देवे त्यां आवीने मेतार्यने कह्युं के–'तें मारुं कहेवुं केम कर्युं नहि ? जोयुं, तारो केवो तिरस्कार कराव्यो ? माटे हजु मारा कहेवा प्रमाणे चाल अने चारित्र ग्रहण कर.' मेतार्ये कह्युं के–"हुं दीक्षा केवी रीते ग्रहण करुं ? तमे मने चांडाळ ठरावीने लोकोनी अंदर हलको पाड्यो, तेथी जो तमे मने पाछो मोटो बनावो, शेठ मने पुत्र तरीके स्थापे अने श्रेणिक राजा पोतानी पुत्री मने आपे तो हुं चारित्र लउं." देवे ते प्रमाणे सघळुं करवानुं कबुल कर्युं. पछी देवे अशुचिने बदले रत्नोनी लिंडीओ करतो एक बकरो तेने घेर बांध्यो, अने चांडालने प्रेरणा करी तेथी तेणे रत्नथी भरेलो एक एक थाळ लइ जइने त्रण दिवस सुधी श्रेणिक राजाने भेट कर्यो. त्यारे अभयकुमारे पूछ्युं के–'एटलां बधां रत्नो तारी पासे क्यांथी ? तेणे कह्युं के 'मारे घेर तो बकरो रत्नोनी लींडीओ करेछे.' फरीथी अभयकुमारे कह्युं के 'तुं अमने आ रत्नो शामाटे भेट करेछे ?' चांडाले कह्युं के 'राजा मारा पुत्रने पोतानी पुत्री परणावे माटे हुं भेट करुंछुं.' राजाए कह्युं के 'ए केम बने ?' अभयकुमारे कह्युं के 'एक बखत तुं बकराने अहीं लइ आव, पछी यथायोग्य करशुं.' तेणे बकरो लावीने राजाने घेर बांध्यो; एटले त्यां तो ते दुर्गंधयुक्त विष्टा करवा लाग्यो. ते जोइ अभयकुमारे राजाने कह्युं के 'आ कोइ देवनो प्रभाव जणाय छे, नहि तो आ राजपुत्रीनी मागणी केवी रीते करी शके ? माटे तेनी परीक्षा करवी जोइए. जे कार्य मनुष्य करी शके नहि ते कार्य जो ते करे तो जरुर तेमां देवनो प्रभाव खरो.' आ प्रमाणे विचार करी तेणे चंडालने कह्युं के "जो आ राजगृह नगरनी आसपास नवो सोनानो किल्लो करी आपे, वैभार पर्वत उपर सेतुबंध (सडक) बांधे, गंगा, यमुना, सरस्वती ने क्षीरसागर–ए चारेने अहीं लावे अने तेमना पाणीथी तारा पुत्रने नवरावे तो श्रेणिक राजा पोतानी पुत्री तेने आपे." देवप्रभावथी अभयकुमारना कहेवा प्रमाणे सर्व एक रात्रिमां थयुं. पछी ते जळवडे चांडाळपुत्रने नवरावी, पवित्र करीने राजपुत्री परणावी. एटले पेला वणिकोए पण पोतानी पुत्रीओ परणावी. ए प्रमाणे तेणे नव स्त्रीओनी साथे पाणिग्रहण कर्युं. एटले देवे आवीने कह्युं के 'हवे दीक्षा ले.' त्यारे मेतार्ये कह्युं के 'हुं हमणाज परणेलो छुं, तेथी बार वर्ष सुधी आ स्त्रीओनी साथे विषयसुख भोगवीने पछी चारित्र ग्रहण करीश.' देवे पण ते कबुल कर्युं. बार वर्ष गया पछी फरीथी देव आव्यो. त्यारे स्त्रीओए हाथ जोडी फरीथी बार वर्ष माग्यां. विनयथी रंजित थयेला देवे फरीथी बार वर्ष आप्यां. ए प्रमाणे चोवीश वर्ष सांसारिक सुख भोगवी श्री महावीर स्वामी

पासे व्रत ग्रहण करी नव पूर्वनुं अध्ययन करी जिनकल्पीपणुं अंगीकार करीने एकल विहारी थया.

विहार करतां करतां एक दिवस मासक्षपणने पारणे राजगृह नगरमां भिक्षाने माटे भमतां एक सोनीने घेर जइने धर्मलाभ आप्यो. त्यारे ते सोनी श्रेणिक राजानी आज्ञाथी जिनभक्तिने अर्थे घडेला एकसो आठ सोनाना जव बहार मूकीने घरमां गयो. ते समये कोइ एक क्रौंच पक्षी त्यां आवीने ते सर्व जव गळी गयो. मेतार्यमुनिए ते जोयुं अने क्रौंच पक्षी पण उडीने उंचे बेठुं. सोनी बहार आव्यो अने जव नहि जोवाथी साधुने ते विषे पूछ्युं. साधुए विचार कर्यो के 'जो हुं पक्षीनुं नाम लइश तो अ सोनी तेने मारी नाखशे.' तेथी दयाने लीधे मौन धारण करीने उभा रह्या. साधुओने ते योग्यज छे. कह्युं छे के—

बहु शृणोति कर्णाभ्यामक्षिभ्यां बहु पश्यति ।
न च दृष्टं श्रुतं सर्वं, साधुमाख्यातुमर्हति ॥

"साधु बंने कानथी घणुं सांभळेछे अने बंने नेत्रथी घणुं जुएछे; छतां पण साधु सघळुं जोएलुं अने सांभळेलुं कहेवाने योग्य नथी."

साधुने वारंवार पूछतां छतां पण जवाब न देवाथी 'आ चोर छे' एम मानी सोनीए क्रोधवश थइ लीला चामडाथी तेमनुं माथुं वींटीने तेमने तडकामां उभा राख्या. पछी तडकाने लीधे कठण थयेलुं आर्द्र चामडुं खेंचावाथी नसोना खेंचाणने लीधे ते साधुनां बंने नेत्रो नीकळी पड्यां, तेथी घणुं दुःख उत्पन्न थया छतां पण तेमणे तेना उपर रोष आण्यो नहि. क्षमाना गुणथी सघळां कर्मनो क्षय करी आयुष्यने अंते केवलज्ञान पामीने मेतार्य मुनि मोक्षे गया. ते समये लाकडानो बोजो पडवाथी उत्पन्न थयेला शब्दना भयथी व्याकुल थयेला पेला पक्षीए सघळा जवो वमी नाख्या. ते जवोने जोइ भय पामेलो सोनी विचार करवा लाग्यो के 'अरे! में बहु खराब काम कर्युं! में श्रेणिक राजाना जमाइ मेतार्य नामना मुनिने हण्या. जो राजा आ वात जाणशे तो जरुर मारो सहकुटुंब नाश करशे.' पछी भयना मार्या तेणे परिवार सहित महावीर स्वामी पासे जइने चारित्र ग्रहण कर्युं. चारित्र पाळी, पापनी आलोचना करीने ते सद्गतिए गयो.

ए प्रमाणे अन्य मुनिमहाराजाए पण क्षमा राखवी एवो आ कथानो उपदेश छे.

जो[1] चंदणेण[2] बाहुं[3], आलिंपइ[4] वासिणा[5] वि[6] तच्छेइ ।
संथुणइ[7] जो[8] अ[9] निंदइ[10], महरिसिणो[11] तत्थ[12] समभावा[13] ॥ ९२ ॥

अर्थ—"कोइ चंदनवडे भुजाने विलेपन करे अने कोइ वांसलावडे तेने छेदे, कोइ स्तुति करे अने कोइ निंदा करे, मुनि ते सर्वनी उपर समभाववाळा होय." ९२.

गाथा ९२—बाहु. वासिणा—वृक्षभिदाशस्त्रेण.

भक्तिवडे कोइ बावनाचंदनथी विलेपन करे अने स्तुति करे तेमज द्वेषवडे कोइ भुजानो छेद करे अने निंदा करे; ते बंनेनी उपर महर्षिओ समभाव राखे अर्थात् मुनि शत्रु मित्र उपर समभाववाळाज होय.

सीहगिरिसुसीसाणं, भद्दं गुरुवयणसद्दहंताणं ।
वयरो किर दाही वायणत्ति, नवि कोविअं वयणं ॥ ९३ ॥

अर्थ—" गुरुमहाराजना वचनने सद्दहनारा एवा सिंहगिरि आचार्यना सुशिष्योनुं कल्याण थाओ. ते शिष्योए ' आ वज्र मुनि तमने वांचना आपशे ' एवा गुरुमहाराजना वचनने असत्य न कर्युं." ९३. अर्थात् आ बाळक वज्रमुनि अमने शुं वांचना आपशे? एवो विचार पण कर्यो नहि. गुरुमहाराजना वचन प्रत्ये आवी दृढ श्रद्धा जेने होय तेवा शिष्योनुं कल्याण थाय तेमां शुं आश्चर्य ! अहीं वज्रस्वामीनुं दृष्टांत जाणवुं. २६.

वज्रस्वामीनुं दृष्टांत.

बाल्यावस्थामां पदानुसारिणी लब्धिना बळथी साध्वीमुखे सांभळीने अग्यार अंगनुं जेणे अध्ययन कर्युंछे, अने जेने आठ वर्षनी उमरे गुरुए दीक्षा आपेली छे एवा वज्रस्वामी गुरुनी साथे विहार करता हता. एक दिवस वज्रस्वामीने उपाश्रयमां मूकी सर्व साधुओ गोचरीए गया हता. ते अवसरे वज्रस्वामीए सघळा मुनिओनी उपधिओ (आसन विगेरे उपकरणो)ने हारबंध गोठवी तेमां मुनिओनी स्थापना करीने (मुनिओ बेठा छे एम मानीने) पोते वचमां बेसी मोटे स्वरे तेमने आचारांगादिनी वांचना आपता होय तेम बोलवा लाग्या. ते अवसरे स्थंडिलभूमिथी आचार्य आव्या. उपाश्रयनां बारणां बंध जोइने गुरुए गुप्त रीते अंदर जोयुं तो वज्रस्वामी सर्व मुनिओनी उपधिने एकठी करी छात्रबुद्धिथी भणावता हता. गुरुए चिंतव्युं के ' जो हुं एकदम बारणुं उघडावीश तो ते शंकित थशे. ' एम विचारी मोटे स्वरे ' निसिहि ' ए प्रमाणे त्रणवार शब्दोच्चार कर्यो. ते सांभळी गुरु आव्या छे एम जाणी वज्रस्वामीए लघुलाघवी कळाए एकदम दरेक उपधिने तेने स्थाने मूकी दइने बारणुं उघाड्युं. गुरुए विचार्युं के 'आ पुरुषरत्नमां आटलुं बधुं ज्ञान छे, माटे आनुं ज्ञान अजाणपणामां न जाओ.' एवुं विचारी बीजे दिवसे सिंहगिरि आचार्य कंइ कार्यनुं मिष करीने बीजे गाम जवाने उद्युक्त थया. ते वखते साधुओए पूछ्युं के ' हे स्वामी ! अमने वांचना कोण आपशे ? ' गुरुए कह्युं के 'आ वज्र नामना लघु मुनि तमने वांचना आपशे.' तेओए कह्युं के 'तहत्ति' (बहु सारुं). ते वखते 'आ बाळक अमने शुं वांचना आपी शकशे ? ' एवी शंका पण तेओए करी नहि. गुरु बीजे गाम गया. शिष्योए सिद्धांतनी वांचना वज्रमुनि पासे लीधी. अध्ययन

गाथा ९३—नविकोविअंति नासत्यंकृत.

बहु सारी रीते थयुं. पछी गुरुमहाराज पधार्या अने शिष्योने पूछ्युं के–'कांइ अध्ययन थयुं के केम ?' तेओए कह्युं के 'अध्ययन बहु सारी रीते थयुं, थोडा दिवसमां घणो अभ्यास थयो; माटे हवे पछी आ वज्रस्वामीज अमारा वांचनाचार्य थाओ.' ए प्रमाणे साधुओए अरज करवाथी गुरुए वज्रमुनिने आचार्यपद आप्युं अने वांचनाचार्य तरीके स्थाप्या.

"जेवी रीते सिंहगिरिना शिष्योए गुरुनुं वचन मान्य कर्युं तेवी रीते बीजाओए पण गुरुना वचनमां संदेह करवो नहि" एवो आ कथानो उपदेश छे.

मिण गोणसंगुलीहिं, गणेहिं वा दंतचक्कलाइ से ।
इच्छंति भाणिऊणं, कज्जं तु तएव जाणंति ॥ ९४

अर्थ–"हे शिष्य ! आ सर्पने अंगुलिवडे माप अथवा तेना दंतस्थान–दांत गण'; एवी रीते गुरुमहाराजे कहे सते शिष्य 'इच्छुं छुं' अथवा 'तहत्ति' कही ते कार्य करवा चाल्यो जाय पण विचार न करे.कारणके तेनुं कार्य तो गुरुमहराजाज जाणे छे" ९४. एटले तेम शामाटे करवा कहे छे ते हेतु गुरुमहाराज समजे छे, तेमा विनीत शिष्यने विचारवानी जरुरज नथी. तेथी तेमां ते विलंब पण करतो नथी. जेने आवी गुरुमहाराजनी प्रतीति होय तेनुंज खरुं विनीतपणुं समजवुं.

कारणविऊ कयाई, सेयं कायं वयंति आयरिया ।
तं तह सद्दहियव्वं, भवियव्वं कारणेणं तहिं ॥ ९५ ॥

अर्थ–"कारणना जाण एवा आचार्य कोइक वखत 'आ कागडो श्वेत छे' एम बोले तो तेज प्रकारे सर्दहवुं, कारणके तेमां कांइ पण कारणनुं होवापणुं छे." ९५. कारण विना आचाय तेवुं कहेज नहि, माटे आचार्यना तेवा वचनमां पण शंका करवी नहि.

जो गिण्हई गुरुवयणं, भण्णंतं भावओ विसुद्धमणो ।
ओसहमिव पीज्जंतं, तं तस्स सुहावहं होई ॥ ९६ ॥

अर्थ–"भावथी विशुद्ध मनवाळो जे शिष्य कहेवातुं एवुं गुरुमहाराजनुं वचन ग्रहण करे छे–अंगीकार करे छे तेने औषधनी जेम पीवातुं ते गुरुनुं वचन सुखने आपनारुं थाय छे." ९६. जेम पीतां कडवुं लागे एवुं पण औषध पीधुं छतुं परिणामे घणा सुखने आपनारुं थाय छे तेम गुरुनुं वचन पण अंगीकार करतां कदी कष्टकारी लागे तो पण जे अंगीकार करे छे तेने ते परिणामे सुखने आपनारुं आ भव परभवमां हितकारी थाय छे.

गाथा ९४–दंतचक्कलायं—दंतचक्कलाइति दंतस्थानानि तमेव.. गाथा ९५–श्वेतं काकं. गाथा ९६–भन्नंत.

जाणीने कोइ मोटा शेठने घेर गोचरीने माटे गया. ते शेठने घेर व्यंतरना प्रयोगथी एक बाळकने रोतो जोइने गुरुए कह्युं के–' रो नहि ' ए प्रमाणे कही चपटी वगाडी एटले व्यंतरी नासी गइ अने बाळक शान्त थइ गयुं. तेथी खुशी थयेलां तेनां मातापिताए गुरुने लाडु वहोराव्या; ते आहार दत्तने आपीने गुरुए तेने उपाश्रये मोकल्यो. दत्त विचारवा लाग्यो के ' आवुं स्थापनाकुळे[1] छतां पण गुरुए मने बहु रखडाव्यो. पछी गुरुए पण सामान्य कुळमां जइ नीरस आहार ग्रहण करी उपाश्रये आवीने आहार कर्यो. प्रतिक्रमण करतां दिवसना दोषोनी आलोचनाने अवसरे गुरुए दत्तने कह्युं के–' रे महानुभाव ! तें आजे धात्रीपिंड (बाळकोने प्रसन्न करी तेमनां मावाप पासेथी खोराक लेवो ते)नुं भक्षण कर्युं छे, माटे सारी रीते तेनी आलोचना कर. ' ए सांभळीने दत्ते विचार्युं के–' गुरु मारा सूक्ष्म दोषो पण जुएछे अने पोताना मोटा मोटा दोषो पण जोता नथी. ' आम विचारीने ते गुरु उपर मत्सर धरवा लाग्यो. पछी प्रतिक्रमण करीने पोताने स्थानके जतां गुरुना गुणथी रंजित थयेली शासनदेवीए ' आ दत्तने गुरुना पराभवनुं फळ बतावुं. ' एवुं विचारी घणो अंधकार विकुर्वी तेने मोह पमाड्यो. दत्त कइं पण जोइ शकतो न होवाथी आकुळव्याकुळ थवा लाग्यो अने पोकार करवा लाग्यो. गुरुए कह्युं के ' अहीं आव. ' त्यारे तेणे कह्युं के ' त्यां केवी रीते आवुं ? हुं द्वार पण जोइ शकतो नथी. ' त्यारे गुरुए पोतानी आंगळी थुंकवाळी करीने उंची करी दीवानी माफक बळती देखाडी. दत्ते ते जोइने विचार कर्यो के ' गुरु बहु सावद्य (अति दोषवाळो) एवा दीपक पण राखता जणायछे. ' ए प्रमाणे तेने गुरुना अवगुणोज भासवा लाग्या. पछी शासनदेवताए कह्युं के ' अरे दुरात्मन् ! पापी ! तुं गौतम जेवा गुरुनो पराभव करेछे ? शुं तारे दुर्गतिमां जवुं छे ? ' ए प्रमाणे घणां कर्कश वाक्योथी तेने शिक्षा आपी. तेथी दत्त मुनि पश्चात्ताप करतो सतो गुरुचरणनी अंदर पड्यो अने वारंवार पोतानो अपराध खमाव्यो. छेवटे पापकर्मनी सम्यक् प्रकारे आलोचना करीने ते सद्गतिए गयो.

आ प्रमाणे दत्त मुनिना दृष्टांतथी शिष्ये गुरुनी अवज्ञा करवी नहि, एवो आ कथानो उपदेश छे.

आयरिय भत्तिरागो, कस्स सुनक्खत्त महरिसि सरिसो ।
अवि जीविअं ववसिअं, न चेव गुरुपरिभवो सहिओ ॥१००॥

अर्थ–"गुरु उपर भक्तिरागनुं दृष्टांत कहेछे–आचार्य उपर भक्तिराग सुनक्षत्र महर्षि जेवो कोने छे के जेणे जीवितव्य पण तजी दीधुं, परंतु गुरुनो पराभव सहन कर्यो नहि." १००. अहीं सुनक्षत्र मुनिनो संबंध जाणवो २८.

---

[1] मुकरर करी राखेला घर के ज्याथी योग्य आहार गमे त्यारे मळी शके ते स्थापनाकुळ कहेवायछे.

सुनक्षत्र मुनिनुं वृत्तांत.

एक वखत श्रीवीरप्रभु श्रावस्ती नगरीमां समवसर्या, त्यां गोशालक पण आव्यो. नगरमां एवी वात फेलाइ के आजे नगरमां बे सर्वज्ञ आवेला छे. एक श्रीवीरप्रभु अने बीजो गोशालक. ए वात गोचरीए गयेला श्रीगौतम स्वामीए सांभळी, तेथी तेणे भगवंतने पूछ्युं के 'आ गोशालक कोण छे के जे लोकोनी अंदर सर्वज्ञ एवुं नाम धरावे छे.' भगवाने कह्युं के-"हे गौतम! सांभळ. सरवण नामना गाममां मंखलि नामनो मंख जातिनो एक पुरुष हतो. तेने भद्रा नामनी स्त्री हती, तेनी कुक्षिथी ते जन्म्यो छे. जेने घणी गायो हती तेवा एक ब्राह्मणनी गौशाळामां जन्मवाथी तेनुं नाम गोशालक पाडयुं हतुं. ते युवान थयो तेवामां हुं छद्मस्थ अवस्थाए फरतो राजगृह नगरने विषे चातुर्मास रह्यो हतो. ते पण फरतो फरतो त्यां आव्यो. में चार मासक्षपणनां पारणां परमान्न(क्षीर) वडे कर्यां. तेनो महिमा जोइने ते विचार करवा लाग्यो के' जो हुं आनो शिष्य थाउं तो दररोज मिष्टान्न मळे.' ए प्रमाणे विचारी ' हुं तमारो शिष्य छुं ' एम कही मारी पाछळ लाग्यो. ते मारी साथे छ वर्ष पर्यंत भम्यो. एक दिवस कोइ योगिने जोइने तेणे मश्करी करी के ' आ जूओनुं शय्यातर छे' तेथी क्रोधित थयेला ते योगिए तेनापर तेजोलेश्या मूकी. में शीतलेश्या मूकीने तेने वचाव्यो. पछी तेणे तेजोलेश्या उत्पन्न करवानो उपाय मने पूछ्यो. में पण भावि भाव जाणीने तेनो उपाय कह्यो, एटले ते माराथी जुदो पड्यो. तेणे छ मास कष्ट वेठी तेजोलेश्या साधी, अने अष्टांग निमित्तोनो पण जाण थयो. पछीथी आ प्रमाणे जनसमुदाय आगळ ते पोतानुं सर्वज्ञपणुं स्थापित करेछे; परंतु ते खोटुं छे. ते कांइ जिन नथी अने सर्वज्ञ पण नथी. " आ प्रमाणेनी भगवंते कहेली हकीकत सांभळीने त्रिक (त्रण मार्ग मळे ते स्थान) मां, चोकमां अने राजमार्गमां सघळा लोको कहेवा लाग्या के ' आ गोशालक सर्वज्ञ नथी. ' ए सघळुं वृत्तांत गोशालके कोइना मुखथी सांभळ्युं, एटले तेने क्रोध उत्पन्न थयो. ते अवसरे आनंद नामना एक साधुने गोचरीए जतां जोइने तेणे बोलाव्या अने कह्युं के " हे आनंद ! तुं एक दृष्टांत सांभळ- केटलाएक वाणीआ करियाणांनां गाडां भरीने चाल्या. तेओ जंगलमां गया. त्यां तेमने घणी तृषा लागवाथी पाणीनी शोध करतां तेओए चार राफडानां शिखरो जोयां. तेओए एक शिखर तोडयुं, एटले तेमांथी गंगाजळ जेवुं निर्मल जळ नीकल्युं. सघळाओ ते जळ वारंवार पीने संतुष्ट थया. बीजुं शिखर तोडवा जतां साथेना कोइ एक वृद्ध माणसे तेमने वार्या, परंतु तेओ वार्या रह्या नहि. ते शिखर तोडतां अंदरथी सोनुं नीकल्युं. ए प्रमाणे त्रीजुं शिखर भेदतां अंदरथी रत्नो नीकल्यां. चोथुं शिखर भेदवा वखते ते वृद्धे घणा वार्या छतां पण तेओए ते शिखर तोडयुं तो तेमांथी अति भयंकर दृष्टिविष सर्प नीकळ्यो. तेणे सूर्य सामुं जोइने तेमनी उपर दृष्टि फेंकी, जेथी ते सघळा भस्म थइ गया. पेलो वृद्ध वाणी-

यो बच्यो. तेवी रीते हे आनंद ! तारो धर्माचार्य पण पोतानी ऋद्धिथी तृप्त न थतां मारी इर्ष्या करेछे तेथी हुं तेने बाळीने भस्म करी नाखीश. परंतु तुं तेने हितोपदेश देनार थवाथी तने हुं बाळीश नहि". ए प्रमाणे सांभळीने भयभीत थयेला आनंदे भगवानने सर्व हकीकत कही, भगवंतनी आज्ञाथी गौतम आदि मुनिओने ते वात जणावी; जेथी तेओ सर्व भगवंतथी दूर पोतपोताने स्थाने बेसी गया. एटलामां गोशालक त्यां आवी प्रभुने कहेवा लाग्यो के 'हे काश्यप ! तुं मने पोतानो शिष्य कहेछे ते खोटुं छे. ते तारो शिष्य तो मरी गयो. हुं तो तेनुं शरीर बळवान जाणीने ते शरीरमां स्थिति करीने रह्यो छुं.' ए सांभळीने 'आ भगवाननी अवज्ञा करेछे' एम जाणी गुरुभक्तिमां अत्यंत रागवाळा सुनक्षत्र नामना साधुए गोशालकने कह्युं के 'अरे ! तुं तारा धर्माचार्यनी निंदा केम करेछे ? तेज तुं गोशालक छे (बीजो नथी).' ए सांभळीने गोशालके क्रोधवश थइ तेजोलेश्याथी सुनक्षत्र मुनिने बाळी नाख्या. समाधिथी मृत्यु पामी ते आठमा देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थया. ए समये बीजा सर्वानुभुति नामना साधुए पण सर्व जीवोने खमावी अनशन करी गोशालकनी सन्मुख आवीने कह्युं के 'तुं स्वधर्माचार्यनी निंदा केम करेछे ?' तेथी दुष्ट गोशालके तेमने पण बाळी नाख्या. ते मरीने बारमा देवलोकमां उत्पन्न थया. पछी भगवाने कह्युं के "हे गोशालक ! तुं शामाटे तारा देहने गोपवे छे? जेम कोइ चोर भागतो सतो कोइ न देखे तेटला माटे तरणुं पोतानी आडुं धरेछे पण तेथी ते छानो रहेतो नथी, तेवी रीते तुं पण माराथीज बहुश्रुत थयो छे अने मारीज अपलापना करेछे." इत्यादि वचनोथी क्रोधित थइने तेणे भगवाननी उपर पण तेजोलेश्या मूकी. ते तेजोलेश्या भगवानने त्रण प्रदक्षिणा करी पाछी वळीने गोशालकना शरीरमांज पेठी. पछी गोशालक बोल्यो के 'हे काश्यप ! तुं आजथी सातमे दिवसे मरण पामीश.' त्यारे भगवाने कह्युं के 'हुं तो सोळ वर्ष सुधी केवलीपणे विचरीश, परंतु तुं तो आजथी सातमे दिवसे मोटी वेदना भोगवीने मरण पामीश.' पछी गोशालक पोताने स्थाने आव्यो. सातमे दिवसे शांत परिणामथी समकित फरश्युं तेथी ते मनमां विचार करवा लाग्यो के 'अरे ! में आ अत्यंत विरुद्ध आचरण कर्युं. में भगवाननी आज्ञानो लोप कर्यो ! में साधुओनो घात कर्यो ! आवता भवमां मारी शी गति थशे ?' ए प्रमाणे विचारी शिष्योने बोलावी कह्युं के "मारा मरण पछी मारा कलेवरने पगथी बांधीने श्रावस्ती नगरीमां चारे तरफ फेरवजो. कारणके हुं जिन नहि छतां 'हुं जिन छुं' एवुं में लोकमां कहेवराव्युंछे." आ प्रमाणे आत्मनिंदा करतो सतो मरण पामीने ते बारमा देवलोकमां उत्पन्न थयो. पछी शिष्योए गुरुनुं वचन मान्य करवा माटे उपाश्रयनी अंदर श्रावस्ती नगरी आलेखी कमाड बंध करी कलेवरने पगे रज्जु बांधीने चारे तरफ फेरव्युं.

ए प्रमाणे सुनक्षत्र मुनिनी पेठे अन्य साधुए पण गुरुभक्तिमां राग करवो, एवो आ कथानो उपदेश छे.

पुन्नेहिं चोइया पुरकडेहिं, सिरिभायणं भविअसत्ता ।
गुरुं मागमेसिभद्दा, देवयमिव पज्जुवासंति ॥ १०१ ॥

अर्थ–" पूर्वकृत पुण्यवडे प्रेरायेला, लक्ष्मीना भाजन अने आगामि काळे जेमनुं कल्याण थवानुं छे एवा भव्य जीवो पोताना गुरुने देवतानी जेम सेवे छे. अर्थात् जेवी रीते देवनी सेवा करे तेवी रीते गुरुनी पण सेवा करे छे. " १०१.

बहु सुक्ख सयसहस्साण, दायगा मोअगा दुहसहस्साणं ।
आयरिआ फुंड मेअं, केसि पएसिअ तेहेउ ॥ १०२ ॥

अर्थ–"बहु प्रकारना लाखोगमे सुखना आपनारा, अने सेंकडो अथवा हजारो दुःखथी मूकावनारा धर्माचार्य होय छे, ए वात प्रगट छे (एमां संदेह जेवुं नथी). प्रदेशी राजाने केशि गणधर तेवीज रीते सुखना हेतु थयेला छे. " १०२.

अहीं केशि गणधर अने प्रदेशी राजानो उपनय जाणवो. ३९

जंबूद्वीपना भारतवर्षमां कैकयार्द्ध देशमां श्वेतांबी नामनी नगरी छे. त्यां अधर्मीनो शिरोमणि, जेना हस्त निरंतर रुधिरथी लेपायेलाज रहे छे एवो, परलोकनी दरकार विनानो अने पुण्यपापमां निरपेक्ष प्रदेशी नामनो राजा हतो. तेने चित्रसारथि नामनो मंत्री हतो. तेने एक दिवसे प्रदेशी राजाए श्रावस्ती नगरीमां जितशत्रु राजानी पासे मोकल्यो. त्यां ते केशिकुमार नामना मुनिनी देशना सांभळीने परम श्रावक थयो. पछी तेणे केशिकुमारने विज्ञप्ति करी के ' हे स्वामिन् ! एक वखत आपे श्वेतांबी नगरीए पधारवानी कृपा करवी. आपने तेथी लाभ थशे. ' केशिगणधरे कह्युं के ' तमारो राजा बहु दुष्ट छे तेथी केवी रीते आवीए ?' चित्रसारथिए कह्युं के ' राजा दुष्ट छे तो तेथी शुं ? त्यां बीजा भव्य जीवो पण घणा वसे छे. ' त्यारे केशिकुमारे कह्युं के ' प्रसंगे जोइशुं. ' पछी चित्रसारथि श्वेतांबीए आव्यो. अन्यदा केशिकुमार पण घणा मुनिओथी परिवृत थइ श्वेतांबीनी बहार मृगवन नामना उपवनमां समवसर्या. चित्रसारथि तेमनुं आववुं सांभळी मनमां विचार करवा लाग्यो के ' हुं राज्यचिंतक छतां दुर्बुद्धि अने पापी एवो मारो राजा नरके न जवो जोइए, माटे तेने आ मुनि पासे लइ जाउं. ' एवुं विचारी अश्वक्रीडाना मिषथी राजाने नगर बहार लइ गयो. पछी अति श्रमथी थाकी गयेल राजा श्री केशिकुमारे अलंकृत करेला वनमां आव्यो. त्यां घणा लोकोने देशना देतां तेमने जोइने राजाए चित्रसारथिने पूछ्युं के ' आ मुंडो जड अने अज्ञानी लोकोनी आगळ शुं कहे छे ? ' चित्रसारथिए

गाथा १०१—पुण्णेहिं. गाथा १०२—दुहसयाणं. तेहेउ—तद्वत् : सुखहेतुः

कह्युं के ' हुं जाणतो नथी. ' जो आपनी इच्छा होय तो चालो. त्यां जइने सांभळीए. ए प्रमाणे कहेतां राजा चित्रसारथिनी साथे त्यां गयो, अने वंदनादि विनय कर्या विना गुरुने पूछ्युं के ' आपनो हुकम होय तो बेसुं ? ' गुरुए कह्युं के ' आ तमारी भूमि छे, माटे इच्छा मुजब करो. ' ए प्रमाणे सांभळीने राजा तेमनी आगळ बेठो. तेने बेठेलो जोइने आचार्ये विशेषे करीने जीव आदिनुं स्वरूप वर्णव्युं. ते सांभळीने राजाए कह्युं के " आ सर्व असंबद्ध छे. जे वस्तु प्रत्यक्ष देखाय तेज सत् होय छे. जेम पृथ्वी जळ, तेज ने वायु प्रत्यक्ष देखाय छे तेम आ जीव प्रत्यक्ष देखातो नथी तेथी आकाशपुष्पवत् अविद्यमान एवी जीवसत्ता केम मानी शकाय ? " त्यारे केशिकुमारे कह्युं के "हे राजा ! जे वस्तु तारी नजरे देखाय नहि ते शुं सघळानी नजरे न देखाय ? जो तुं कहीशके ' जे हुं देखुं नहि ते सर्व असत्य छे ' तो ते मिथ्या कथन छे. कारण के सघळाए जोयुं होय अने एके न जोयुं होय तो ते असत्य ठरतुं नथी. वळी जो कहीश के ' सघळाओ जोइ शकता नथी ' तो तुं शुं सर्वज्ञ छे के जेथी बधा जोइ शकता नथी एवी तने खबर पडी ? जे सर्वज्ञ छे ते तो जीवने प्रत्यक्ष जुए छे. तुं तारा शरीरनो अग्र भाग जोइ शके छे पण पृष्ठ भाग जोइ शकतो नथी तो जीवनुं स्वरूप के जे अरूपी छे ते तो शी रीते जोइ शके ? माटे जीवसत्ता छे एम मानीने परलोकनुं साधन छे एम प्रमाण कर. " त्यारे प्रदेशि राजाए कह्युं के ' हे स्वामी ! मारो पितामह अत्यंत पापी हतो ते तमारा मत प्रमाणे नरके जवो जोइए. तेने हुं घणोज प्रिय हतो, पण तेणे आवीने मने कह्युं नहि के पाप करीश नहि, पाप करीश तो नरके जवुं पडशे, त्यारे जीवसत्ताने हुं केवी रीते मान्य करुं ? ' केशिकुमार मुनिए कह्युं के ' तेनो उत्तर सांभळ—तारी सूरीकंता राणीनी साथे विषयसेवन करतां कोइ परपुरुषने जो तुं जुए तो तेने तुं शुं कर ? ' राजाए कह्युं के ' हुं तेने एक घाए बे टुकडा करी मारी नाखुं, एक क्षण कुटुंबमेळाप करवाने माटे तेने घेर जवानी पण रजा आपुं नहि.' गुरुए कह्युं के ' ए प्रमाणे ते नारकीओ पण कर्मथी बंधायेला होवाथी अत्रे आवी शकता नथी.' फरीथी राजाए कह्युं के ' अति धर्मिष्ठ एवी मारी माता तमारा मत प्रमाणे स्वर्गमां गइ हशे. तेणे पण आवीने मने कह्युं नहि के वत्स ! पुण्य करजे. पुण्य करवाथी स्वर्ग मळे छे, तो हुं जीवसत्ताने केवी रीते प्रमाण करुं ? ' त्यारे केशिगणधरे कह्युं के ' तमे भव्य वस्त्र पहेरी चंदन आदिथी शरीरने लिप्त करी स्त्रीनी साथे महेलमां क्रीडा करता हो ते वखते कोइ चांडाल तमने अपवित्र भूमिमां बोलावे तो तमे त्यां जाओ के नहि ? ' राजाए कह्युं के ' न जाउं.' गुरुए कह्युं के ' तेवी रीते देवो पण पोताना भोगोने छोडीने दुर्गंधथी भरेला आ मृत्युलोकमां आवता नथी. कह्युं छे के—

चत्तारिपंचजोयणसयाइं, गंधोअ मणुअ लोगस्स ।
उड्ढं वच्चइ जेणं, न हु देवा तेण आवंति ॥

" आ मनुष्यलोकनो दुर्गंध चारसें पांचसें योजन सुधी उंचो जाय छे, तेथी देवताओ अहीं आवता नथी. " फरीथी राजाए कह्युं के ' हे स्वामी ! एकवार में एक चोरने जीवतो पकड्यो अने लोढानी कोठीमां नाखी तेनुं वारणुं बंध कर्युं. काळे करीने ते कोठीनुं वारणुं उघाडी जोयुं तो चोर मरी गयो हतो अने तेना कलेवरमां घणा जीवडांओ उत्पन्न थयां हतां, पण तेमां छिद्र पडेलां नहोतां तो ते जीवने नीकळवाना अने बीजा जीवोने आववानां छिद्रो तो होवां जोइए. में ते जोयां नहि तेथी कहुं छुं के जीव नथी.' केशिकुमारे कह्युं के ' कोइ एक पुरुषने घरना गर्भागारमां राखवामां आवे अने घरनां सर्व द्वार बंध करवामां आवे; पछी ते मध्ये रह्यो सतो शंख ने भेरी विगेरे वाजित्र वगाडे, तो तेनो शब्द बहार संभळाय के नहि ? ' राजाए कह्युं के ' संभळाय. ' गुरुए कह्युं के ' बहार शब्द आववाथी शुं ओरडानी भींतमां छिद्रो पडेछे ?' राजाए कह्युं के ' पडतां नथी.' गुरुए कह्यु के ' जो रूपी शब्दथी छिद्र पडतां नथी तो अरूपी जीवथी छिद्रो केम पडे ? ' फरीथी प्रदेशी राजाए कह्युं के ' हे स्वामी ! एक चोरना में ककडे ककडा करी तेना दरेक प्रदेश जोया पण तेमां जीव जोवामां आव्यो नहि. ' केशिगणधरे कह्युं के " तुं कठीयारानी जेवो मूर्ख देखाय छे. केटलाएक कठीयाराओ लाकडां लेवाने माटे वनमां गया. तेमांथी एक कठीयाराने कह्युं के ' आ अग्नि छे. तेथी रसोइनो वखत थाय त्यारे रसोइ करजे. कदि आ अग्नि बुझाइ जाय तो आ अरणीना काष्ठमांथी अग्नि उत्पन्न करजे. ' ए प्रमाणे कहीने तेओ गया. अहीं अग्नि बुझाइ गयो तेथी पेला मूर्ख कठीयारे अरणीनुं लाकडुं लावी तेना चूरेचूरा कर्या, परंतु अग्नि उत्पन्न थयो नहि. तेटलामां पेला कठीयाराओ आव्या. तेओए तेनी मूर्खता जाणी बीजुं अरणीनुं काष्ठ लावी तेनुं मथन करीने तेमांथी अग्नि प्रगट कर्यो, अने रसोइ करी भोजन कर्युं. एम जेवी रीते काष्ठनी अंदर रहेलो अग्नि उपायथी सधाय छे तेवी रीते देहमां रहेलो जीव पण साधी शकाय छे. " ए प्रमाणे सांभळीने प्रदेशि राजाए कह्युं के " हे स्वामिन् ! में एक चोरनुं वजन करी तेना श्वासनुं रुंधन करीने तेने मारी नांख्यो. तेने फरीथी तोल्यो तो ते तेटलाज वजननो थयो. त्यारे में जाण्युं के ' जीव नथी. ' जो तेनामां जीव होत तो जीव जतां ते कांइक ओछो थात. " केशिगणधरे कह्युं के " हे महीपति ! जेम पूर्वे जोखेली चामडानी धमणने पाछळथी वायुथी पूर्ण करीने जोखतां पण ते तेटलीज थाय छे–भार वधतो नथी, तेवी रीते जीव संबंधी तुं सारी रीते विचार कर. ज्यारे रूपी द्रव्य रूप वायुथी

भार वध्यो नहि तो अरूपी द्रव्य जीवना जवाथी न्यूनता शी रीते थाय? सूक्ष्म एवा रूपी द्रव्योनी पण विचित्र गति छे तो अरूपी द्रव्यनी विचित्र गति होय तेमां तो शुं कहेवुं! माटे आ बाबतमां तुं शामाटे शंकित थाय छे? आत्मा आपणने अनुमान प्रमाणथी गम्य छे अने केवलीने प्रत्यक्ष प्रमाणथी गम्य छे. वळी 'हुं सुखी छुं हुं दुःखी छुं' ए प्रकारनुं जे ज्ञान थाय छे ते आत्मानुंज लक्षण छे. माटे जेम तलनी अंदर तेल, दुधनी अंदर घी अने काष्ठनी अंदर अग्नि रहेल छे तेम देहनी अंदर जीव रहेलो छे." इत्यादि अनेक प्रश्नोना उत्तर शास्त्रयुक्तिथी आप्या. तेथी संदेहरहित थयेलो राजा विचार करवा लाग्यो के 'आ वात सत्य छे, आ ज्ञानने धन्य छे, पछी गुरुने नमस्कार करीने राजाए विज्ञप्ति करी के 'हे भगवन्! तमारा उपदेश रूपी मंत्रथी मारा हृदयमां रहेलो मिथ्यात्व रूपी पिशाच भागी गयो, परंतु कुलपरंपराथी आवेला नास्तिक मतने हुं केवी रीते छोडुं?' त्यारे केशिकुमार मुनिए कह्युं के "हे प्रदेशि राजा! तुं लोहवणिकनी पेठे मूर्ख केम बने छे? ते वार्ता आ प्रमाणे छे—

केटलाक वणिको व्यापार करवाने माटे परदेश जवा चाल्या. मार्गमां तेओए एक लोढानी खाण दीठी, एटले तेओए लोढानां गाडां भर्यां. आगळ चालतां तांबानी खाण जोइ, तेथी लोढुं खाली करीने तांबुं भर्युं. मात्र एक वाणीआए लोढुं खाली कर्युं नहि. आगळ चालतां तेओए रुपानी खाण जोइ, एटले तांबुं खाली करी रुपुं भर्युं. घणुं कहेतां छतां पण पेला लोहवाणिके लोढुं काढी नांख्युं नहि. आगळ चालतां तेओए सोनानी खाण जोइ, तेथी रुपुं खाली करी सोनुं भर्युं. आगळ चालतां रत्नोनी खाण जोइ, एटले सोनुं खाली करी रत्नो भर्यां. ते वखते तेओ पेला लोहवणिकने कहेवा लाग्या के 'हे मूर्ख! आ मेळवेलो रत्नसमूह तुं शामाटे गुमावे छे! लोढुं तजी दइने रत्नो ग्रहण कर, नहि तो पाछळथी जरूर तने पश्चात्ताप करवो पडशे', ए प्रमाणे तेने घणुं कहेवामां आव्युं छतां तेणे मान्युं नहि अने कहेवा लाग्यो के 'तमारामां स्थिरता नथी, तेथी एकने छोडी बीजाने ग्रहण करोछो अने बीजाने छोडी त्रीजाने ग्रहण करोछो पण हुं ए प्रमाणे करतो नथी. में तो जेनो स्वीकार कर्यो तेनो कर्यो.' पछी ते सघळा घेर आव्या, अने रत्नना प्रभावथी पेला वणिको सुखी थया. तेमने सुखी थयेला जोइने लोहवणिक मनमां पश्चात्ताप करवा लाग्यो के 'अरे! में आ शुं कर्युं! तेओनुं कहेवुं में मान्युं नहि.' एम तेणे घणा काळ सुधी शोच कर्यो. ए प्रमाणे हे प्रदेशि राजा! तने पण लोहवणिकनी पेठे पश्चात्ताप करवो पडशे. वळी जे विवेकी होय छे ते शुं कुळपरंपराथी आवेल रोग के दारिद्र्यनो त्याग करवा नथी इच्छतो? जो कुळमार्ग तेज धर्म होय तो पछी दुनियामां अधर्मनुं नाम पण नष्ट थशे. वळी—

दारिद्र्यदास्यदुर्नयदुर्भगतादुःखितादि पितृचरितम् ।
नैवं त्याज्यं तनयैः स्वकुलाचारैककथितनयैः ॥

" दारिद्र्य, दासपणुं, अनीति, दुर्भागीपणुं अने दुःखीपणुं आदि जे पोताना पितादिए आचर्युं होय तेने पोतानो कुळाचार एज नीति छे, एम कहेनारा पुत्रोए नज तजवुं जोइए. " माटे हे राजा ! कुळाचार ए धर्म नथी; किंतु जंतुनी रक्षा करवी इत्यादिज धर्म छे. " इत्यादि वचनोथी प्रतिबोध पामेलो प्रदेशि राजा विनय पूर्वक बोल्यो के ' हे भगवन् ! आ आपनुं वाक्य सत्य छे अने तत्त्व रूप छे, एज खरो अर्थ छे, ए शिवाय बीजुं सर्व अनर्थज छे. ' ए प्रमाणे कहीने प्रदेशि राजाए समकित-मूळ बार व्रतो ग्रहण कर्यां. फरीथी शिक्षाने अवसरे केशि गणधरे कह्युं के–

माणं तुम पएसी पुव्विं रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जो भविज्जासिइति.

आ राजप्रश्नीय सूत्रनो आळावो छे. तेनो भावार्थ ए छे के ' प्रदेशि राजा ! तुं पूर्वे रमणिक थइने पश्चात् (हवे) अरमणिक न थइश. ' एटले प्रथम अन्यनो दाता थइ सांप्रत काळे जिनधर्मनी प्राप्ति थवाथी तेमनो अदाता न थइश; केमके तेम थवाथी अमने अंतराय कर्म बंधाय अने जिनधर्मनी अपभ्राजना (निंदा) थाय. वळी लांबा वखतथी चाल्या आवता दाननो निषेध करवाथी लोकविरुद्धता अने अपभ्राजनादि दोष तने पण प्राप्त थाय. माटे जेने आपतो हो तेने आपवुं पण पात्रबुद्धिए न आपवुं. अरि-हंत विगेरे पण उचित दाननो निषेध करता नथी, माटे तारे तो मिथ्यात्वने तजवुं अने सर्वथी उत्तम एवा दयादानने निरंतर धारण करवुं." ए प्रमाणे गुरुनी शिक्षा ग्रहण करीने प्रदेशि राजा घेर आव्यो, अने पोताना धननो (राज्यना आवदानीनो) एक भाग अंतःपुर माटे, बीजो भाग सैन्य माटे, त्रीजो भाग भंडार माटे अने चोथो भाग दानशाळा माटे उपयोगमां लेवो, ए प्रमाणे मुकरर करीने सर्व उपज चार भागमां वहेंची दीधी. अनुक्रमे श्रावकपणुं पाळतां केटलोक काळ व्यतीत थया बाद एकदा परपुरुषमां लुब्ध थयेली सूर्यकान्ता नामनी तेनी पट्टराणीए तेने भोजनमां विष आप्युं ते वातनी भोजन कर्या पछी प्रदेशि राजाने खबर पडी, परंतु अव्याकुळ चित्ते राणी उपर किंचित् पण क्रोध कर्या विना पौषधशाळामां आवी, दर्भनो संथारो करी, ईशान कोण संन्मुख बेसी, भगवान धर्माचार्य श्रीकेशि गणधरने नमस्कार करी, पोते लीधेला व्रतमां लागेला अतीचारोनी सम्यक प्रकारे आलोचना प्रतिक्रमणा करीने तेणे काळ कर्यो, अने सूर्याभ नामना विमानमां चार पल्योपम आयुष्यवाळो सूर्याभ नामनो देव थयो. पाछो त्यांथी च्यवी महाविदेहमां अवतरीने मोक्षे जशे.

आ प्रमाणे नरकमां जवाने तैयार थयेला अतिपापी प्रदेशि राजाए जे देवविमान प्राप्त कर्युं ते केशिगणधरनुंज महात्म्य छे. माटे "दुःखनुं निवारण करनार अने सुखने प्राप्त करावनार धर्माचार्योनीज यत्न पूर्वक सेवा करवी" एवो आ कथानो उपदेश छे.

आज हकीकत गाथा १०३ मां ग्रंथकर्ता पोतेज कहेछे ते आ प्रमाणे–

नरयगइगमणपडिहत्थएकए, तह पएसिणा रन्ना ।
अमरविमाणं पत्तं, तं आयरियप्पभावेणं ॥ १०३ ॥

अर्थ–"तेमज नरकगतिए जवानुं प्रस्थानुं कर्या छतां प्रदेशि राजाए जे देवविमान प्राप्त कर्युं ते आचार्यना प्रभावथीज जाणवुं." १०३. तेथी गुरुनी सेवनाज मोटा फळने आपनारी छे. वळी–

धम्ममइएहिं अइसुंदरेहिं कारणगुणोवणीएहिं ।
पल्हायंतो य मणं, सीसं चोएई आयरिओ ॥ १०४ ॥

अर्थे–"आचार्य धर्ममय, अतिसुंदर अने ज्ञान दर्शन चारित्र रूप कारण संबंधी गुणोए सहित एवां वचनोवडे (शिष्यना) मनने आनंद उपजावता सता शिष्यने प्रेरणा करेछे–शिक्षा आपेछे." १०४

धर्ममय ते धर्मनी प्रचूरतावाळां अने अतिसुंदर एटले दोषरहित एवां वचन जाणवां.

जीअं काऊण पणं, तुरमणि दत्तस्स कालिअज्जेण ।
अविअ सरीरं चत्तं, नय भणिअं मद्दम्मसंजुत्तं ॥ १०५ ॥

अर्थ–"तुरमणि नगरीमां काळिकाचार्ये दत्त राजानी आगळ जीवितव्यनुं पण करीने शरीर पण (मनवडे) तज्युं, परंतु अधर्मसंयुक्त (असत्य वचन) बोल्या नहिं." १०५

दत्त राजाए यज्ञनुं फळ पूछ्ये सते काळिकाचार्ये तेनो भय मात्र अवगणीने मनवडे शरीर पण तजी दइने 'तेनुं फळ नरक छे' एम स्पष्ट कह्युं, पण धर्म विरुद्ध उत्तर आप्यो नहि. ए प्रमाणे अन्य मुनिए भयना प्रसंगमां पण असत्य वचन बोलवुं नहीं. अहीं काळिकाचार्यनो संबंध जाणवो. ३०

कालिकाचार्यनी कथा.

तुरमणि नामना नगरमां जितशत्रु नामे राजा हतो. ते गाममां एक कालिक नामनो ब्राह्मण रहेतो हतो. ते ब्राह्मणने भद्रा नामे बहेन हती, अने ते भद्राने दत्त नामे पुत्र हतो. एकदा कालिक ब्राह्मणे पोतानी मेळे प्रतिबोध पामीने चारित्र ग्रहण

गाथा १०३–नरइगइ. प्रस्थानके कृत. गाथा १०४–धम्ममएहिं. गाथा १०५–तुरिमणी. त्यक्तं.

कर्युं अने अनुक्रमे तेमणे आचार्यपद मेळव्युं. तेमनो भाणेज दत्त स्वच्छंदी थयो अने द्यूत आदि व्यसनोथी पराभव पामी राजानी सेवा करवा लाग्यो. कर्मयोगे राजाए तेने मंत्रीपद आप्युं. अधिकार मळतां राजानेज पदभ्रष्ट करीने ते राज्य पचावी पड्यो. राजा पण तेना भयथी नासी गयो अने गुप्तपणे कोइ स्थानके रह्यो. पछी महाक्रूर कर्म करनारो ते दत्त राजा मिथ्यात्वथी मोह पामीने अनेक यज्ञो कराववा लाग्यो अने संख्याबंध पशुओनो घात करवा लाग्यो. अन्यदा अवसरे कालिकाचार्य महाराज त्यां समवसर्या; त्यारे भद्रा माताना आग्रहथी दत्त राजा वांदवाने आव्यो. गुरुमहाराजे देशना आपी के—

धर्माद्धनं धनत एव समस्तकामा
कामेभ्य एव सकलेंद्रियजं सुखं च ।
कार्यार्थिना हि खलुकारणमेषणीयं
धर्मो विधेय इति तत्त्वविदो वदन्ति ॥

" धर्मथी धन मळेछे, धनथी समस्त कामनाओ सिद्ध थायछे अने सर्व कामनानी सिद्धिथी समग्र इंद्रियजन्य सुख प्राप्त थायछे. माटे कार्यार्थीए तो अवश्य कारण शोधवुं जोइए; तेथी धर्म करवो एवुं तत्त्ववेत्ताओ कहेछे. "

आ प्रमाणे सांभळीने दत्ते यज्ञनुं फळ पूछ्युं. गुरुए कह्युं के ' ज्यां हिंसा होय त्यां धर्मनो अभाव छे. ' कह्युं छे के—

दमोदेवगुरूपास्तिर्दानमध्ययनं तपः ।
सर्वमप्येतदफलं हिंसां चेन्न परित्यजेत ॥

" इंद्रियोनुं दमन, देवगुरुनी सेवा, दान, अध्ययन अने तप—ए सघळां जो हिंसानो त्याग न करे तो व्यर्थ छे. "

फरीथी दत्ते यज्ञनुं फळ पूछ्युं. त्यारे गुरुए कह्युं के ' हिंसा दुर्गतिनुं कारण छे. ' कह्युं छे के—

पंगुकुष्टिकुणित्वादि दृष्ट्वा हिंसाफलं सुधीः ।
निरागस्त्रसजंतूनां हिंसां संकल्पतस्त्यजेत ॥

" डाह्या माणसे पांगलापणुं, कोढीआपणुं ने टुंटापणुं विगेरे हिंसानां फल छे एम जाणीने निरपराधी एवा त्रस प्राणीओनी हिंसा संकल्पवडे पण न करवी. " त्यारे वळी दत्ते कह्युं के ' तमे आवो आडो आडो उत्तर केम आपोछे ? यज्ञनुं फळ जेवुं होय

तेवुं सत्य कहो.' त्यारे कालिकाचार्ये विचार कर्यो के 'जोके आ राजा छे अने यज्ञमां प्रीतिवाळो छे ते छतां जे बनवानुं होय ते बनो पण हुं मिथ्या बोलीश नहि. प्राणांते पण मिथ्या बोलवुं कल्याणकारी नथी.' कह्युं छे के—

निंदन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥

"नीपुण गणाता लोको भले निंदा करो अथवा स्तुति करो, लक्ष्मी भले प्राप्त थाओ अथवा मरजी मुजब चाली जाओ, मरण आज थाओ अथवा युगने अंते थाओ, परंतु धीर पुरुषो नीतिना मार्गथी एक पगलुं पण खसता नथी."

आ प्रमाणे विचारी कालिकाचार्ये कह्युं के 'हे दत्त ! हुं निश्चय पूर्वक कहुं छुं के नरकगति एज यज्ञनुं फळ छे.' कह्युं छे के—

यूपं छित्वा पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिरकर्दमम् ।
यद्येवं गम्यते स्वर्गे, नरके केन गम्यते ॥

"यज्ञस्तंभ छेदी, पशुओने हणी अने रुधिरनो कीचड करी जो स्वर्गे जवातु होय तो पछी नरकमां कोण जशे?" दत्ते कह्युं के 'ए केवी रीते जणाय?' गुरुए कह्युं के 'आजथी सातमे दिवसे घोडाना पगना डाबलाथी उडेली विष्टा तारा मुखमां पडशे, अने पछी तुं लोढानी कोठीमां पूराइश. आ अनुमानथी तारी अवश्य नरकगति थवानी छे एम जाणजे.' दत्ते कह्युं के 'तमारी शी गति थशे?' गुरुए कह्युं के 'अमे धर्मना प्रभावथी स्वर्गे जइशुं.' आ प्रमाणे सांभळीने क्रोधित थयेला दत्ते विचार कर्यो के "जो सात दिवसनी अंदर'आ वाक्य प्रमाणे नहि बने तो पछी हुं अवश्य आमने मारी नांखीश.' आम विचारी कालिकाचार्यनी आसपास राजसेवकोने मूकी पोते नगरमां आव्यो, अने आखा शहेरना तमाम रस्ताओमांथी अपवित्र पदार्थो काढी नखावी साफ कराव्या अने सर्व स्थले पुष्पो वेराव्यां. पोते अंतःपुरमांज रह्यो. ए प्रमाणे छ दिवसो व्यतीत थया पछी आठमा दिवसनी भ्रांतिथी सातमे दिवसे क्रोधयुक्त बनी घोडा उपर स्वार थइ गुरुने हणवा चाल्यो. तेवामां कोइएक वृद्ध माळी दस्त जवानी हाजतथी पीडा पामवाने लीधे रस्तामांज विष्टा करी तेने पुष्पोथी ढांकीने चाल्यो गयो. तेना उपर दत्त राजाना घोडानो पग पड्यो, तेथी विष्टानो अंश उछळीने राजाना मुखमां पड्यो. एटले गुरुना वचनपर विश्वास आववाथी राजा पाछो वळ्यो.

त्या एकांत जाणीने जितशत्रु राजाना सेवकोए तेने पकडी लीधो अने जितशत्रुने गादीए वेसार्यो. पछी सामंतराजाओए विचार्युं के ' जो आ जीवतो रहेशे तो दुःखदायी थशे. ' एम विचारी तेओए तेने लोढानी कोठीमां नांख्यो. पछी घणा दिवस पर्यंत महान दुःख भोगवतो सतो विलाप करतो अने पोकार करतो ते मृत्यु पाम्यो. मरीने ते सातमी नरके गयो, अने श्रीकालिकाचार्य तो चारित्रने सेवीने स्वर्गे गया.

ए प्रमाणे साधुए प्राणांते पण मिथ्या भाषण न करवुं एवो आ कथानो उपदेश छे.

फुडपागडमकहंतो, जहट्ठिअं बोहिलाभ मुवहणइ ।
जह भगवओ विसालो, जरमरणमहोअही आसि ॥ १०६ ॥

अर्थ—" स्फुट प्रगट (सत्यार्थ) न कहेवाथी यथास्थित—सत्य एवा बोधिलाभने आगामी भवे धर्मप्राप्तिने हणी नाखे छे—विनाश करे छे. जेम भगवंत श्री महावीर स्वामीने (मरिचिना भवमां सत्य न कहेवाथी) विशाळ एवो जरा मरण रूप महोदधि—महासमुद्र थयो. अर्थात् कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण संसार वधार्यो. " १०६.

अहीं श्री महावीर स्वामीना पूर्वभवनो संबंध जाणवो. ३१.

प्रथम भवमां पश्चिम महाविदेहने विषे **नयसार** नामे कोइ ग्रामाधिपति (गामेती) हतो. ते एक दिवस काष्ठ लेवाने माटे वनमां गयो. मध्यान्हसमये भोजन तैयार कर्युं. ते अवसरे साथथी विखुटा पडी गयेला कोइ एक मुनि त्यां आव्या. तेने जोइने नयसार घणो खुशी थयो अने भावथी श्रद्धा पूर्वक तेने आहार आप्यो. आहार करी रह्या पछी साधुने मार्ग वतावनाने माटे ते साथे गयो. साधुए पण योग्य जीव जाणीने तेने देशनावडे सम्यक्त्व प्राप्त कराव्युं. पछी ते साधुने नमीने घेर गयो. कालांतरे मरण पामीने ते सौधर्म देवलोकमां उत्पन्न थयो. ए वीजो भव थयो.

त्यांथी च्यवीने त्रीजा भवमां मरिचि नामे भरत चक्रवर्तीनो पुत्र थयो. श्रीऋषभदेव भगवाननी देशना सांभळी, भोगोनो त्याग करी स्थविर मुनि पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. पछी अग्यार अंगनुं अध्ययन करी चारित्र पाळतां एकवार उष्णकाळमां तापथी पीडित थइने ते विचार करवा लाग्यो के ' माराथी चारित्र पळवुं मुस्केल छे; आ चारित्रधर्म अति दुष्कर छे, तेथी माराथी ते पाळी शकाय तेम नथी अने घेर जवुं ए पण योग्य नथी.' ए प्रमाणे विचार करीने तेणे एक नवो त्रिदंडी वेष ग्रहण कर्यो; परंतु जे कोइ तेने धर्म पूछे तेनी आगळ साधुधर्म प्रकाशित करे अने जे कोइ तेनी देशनाथी प्रतिबोध पामे तेने भगवाननी पासे मोकले. आ प्रमाणे तेणे अनेक राज-

---

गाथा १०६—महोअहि.

पुत्रोने प्रतिबोध पमाड्यो. आ स्थितिमां पण मरीचि भगवाननी साथे विचरेछे. विहार करतां करतां एक वार भगवान अयोध्यामां समवसर्या. भरत चक्री प्रभुने वांदवा आव्या अने देशनाने अंते पूछ्युं के ' हे भगवन् ! आ आवी मोटी सभामां कोइ पण भावी (थनार) तीर्थंकर छे ? ' भगवाने कह्युं के ' आ त्रिदंडी सन्यासी वेषधारी मरीचि नामे तारो पुत्र आ चोवीशीमा चोवीशमा **वर्धमान** नामे तीर्थंकर, महाविदेहने विषे मूका नगरीमां प्रियमित्र नामे चक्रवर्ती अने आ भरतक्षेत्रमांज त्रिपृष्ठ नामे पहेलो वासुदेव थशे. ए प्रथम बे पदवीने भोगवी छेवटे तीर्थंकर थशे. ' ए सांभळी भरत मरीचि पासे जइ, त्रण प्रदक्षिणा दइ, नमस्कार करीने कह्युं के " हे मरीचि ! आ संसारमां जेटला लाभ छे तेटला बधा तें मेळव्याछे. कारणके तुं चक्रवर्ती, वासुदेव अने तीर्थंकर थनार छे; माटे हुं तारा परिव्राजक वेषनी अनुमोदना करतो नथी: परंतु तुं छेल्लो तीर्थंकर थनार छे तेथी हुं तने वांदुंछुं. " ए प्रमाणे कहीने भरत चक्रीना गया पछी मरीचिए त्रण वखत पग पछाडी नाचतां नाचतां कह्युं के ' हुं त्रण पद मेळवीश तेथी मारुं कुळ उत्तम छे. ' ए प्रमाणे वारंवार कुळनो मद करवाथी तेणे नीच गोत्र बांध्युं अन्यदा प्रथम प्रभु मोक्षे गया पछी साधु साथे विहार करतां तेना शरीरे मांदगी आवी, परंतु साधुना आचारथी रहित होवाने लीधे तेनी कोइए सेवा चाकरी करी नहि. तेथी ते विचार करवा लाग्यो के 'जो हुं साजो थाउं तो एक शिष्य करुं.' अनुक्रमे ते स्वस्थ थयो. एक दिवस कोइ कपिल नामे राजपुत्र मरीचिनी देशना सांभळी प्रतिबोध पाम्यो. त्यारे मरीचिए कह्युं के ' हे कपिल ! तुं साधु पासे जइ चारित्र ग्रहण कर. ' तेणे कह्युं के ' हुं तमारो शिष्य थइश. ' पछी मरीचिए पोतानुं स्वरूप यथार्थ कही बताव्युं अने कह्युं के ' मारामां चारित्र नथी. ' तोपण कपिल मान्यो नहि अने कहेवा लाग्यो के ' शुं तमारा दर्शनमां सर्वथा धर्म नथीज ? ' त्यारे मरीचिए जाण्युं के ' आ कपिल मने योग्य मळ्यो छे. ' एम जाणी मरीचिए कह्युं के ' कपिला इत्थंपि इहंपि ' ' हे कपिल ! साधु समीपे महान धर्म छे, अने मारी पासे अल्प धर्म छे.' ए प्रमाणे सूत्रविरुद्ध कथनथी तेणे एक कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण संसारनी वृद्धि करी. तेनी आलोचना कर्या वगर चोराशी लाख पूर्वनुं आयुष्य पाळीने ते चोथा भवे पांचमा देवलोकमां दश सागरोपमना आयुष्यवाळो देवता थयो.

त्यांथी च्यवी पांचमा भवमां कोल्लाग संनिवेष गाममां एंशी लाख पूर्वना आयुष्यवाळो ब्राह्मण थयो. ते भवमां त्रिदंडी थइ घणो काळ संसारमां भटक्यो. (आ भवो गणत्रीमां लीधा नथी, स्थूळ भवोज गणेला छे.) छठ्ठा भवमां स्थूणा नगरीमां बोंतेर लक्ष पूर्वना आयुष्यवाळो पुष्प नामे ब्राह्मण थयो, ते त्रिदंडी थइ मरण पामीने सातमा भवे

प्रथम देवलोकमां मध्यम स्थितिवाळो देव थयो. त्यांथी च्यवी आठमा भवमां चैत्यसंनिवेष नामना गाममां साठ लाख पूर्वना आयुष्यवाळो **अग्निद्योत** नामे ब्राह्मण थयो. छेवटे त्रिदंडी थइ मृत्यु पामीने नवमा भवे बीजा देवलोकमां मध्यम स्थितिवाळो देव थयो. त्यांथी च्यवी दशमा भवे मंदिरसंनिवेषे साठ लाख पूर्वना आयुष्यवाळो **अग्निभूत** नामे ब्राह्मण थयो. प्रांते त्रिदंडी थइ मृत्यु पाम्यो. अग्यारमा भवे त्रीजा देवलोकमां मध्यम स्थितिवाळो देव थयो. त्यांथी च्यवी बारमा भवमां श्वेताम्बरी नगरीमां चोराशी लाख पूर्वना आयुष्यवाळो **भारद्वाज** नामे ब्राह्मण थयो. छेवटे त्रिदंडीपणे मृत्यु पामी तेरमा भवे चोथा देवलोकमां मध्यम स्थितिवाळो देव थयो. पछी घणो काळ संसारमां भटकी चौदमा भवे राजगृह नगरमां चोत्रीश लाख पूर्वना आयुष्यवाळो **स्थावर** नामे ब्राह्मण थयो. छेवटे त्रिदंडी थइ मृत्यु पाम्यो. पंदरमा भवे पांचमा देवलोकमां मध्यम स्थितिनो देव थयो. त्यांथी च्यवी सोळमा भवमां एक क्रोड वर्षना आयुष्यवाळो **विश्वभूति** नामे युवराजपुत्र थयो. ते जन्ममां तेणे वैराग्यपरायण थइ संभूति मुनि पासे चारित्र ग्रहण करी अत्यंत तीव्र तप कर्युं. एक दिवस मासक्षपणने पारणे मथुरा नगरीमां गोचरीए गया हता. त्यां दुर्बलपणाथी एक गायना अथडावाथी ते भूमि उपर पडी गया. तेने जोइने तेना काकानो छोकरो वैशाखनंदी हास्य करीने बोल्यो के 'तुं एक मुष्टिना प्रहारथी कोठाना झाडना तमाम फळने भूमि पर पाडी नाखतो हतो ते दिवस क्यां गयो?' आ वचन सांभळीने क्रोधायमान थइ ते गायने शींगडावती पकडी आकाशमां फेरवीने एवुं नियाणुं कर्युं के 'जो आ तपनुं फळ होय तो आगामी भवे हुं घणो बळवान थाउं.' ए प्रमाणे हजार वर्ष तप तपी प्रांते पापनी आलोचना कर्या विना मरण पामी सत्तरमा भवे सातमा देवलोकमां उत्कृष्ट स्थितिवाळो देव थयो. त्यांथी च्यवी अढारमा भवे पोतनपुर नगरमां प्रजापति नामना राजाने घेर पोते परणेली पोतानी पुत्री जे मृगावती तेनी कुक्षिमां सात स्वप्नथी सूचन करायेल **त्रिपृष्ठ** नामनो वासुदेव थयो. ते भवमां भरतार्धने साधी घणुं पाप करी चोराशी लाख वर्षनुं आयुष्य भोगवी ओगणीशमा भवे सातमी नरके गयो. त्यांथी च्यवीने वीशमा भवे सिंहपणे उत्पन्न थयो. एकवीशमा भवे चोथी नरकमां नारकीपणे उत्पन्न थयो. त्यारपछी पाछो घणा काळ सुधी संसारमां भटक्यो. पछी बावीशमा भवे एक क्रोड वर्षना आयुष्यवाळो मनुष्य थयो. ते भवमां शुभ कर्मो करी त्रेवीशमा भवे महाविदेहमां मूका राजधानीमां धनंजय राजाने घेर धारिणी राणीनी कुक्षिमां चौद स्वप्नथी सूचन करायेल **प्रियमित्र** नामे चक्रवर्ती थयो. प्रांते पोट्टिलाचार्य पासे चारित्र ग्रहण करी एक कोटी वर्ष सुधी चारित्र पाळी पूरेपुरुं चोराशी लाख पूर्वनुं आयुष्य

१ आ भवो पण गणत्रीमां गण्या नथी.

भोगवी चोवीशमा भवे सातमा देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थयो. त्यांथी च्यवी पचीशमा भवे छत्रिका नगरीमां जितशत्रु राजाने घेर भद्रा नामनी राणीनी कुक्षिमां पचीश लाख वर्षना आयुष्यवाळो नंदन नामे पुत्र थयो. तेणे ते भवमां पोट्टिलाचार्य पासे दीक्षा लइ यावज्जीव मासक्षपण करी वीशस्थानकनी आराधनावडे तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन कर्युं. एक लाख वर्ष सुधी चारित्र पाळीने प्रांते एक मासनी संलेखनावडे छवीशमा भवने विषे दशमा देवलोकमां पुष्पोत्तरावतंस विमानमां वीश सागरोपमना आयुष्यवाळा देवता थया. त्यांथी च्यवी सत्तावीशमा भवे चोवीशमा तीर्थंकर थया.

आ प्रमाणे मरीचिना भवमां तेणे उत्सूत्र भाषणथी कोटाकोटि सागरोपम प्रमाण संसारनी वृद्धि करी. ए प्रमाणे अन्य जीवो पण जो उत्सूत्र भाषण करे तो संसारनी वृद्धि करेः माटे उत्सूत्र भाषण कादि पण करवुं नहि, एवो आ कथानो उपदेश छे.

कारुन्नरुन्नसिंगार–भावभयजीविअंतकरणेहिं ॥
साहू अविअ मरंति, नय निअनिअमं विराहंति ॥ १०७ ॥

अर्थ–" कारुण्यभाव, रुदन, शृंगारभाव (हावभावादि), राजादिकनो भय अने जीवितांतकारी अनुकूळ प्रतिकूळ उपसर्गवडे साधु कदाचित् मरण पामेछे, परंतु पोताना नियमने विराधता नथी. " १०७ अर्थात् पूर्वोक्त कारणो प्राप्त थतां प्राण तजी देछे, पण व्रत तजता नथी–कारुण्यादिवडे व्रतनी विराधना करता नथी.

अप्पहिअ मायरंतो, अणुमोअंतो अ सुग्गइं लहइ ॥
रहकार दाणअणुमोअगो–मिगो जह य बलदेवो ॥ १०८ ॥

अर्थ–" आत्महित एटले तप संयमादि तेने आचरतो सतो प्राणी सद्गतिने पामेछे, तेमज तेने–दानादि धर्मने अनुमोदतो सतो पण सद्गतिने पामेछे. जेम मुनिने दान देनार रथकार, तेना दाननी अनुमोदना करनार मृग अने तपसंयम आचरनार बळदेव मुनि सद्गतिने पाम्या तेम. " १०८

बळदेवमुनि, रथकार ने मृग ए त्रणे पांचमे देवलोके गया, तेथी तप संयमादि तेमज दान शीलादि धर्म कर्यो, कराव्यो अने अनुमोद्यो सतो पण बहु फळने आपेछे. अहीं बळदेव, रथकार ने मृगनो संबंध जाणवो. ३२

बळदेव रथकार ने मृगनी कथा.

द्वारिका नगरीने बाळी नांखवानुं जेणे नियाणुं करेलछे एवा द्विपायन ऋषिए अग्निकुमारपणे उत्पन्न थइ ज्यारे द्वारिकाने बाळी त्यारे मात्र कृष्ण अने बलभद्र बेज

गाथा १०७–निअमधुरं. गाथा १०८–सोग्गयं. दाणुअणुमोइगो.

वचवा पाम्या. वीजा सर्व बळी गया. बने भाइओ वनमां गया. त्यां कृष्णने घणी तृषा लागी तेथी बलभद्र पाणी लाववाने गया. त्यां वैरीनी साथे युद्ध थतां रात्रि पडी गइ. अहीं कृष्ण एक वृक्षनी नीचे पग उपर पग चडावीने सुता हता, त्यां कृष्णनुं मृत्यु पोताने हाथे थवानुं छे एवुं श्री नेमीश्वरना मुखथी जाणीने जेणे ते प्रमाणे न थवाने माटेज वनवास ग्रहण करेलो छे एवो वसुदेवनी जरा राणीनो पुत्र जराकुमार त्यां आव्यो. तेणे फरतां फरतां रात्रिए कृष्णना पगने तळीए रहेलुं पद्म दूरथी दीठुं; एटले आ चकचकित मृगनुं नेत्र जणाय छे एवुं धारी तेणे कर्ण पर्यंत वाण खेंचीने कृष्णनो चरण वींधी नांख्यो. पासे आवतां ते पोतानो भाइ छे एम जाणी पश्चात्ताप करतो सतो जराकुमार विलाप करवा लाग्यो. ते वखते कृष्णे कह्युं के 'हे पापी! तुं अहींथी जल्दी चाल्यो जा, हमणा वलभद्र आवशे तो ते तने मारी नांखशे.' ए प्रमाणे कहेवाथी जराकुमार तरतज त्यांथी चाल्यो गयो. पछी आयुष्यना प्रांत भागे कृष्णने क्रोध उत्पन्न थयो, तेथी ते मनमां विचार करवा लाग्यो के 'अरे! जुओ त्रणसें ने साठ संग्रामनो करनारो एवो हुं महावळवान छतां मने वाणथी हणीने आ जराकुमार क्षेमकुशळ गयो!' ए प्रमाणे दुर्ध्याननें वश थइ मरण पामीने कृष्ण त्रीजी नरके गया.

ते समये जल लइने वलभद्र पण त्यां आव्या. तेणे कृष्ण प्रत्ये कह्युं के 'हे बंधु! में तारा माटे ठंडुं जल आण्युं छे, तुं उठ अने जल पी.' ए प्रमाणे कहेवामां आव्या छतां कृष्णे उत्तर आप्यो नहि त्यारे वलदेवे विचार कर्यो के 'में जल लाववामां घणो वखत गुमाव्यो तेथी आ मारा वंधु क्रोधित थयेला जणाय छे तेथी हुं तेने खमावुं.' ए प्रमाणे विचार करी पगमां पडीने अरज करवा लाग्या के 'हे वंधु! आ क्रोधनो अवसर छे? आ मोटा जंगलमां आपणे वंने एकला छीए माटे तुं उठ.' ए प्रमाणे वारंवार कहेतां छतां पण ज्यारे ते वोल्या नहि त्यारे वलदेव मोहवश थइ कृष्ण मृत्यु पामेला छे छतां तने जीवता जाणी पोताना स्कंध उपर लइने चाल्या. आ संसारमां त्रण वस्तु सर्वथी अधिक छे. कह्युं छे के—

तीर्थंकराणां साम्राज्यं, सपत्नीवैरमेव च ।
वासुदेवबलस्नेहः, सर्वेभ्योऽधिककं मतम् ॥

अर्थ—"तीर्थंकरोनुं साम्राज्य, सपत्नी (शोक) नुं वैर अने वासुदेव ने वलदेवनो स्नेह ए त्रण वानां सर्वथी अधिक गणायेलां छे."

ए प्रमाणे मरण पामेला भाइने स्कंध उपर धारण करीने तेनी सेवा करता सता ते वलदेवने एक दिवसे सिद्धार्थ नामना देवे आवी यंत्रमां रेती पीलवानुं वतावीने वोध कर्यो छतां पण ते वोध पाम्या नहि. उलटा खड्ग उगामी 'मारा भाइने मरण पामेलो तुं केम कहे छे?'

एम बोलता तेनी पछवाडे मारवाने दोड्या, पण देव अदृश्य थइ गयो. वळी फरीथी ते देवने पर्वतनी शिला उपर कमल वावतो जोइने बलदेवे कह्युं के 'रे मूर्ख ! शिलानी अंदर शुं कमळनी उत्पत्ति संभवे छे? ' देवे कह्युं के "जो तारो मृत्यु पामेलो भाइ उभो थइ तने 'हे भाइ !' ए प्रमाणे कहेशे तो आ शिलानी विषे पण कमलनी उत्पत्ति थशे." ए प्रमाणे कहेतां छतां पण बलदेवजी मोहने वश थयेला होवाथी पोतानो भाइ मृत्यु पामेलो छे एम तेमणे जाण्युं नहि. ए प्रमाणे तेमणे छ मास सुधी परिभ्रमण कर्युं. पछी तेमणे ते शरीरने विनाश पामेलुं जाण्युं एटले छोडी दीधुं. सिद्धार्थदेवे ते शरीरने समुद्रमां क्षेपन कर्युं. पछी बहु विलाप करता एवा बलदेवने श्री नेमिनाथे मोकलेला चारण मुनिए आवीने प्रतिबोध पमाड्यो, तेथी वैराग्यपरायण थइने तेमणे ते चारण मुनि पासे दीक्षा लीधी. पछी पर्वत उपर रही उग्र तप करवा लाग्या. एक वार मासक्षपणने पारणे शहेरनी अंदर आहार लेवाने माटे आवतां तेमने कूवाने कांठे उभेली एक स्त्रीए जोया. तेना रूपथी मोहित थयेली ते स्त्रीए घडानी भ्रांतिथी पुत्रना गळामां दोरडानो गाळीओ नांख्यो. ते जोइने बलराम मुनिए कह्युं के 'हे मुग्धे ! तुं आ शुं करे छे ? मोहथी पराधीन थइने पुत्रने केम मारे छे ? ' पछी तेमणे विचार कर्यो के 'मारा रूपने धिक्कार छे ! हवेथी मारे नगरमां आववुं श्रेयस्कर नथी; वनवास सेववोज सारो छे.' ए प्रमाणे अभिग्रह करीने तुंगिका पर्वत उपर रह्या. त्यां पारणाने दिवसे जो कोइ सार्थ अथवा कोइ कठीयारो आवे छे अने ते तेमने शुद्ध अन्न वहोरावे छे तो ते आहार करे छे, नहि तो तपमां वृद्धि करेछे. ए प्रमाणे तप करतां तेमने अनेक लब्धिओ उत्पन्न थइ; अने देशनावडे अनेक व्याघ्र तथा सिंह विगेरे प्राणीओने प्रतिबोध पमाड्यो. पेलो सिद्धार्थदेव पण तेमनी सेवामांज रहेवा लाग्यो. त्यां एक अतिभद्रक मृग देशनाथी प्रतिबोध पाम्यो. ते अहर्निश तेमनी सेवा करेछे अने वनमां भमेछे. ज्यां ते आहारनो योग जाणेछे त्यां ते संबंधी संज्ञावडे बलभद्र मुनिने जणावेछे. मुनि पण तेने आगळ करीने त्यां जायछे.

एक दिवस कोइ रथकार (सुतार) ते वनमां आव्यो. ते कोइ मोटा वृक्षनी शाखा कापतां कापतां अरधी मूकी तेनी नीचे रसोइ करवा लाग्यो. पेला मृगे ते जोइने संज्ञावडे मुनिने निवेदन कर्युं. मुनि मृगनी साथे त्यां आव्या. साधुने आवेला जोइ रथकार घणो हर्षित थइने वहोराववा लाग्यो. ते वखते पेलो मृग पण आगळ उभो रही शुभ भावना भावेछे; तेवामां पेली अरधी कापेली डाळी एकाएक त्रुटी पडी ने समकाळे त्रणेना उपर पडवाथी ते त्रणे जणा काळ करी पांचमा देवलोके उत्पन्न थया.

तप करनार बलदेव साधु, सहाय करनार रथकार अने अनुमोदना करनार मृग—ए त्रणे जणाए सरखुं फळ मेळव्युं.- माटे आ जैनधर्म आचर्यो होय, बीजा पासे पळाव्यो

होय अने कोइ पाळनारनी अनुमोदना करी होय तो ते समान फळ पण आपेछे; तेथी निरंतर धर्ममां उद्यम करवो, एवो आ कथानो उपदेश छे.

जं[1] तं[2] कयं[3] पुरा[4] पूरणेन, अइदुक्करं[5] चिरकालं[6] ।
जई तं[9] दयावरो[11] इह, करिंतु[12] तो[13] सफलयं[14] हुंतं[15] ॥ १०९ ॥

अर्थ—"जे ते अतिदुष्कर एवो तप पूर्वे चिरकाल-घणा काळ पर्यंत पूरण तापसे कर्यो, ते तप जो आ संसारमां (ते भवमां) दयातत्परपणे कर्यो होत तो ते सफल थात." १०९. परंतु तेणे करेलो तप घणो छतां अज्ञान दोषवाळो होवाने लीधे तुच्छ फळ प्राप्त थयेलुं होवाथी ते निष्फळ गयोज कहेवाय.

पुरण तापसे तामली तापसनी जेवो बार वर्ष पर्यंत तप कर्यो तेने परिणामे ते चमेरन्द्र थयो, विशेष फळ मळ्युं नहि. अहीं पूरण तापसनो संबंध जाणवो. ३३

पूरण तापसनो वृत्तांत.

विंध्याचळ पर्वत पासे पेढाल नामे गाममां पूरण नामे एक शेठ रहेतो हतो. एक दिवस वैराग्यवान थवाथी पोताना पुत्रने पोताने स्थाने स्थापीने तेणे तामालि मुनिनी पेठे तापसी दीक्षा लीधी. ते हमेशां छट्ठ करीने पारणुं करेछे; अने पारणाने दिवसे चतुष्कोण (चार खानावाळुं) पात्र लइने परिमित घरे भिक्षा अर्थे भमेछे. तेमां जे अन्नादि पात्रना प्रथम खंडमां (खानामां) पडे ते पक्षीओने आपी देछे, बीजा खंडमां पड्युं होय ते मत्स्यने आपी देछे, त्रीजा खंडमां पड्युं होय ते स्थलचर जीवोने आपी देछे, अने चोथा खंडमां पड्युं होय ते पोते खायछे. आ प्रमाणे अति उग्र अज्ञान तप बार वर्ष सुधी करी एक मासनी संलेखनाथी काळधर्म पामी चमरचंचा नामनी राजधानीमां चमरेन्द्र थयो. आटलुं तप जो तेणे दया पूर्वक कर्युं होत तो तेने बहु फळ प्राप्त थात. माटे ज्ञान पूर्वक तप करवुं, एवो आ कथानो उपदेश छे.

कारण[1] नीयावासी[2], सुट्ठुयरं[3] उज्जमेण[4] जईयव्वं[5] ।
जह[6] ते[7] संगमथेरा, सपाडिहेरा[10] तया[11] आसि ॥ ११० ॥

अर्थ—"वृद्धावस्थादि कारणे करीने नित्यावासी एटले एक स्थानके रहेतां छतां पण अतिशय उद्यमे करीने (चारित्रविषये) प्रयत्नवान रहेवुं. जेम तेवा—चारित्रविषये उद्यमवंत 'संगम स्थविर' नामे आचार्य ते काळे (देवसानिध्यथी) समातिहार्य के० महात्म्यवाळा होता हवा." ११०

एगंते[1] नीयावासी, घरस्सरणाइसु[2] जइ[3] ममत्तंपि[4] ।
कह[7] न पडिहंति कलिकलुसरोसदोसाण आवाए[8] ॥ १११ ॥

गाथा १०९—पूरणेण. चिरकालं. करंतो. होंतं. गाथा ११०—नीयावासे. तया—तदा. गाथा १११—नीयावासे. घरसरणाइसु. आवाए—आपदि.

रनो वेष धारण करीने शोकोनी साथे पुरुषनी पेठे क्रीडा करती परस्पर खेलवा लागी. मंत्रीए ते सघळुं जोयुं, तेथी तेना मनमां इर्ष्या उत्पन्न थइ. ते विचार करवा लाग्यो के 'अरे ! मारी सघळी स्त्रीओ सुजातकुमारनी साथे विलास करेछे.' पछी तेणे सुजातकुमार उपर द्वेष राख्यो, अने सर्व स्त्रीओनो त्याग कर्यो.

एक दिवस मंत्रीए कूटपत्र लखी राजाना हाथमां आप्यो अने कह्युं के 'आवा कूटलेख लखनार सुजातकुमारने मारी नांखवो जोइए.' ए प्रमाणे सांभळीने राजाए विचार कर्यो के 'जो हुं तेने अहीं एकदम मारी नांखीश तो मारी अपकीर्ति थशे.' एम जाणी सुजातकुमारने कूटपत्र लखी आपीने चंद्रध्वज राजानी पासे मोकल्यो. ते पत्रमां लख्युं के 'आ पत्र लावनार सुजातकुमारने मारी नांखवो.' ते वाक्य वांचीने चंद्रध्वज राजाए विचार कर्यो के 'आ पुरुषरत्नने मारी नांखवानुं शामाटे लखेछे?' पछी गुप्त चर मोकली तेणे सर्व हकीकत जाणी लीधी. पछी तेणे पेलो कूटपत्र गुप्त रीते पोतानी पासे साचवी राख्यो, अने पोतानी बेन चंद्रयशाने सुजातकुमारनी साथे परणावी तेने पोताना महेलमां राख्यो. चंद्रयशाना संयोगथी सुजातकुमारने रोग उत्पन्न थयो, तेथी चंद्रयशा विचारवा लागी के 'मने धिक्कार छे के मारा संयोगथी आ पुरुष रोगी थयो.' त्यारे सुजातकुमारे कह्युं के 'हे सुलोचना ! आमां तारो कांइ अपराध नथी, मारां अशुभ कर्मनोज आ दोष छे.' इत्यादि वचनोथी चंद्रयशा प्रतिबोध पामी, वैराग्यपरायण थइ, अनशन अंगीकार करीने समाधिथी मृत्यु पामी देवपणे उत्पन्न थइ. अवधिज्ञानथी पूर्वभव जाणी त्यां आवी अने सुजातकुमारने कह्युं के 'हे स्वामिन् ! तमारा प्रसादथी हुं चंद्रयशानो जीव देव थयेल छुं, माटे जे आज्ञा होय ते करुं.' सुजातकुमारे कह्युं के 'मने मारां मातापिता पासे पहोंचाड अने मारुं कलंक उतार, जेथी हुं दीक्षा ग्रहण करुं.' देवे तत्काळ ते प्रमाणे कर्युं. सुजातकुमारने चंपानगरीना उद्यानमां मूक्यो अने नगरप्रमाण शिला विकुर्वीने चंद्रप्रभ राजाने भय पमाडी कह्युं के 'हे नराधम ! तें आ सुजातकुमार उपर विरुद्ध आचरण केम कर्युं ?' तेथी राजाए भयभ्रांत थइ पगमां पडीने सघळी हकीकत यथार्थ निवेदन करी अने सुजातकुमारना पगमां पडी वारंवार खमाववा लाग्यो. देवे पण शिला संहरी लीधी. पछी राजाए सुजातकुमारने हाथी उपर बेसाडी मोटा महोत्सव साथे नगरमां आण्यो. सुजातकुमार पिता साथे दीक्षा लइ केवलज्ञान प्राप्त करीने मोक्षे गयो.

धर्मघोष मंत्रीने राजाए देशनिकाल कर्यो. तेना छोकराओए तथा स्त्रीओए तेने घणो धिक्कार आप्यो. ते भमतो भमतो राजगृह नगरे आव्यो. त्यां तेणे एक स्थविर मुनि पासे वैराग्यपरायण थइने दीक्षा लीधी अने गीतार्थ (सूत्र ने अर्थनो जाणनार) थयो. विहार करतां अन्यदा वरदत्त नामना नगरमां वरदत्त मंत्रीने घेर गोचरीने माटे गया. वरदत्त

मंत्री दूधपाकनुं भाजन लइने सन्मुख वहोराववा आव्यो अने कह्युं के ' हे स्वामी ! आ निर्दोष अन्न ग्रहण करो. ' तेवामां ते पात्रमांथी एक बिंदु नीचे पड्युं. ते जोइ धर्मघोष मुनि पाछा वळी गया. त्यारे वरदत्त मंत्रीए विचार कर्यो के ' मुनि आहारमाटे आवेल छतां आ शुद्ध आहार तेमणे शामाटे ग्रहण कर्यो नहि ? ' ए प्रमाणे ते विचार करेछे तेवामां नीचे पडेला दूधपाकना बिंदु उपर एक मक्षिका (माखी) बेठी, ते माखीने जोइने तेना उपर एक गरोळी आवी, ते गरोळी उपर एक काकीडो आव्यो, ते काकीडाने मारवाने एक बिलाडी दोडी, ते बिलाडीना वध माटे घरनो कूतरो आव्यो, अने ते कूतराने मारवाने माटे शेरीनो कूतरो दोड्यो, शेरीना कूतराने घरना नोकरोए मारी नांख्यो. त्यारे शेरीना लोकोए घरना कूतराने मारी नांख्यो. पछी घरना नोकरो अने शेरीना लोको वच्चे परस्पर गाळागाळी थवा लागी. बेमांथी कजीओ वध्यो, अने क्रोध वधी जवाथी बाणो अने खड्गोवडे युद्ध थवा लाग्युं. ते जोइ वरदत्त मंत्रीए विचार कर्यो के ' अहो ! आ साधुने धन्य छे के जेणे आवो भावी उपद्रव जाणीने शुद्ध अन्न आपतां छतां पण ग्रहण कर्युं नहि. आ जिन धर्मने पण धन्य छे. हवे ए जंगम तीर्थ रूप साधुनो मने केवी रीते मेळाप थशे ? ' एम विचार करतां तेने जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न थयुं एटले सघळुं पूर्व भवनुं वृत्तांत दीक्षाग्रहणादि स्मरणमां आव्युं. पछी स्वयमेव चारित्र लइ देवताए आपेलो वेष धारण करी स्वयंबुद्ध एवा वरदत्त मुनि विहार करतां सुसमारनगरे आव्या, अने नागदेवना चैत्यमां कायोत्सर्ग करीने स्थित थया.

सुसमारपुरना राजा धुंधुमारने अंगारवती नामे अति रुपवती पुत्री हती. तेणे एक दिवस कोइ योगिनीनी साथे विवाद कर्यो अने योगिनीने निरुत्तर करी. योगिनीने क्रोध उत्पन्न थयो, तेथी तेणे अंगारवतीनुं रूप चित्रपटमां आळेखीने उज्जयिनीना राजा चंडप्रद्योतने बताव्युं. तेना रुपथी मोहित थइने अने योगिनीना मुखथी पण ते बहु रुपवती छे एम सांभळीने ते राजाए धुंधुमार राजा पासे दूत मोकली अंगारवतीनी मागणी करी. धुंधुमारे कहेवराव्युं के ' पुत्री मननी प्रसन्नताथी अपायछे पण बळात्कारथी लइ शकाती नथी. ' ए प्रमाणे दूतना मुखथी सांभळी चंडप्रद्योत राजाने अति क्रोध उत्पन्न थयो, तेथी मोटुं लश्कर लइ सुसमारपुर आवीने घेरो घाल्यो. अल्प सैन्यवाळो धुंधुमार राजा नगरनी अंदरज रह्यो, वहार नीकळ्योज नहि. ए प्रमाणे घणा दिवसो व्यतीत थतां धुंधुमार राजाए कोइ निमित्तियाने पूछ्युं के ' मारो जय थशे के पराजय ? ' निमित्तिये कह्युं के ' हुं निमित्त जोइने कहीश. ' पछी पेला निमित्तियाए चोकमां आवीने घणां बाळकोने व्हीवराव्यां; एटले ते बाळको भय पामीने नागप्रासादमां रहेला वरदत्त मुनिनी पासे गया. भयथी आकुळव्याकुळ थयेला ते बाळकोने

काळमांज मूळगुण जे प्राणातिपातविरमणादि तेने पण तजे छे–उत्तर गुणनो नाश थये सते मूळगुणनो नाश पण थायज छे. कारण के जेम जेम आ जीव प्रमाद–शिथिलता करेछे तेम तेम ते क्रोधादि कषाये करीने प्रेराय छे. ” ११७. एटले प्रथम शिथिलता थवाथी उत्तर गुणनी हानि थायछे, पछी कषायनो उद्भव थवाथी मूळगुणनी हानि थायछे; माटे उत्तर गुण पण तजवा नहि.

जो निच्छएण गिन्हइ, देहच्चाएवि नय धिइं मुअइ ।
सो साहेइ सकज्जं, जह चंदवडिंसओ राया ॥ ११८ ॥

अर्थ–“ जे प्राणी निश्चयवडे–स्थिरताए करीने व्रत नियमादि ग्रहण करेछे अने देहत्यागे–प्राणांत कष्ट प्राप्त थये सते पण जे धैर्यने मूकता नथी अर्थात् ग्रहित अभिग्रहने तजता नथी ते प्राणी पोताना मुक्ति साधनरूप कार्यने साधेछे. जेम चंद्रावतंसक राजाए प्राणांत कष्ट उत्पन्न थये सते पण ग्रहण करेलो अभिग्रह तज्यो नहि तेम बीजाए पण प्रवर्त्तवुं. ” ११८. अहीं चंद्रावतंसक राजानुं दृष्टांत जाणवुं. ३९.

चंद्रावतंसक राजानुं दृष्टांत.

साकेतपुर नगरमां चंद्रावतंस नामनो राजा हतो. तेने सुदर्शना नामे राणी हती. ते राजा परम श्रावक हतो, अने समकितमूळ श्रावकनां बार व्रतो सारी रीते पाळतो सतो राज्य करतो हतो. एक दिवस सभा विसर्जन करी अंतःपुरमां जइ सामायक करी कायोत्सर्गमुद्राए मनमां एवुं धारीने स्थित थयो के ‘ ज्यांसुधी आ दीवो बळे त्यांसुधी मारे कायोत्सर्ग मुद्राथी अहींज स्थिर रहेवुं. ’ ए प्रमाणे पहेलो पहोर गयो. पछी दीवाने झांखो पडेलो जोइ राजाना अभिग्रहने नहि जाणती दासीए तेमां तेल पूर्युं. ए प्रमाणे बीजो पहोर गयो. एटले फरीने तेल पूर्युं. ए प्रमाणे तेल पूरवाथी चार पहोर सुधी अखंड दीवो बळ्यो; अने अखंड अभिग्रहवाळा राजाए पण प्रातःकालमां दीवो ओलवाया पछी कायोत्सर्ग पार्यो. परंतु राजा घणो कोमळ होवाथी चार पहोर सुधी एक स्थाने स्थिति करवाने लीधे घणी वेदना अनुभवी विशुद्ध ध्यानवडे काळ करी देवलोकमां उत्पन्न थयो.

ए प्रमाणे अन्य मनुष्योए पण दृढता राखवी, एवो आ कथानो उपदेश छे.

सीउण्हखुप्पिवासं, दुस्सिज्जपरिसहं किलेसं च ।
जो सहइ तस्स धम्मो, जो धिइमं सा तवं चरइ ॥ ११९ ॥

गाथा ११८–गिण्हइ. ११९–उन्ह. धिमं. धृतिमान्.

हवे नारदनां वचनोथी कमलामेला सागरचंद्र उपर रागवाळी थइ; तेथी नभसेन प्रत्ये विरक्त मनवाळी थइने विचार करवा लागी के ‘ एवुं मारुं भाग्य क्यांथी होय के सागरचंद्रनी साथे मारो संबंध जोडाय. तेना विना मारुं यौवन तथा आ मारो देह वृथा छे. ’ ए प्रमाणे मननी अंदर सागरचंद्रनुं ध्यान करती रेहेली छे. ते अवसरे नारदना मुखथी कमलामेलानी प्रीति जेणे जाणेलीछे एवो सागरचंद्र पण ते बाळानुं ध्यान करतो सतो क्षणमात्र पण आनंद मेळवी शकतो नथी. जेम धतुरानुं भक्षण करवाथी माणस चारे तरफ सुवर्ण जुएछे, तेम सागरचंद्र पण मोहवश थइने सर्वत्र कमलामेलानेज जुएछे. ते तेनामां तन्मय थइ गयोछे. कह्युं छे के–

प्रासादे सा दिशि दिशि च सा पृष्ठतः सा पुरस्सा
पर्यंके सा पथि पथि च सा तद्वियोगातुरस्य ।
हंहो चेतः प्रकृतिरपरा नास्ति मे कापि सा सा
सा सा सा सा जगति सकले कोयमद्वैतवादः ॥

“ कमलामेलाना वियोगथी आतुर थयेला सागरचंद्रने महेलमां, दरेक दिशामां, पृष्ठे तेमज अग्र भागमां, शय्यामां तथा दरेक रस्तामां ज्यां जुएछे त्यां कमलामेलाज जोवामां आवेछे. अरे चित्त! ते बाळा माराथी जुदी छे, ते कांइ मारी (प्रकृति) नथी छतां जगतमां सर्वत्र तेज दृष्टिगत थायछे, तेथी आ अद्वैतवाद (एकरूपता) कया प्रकारनो छे ? ”

सागरचंद्र तेना विना आखुं जगत अंधकारमय मानवा लाग्यो. कह्युंछे के–

सति प्रदीपे सत्यग्नौ, सत्सु नानामणिषु च ।
विनैकां मृगशावाक्षिं, तमोभूतमिदं जगत् ॥

“ दीवो छतां, अग्नि छतां अने विविध तरेहेना मणिओ छतां मृगशिशुना नेत्र जेवा नेत्रवाळी ते बाळा विना सघळुं जगत अंधकारमय छे. ” ते भ्रांतिथी सर्वत्र कमलामेलानेज जुएछे. भ्रांतिथी जोवामां आवेली ते बाळा प्रत्ये ‘ हे प्राणप्रिये ! मारी पासे आव, तारुं आलिंगन आप ’ एम बोलता अने अनेक प्रकारनी चेष्टा करता–एवा तेने शांबकुमारे जोयो. तेथी तेणे पाछळथी आवी हास्यथी सागरचंद्रनी आंखो बंध करी, त्यारे सागरचंद्र बोल्यो के ‘ हुं जाणुछुं के तुं कमलामेला छे. तुं मारी आंखो शामाटे बंध करेछे ? तुं आवीने मारा खोळामां बेस तो वधारे सारुं. ’ ए सांभळीने शांबकुमारने हसवुं आव्युं. ते बोल्यो के ‘ वत्स सागरचंद्र ! हुं कांइ कमलामेला नथी. हुं तो कमला-

मेलानो मेलाप करावनारो तारो काको छुं. माटे आंखो उघाड अने सारी रीते जो. अहो! कामांधपणुं केवुं छे! कह्युं छे के—

दिवा पश्यति न घूकः, काको नक्तं न पश्यति।
अपूर्वः कोऽपि कामांधो, दिवा नक्तं न पश्यति॥

"घुवड दिवसे जोइ शकतो नथी, कागडो रात्रिए जोइ शकतो नथी, पण कामांध तो कोइ अपूर्व अंध छे के ते दिवसे तेमज रात्रिए—कोइ वखत जोइ शकतो नथी." एटलुं कहेतां सागरचंद्रे काकाने जोया एटले ते तेना चरणमां पड्यो; अने पोतानो अविनय खमावी लज्जा मूकीने बोल्यो के 'हे तात! आप बोल्याछो के हुं कमलामेलानो मेलाप करावनार छुं तो ते वात सत्य करो. सत्पुरुषो पोतानुं बोलेलुं पाळेछे.' कह्युं छे के—

जं भासंतेणवि सज्जणेण, जं भासियं मुहे वयणं।
तव्वयणसाहणत्थं, सप्पुरिसा हुंति उज्जमिया॥

"बोलतां बोलतां सज्जनो पोताने मुखे जे वचन बोलेछे ते वचन साधवाने—सत्य करवाने माटे सत्पुरुषो उद्यमवंत होयछे." वळी सत्पुरुषो परोपकार करवामां पण कुशळ होयछे. कह्युंछे के—

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा-
स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः॥

"मन वचन अने कायामां पुण्यरूपी अमृतथी भरेला, अनेक प्रकारना उपकारोथी आखा त्रिभुवनने प्रसन्न करनारा अने हमेशां अन्यना परमाणु जेवा अल्प गुणोने पण पर्वत जेवा मोटा करीने स्वहृदयमां आनंद पामता एवा कोइकज सत्पुरुषो होयछे." ए कारणथी हे काका! कमलामेलानो मेळाप मने करावो.'

आ प्रमाणे सांभळीने शांबकुमारे ते वात कबुल करी. पछी पोतानी विद्याना बळथी कमलामेलाना घर सुधी सुरंग देवरावीने ते सुरंगद्वाराए कमलामेलानुं हरण कर्युं अने द्वारिका नगरीना उद्यानमां आणी. पछी नारद मुनिने बोलावीने तेनी साक्षीए शुभ मुहूर्ते सागरचंद्रनी साथे तेने परणावी. अहीं ते कन्याना मातपिताए कन्यानुं हरण थयुं छे एम जाणी सर्वत्र तपास करी तो ते वनमां मालम पडी; एटले तेमणे कृष्णनी

आगळ फरियाद करी के 'हे स्वामिन्! आप समर्थ नाथ छतां हुं अनाथ होउं एम जाणी मारी कन्या कोइएक विद्याधरे हरण करीने वनमां मूकीछे.' ते सांभळीने सैन्य सहित देवकीपुत्र (कृष्ण) त्यां आव्या. तेने आवतां जोइ नारदनी साथे शांव सन्मुख आवी पिताना पगमां पड्यो अने सर्व हकीकत जणावी. 'पोताना पुत्रनुं आ कृत्य छे' एम जाणी कृष्ण मौन थइने उभा रह्या. पछी सागरचंद्रे आवी नभसेनना चरणमां पडी तेने खमाव्यो, पण नभसेने तेने खमाव्यो नहि.

हवे सागरचंद्रे कमलामेलानी साथे विषयसुख भोगवतां केटलोक काळ व्यतीत कर्यो पछी एक दिवस भगवान नेमि प्रभुनी देशना सांभळीने तेणे श्रावकनां बार व्रतो अंगीकार कर्यां. दररोज स्वव्रतनुं पालन करता सता एक वखत श्रावकनी पडिमानुं वहन करतां ते स्मशानभूमिमां जइने कायोत्सर्गे रह्यो. ते वखते नभसेन जे हमेशां तेनुं छळ शोधतो हतो ते सागरचंद्रने स्मशानमां कायोत्सर्गे रहेलो जोइने विचार करवा लाग्यो के 'आजे वखत बरावर मळ्यो छे, तेथी मारी कमलामेलाना भोक्ता सागरचंद्रने आजे मृत्यु पमाडुं.' ए प्रमाणे विचारीने तेना माथा उपर माटीनी पाळ बांधीने तेमां धगधगता खेरना अंगारा भरी ते अन्यत्र चाल्यो गयो. अहीं तेनी वेदनाने सम्यग् भावे सहन करतो निश्चल मनवाळो सागरचंद्र शुभध्यानथी मृत्यु पामीने स्वर्गे गयो.

आ प्रमाणे श्रावके पण आवा उपसर्गो सहन कर्याछे तो साधुए तो विशेषे करी सहन करवा जोइए, एवो आ कथानो उपदेश छे.

[५]देवेहिं काम[३]देवो, गि[४]हीवि न[६]वि च[७]लिओ तव[८]गुणेहिं।
मत्तगयंद भु[२]यंगम, रक्खसघोरट्टहासेहिं ॥ १२१ ॥

अर्थ—"कामदेव नामना गृहस्थ श्रावकने पण तप गुणथी मदोन्मत्त हस्ती सर्प अने राक्षसना भयंकर अट्टहास विगेरेथी देवता चळावी शक्यो नहि." अर्थात् देवकृत भयंकर उपसर्गथी कामदेव श्रावक छतां पण चळ्यो नहि तो मुनि तो शेनाज चळे? आ दृष्टांत वीजा मुनि अने श्रावकोए ग्रहण करवुं. अहीं कामदेव श्रावकनो संबंध जाणवो. ३७

कामदेव श्रावकनुं वृत्तांत.

चंपा नामनी मोटी नगरीमां जितशत्रु नामे राजा राज्य करतो हतो. ते नगरीमां कामदेव नामे गाथापति (व्यापारी) वसतो हतो, ते बहु धनधान्यथी समृद्धिवान हतो. तेने भद्रा नामे स्त्री हती. तेणे एक दिवस महावीर स्वामीनी देशना सांभळी. भगवाने प्रथम समकितनुं स्वरूप निरुपण कर्युं. तेमां जणाव्युं के दर्शन

गाथा १२१—मत्तगइद. भूअगम.

मोहनीय कर्मना उपशमादिकथी अरिहंते कहेला जीवादि तत्त्वोमां सम्यग् श्रद्धा न थवी ते सम्यक्त्व जाणवुं; अथवा आत्माना शुभ परिणाम एटले ज्ञान दर्शन चारित्र रूप त्रण तत्त्वोना अध्यवसाय ते सम्यक्त्व जाणवुं. कह्युं छे के—

अरिहं देवो गुरुणो, सुसाहुणो जिणमयं महप्पमाणं ।
इच्चाइ सुहो भावो, सम्मत्तं बिंति जगगुरुणो ॥

" अरिहंत देव, सुसाधु गुरु अने जिनमत ए मारे प्रमाण छे, इत्यादि शुद्ध भावने जगत्‌गुरुओ समकित कहेछे. " अर्हतधर्मनुं मूळ समकित छे. कह्युं छे के ' श्रावकना बार व्रतना तेरसें चोराशी क्रोड, बार लाख, सत्तावीश हजार, बसो ने बे भांगा थायछे; ए सर्व भांगाओमा समकित पहेलो भांगो छे. समकित विना बीजा एक पण भांगानो संभव नथी. कह्युंछे के—

मूलं दारं पइठाणं, आहारो भायणं निही ।
दुछक्क साविधम्मस्स सम्मत्तं परिकित्तियं ॥

" दुछक्क के० बार प्रकारना श्रावकधर्मनुं मूळ, द्वार, प्रतिष्ठान, आधार, भाजन अने निधि सम्यक्त्व कहेलुं छे. "

सम्यक्त्वनुं फळ आ प्रमाणे—

अंतोमुहुत्तमित्तंपि, फासिअं हुज्ज जेहिं सम्मत्तं ।
तेसिं अवड्ढपुग्गल, परिअट्टो चेव संसारो ॥ १ ॥
जं सक्कइ तं कीरई, जं नसक्कइ तयंमि सद्दहणा ।
सद्दहमाणो जीवो, वच्चइ अयरामरं ठाणं ॥ २ ॥

" अंतर्मुहूर्त मात्र पण जे जीवने समकित फरस्युं होय तेने अर्ध पुद्‌गळपरावर्तज संसार रहेछे—वधारे रहेतो नथी. व्रतादि जे कांइ बनी शके ते करवुं अने जे न बनी शके तेमां श्रद्धा राखवी. ए प्रमाणे सर्दहनारो जीव पण अजरामर स्थानकने पामेछे. " माटे समकित मूळ रूप व्रतो समकित सहित सारी रीते आराध्यां होय तो आलोकमां ने परलोकमां बहु फळदायी थायछे. "

आ प्रमाणे भगवाननी देशना सांभळीने परम संवेग जेने प्राप्त थयेल छे एवो कामदेव शेठ समकितना उच्चार पूर्वक बार व्रतधारी थयो, अने जीवाजीवादि तत्त्वनो जाण थइ सारी रीते श्रावकधर्मने पाळवा लाग्यो.

एक दिवस सौधर्म इंद्रे तेनां वखाण कर्यां के 'कामदेव श्रावक दृढधर्मी छे. देवो पण तेने धर्मथी चळाववाने समर्थ नथी. अरे शुं तेनुं धैर्य छे !' ए प्रमाणे कामदेवनी बहु प्रशंसा सांभळी कोइ एक मिथ्यादृष्टि देव देवेन्द्रनी वाणी अन्यथा करवाने माटे कामदेव पासे आव्यो. ते अवसरे कामदेव पोसह करी पौषधशाळामां कायोत्सर्गमुद्राए रह्यो हतो. पेलो देव मध्य रात्रिए भयंकर राक्षसनुं रूप ग्रहण करी हाथमां यमनी जिह्वा जेवुं खड्ग लइ पादप्रहारथी भूमिने कंपावतो, मुख पहोळुं करी अट्टहास करतो कामदेवनी पासे आव्यो अने बोल्यो के 'आ पच्चख्खाणने तुं छोडी दे अने आ कायोत्सर्गमुद्रानो त्याग कर, नहितो आ खड्गवडे तारा टुकडे टुकडा करी नाखीश, जेथी तुं आर्तध्यानथी अकाळे मृत्यु पामीश.' ए प्रमाणे वारंवार कहतां छतां कामदेव ध्यानथी चलित थयो नहि. पछी क्रोध उत्पन्न थवाथी ते देवे खड्गवडे कामदेवनुं शरीर छेद्युं, जेथी तेने घणी वेदना थवा लागी, पण ते ध्यानथी क्षोभ पाम्यो नहि. पछी देवे पर्वत जेवुं मोटुं हाथीनुं रूप विकुर्व्युं, अने शुंढने उछाळतो भयंकर हस्तीने रूपे कामदेव प्रत्ये बोल्यो के 'हे कामदेव ! आ व्रतोने छोडी दे अने आ कायोत्सर्गमुद्रानो त्याग कर, नहितो आ शुंढ वडे तने उपाडी, भूमि उपर पछाडी दंतप्रहारथी तने छुंदी नाखीश.' आ प्रमाणे कहेतां छतां पण ते ध्यानथी चलित थयो नहि. त्यारे तेने शुंढवडे उंचे उछाळीने पृथ्वी उपर पछाड्यो अने दंतप्रहारोथी वींधी नाख्यो; छतां ते जरा पण क्षोभ पाम्यो नहि अने मनमां विचार करवा लाग्यो के—

सर्वेभ्योऽपि प्रियाः प्राणास्तेऽपि यांत्वधुनापि हि ।
न पुनः स्वीकृतं धर्मं, खंडयाम्यल्पमप्यहम् ॥

"सर्व वस्तु करतां प्राण वहाला होयछे परंतु ते पण हमणा भले जाओ, पण स्वीकृत करेला धर्मने हुं अंशमात्र पण खंडित करीश नहि." पछी ते देव त्रीजी वखत महा भयंकर, मुशळ जेवी जेनी काया छे, काजळ जेवो जेनो वर्ण छे, फणना आंडवरथी जे सुशोभित छे, जेनी बे जिह्वा लपलपायमान थइ रहेली छे अने जेना दर्शनमात्रथीज कायर मनुष्यना प्राण नाश पामेछे—एवा तीव्र विषवाळा सर्पनुं रूप विकुर्वी कामदेव प्रत्ये बोल्यो के 'तुं ग्रहण करेला व्रतनो त्याग कर, नहितो मारी दाढना विषवडे अकाळे मृत्यु पामीश.' ए प्रमाणे कह्या छतां पण ते बिलकुल भयाकुळ थयो नहि अने मनमां विचार करवा लाग्यो के 'मारां व्रतोमां जरा पण अतीचार मने लागो नहि. स्वल्प अतीचारथी पण मोटो दोष उद्भवे छे. कह्युं छे के—

अत्यल्पादप्यतीचाराद्, धर्मस्यासारतैव हि।
अंघ्रिकंटकमात्रेण, पुमान्पंगूयते न किम् ॥

"अतिअल्प अतीचारथी पण धर्मनी निःसारता थइ जायछे. पगमां मात्र कांटो वागवाथी शुं पुरुष लंगडो थतो नथी!" थायछे. ए प्रमाणे निश्चय आत्मावाळो तेने जाणीने सर्परूप देव तेने डस्यो. अत्यंत दुःख उत्पन्न करनारा ते दंशथी कामदेवनुं शरीर काळज्वरथी जाणे पीडायलुं होय तेवुं थइ गयुं अने तेने घणी वेदना थवा लागी, पण ते ध्यानथी चलित थयो नहि. ते मनमां विचार करवा लाग्यो के–

खंडनायां तु धर्मस्यानंतैरपि भवैर्भवैः।
दुःखांतो भविता नैव, गुणस्तत्र च कश्चन ॥

"धर्मनुं खंडन करवाथी अनंता भवो भमतां पण दुःखनो अंत आवतो नथी अने तेमां कोइ जातनो लाभ तो छेज नहि."

दुखं तु दुष्कृताज्जातं, तस्यैव क्षयतः क्षयेत्।
सुकृतात्तत्क्षयश्च स्यात्, तत्तस्मिन् सुदृढो न कः ॥

"दुःख दुःकृतथी उत्पन्न थायछे अने दुःकृतनो क्षय करवाथी तेनो क्षय थायछे; दुःकृतनो क्षय सुकृतथी थायछे, त्यारे ते सुकृतमां कोण प्राणी सुदृढ न होय?" ए प्रमाणे कामदेवने शुभध्यानपरायण जाणी देवे पोतानुं स्वरूप प्रगट कर्युं अने तेने सारी रीते खमाव्यो. पछी ते कहेवा लाग्यो के "हे कामदेव! तने धन्य छे, तुं पुण्यशाळी छे अने तें जीवितनुं फळ मेळव्युं छे. सौधर्म देवलोकमां इंद्रे तारी प्रशंसा करी. ते शब्दो उपर मने श्रद्धा न आववाथी हुं अहीं तारी परीक्षा करवाने माटे आव्यो हतो, परंतु जे प्रमाणे इंद्रे तारी प्रशंसा करी हती ते प्रमाणेज में मारी नजरे जोयुंछे." आ प्रमाणे कही स्तुति करीने ते देव पोताने स्थानके गयो.

प्रातःकाळे कायोत्सर्गने पारी कामदेव श्रावक समवसरणमां भगवानने वांदवा गयो. त्यां तेने भगवंते कह्युं के 'हे कामदेव! आज मध्यरात्रिए कोइ देवे तने त्रण उपसर्ग कर्या ए वात खरी छे?' कामदेवे कह्युं के 'हे स्वामी! ते वात खरी छे. पछी भगवाने सर्व साधुओ अने साध्वीओने बोलावीने कह्युं के "हे देवानुप्रियो! ज्यारे आ कामदेव श्रावकधर्ममां रहेतो सतो पण देवोए करेला उपसर्गोने सहन करेछे तो श्रुतना जाण साधुओए तो ते सम्यक् प्रकारे सहन करवाज जोइए." आ प्रमाणेनुं भगवाननुं वाक्य विनय पूर्वक सघळा साधु साध्वीए सांभळ्युं अने अंगीकार कर्युं.

आ कामदेव धन्यात्मा छे के जे कामदेवनी भगवाने पोताना मुखे प्रशंसा करी. कह्युं छे के–

धण्णा ते जिअलोए, गुरवो निवसन्ति जस्स हिययंमि ।
धन्नाण वि सो धन्नो, गुरूणहियए वसई जो ऊ ॥

" आ जीवलोकमां ते पुरुष धन्य छे के जेना हृदयमां गुरुमहाराज वसेछे, अने ते तो धन्यमां पण धन्य छे के जे गुरुमहाराजना हृदयमां वसेछे. "

आ प्रमाणे लोकोथी स्तुति करातो कामदेव भगवानने वांदी पोताने घेर आव्यो. पछी तेणे श्रावकोनी दर्शन आदि अग्यार प्रतिमाओने सारी रीते आराधी अने वीश वर्ष सुधी श्रावकपर्याय पाळी छेवटे एक मासनी संलेखणावडे सारी रीते सर्व पापनी आलोचना प्रतिक्रमणा करीने काळ मासे काळ करी सौधर्म नामना देवलोकमां अरुणाभ नामना विमानमां चार पल्योपमना आयुष्यवाळो देव थयो. त्यांथी च्यवीने महाविदेहमां सिद्धिपदने पामशे.

जेवी रीते कामदेवे श्रावक छतां पण भयंकर उपसर्गो सहन कर्या तेवी रीते मोक्षार्थी साधुओए पण उपसर्गो सहन करवा, एवो आ कथानो उपदेश छे.

भोगे[२] अभुंजमाणावि[३], केइ[१] मोहा[४] पडंति[६] अहर गइं[५] ।
कुविओ आहारत्थी, जत्ताइजणस्स दमगुव्व ॥ १२२ ॥

अर्थ–"केटलाक प्राणीओ भोगने भोगव्या विना तेनी इच्छा करता सता पण मोह ने अज्ञान, तेथकी अधोगति-नरकातिर्यंच गतिमा पडेछे. कोनी जेम ? यात्राए-उजाणी अर्थे वनमां गयेला लोकोनी उपर (आहार न आपवाथी) कोपायमान थयेला आहारना अर्थी द्रुमक एटले भिक्षुकनी जेम. " १२२

मनवडे दुर्ध्यान चिंतववाथी जेम तेणे दुर्गतिरूप फळ प्राप्त कर्युं तेम बीजा पण प्राप्त करेछे. अहीं ते द्रुमकनो संबंध जाणवो. ३८.

द्रुमकनुं दृष्टांत.

राजगृह नगरने विषे कोइ एक उत्सवमां सर्व लोको वैभारगिरि उपर उजाणीए गया हता. ते वखते कोइ एक भिक्षुक भोजननी इच्छाथी नगरमां भमतां भोजन नहि मळवाथी वनमां आव्यो. त्यां पण ते सर्वत्र भटक्यो, पण अंतराय कर्मना उदयथी तेने कोइए भिक्षा आपी नहि; तेथी ते सर्वनी उपर गुस्से थइ विचारवा लाग्यो के " अरे !

गाथा १२२–अहरगमं–अधोगतिं । जत्ताए ।

आ नगरना लोको अति दुष्ट छे. कारणके तेओ खायछे, पीएछे, इच्छा मुजब भोजन करेछे, परंतु मने जरा पण खावानुं आपता नथी; तेथी हुं वैभारगिरि उपर चडी मोटी शिला गबडावीने आ सर्व दुष्टोने चूर्ण करी नांखुं." ए प्रमाणे विचार करतो रौद्र ध्यानथी वैभारगिरि उपर चड्यो अने त्यांथी एक मोटी शिला गबडावी. ते शिलाने पडती जोइ सर्वे लोको नासी दूर गया. परंतु तेज भिक्षुक दुर्भाग्यने लीधे ते गबडती शिलानी नीचे आवी गयो अने तेना भारथी दबाइ जइ तेनुं बधुं शरीर चूर्ण थइ गयुं; जेथी ते रौद्र ध्यानवडे मृत्यु पामी सातमी नरके गयो. अहो! मननो 'व्यापार केवो बलवान छे! कह्युं छे के–

मनोयोगोबलीयांश्च भाषितो भगवन्मते ।
यः सप्तमीं क्षणार्द्धेन नयेद्वा मोक्षमेव च ॥

" सर्व योगोमां मननो योग वळवान छे, ए प्रमाणे भगवाने कह्युं छे. कारणके ते मननो योग अर्ध क्षणमां सातमी नरके लइ जायछे अथवा मोक्षे पण लइ जायछे." वळी–

मन एव मनुष्याणां, कारणं बंधमोक्षयोः ।
यथैवालिंग्यते भार्या, तथैवालिंग्यते स्वसा ॥

" मनुष्योने बंध तथा मोक्षनुं कारण मनज छे. कारणके जेवी रीते भार्यानुं आलिंगन करायछे तेवीज रीते (मळती वखते) बेनने पण आलिंगन करायछे." (परंतु तेमां मनना विचारनोज तफावत छे).

एवी रीते जेम ते भिक्षुके रौद्र ध्यानथी नरकनुं दुःख मेळव्युं तेवीज रीते अन्य पण नरकनुं दुःख मेळवेछे. माटे मनथी पण भोगनी इच्छा न करवी, एवो आ कथानो उपदेश छे.

भवसयसहस्सदुलहे, जाइजरामरण सागरुत्तारे ।
जिणवयणंमि गुणायर, खणमवि माकाहिसि पमायं ॥ १२३ ॥

अर्थ–"हे गुणाकर! लाखो भवे पण पामवा दुर्लभ अने जन्म जरा मरण रूप समुद्रथी पार उतारनार एवा जिन वचनने विषे क्षणमात्र पण प्रमाद न करीश." १२३. अर्थात् प्रमाद तजीने जिनवचन आराधवा योग्य छे.

जं न लहइ सम्मत्तं, लद्धूणवि जं न एइ संवेगं ।
विसयसुहेसु य रज्जइ, सो दोसो रागदोसाणं ॥ १२४ ॥

गाथा १२३–दुल्लहे। गाथा १२४–समत्तं। न एइ–न प्राप्नोति.

अर्थ—"आ जीव जे सम्यक्तने पामतो नथी, सम्यक्त पाम्या छतां पण जे संवेगने पामतो नथी अने विषयसुख जे शब्दादि तेने विषे जे रक्त थायछे ते सर्वे रागद्वेषनोज दोष छे." १२४. तेथी दोषना हेतु एवा रागद्वेषज तजवा योग्य छे. अहीं संवेग ने वैराग्य-संसारथी उदासी भाव ने मोक्षनो अभिलाष समजवो.

तो बहुगुणनासाणं, सम्मत्त चरित्त गुणविणासाणं ।
न हु वस मागंतव्वं, रागद्दोसाण पावाणं ॥ १२५ ॥

अर्थ—" ते माटे बहु गुणनो नाश करनार अने सम्यक्त ते शुद्ध श्रद्धान, चारित्र ते पंचाश्रवनिरोध अने गुण ते उत्तरगुण तेनो विनाश करनार एवा रागद्वेष रूप जे पाप तेने वश निश्चे न आववुं." १२५.

नावि तं कुणइ अमित्तो, सुट्ठुवि सुविराहिओ समत्थोवि ।
जं दोवि अणिग्गहिया, करंति रागोअ दोसोअ ॥ १२६ ॥

अर्थ—"जेवो अनर्थ निग्रह नहि करेला—नहि रोकेला एवा राग अने द्वेष ए बने करेछे तेवो अनर्थ अतिशय सारी रीते विराधेलो अने समर्थ एवो पण अमित्र जे शत्रु ते करी शकतो नथी." १२६ अर्थात् शत्रु तो विराध्यो सतो एक भवमां मरण आपे पण रागद्वेष तो अनंता जन्ममरण आपे माटे रागद्वेषज तजवा योग्यछे.

इहलोए आयासं अजसं च करंति गुणविणासं च ।
पसवंति परलोए सारीरमणोगए दुक्खे ॥ १२७ ॥

अर्थ—" रागद्वेषनां फळ कहेछे—आ लोकमां आयास के० शरीर ने मन संबंधी क्लेश तथा अपयश अने गुण ते ज्ञान दर्शन चारित्र तेनो विनाश करेछे अने परलोकमां शरीर संबंधी ने मन संबंधी दुःखो प्रसवेछे—आपेछे. अर्थात् रागद्वेष नरकतिर्यंच गतिना आपनार होवाथी तेमज अनर्थमूळक होवाथी परलोकमां पण अनेक प्रकारनां दुःखो प्राप्त थायछे." १२७

धिद्धि अहो अकज्जं, जं जाणंतोवि रागदोसेहिं ।
फल मउलं कडुअरसं, तंचेव निसेवए जीवो ॥ १२८ ॥

अर्थ—" अहो महा आश्चर्यकारी आ अकार्य छे ! धिक्कार छे, धिक्कार छे आ जीवने ! के जे आ रागद्वेषने (महा अनर्थकारी छे एम) जाणतो सतो अने तेनां फळ

गाथा १२५—विनासाणं । रागदोसाण। गाथा १२६--अनिग्गहिता.। गाथा १२७ करिंति । पसवतिअ.

(विपाक) अतुल (विस्तीर्ण) अने अति कडवां छे एम पण जाणतो सतो तेनेज ते राग-द्वेषनेज अथवा तेना फळने जीव (अमृतरसनी बुद्धिए) फरी फरीने सेवे छे. " १२८ तेथी आ संसारवासी जीवोने धिक्कार छे !

को दुक्खं पाविज्जा, कस्सवि सुक्खेहिं विम्हिओ हुज्जा ।
को नवि लभिज्झ मुक्खं, रागदोसा जइ न हुज्जा ॥ १२९ ॥

अर्थ–" जो रागद्वेष न होत तो कोण दुःख पामत ? कोने सुखे करीने विस्मय थात ? (के अहो आ महासुखी छे) अने कोण जीव मोक्ष न पामत ? अर्थात् सर्वे जीवो मोक्षे जात. "१२९

माणी गुरुपडिणीओ, अणत्थभरिओ अमग्गचारीय ।
मोहं किलेसजालं, सो खाइ जहेव गोसालो ॥ १३० ॥

अर्थ–" जे शिष्य मानी (अहंकारी), गुरुनो प्रत्यनिक (गुरुना अपवाद बोलनारो), पोताना अशुद्ध स्वभावथीज अनर्थनो भरेलो अने उत्सूत्र प्ररुपणारूप उन्मार्गे–अमार्गे चालनारो होय ते शिष्य फोगट अनेक प्रकारना क्लेश (शिरोमुंडन संयमादि) समूहने भोगवेछे. अर्थात् निष्फळ तप संयमादि कष्टने सहन करेछे. गोसाळानी जेम."१३०

भगवंतना शिष्याभास गोसाळे जेम फोगट तप संयमादि कष्ट भोगव्युं, उपर जणावेला दोषवाळो होवाथी तेने तप संयमादिनुं कांइ पण फळ प्राप्त थयुं नहीं, तेम समजवुं.

कलहण कोहणसीलो, भंडणसीलो विवायसीलो य ।
जीवो निच्चुज्जलिओ, निरत्थयं संयमं चरइ ॥ १३१ ॥

अर्थ–" जे जीव कळह करवाना स्वभाववाळो होय, क्रोध करवाना स्वभाववाळो होय, भंडन करवाना स्वभाववाळो होय अने विवाद करवाना स्वभाववाळो होय ते नित्य प्रज्वलित रहेछे तेथी ते निरर्थक चारित्रने आचरे छे. " १३१ अर्थात् क्रोधथी चारित्रनो विनाश थायछे अने आ बधा क्रोधनाज प्रकारछे, तेथी क्रोधने तजीने चारित्र पाळवुं तेज श्रेयकारी छे.

गाथा १२९–विम्हिआ । होज्जा । लभेज्ज । रागद्दोसा. गाथा १३०–मोघं–व्यर्थं । खाइ–भुंक्ते.
गाथा १३१–विवागसिलोस । सजमं.

परस्पर राडो पाडीने बोलवुं ते कळह समजवो. पारका गुणने सहन न करी शकवानो ते स्वभाव ते क्रोधनशील समजवो, यष्टि मुष्टि विगेरेथी युद्ध करवानो जे स्वभाव ते भंडनशील जाणवो अने वचनवडे वादविवाद करवो ते विवादशील जाणवो.

जह वणदवो वणं, दवदवस्स जलिओ खणेण निद्दहइ ।
एवं कसायपरिणओ, जीवो तवं संजमं दहइ ॥ १३२ ॥

अर्थ--" जेम वनमां लागेलो दावानळ उतावळो उतावळो ज्वलित थइने क्षण मात्रमां आखा वनने बाळी नाखेछे तेम कषायपरिणत (कषाय परिणामे वर्तता) जीव तपसंयमने पण शीघ्र बाळे छे--नाश पमाडेछे. " १३२. तेथी समताज चारित्रधर्मनुं मूळछे एम समजवुं.

परिणामवसेण पुणो, अहिओ ऊणयरउ व्व हुज्ज खओ ।
तहवि ववहारमित्तेण, भन्नइ इमं जहा थूलं ॥ १३३ ॥

अर्थ–" वळी परिणामने वशे एटले जेवा जेवा परिणाम थाय ते प्रमाणे अधिको अथवा ओछो तपसंयमनो क्षय थाय छे, तथापि व्यवहार मात्रे करीने आ कहेवायछे के जेम स्थूळ क्षय थायछे. " १३३. परंतु ते व्यवहारनयनुं वचन समजवुं. निश्चयनये तो कषायना तीव्रतर परिणामे करीने चारित्रनो तीव्रतर क्षय थायछे अने मंद परिणामे मंद क्षय थायछे. तेथी जेवा जेवा परिणाम ते अनुसारे क्षय थायछे एम जाणवुं.

फरुसवयणेण दिणतवं, अहिक्खिवंतो हणइ मासतवं ।
वरिसतवं सवमाणो, हणइ हणंतो अ सामन्नं ॥ १३४ ॥

अर्थ—"कठण वचन कहेवाथी–गाळ देवा विगेरेथी ते दिवसना करेला तप संयमादि पुण्यने हणेछे (क्षय पमाडेछे), अधिक्षेप एटले अत्यंत क्रोध करीने जाति कुळ मर्मादि प्रकाशतो सतो महिनाना तपसंयमनो क्षय करेछे, ' तारुं आवुं अश्रेय थशे ' एम शाप देतो सतो वर्ष पर्यंतना तपसंयमने हणेछे अने यष्टि खड्गादि वडे परनो घात करतो सतो जन्म पर्यंतना श्रामण्यने (श्रमणपणाने) हणेछे. " १३४. आ बधा व्यवहारिक वचनो समजवां.

अह जीविअं निकिंतइ, हंतूण य संजमं मलं चिणइ ।
जीवो पमायबहुलो, परिभमइ जेण संसारे ॥ १३५ ॥

गाथा १३२--दवदवस्सेति–शीघ्रंशीघ्रं. डहइ । गाथा १३३–अहिउ ।
गाथा १३४–फरसवयणेण । अहिखिवंतो । गाथा १३५–हंतूणइ ।

एक दिवस ते मोटुं धाडुं लइने कुशस्थल नगर लुंटवाने गयो. ते वखते ते नगरमां देवशर्मा नामनो एक दरिद्री ब्राह्मण वसतो हतो. ते दिवसे घणा मनोरथ पूर्वक तेणे पोताना घर आगळ क्षीरनुं भोजन रंधाव्युं हतुं, अने पोते स्नानार्थे नदीए गयो हतो. ते अवसरे कोइ एक चोरे ते ब्राह्मणना घरमां दाखल थइ ते क्षीरनुं भाजन उपाड्युं. ते जोइने रुदन करतां करतां ते ब्राह्मणनां बाळकोए नदीए जइ तेमना पिताने ते कह्युं. क्षुधातुर थयेल ते ब्राह्मण पण जलदी घेरे आवी क्रोधित थइने मोटी भोगळ लइ मारवाने माटे ते चोर पासे आव्यो. बंने परस्पर लडवा लाग्या. ते वखते पेला दृढप्रहारीए आवीने खड्गथी ब्राह्मणने मारी नांख्यो. तेने भूमिपर पडेलो जोइने क्रोधावेशथी परवश थइ पोतानुं पूछडुं उंचुं करी ते ब्राह्मणना घरनी गाय ते दृढप्रहारीने मारवाने माटे दोडी, परंतु दृढप्रहारीए भयंकर परिणाम पूर्वक ते गायने पण मारी नांखी. ते अवसरे पोताना पतिने मरेलो जोइने आंसु पाडती, विलाप करती अने गाढ स्वरे आक्रोश करती ते ब्राह्मणनी सगर्भा स्त्री त्यां आवी. तेने पण ते दृढप्रहारीए मारी नांखी. तेना पेट उपर प्रहार करवाथी तेनी कुक्षिमां रहेलो गर्भ नीकळीने पृथ्वी उपर पड्यो. ते गर्भने भूमि उपर तरफडतो जोइने ते निर्दय हतो छतां तेना मनमां दया उत्पन्न थइ. ते विचारवा लाग्यो के “ अरेरे ! अति अधम कर्म करनार मने धिक्कार छे ! में निष्कारण आ अनाथ अने गर्भवती अवळाने मारी नांखी. मने चारे हत्या लागी. एक पण हत्याथी निश्चय नरकगति प्राप्त थायछे तो में आ चार हत्या करीछे तेथी मारी केवी गति थशे ? दुर्गति रूप कूवामां पडतां मने कोण शरणभूत थशे ? ” आ प्रमाणे विचार करी व्यग्र मने नगरमांथी नीकळी वनमां गयो. त्यां तेणे एक साधुने जोया. तेमना चरणमां पडी पोताना पापनुं स्वरूप निवेदन कर्युं अने कह्युं के ‘ हे भगवन् ! आ हत्याओना पापमांथी हुं केवी रीते मुक्त थाउं ते कहो. ’ साधुए कह्युं के ‘ शुद्ध चारित्रधर्मने आराध्या शिवाय तुं ते पापथी मुकाइश नहि. ’ ते साधुना वचनथी वैराग्य पामीने तेणे चारित्र ग्रहण कर्युं.

पछी तेणे एवो दृढ अभिग्रह कर्यो के ‘ ज्यांसुधी आ चार हत्याओ मारा स्मरणमां आवे त्यांसुधी अन्न के पाणी मारे लेवुं नहि. ’ एवो अभिग्रह लइ तेज नगरना एक दरवाजे कायोत्सर्ग करीने उभो रह्यो. पछी ते दरवाजे थइने आवता जता नगरना लोको ते हत्याओनुं वारंवार स्मरण करावीने ‘ आ महा दुष्ट कर्मनो करनार छे ’ ए प्रमाणे करी तेनी ताडना तर्जना करवा लाग्या. केटलाक लाकडीवडे मारेछे, केटलाक मुष्टिप्रहार करेछे, केटलाक गाळो देछे, केटलाक पथ्थरो फेंकेछे अने केटलाक दुर्वचनोथी तेनो तिरस्कार करेछे, परंतु ते जरा पण क्रोध करतो नथी. लोकोए मारेला पथरा

अने इंटोवडे ते गळा सुधी ढंकाइ गयो. छेवटे पोतानो श्वास रुंधायछे एम जाण्युं त्यारे कायोत्सर्गने पारी ते बीजे दरवाजे जइने काउसग्ग करी उभो रह्यो. त्यां पण तेणे तेज प्रमाणे परीसहोने सहन कर्या. पछी त्रीजे दरवाजे गयो. पछी चोथे दरवाजे गयो. त्यां गाळ, मार अने प्रहार विगेरे सहन करतां जेणे चतुर्विध आहारनुं पच्चख्खाण कर्युंछे एवा ते दृढप्रहारीने छ मास व्यतीक्रम्या, परंतु ते पोताना नियमथी जरा पण चलित थयो नहि. विशुद्ध ध्यानथी तेनुं अंतःकरण क्षमावडे निर्मळ थयुं अने घातिकर्मनो क्षय थवाथी तेने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी घणा जीवोने प्रतिबोध पमाडी दृढप्रहारी केवली मोक्षे गया.

ए प्रमाणे बीजा पण जेओ आक्रोश आदि अनेक प्रकारना उपसर्गोने सहन करेछे तेओ अनंत सुखना भोगवनारा थायछे, एवो आ कथानो उपदेश छे.

अहमाहओत्ति नयं पडिहणंति, सत्तावि नय पडिसवंति ॥
मारिज्जंतावि जइ, सहंति सहस्समल्लव्व ॥ १३७ ॥

अर्थ–" मुनिओ आणे मने हण्योछे एम जाण्या छतां पण तेने हणता नथी, कोइए श्राप दीधा छतां पण तेने सामो श्राप देता नथी अने मार्या छतां पण ते सहन करेछे. सहस्रमल्लनी जेम. " १३७

अहीं हण्योछे एटले पीडा उपजावी छे–सामान्य प्रहारादि करेलछे एम समजवुं जेम सहस्रमल्ल साधुए प्रहारादि सहन कर्या तेम बीजाए पण सहन करवा. अत्र सहस्रमल्लनुं दृष्टांत जाणवुं. ४०

सहस्रमल्लनी कथा.

शंखपुर नगरमां कनकध्वज राजा राज्य करतो हतो. तेनी सभामां **वीरसेन** नामनो कोइ सुभट राजसेवा करतो हतो. राजाए तेने पांचसे गाम आपवा मांड्या छतां तेणे ते लीधां नहि. तेणे कह्युं के ' हे राजन्! मारे आपनी सेवा पगार पण लीधा वगर करवी जोइए. आप प्रसन्न थशो तो सघळुं सारुं थशे. ' ए प्रमाणे कही हंमेश राजानी सेवा करेछे. हवे ते वखते **कालसेन** नामनो ते राजानो एक दुर्जय शत्रु छे, ते कोइनाथी वश थतो नथी. अनेक गामो ने शहेरोने ते उपद्रव करेछे. एकदा सभामां बेठेला राजाए कह्युं के ' एवो कोइ बळवान छे के जे कालसेनने जीवतो पकडीने मारी पासे लावे ? ' राजानुं ते वचन सांभळीने सघळा मौन रह्या, कोइ बोल्युं नहि. एटले वीरसेन बोल्यो के ' हे राजन्! आप बीजाओने शामाटे कहोछो ? मने आज्ञा करो–तो हुं एकलो जइ तेने बांधीने आपनी समक्ष लावुं. ' राजाए आज्ञा

गाथा १३७–ज्जइ. सहस्समल्लव्व, सहस्समल्लुव । अहंआहत. इति । शप्ता अपि–शापिता अपि । यति ।

आपी एटले उपर प्रमाणेनी राजा पासे प्रतिज्ञा करी तैयार थइने मात्र खड्ग लइ एकलोज कालसेननी सामे चाल्यो. कालसेन पण पोतानुं लश्कर लइ सन्मुख आव्यो. मोटुं युद्ध थतां कालसेननुं सघळुं सैन्य नासी गयुं. एटले वीरसेन एकला रहेला कालसेनने बांधीने राजानी समीपे लाव्यो. राजा पण वीरसेननुं तेवुं बळ जोइने आश्चर्य पाम्यो, अने ' जे लाखो माणसोथी जीती शकाय तेवो नहोतो तेने लीलामात्रमां आणे पराजित कर्यो ' ए प्रमाणे कही सभाना लोको पण तेनी प्रशंसा करवा लाग्या. संतुष्ट थयेला राजाए तेने लक्षद्रव्य आपी सहस्रमल्ल एवुं तेनुं नाम स्थापन कर्युं अने तेने एक देशनो राजा बनाव्यो. पछी कालसेन पासे पण पोतानी आज्ञा मनावी तेनुं राज्य तेने पाछुं सोंप्युं.

सहस्रमल्लने पोताना देश उपर राज्य करतां केटलाक दिवसो व्यतिक्रम्या. एकदा सुदर्शनाचार्ये कहेला धर्मना श्रवणथी तेने वैराग्य उत्पन्न थयो. तेथी तेणे राज्य तजी दइने चारित्र ग्रहण कर्युं. ते सामायिकथी मांडीने अगियार अंग भण्यो. अनुक्रमे चारित्र पाळतां तेणे जिनकल्पविहार अंगीकार कर्यो. ते प्रमाणे विहार करतां एकदा ते कालसेन राजाना नगरनी समीप भागमां कायोत्सर्ग मुद्राथी रह्या. कालसेने तेने जोइने ओळख्या; एटले ' आ पापीज मने जीवतो पकडीने कनकध्वज राजा पासे लइ गयो हतो ' एम विचारी तेना पर रुष्टमान थइने ते दुष्ट कालसेने सहस्रमल्ल साधुने लाकडीओ, इंटो अने पाषाणादिना प्रहारो करवा वडे अति कदर्थना करी; परंतु ते जरा पण क्षोभ पाम्या नहि. क्षमा धारण करीने शुद्ध ध्यानमां तत्पर रह्या. अनुक्रमे ते कालसेने करेला उपसर्गोथी थयेल वेदनावडे मृत्यु पामी सर्वार्थसिद्ध विमानमां देवपणे उत्पन्न थया.

आ प्रमाणे बीजा मुनिओए पण क्षमा करवी एवो आ कथानो उपदेश छे.

दुज्जणमुँहकोदंडा, वयणँसरा पुव्वकम्मँनिम्माया ।
साहूँण ते न लँग्गा, खंतिफलयंवहंताणं ॥ १३८ ॥

अर्थ—" क्षमारूपी फळक जे ढाल अथवा बखतर तेने वहन करता—धारण करता एवा साधुओने ते दुर्जनना मुख रूप धनुष्यमांथी नीकळेलां अने पूर्वकर्मथी निर्माण थयेलां एवां कटु वचन रूपी बाणो लागतां नथी. अर्थात् मर्मनो भेद करे तेवां दुर्जननां वचनो मुनिओ समता—क्षमावडे सहन करछे. " १३८

पथ्थरेणाँहओ कीवो, पथ्थरं डँक्कु मिँच्छइ ।
मिगाँरिओ सँरं पप्प, सरुप्पँत्तिं विमँग्गइ ॥ १३९ ॥

गाथा १३८—फलियं । कोदंडं—धनुः ।

गाथा १३९—कीवो—कुर्कुरः—श्वानः । मृगारिः—सिंहः । शरोत्पत्ति ।

अर्थ–" पथ्थरथी हणायेलो कुतरो पथ्थरने करडवाने इच्छेछे अने सिंह बाणने पामीने अर्थात् पोताने बाण लागवाथी बाण तरफ न जोतां शरोत्पत्तिने एटले आ बाण क्यांथी आव्युंछे ते स्थानने अथवा बाण मुकनारने जुएछे–शोधेछे. " १३९.

मुनि पण दुर्वचन रूपी तीरने पामीने ते बोलनार तरफ द्वेष करता नथी पण आ वचन-प्रहार मारा पूर्वोपार्जित कर्मनुं फळ छे एम विचार करी ते कर्मोने हणवा प्रयत्न करेछे.

तहं पुव्विं किं नकयं, न बाहए जेण मे समथ्थोवि ।
इण्हिं किं कस्सव कुप्पि–मुत्ति धीरा अणुप्पिच्छा ॥ १४० ॥

अर्थ–" धीर पुरुष एवी रीते विचार छे के–हे आत्मा ! तें पूर्वभवे शामाटे एवुं (सुकृत) न कर्युं के जेथी मने समर्थ एवो पुरुष पण बाधा करी न शके? (जो शुभ कर्युं होत तो तने कोण बाधा करी शकत ?) हवे अत्यारे शामाटे कोइना उपर कोप करुं ? (कारणके पूर्वना अशुभ कर्मनो उदय थये सते पर उपर क्रोध करवो ते व्यर्थ छे). आम विचारीने ते कोइना पर क्रोध करता नथी. " १४०.

अणुराएण जइस्सवि, सियायवत्तं पिया धरावेइ ।
तहविय खंदकुमारो, न बंधुपासेहिं पडिबंद्धो ॥ १४१ ॥

अर्थ–" यति थयेला एवा पण पोताना पुत्रना अनुरागे करीने तेना पिता तेना पर श्वेत छत्र (सेवको पासे) धरावेछे, ते छतां पण स्कंदकुमार नामना मुनि पितानो आवो स्नेह छतां बंधुवर्गना स्नेह रूप पासे करीने बंधाणा नहि." १४१. अहीं स्कंदकुमारनुं दृष्टांत जाणवुं. ४१

स्कंदकुमारनुं दृष्टांत.

श्रावस्ती नामे एक मोटी नगरी हती. त्यां तमाम शत्रुमंडलने धूमकेतु जेवो कनककेतु नामे राजा हतो. तेने देवांगना करतां पण अति सुंदर एवी मलयसुंदरी नामे राणी हती. तेमने स्कंदकुमार नामे प्राणप्रिय तनुज (कुमार) हतो अने मनुष्योने आनंद आपनारी सुनंदा नामे पुत्री हती. रूप ने यौवनथी गर्वित बनेली तेने कांतिपुर नगरना राजा पुरुषसिंहने आपेली हती. एकदा श्रावस्ती नगरीए श्रीविजयसेन सूरि पधार्या. स्कंदकुमार परिवार सहित वांदवाने आव्यो. गुरुए धर्मदेशना आपी के हे भव्य जीवो ! आ संसार अनित्य छे, आ शरीर नाशवंत छे, संपत्तिओ जलतरंग जेवी चंचळ छे, यौवन पर्वतमांथी नीकळती नदीना प्रवाह जेवुं

गाथा १४०–इन्हिं । कस्सवि । कुप्पमुत्ति ।
गाथा १४१–सिआयवत्तं–सीतआतपत्रं–श्वेतछत्र ।

छे; माटे आ काळकूट विष जेवा विषयसुखना आस्वादथी शुं ! आगममां पण कह्युं छे के–

संपदो जलतरंगविलोला, यौवनं त्रिचतुराणि दिनानि ।
शारदाभ्रमिव चंचलमायुः, किं धनैः कुरुत धर्ममनिंद्यम् ॥

" संपत्तिओ जलना तरंग जेवी चपळ छे, यौवन मात्र त्रण चार दिवस रहेनारुं छे अने आयुष्य शरदऋतुना मेघ जेवुं चंचळ छे, तो धनथी शुं विशेष छे? अनिंद्य एवो धर्मज करो. " वळी–

सव्वं विलवियं गीयं, सव्वं नट्टं विडंबणा ।
सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥

" सर्व गीतो विलाप रूप छे, सर्व नृत्यो विडंबना रूप छे, सर्व प्रकारना आभरणो भार रूप छे अने सर्व प्रकारना कामो (विषयो) परिणामे दुःखना आपनारा छे. "

इत्यादि गुरुनी देशना सांभळीने स्कंदकुमार प्रतिबोध पाम्यो अने घणा आग्रहथी मातापितानी आज्ञा लइ तेणे श्री विजयसेन सूरि पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. ते दिवसथी आरंभीने राजाए पण स्नेहथी पोताना पुत्र उपर श्वेत छत्र धारण कराव्युं, अने सेवा करवाने माटे तेनी पासे सेवको राख्या. ते नोकरो मार्गमां कांटा विगेरे पड्या होय ते आघा फेंकी देछे अने परम भक्तिथी सेवा करेछे. अनुक्रमे ते सकळ सिद्धांतो रूपी समुद्रना पारगामी थया. गुरुनी आज्ञा लइ जिनकल्पमार्गने ग्रहण करी एकला विहार करवा लाग्या. तेमने अति उग्र विहारी जाणीने सर्व सेवको पोतपोताने स्थानके गया.

एक दिवस विहार करतां कांतिपुरीए आव्या. त्यां महेलना झरुखामां पोताना पति साथे सोगठाबाजी रमती सुनंदा नामनी तेमनी व्हेने तेमने जोया. भाइना दर्शनथी तेने अत्यंत हर्ष थयो, आंखमां हर्षनां आंसु आव्यां, अने दृष्टिथी हणायलां कदंब पुष्पोनी माफक तेनां रोमराय विकस्वर थयां. ते मनमां विचार करवा लागी के 'आ मारो सहोदर हशे के नहि ? ' ए प्रमाणे बंधुप्रेमथी नेत्रमां हर्षअश्रु लावती सुनंदाने स्कंदमुनिए ओळखी, पण तेणे तेना उपर जरा पण स्नेह आण्यो नहि. राजाए ते बंनेनुं स्वरूप जोइ भाइबहेननो संबंध नहि जाणतो होवाथी मनमां विचार कर्यो के 'आ सुनंदाने आ साधु साथे अत्यंत राग होय एम जणायछे.' ए प्रमाणे विचारी दुर्बुद्धियी रात्रिए कायोत्सर्गमुद्राथी वनमां रेहला स्कंदऋषिने राजाए मारी नंखाव्या.

प्रातःकालमां लोहीथी लाल थयेली मुहपत्तीने कोइ पक्षीए चांचमां लइने राणीना महेलना आंगणामां नांखी. ते मुहपत्ती जोइने राणीने मनमां शंका पडी, एटले तरतज दासीने बोलावीने ते संबंधी पूछ्युं. दासीए कह्युं के ' आपे गइ काले जे साधुने जोया हता तेज साधुने कोइ पापीए मारी नांख्या होय तेम जणायछे. आ तेनीज मुहपत्ती देखायछे. ' ते सांभळीने राणी मूर्छित थइ अने वज्रथी हणाइ होय तेम भूमि उपर पडी गइ. शीतळ उपचारोथी तेने सावध करी एटले रुदन करती सती ते बोलवा लागी के " कदाच ते मारो भाइ हशे तो हुं शुं करीश ? कारणके मारा भाइए दीक्षा लीधीछे एवुं संभळायछे, अने ते साधुना दर्शनथी मने पण बंधुने जोवाथी जेवो आनंद थाय तेवो आनंद थयो हतो. " एवुं विचारी तेणे एक सेवकने पोताना पिताना घरे मोकली खबर मंगावी. ते उपरथी ' पोते धारेल ते सघळुं खरुं छे ' एम जाणी तेनुं हृदय अति दुःखथी भराइ आव्युं. ते मोकळे कंठे रुदन करवा लागी के " हे बंधु ! हे भाइ ! हे सहोदर ! हे वीर ! तुं मने मारा प्राण करतां पण वधारे वहालो छे. तें आ शुं कर्युं ? तारुं स्वरूप मने पण जणाव्युं नहि ? तें तो आ पृथ्वी विहार करीने तीर्थ रूप बनावीछे, पण हुं तो महा पाप करनारी छुं. कारणके तारा उपर मारी दृष्टि पडवाथी ते निमित्ते तारो घात थयोछे. मारुं शुं थशे ? हुं क्यां जाउं ? शुं करुं ? " ए प्रमाणे अनेक प्रकारे विलाप करती सुनंदाने मंत्रीओए अनेक प्रकारना अपूर्व नाटक विगेरे बतावीने लांबे वखते शोकरहित करी.

ए प्रमाणे बीजाओए पण स्कंदक मुनिनी पेठे निर्मोहपणुं धारण करवुं एवो आ कथानो उपदेश छे.

गुरुं गुरुतरो अइगुरु, पियमाइअवच्चपियजणसिणेहो ।
चिंतिज्झमाण गुविलो, चत्तो अइधम्मतिसिएहिं ॥ १४२ ॥

अर्थ—" गुरु के० घणो, गुरुतर के० तेथी वधारे, अतिगुरु के० तेथी पण वधारे एवो पितामाता पुत्रादि अने प्रियजन ते स्त्री तथा परिजनादि तेनो अनुक्रमे वधतो जे स्नेह ते विचार्यो सतो गुविलो के० महा गहन छे—अनंत भवना हेतुभूत छे एम जाणीने धर्मना अति तृषित के० धर्मना अत्यंत इच्छक एवा प्राणीओए तेने तजी दीधोछे. कारण के ते धर्मना शत्रुभूत छे. " १४२. एम जाणीने बीजा पण धर्मना इच्छक जनोए बंधुवर्गना स्नेहमां न मुंझाता तेने तजी देवो.

अमुणियपरमथ्थाणं, बंधुजनसिणेहवइयरोहोइ ।
अवगयसंसारसहाव-निच्छयाणं समं हियेयं ॥ १४३ ॥

गाथा १४२—गुरुतरोअ । पियमाय । चिंतिज्जमाण । अतिधर्मतृषितैः ।
गाथा १४३—बंधजण । निच्छययाणं । व्यतिकरः—संबंधः ।

अर्थ—" नथी जाण्यो परमार्थ जेणे एवा प्राकृत प्राणीओने ज बंधुजनना स्नेहनो संबंध थायछे अने जेणे संसारना स्वभावनो निश्चय जाण्यो छे तेनुं हृदय तो समान होयछे." १४३.

जेणे संसारनुं स्वरूप जाण्युं नथी एवा मंद बुद्धिओने बंधुजनोनो स्नेह प्रतिबंध करनार थाय छे, पण पंडित बुद्धिवाळा के जेओए संसारनुं स्वरूप जाण्युं छे अने सघळो संसारनो संबंध तजी दीधोछे तेमना हृदयमां तो शत्रुमित्रपर समान भाव होय छे तेथी तेमने बंधुजननो स्नेह प्रतिबंधकारक थतोज नथी.

मायां पियां यं भायां, भज्जां पुत्तां सुहीय नियगा यं ।
इह चेवं बहुविहाइं, करंति भयवेमणस्साइं ॥ १४४ ॥

अर्थ—" माता, पिता, भ्राता (भाइ), भार्या (स्त्री), पुत्र, सुहृद् (मित्र) अने निजकाः एटले पोताना संबंधीओ ते सर्वे आ भवमांज बहु प्रकारना भय ते मरणादि अने वैमनस्य ते मन संबंधी दुःखो तेने उत्पन्न करेछे." १४४.

तेज अनुक्रमे कहेछे—

मायां नियगमइविगप्पियंमि, अत्थे अपूरमाणंमि ।
पुत्तस्स कुणइ वसणं, चुलणी जह बंभदत्तस्स ॥ १४५ ॥

अर्थ—" पोतानी बुद्धिवडे विचारेला पोताना अर्थमां (कार्यमां) अपूर्यमाण कहेतां नहि पूरायेली अर्थात् पोतानुं धारेलुं कार्य परिपूर्ण जेने थयुं नथी एवी माता पोताना पुत्रने पण अनर्थ—कष्ट करेछे. जेम चुलणीए ब्रह्मदत्तने कर्युं तेम." १४५.

अन्यराजा साथे विषयासक्त थयेली चुलणीए पोताना चक्रवर्ती थनार पुत्रने पण वच्चेथी फांस काढी नाखवानी बुद्धिथी प्राणांत कष्टमां नाख्यो. अहीं चुलणीनो संबंध जाणवो. ४२

चुलणी राणीनुं दृष्टांत.

कांपिल्यपुर नगरमां ब्रह्म नामे राजा हतो. तेने चुलणी नामे राणी हती. तेनी कुक्षिथी चौद स्वप्नवडे सूचित पुत्र जन्म्यो. तेनुं ब्रह्मदत्त नाम पाडवामां आव्युं. हवे ब्रह्मराजाने बीजा चार राजाओ मित्र हता. पहेलो कणेरदत्त नामे कुरुदेशनो राजा, बीजो काशीदेशनो अधिपति कटकदत्त नामे राजा, त्रीजो कोशलपति दीर्घ नामे राजा अने चोथो अंगपति पुष्पचूल नामे राजा हतो. पांचमो पोते हतो. ए पांचेने परस्पर अतिगाढ मित्रता हती. तेओ क्षणमात्र पण एक बीजानो वियोग सहन

गाथा १४४—सुहिय । बहुविहाए । वेमणस्साए । सुहृदो—मित्राणि । निजकाः—संबंधिनः ।
गाथा १४५—निजकमत्या विकल्पिते । व्यसनं—अनर्थ—कष्टं ।

करी शकता नहोता. ते पांचे जणा प्रतिवर्षे अनुक्रमे एक एकना शहेरमां जइने एकठा रहेता हता.

ए प्रमाणे एक वखत पांचे राजाओ कांपिल्यपुरमां एकठा मळ्या हता. ते वर्षे ब्रह्म राजा मस्तकना व्याधिथी परलोकवासी थया. ते वखते ब्रह्मदत्त कुमार बारवर्षनी लघुवयनो हतो तेथी चारे मित्रोए विचार्युं के 'आपणा प्रीतिपात्र परममित्र ब्रह्मराजा पंचत्व पाम्या छे अने तेनो पुत्र नानो छे, माटे आपणामांथी एकेक जणे दरवर्षे आ राज्यनी रक्षा करवा माटे अहीं रहेवुं.' ए प्रमाणे विचार करी दीर्घ राजाने त्यां मूकी बीजा त्रण राजाओ पोतपोताने नगरे गया. दीर्घ राजाए त्यां रहेता सता ब्रह्मराजाना कोठार अने अंतःपुरमां जतां आवतां एक दिवसे चुलणी राणीने नवयौवना जोइ, तेथी ते कामरागथी पराधीन थयो. चुलणी पण दीर्घ राजाने जोइने रागवती थइ. बंनेने परस्पर वातचीत थतां महान कामराग उत्पन्न थयो. तेथी ते बंनेने परस्पर शरीरसंबंध थयो. अनुक्रमे दीर्घ राजा पोतानी स्त्रीनी माफक चुलणी राणीनी साथे भोग भोगववा लाग्यो. तेणे कोइनो भय गण्यो नहिं. लोकापवादनो डर पण तजी दीधो. धनु नामना वृद्ध मंत्रीए आ वधी हकीकत जाणी, तेथी ते मनमां विचारवा लाग्यो के 'अरेरे! आ दुष्ट दीर्घ राजाए बहुज अविचारी कार्य कर्युं. अन्य त्रण मित्रोए पण शो विचार करीने आने राज्यनो अधिकार सोंप्यो? एमणे पण विपरीत कार्य कर्युं. आ दीर्घ राजा पोताना मित्रनी स्त्रीनी साथे व्यभिचार करतां लज्जा पण पामतो नथी.' ए प्रमाणे विचारी घेर आवी पोताना पुत्र वरधनुने आ हकीकत जणावी. तेणे जइने ब्रह्मदत्तने आ खबर कही. ते सांभळी ब्रह्मदत्त अति क्रोधित थइ रक्त नेत्रवाळो थयो. पछी दीर्घ राजा सभामां बेठो छे ते वखते सभामां जइने कोकिला ने कागडानो संगम करावी ते कहेवा लाग्यो के 'अरे दुष्ट काग! तुं कोकिलनी स्त्री साथे संगम करेछे ए अति अयुक्त छे. आ तारुं अयोग्य आचरण हुं सहन करीश नहि.' एम कही कागने हाथमां पकडी मारी नांख्यो अने लोकसमक्ष कहुं के 'जे कोइ आवुं दुष्ट कार्य मारा नगरमां करे छे अथवा करशे तेने हुं सहन करीश नहि.' ए सांभळीने दीर्घ राजाए चुलणी राणीने कुमारनी ते हकीकत जणावी. त्यारे चुलणीए कहुं के 'ए तो बालक्रीडा छे, तेनाथी शुं बीओ छो? माटे स्वस्थ थाओ.' ए प्रमाणे केटलाक दिवसो व्यतीत थतां फरीथी ब्रह्मदत्ते दीर्घ राजानी समक्ष हंसी ने बगलानो समागम करावी पूर्ववत् जनसमूहनी आगळ कहुं. भयथी आकुळ थयेला दीर्घ राजाए चुलणी राणीने कहुं के 'तारा पुत्रे आपणा बेना संबंधनी हकीकत जाणी छे, तेथी आपणो निःशंक समागम हवे केवी रीते थइ शके? माटे तुं

तेने मारी नाख; जेथी आपणे निर्भयपणे विषयरसनो आस्वाद अनुभवीए.' चुलणीए विचार्युं के 'हुं आवुं अकार्य केवी रीते करुं ? पोताना हाथे पोताना पुत्रने मारी नांखवो ए तद्दन अयोग्य छे.' कह्युं छे के विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं छेत्तुमसांप्रतम् "झेरनुं वृक्ष पण मोटुं करी पोते कापी नांखवुं ए अयुक्त छे." दीर्घ राजाए फरीथी राणीने कह्युं के 'कुमारने मारी नांख, नहि तो तारी साथेना संबंधथी सर्युं.' ए सांभळीने राणीए विचार कर्यो के 'विषयसुखमां विघ्न करनार आ पुत्र शा कामनो ? माटे तेने अवश्य मारी नांखवो जोइए.' अहो आ विषयविलासने धिक्कार छे ! कह्युं छे के-

दिवा पश्यति नो घूकः, काको नक्तं न पश्यति ।
अपूर्वः कोऽपि कामांधो, दिवा नक्तं न पश्यति ॥

"घुवड दिवसे जोइ शकतो नथी, काग रात्रिए जोइ शकतो नथी, पण कामांध पुरुष तो कोइ अपूर्व अंध छे के जे दिवसे तेमज रात्रिए—बंने वखते जोइ शकतो नथी. पछी चुलणीए विचार कर्यो के 'आ पुत्रने पण मारवो अने यशनी पण रक्षा करवी, माटे पुत्रने मोटा महोत्सवथी परणावी एक लाक्षागृह कराववी तेनी अंदर सुतेला तेने बाळी नाखुं, जेथी लोकमां मारो अपयश न थाय.' ए प्रमाणे विचार करी तेणे लाक्षागृह कराव्युं अने तेने चुनाथी धोळाव्युं. पछी पुष्पचूल राजानी पुत्री साथे मोटा महोत्सवथी तेने परणाव्यो. ते सघळुं धनु मंत्रीए जाण्युं अने मनमां विचार कर्यो के 'आ पापिणीए पुत्रने मारवानो उपाय कर्योछे, पण हुं तेनी रक्षा करवानो उपाय करुं.' ए प्रमाणे विचार करी तेणे दीर्घ राजानी पासे जइने कह्युं के 'हे राजन् ! हुं हवे वृद्ध थयोछुं, तेथी जो आप आज्ञा आपो तो हुं तीर्थयात्राए जाउं अने मारो पुत्र वरधनु आपनी सेवा करशे.' ए सांभळीने दीर्घ राजाए विचार कर्यो के 'आ मंत्री दूर रह्यो सतो कंइक पण विपरीत करशे, माटे तेने तो पासेज राख्यो सारो.' ए प्रमाणे मनमां विचार करी दीर्घ राजाए कह्युं के 'तीर्थगमन करवानुं शुं कारण छे ? अहींआंज तीर्थ रूप गंगा छे, तेथी गंगाने किनारे दानशालामां रही दानपुण्य करो, अन्यत्र जवाथी शुं विशेष छे ?' धनु मंत्रीए ए वात कबुल करी. पछी गंगाने किनारे दानशालामां रहीने तेणे लाक्षागृहथी बे गाउ सुधी सुरंग खोदावी, अने वरधनु मारफत पुष्पचूल राजाने जणाव्युं के 'आज शयनभुवनमां तमारी पुत्रीने बदले सर्व अलंकारोथी अलंकृत करीने कोइ रूपवती दासीने मोकलजो.' तेथी पुष्पचूल राजाए दासीने मोकली. ब्रह्मदत्त पोताना प्राणप्रिय मित्र वरधनु साथे शयनगृहमां आव्यो. दासी पण त्यां आवी. ब्रह्मदत्त तो जाणेछे के 'आ मारी प्राणवल्लभा छे.' दासीनुं स्वरूप ते जाणतो नथी. ते वखते वरधनुए शृंगार उपर कथा कहेवानुं शरु कर्युं. ते सांभळवाना रसमां मग्न थवाथी ब्रह्मदत्तने पण निद्रा आवी नहि.

हवे मध्य रात्रिए सर्व लोको सुइ जतां चुलणी राणीए आवीने लाक्षागृहने आग लगाडी. ते लाक्षागृहने चोतरफथी बळतुं जोइने ब्रह्मदत्ते कह्युं के 'हे मित्र! हवे शुं करवुं?' त्यारे वरधनुए कह्युं के 'मित्र! चिंता शामाटे करोछो? आ जग्या उपर पगनो प्रहार करो.' पछी ब्रह्मदत्ते पगना प्रहारथी सुरंगनुं बारणुं उघाड्युं. बंने जण पेली स्त्रीने त्यांज रहेवा दइने ते मार्गे नासी गया. सुरंगने छेडे मंत्रीए पवनवेगी बे घोडा तैयार राख्या हता. बंने जण ते बे घोडा उपर स्वारी करीने भाग्या. पचास योजन गया त्यां बंने घोडा अत्यंत श्रमित थइ जवाथी मरी गया. तेथी ते बंने जणा पगे चालीने कोष्टक नगरे गया. त्यां कोइ ब्राह्मणने घेर भोजन कीधुं अने ते ब्राह्मणनी पुत्री साथे ब्रह्मदत्त परण्यो. पछी घणां शहेरो अने घणां गामोमां कोइ ठेकाणे गुप्त रीते अने कोइ ठेकाणे प्रगटपणे फरतां फरतां ते ब्रह्मदत्त अनेक स्त्रीओ परण्यो. ए प्रमाणे एकसो वर्ष भम्या. अनुक्रमे कांपिल्यपुरमां आवी दीर्घ राजाने मारी नांखीने पोतानुं राज्य लीधुं. पछी छ खंड साधीने ते बारमो चक्री थयो.

एक दिवसे राज्यनुं पालन करतां पुष्पनो गुच्छ जोइने ब्रह्मदत्तने जातिस्मरणज्ञान थयुं. पूर्व भवनो भाइ चित्रनो जीव प्रतिबोध पमाडवाने त्यां आव्यो, परंतु ते प्रतिबोध पाम्यो नहि. सोळ वर्षनुं आयुष्य बाकी रहेतां कोइ गोवाळीआए तेना आंखना डोळा काढी लीधा, अर्थात् आंखो फोडी नाखी. 'आ बधुं एक ब्राह्मणनुं चरित्र छे' एम जाणी ब्राह्मणोनां नेत्रो कढावतो सतो रौद्र ध्यानवडे घणां अशुभ कर्मोने मेळवी, सातसो वर्षनुं आयुष्य पूरुं करी सातमी नरकमां अप्रतिष्ठान नरकावासामां उत्कृष्ट स्थितिए उत्पन्न थयो.

आ सघळो संबंध वधारे विस्तारथी उवएस सहस्सेहिं वीत्ति ए गाथाना विवरणथी जाणवो. अहीं तो आ प्रमाणे मातानो स्नेह कृत्रिम छे, एवो आ गाथानो उपदेश छे.

सव्वंगोवंगविगत्तणाओ, जगडण विहेडणाओ अ ॥
कासीय रज्जतिसिओ, पुत्ताणं पियाउ कणयकेउ ॥ १४६ ॥

अर्थ—"राज्यनो तरश्यो एवो कनककेतु नामनो पिता पोताना पुत्रोने सर्व अंगोपांग छेदवे करीने कदर्थना अने विविध प्रकारनी यातना जे पीडा ते करतो हवो. माटे पितानो संबंध पण कृत्रिम छे." १४६

कनककेतु राजा राज्यना लोभथी तेमां अंध थइ जवाथी पोताने जे पुत्र थाय तेना

गाथा १४६—विकर्तना—छेदनानि. जगडण—कदर्थना. कासी—विहेडणा—विविधा यातना—पीडाः आकार्षित्

अंगोपांग छेदवावडे राज्यने अयोग्य करतो हतो. तेनुं विशेष चारित्र तेनी कथाथी जाणी लेवुं .४४.

कनककेतु राजानी कथा.

तेतलीपुर नगरमां कनककेतु नामे राजा हतो. तेने पद्मावती नामे पट्टराणी हती अने तेतलीपुत्र नामे मंत्री हतो. ते कारभारीने पोट्टिला नामे अति वहाली स्त्री हती. राज्यसुख भोगवतां कनककेतुने घेर पुत्रनो जन्म थयो. ते वखते राजा विचार करवा लाग्यो के 'आ पुत्र मोटो थतां मारुं राज्य लइ लेशे.' एवा भयथी तेणे तेना हाथ कापी नांख्या. बीजो छोकरो थयो तेना पग कापी नांख्या. ए प्रमाणे अनुक्रमे छोकरा उत्पन्न थतां कोइनो अंगछेद कर्यो, कोइनी आंगळी कापी नांखी, कोइनुं नाक कापी नांख्युं, कोइना कान कापी नांख्या अने कोइनी आंख काढी नांखी. आ प्रमाणे सर्व पुत्रोने खंडित अंगवाळा कर्या. ए प्रमाणे घणो काळ व्यतीत थतां फरीथी पाछो पद्मावतीए सुस्वप्नथी सूचित गर्भ धारण कर्यो. ते वखते मंत्रीनी स्त्री पोट्टिलाए पण गर्भ धारण कर्यो. तेथी मंत्रीने बोलावी राणीए कह्युं के 'सुस्वप्नथी सूचित में गर्भ धारण कर्यो छे, माटे तेना जन्म वखते आपे लइ जइने गुप्त रीते तेनुं रक्षण करवुं के जेथी ते राज्याधिकारी थाय अने तमने पण आधारभूत थाय.' मंत्रीए कबुल कर्युं. योग्य समये पुत्र प्रसव्यो. मंत्रीए गुप्त रीते ते पुत्रने पोतानी स्त्री पोट्टिलाने सोंप्यो अने ते वखते पोट्टिलाए प्रसवेली पुत्री राणीने आपी. पछी दासीए राजाने जणाव्युं के 'राणीने पुत्री जन्मी छे.'

अहीं मंत्रीने घेर राजपुत्र मोटो थतां तेनुं कनकध्वज नाम पाड्युं. अनुक्रमे ते यौवनवयने प्राप्त थयो. ए अवसरे कनककेतु राजा मृत्यु पाम्यो. तेथी सर्व मांडलिक राजा चिंता करवा लाग्या के 'हवे राज्य कोने सोंपवुं ?' ते वखते मंत्रीए राणीनी बधी हकीकत जणावी. तेथी कनकध्वज राजानो पुत्र छे एम जाणी सघळा घणा खुशी थया अने तेने मोटा आडंबरथी राज्यगादीए बेसाड्यो.

कनकध्वज राजा 'आ मंत्रीए मारा उपर मोटो उपकार कर्यो छे' एम जाणी तेनुं घणुं सन्मान करवा लाग्यो. घणा आनंदथी राज्यनुं पालन करतां केटलोक वखत व्यतीत थयो. अन्यदा मंत्रीनी स्त्री पोट्टिला जे पहेलां मंत्रीने प्राण करतां पण अधिक प्रिय हती ते कोइ कर्मना दोषथी अप्रिय थइ पडी. तेथी मंत्रीए तेनी शय्या जुदी करावी, जेथी पोट्टिलाना मनमां घणुं दुःख थवा लाग्युं. कह्युंछे के—

आज्ञाभंगो नरेन्द्राणां, गुरूणां मानमर्दनम् ।
पृथक् शय्या च नारीणामशस्त्रवध उच्यते ॥

" राजाओनी आज्ञानो भंग करवो, गुरुओना माननुं मर्दन करवुं अने स्त्रीओनी जुदी शय्या करवी–ए शस्त्र वगरनो वध छे. "

भर्तारना अपमानथी पीडित थयेली पोट्टिला विशेष प्रकारे दान विगेरे धर्मकृत्यो करवा लागी. ते समये तेने घेर एक सुव्रता नामना साध्वी आहारने माटे आव्या. तेनी सन्मुख जइ, शुद्ध आहार वहोरावी, हाथ जोडीने पोट्टिलाए कह्युं के ' हे भगवती ! तेवुं कांइक करो के जेथी मारो भर्तार मारे वश थाय. परोपकार एज मोटुं पुण्य छे. कह्युं छे के–

दोपुरिसे धरइ धरा, अहवा दोहिं वि धारिया धरणी ।
उवयारे जस्स मई, उवयारो जं न वीसरइ ॥

" बे पुरुष उपर आ पृथ्वी धारण करायेली छे अथवा बे पुरुषोए आ पृथ्वीने धारण करीछे. (ते बे पुरुष कोण ?) एक तो जेनी उपकार करवामां बुद्धि वर्तेछे– उपकार करवामां जे तत्पर छे, अने बीजो जे उपकारने विसरतो नथी–कोइए उपकार कर्यो होय तो ते भूली जतो नथी "

ए प्रमाणे पोट्टिलानुं कहेवुं सांभळीने सुव्रता साध्वीए कह्युं के–" आ तुं शुं बोली ? उत्तम स्त्रीए आवी प्रवृत्ति करवी योग्य नथी. कारणके मंत्र विगेरेथी पतिने वश करवो ए मोटो दोष छे, अने अमे तो सर्वविरति ग्रहण करेलीछे, तेथी कामण विगेरे करवां ए अमने तो उचितज नथी. तुं जे भोगो भोगववाने माटे वशीकरण करवा इच्छेछे ते भोगो सांसारिक दुःखोना कारणभूत छे. विषयो किंपाक फळनी पेठे प्रारंभमां रम्य लागेछे पण परिणामे अति दारुण छे. लांबो वखत तेनुं सेवन करीए तो पण तेनाथी तृप्ति थती नथी. तेथी आ विषयनी अभिलाषाने तजी दइने जिनोदित शुद्ध धर्म आचर के जेथी तने सर्व प्रकारनी सिद्धि प्राप्त थशे. " पोट्टिलाए ते वात कबुल करी अने पोताना भर्तारनी आज्ञा लइने तेणे चारित्र ग्रहण कर्युं. भर्तारे पण क्रोधरहित थइने कह्युं के " तने धन्य छे के तें आवो उत्तम धर्म ग्रहण कर्यो, हवे तुं देवी रूप थशे, माटे देवी थइने तारे मने प्रतिबोध पमाडवाने माटे जरुर आववुं. " तेणे ते कबुल कर्युं. ते पोट्टिला पृथ्वी उपर विहार करवा लागी, अने चिरकाळ सुधी निर्दोष चारित्र पाळी देवलोकमां उत्पन्न थइ.

पछी अवधिज्ञानथी पोतानो पूर्व भव जाणी पूर्व भवना भर्तारने प्रतिबोध करवा माटे ते पोट्टिलादेव मंत्री पासे आव्यो. तेणे घणो उपदेश कर्यो, पण तेतलीपुत्र प्रधान

प्रतिबोध पाम्यो नहि. तेथी देवे विचार्युं के ' आ राज्यमोहथी प्रतिबोध पामतो नथी. पछी ते देवे राजानुं चित्त प्रधान उपरथी फेरवी नांख्युं. एटले मंत्री ज्यारे सभामां आव्यो त्यारे राजा पराङ्मुख थइने बेठो, मंत्रीने दर्शन आप्युं नहि. तेथी तेतलीपुत्रे विचार्युं के " राजा मारा उपर रुष्टमान थया छे. कोइ दुष्टे मारुं छिद्र तेमने कहेलुं जणाय छे. आमां खबर पडती नथी के राजा मने शुं करशे ? अथवा कया प्रकारना मरणथी मने मारशे ? तेथी आत्मघात करीने मरवुं एज वधारे सारुं छे." ए प्रमाणे विचार करी घरे आवीने तेणे गळामां फांसो नांख्यो. देवना माहात्म्यथी ते पाश त्रुटी गयो; एटले विष खाधुं ते पण अमृत जेवुं थइ गयुं. त्यारे तरवारथी पोतानुं मस्तक कापवानो आरंभ कर्यो. देवे खड्गनी धार बांधी लीधी. वळी अग्निमां प्रवेश करवा तैयार थयो. ते अग्नि जळरूप थइ गयो. ए प्रमाणे तेणे लीधेला मरणना सर्व उपायो ते देवे व्यर्थ कर्या. पछी प्रगट थइने पोट्टिलादेव बोल्यो के ' आ सघळुं में कर्युंछे, तुं शामाटे आत्मघात करेछे ? चारित्र ग्रहण कर. ' ते सांभळीने तेतलीपुत्र प्रधाने चारित्र ग्रहण कर्युं. राजा आवीने तेना पगमां पड्यो. घणो काळ पृथ्वीपर विहार करी, चौद पूर्वनो अभ्यास करी, घातिकर्मनो क्षय थवाथी केवळज्ञान पामी, तेतलीपुत्र मुनि मोक्षे गया.

विसयसुहरागवसओ, घोरो भायावि भायरं हणइ ।
आहाविओ वहत्थं, जह बाहुबलिस्स भरहवई ॥ १४७ ॥

अर्थ—" विषयसुखनो जे राग तेना वशपणाथी घोर के० (शस्त्रादि ग्रहण करेला होवाथी) भयंकर एवो भाइ पण भाइने हणे छे. जेम भरतपति (भरत चक्रवर्ती) बाहुबळीना वधने माटे दोड्या हता तेम." १४७ आ दृष्टांत प्रथम आवी गयेल छे.

भज्जावि इंदियविगार-दोसनडिया करेइ पइपावं ।
जह सो पएसिराया, सूरियकंताइ तह वहिओ ॥ १४८ ॥

अर्थ—"इंद्रियोना विकार संबंधी दोषथी विडंबित थयेली भार्या पण पतिहिंसारूप—पतिने मारी नाखवा रूप पापने करे छे. जेम ते प्रदेशी राजाने तेनी सूरिकांता नामनी राणीए विष देवा विगेरे वडे मारी नाख्यो तेम समजवुं." १४८ आ संबंध पण पूर्वे आवी गयेल छे.

गाथा—भातरं । आधावितो वधार्थं । बाहुबलस्स ।

गाथा—पयपावं । पतिपापं—पतिहिंसारूपं पापं.

सासयसुक्खतरसी, नियअंगसमुब्भवेण पियपुत्तो ।
जह सो सेणियराया, कोणियरन्ना खयं निओ ॥ १४९ ॥

अर्थ—"हवे पुत्रना स्नेहनुं पण व्यर्थपणुं बतावे छे. जेम शाश्वत सुख मेळववाने उत्सुक एवो ते श्रेणिक राजा भगवंतनां वचनमां रक्त अने क्षायक समकितधारी तेने पोताना अंगथीज उत्पन्न थयेला अने प्रिय—वहाला एवा पुत्रे कोणिक राजाए क्षय पमाड्यो—विनाश पमाड्यो तेम." १४७ अर्थात् पुत्रनो स्नेह पण एवो व्यर्थ समजवो. अहीं कोणिकराजानुं दृष्टांत जाणवुं.

कोणिक राजानुं दृष्टांत.

शोभायमान घरोथी भरपूर अने नगरमां प्रसिद्ध एवा इभ्यजनोनी श्रेणीथी पूर्ण एवुं **राजगृह** नामे एक शहेर हतुं. त्यां जिनभक्तिमां रक्तचित्तवाळो श्रेणिक नामे राजा राज्य करतो हतो. ते श्रेणिक राजाने उत्तमशील अने लावण्यथी भरपूर, सुंदर रूपवाळी, अत्यंत प्रीतिवाळी अने निर्मळ गौर वर्णवाळी चिल्लणा नामे पट्टराणी हती. श्रेणिक राजा साथे पूर्व जन्ममां जेणे वैर बांध्युं छे अने जेणे पुष्कळ तप कर्युं छे एवो कोइ जीव छीपनी अंदर जेम मोती उत्पन्न थाय तेम चिल्लणाना गर्भमां उत्पन्न थयो. पछी चिल्लणाने गर्भना प्रभावथी त्रीजे महिने पोताना प्राणनाथना हृदयनुं मांस खावा रूप अशुभ दोहद उत्पन्न थयो, तेथी ते घणी दुर्बळ थती गइ. राजाए राणीने दुर्बळता संबंधी आग्रहपूर्वक पूछ्युं, त्यारे तेणे पोतानो दुष्ट विचार जणाव्यो. ते सांभळी कामरागवडे राजाए तेने कह्युं के 'हे कमळाक्षी ! तुं जरा स्वस्थ था.' पछी राजाए ते वात अभय कुमारने करी. तेणे राजाना हृदय उपर अन्य प्राणीनुं मांस बांधी, छरीथी तेने कापीने राणीनो दोहद प्रपंचथी पूर्ण कर्यो. ते कृशांगीए क्रमे करी पुत्रने जन्म आप्यो अने ते जीवता पुत्रने अशोकवाडीमां कोइ वृक्षना मूळमां मूक्यो. ते वात दासीमुखथी सांभळीने राजाए स्नेहवशे ते पुत्रने लइ आवी पाछो राणीने सोंप्यो. राजाए हर्षथी प्रथम ते पुत्रनुं नाम अशोकचन्द्र पाड्युं. परंतु कुकडाए तेनी आंगळीने दंश कर्यो हतो तेथी ते बाळक उक्त दंशने लीधे कोणिक नामथी ओळखावा लाग्यो. ते आंगळीनी वेदनाथी ते बाळक मोटेथी रडवा लाग्यो. तेथी राजाए ते आंगळी पोताना मुखमां राखीने तेने समाधिवाळो कर्यो. बाल्यावस्था व्यतीत थतां तेणे अन्य राजपुत्रीनी साथे पाणिग्रहण कर्युं अने तेनी साथे विषयसुख भोगववा लाग्यो.

गाथा १४९— शाश्वतसौख्यत्वरित.

कोणिकने देवसदृश हल्ल अने विहल्ल नामना बे नाना भाइओ थया हता. श्रेणिक राजाए कुंडल, हार अने हस्ती रूप दिव्य वस्तुओ पोताना नाना पुत्र हल्ल विहल्लने आपी. तेथी इर्षा उत्पन्न थवाने लीधे कोणिके पोताना पिताने काष्ठना पिंजरामां नांख्यो अने पोते राजा थयो. पछी ते दररोज कोरडाना मारथी पिताने प्रहार करवा लाग्यो. अन्यदा कोणिक राजानी पत्नी पद्मावतीए एक सुंदर पुत्रने जन्म आप्यो. ते पुत्र बे वर्षनो थयो त्यारे कोणिक राजा तेने पोताना खोळामां बेसाडी पुत्रना मुत्रथी मिश्र अन्न खावा लाग्यो. पुत्रना मोहने लीधे तेने जरा पण जुगुप्सा उत्पन्न थइ नहि. पछी तेणे पोतानी मातानी पासे जइ ते वात कहीने पूछ्युं के 'हे माता! मने आ पुत्र केवो प्रिय छे?' ते सांभळीने माताए कह्युं के 'हे क्रूरमते! आ तारो ते शो स्नेह छे? तारा पितानो स्नेह प्रथम तारा उपर आ करतां पण अत्यंत विशेष हतो.' आ प्रमाणे पोतानुं पूर्व वृत्तांत पोतानी माताना मुखथी सांभळीने पोताना पिताने कारागृहमां नांखवा रूप पोताना निंद्य कर्मने निंदतो सतो ते कुहाडो लइने जल्दी पांजराने भांगवा माटे चाल्यो. पोताना पुत्रने एवी रीते आवतो जोइ भयभ्रान्त बनेला श्रेणिक राजा तालपुट विषना प्रयोगथी पोताना आयुष्यने पूर्ण करी समकितना लाभथी अगाउ बांधेली पहेली नरक पृथ्वीने प्राप्त थया, अर्थात् पहेली नरके गया. कोणिक राजा पोताना पिताने मृत्यु पामेला जोइ अत्यंत रुदन करवा लाग्यो. तेणे प्रेतविधि करी. त्यार पछी तेना मुख्य सामंतोए अनेक प्रकारना प्रयोगोथी कोणिक राजाने शोकथी निवृत्त कर्यो.

पछी पोतानी प्रियाथी प्रेरित थयेला कोणिक राजाए पेली त्रणे दिव्य वस्तुनी हल्ल विहल्लनी पासे मागणी करी. एटले हल्ल ने विहल्ल ते वस्तुओ तथा अन्य सारभूत पदार्थो लइने पोतानी माताना पिता चेडा राजा पासे गया. वळथी उद्धत थयेला अने अति अभिमानी कोणिक राजा घणां युद्धो करी पापथी कराता अनेक आरंभोमां रक्त थइ आयुष्य पूर्ण करीने छट्ठी नरके गयो.

ए प्रमाणे पुत्रनो स्नेह पण कृत्रिम छे, एवो आ कथानो उपदेश छे.

लुद्धा[1] सकज्जतुरिआ[2], सुहिणोवि[4] विसंवयंति[5] कयकज्जा[3] ।
जह[6] चंदगुत्तगुरुणा[7], पव्वयओ घायओ रायां[10] ॥ १५० ॥

अर्थ—" लुब्ध, पोतानुं कार्य करवामां त्वरित अने करी लीधुं छे पोतानुं कार्य जेणे एवा स्वजनो—मित्रो पण विपरीत बोले छे—विपरीत करे पण छे. जेम चंद्रगुप्त राजाना

गाथा १५०—पवइओ. घाइओ. स्वजनोपि. चाणाक्येन.

गुरु चाणाक्य नामना मंत्रीए (पोतानुं कार्य थइ गया पछी राज्यलुब्धपणाथी पोताना मित्र एवा) पर्वत नामना राजानो घात कर्यो." १५०. अहीं चाणाक्यनो संबंध जाणवो. ४५.

चाणाक्यनुं वृत्तांत.

चणक नामना गाममां चणी नामे ब्राह्मण वसतो हतो. तेने चणेश्वरी नामे स्त्री हती. बंने जैन हता अने जिनभक्तिमां प्रीतिवाळा हता. एक दिवस तेमने दांत साथे पुत्र जन्म्यो. तेनुं नाम चाणाक्य पाड्युं. ए समये तेमने घेर साधुओ आव्या. एटले ते बाळकने साधु महाराजना चरणमां मूकीने चणी भटे पूछ्युं के ' हे भगवन्! मारे घेर आ पुत्र दांत सहित जन्म्यो छे तेनुं शुं कारण? तेनुं महात्म्य शुं हशे? ' साधु मुनिराजे कह्युं के ' ते राजा थशे. ' त्यारे मातापिताए विचार कर्यो के ' आ छोकरो लांबा वखत सुधी राज्यमां आसक्तिवाळो थवाथी जरुर नरके जशे.' एवुं जाणी तेओए पुत्रना दांत घसी नाख्या. पछी फरीने मुनिने पूछतां मुनिराजे कह्युं के ' दांत घसवाथी ते कोइ राजानो मंत्री थशे अने कोइने अग्रेसर करीने पोते राज्यपालन करशे. ' पछी चाणाक्य केटलेक काळे मोटो थवाथी, सर्व विद्यामां कुशळ थयो. यौवनावस्था प्राप्त थतां उत्तम द्विजपुत्रीनी साथे पाणिग्रहण करी सांसारिक सुख भोगववा लाग्यो. एक दिवस चाणाक्यनी पत्नी पोताना भाइना लग्नप्रसंगे पिताने घेर गइ, परंतु सामान्य वेषवाळी ने धनरहित होवाथी पिताने घेर पण तेने योग्य सन्मान मळ्युं नहि. तेनी बीजी बहेनो त्यां आवेली हती. तेओए घणां घरेणां अने सुंदर कपडां धारण करेलां होवाथी भाइए तेमने बहु सन्मान आप्युं. 'अहो! आ जगतनुं मूळ कारण धनज छे. ' कह्युं छे के–

> जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो गच्छतां
> शीलं शैलतटात्पतत्वभिजनः संदह्यतां वह्निना ।
> शौर्ये वैरिणि वज्रमाशु निपतत्वर्थोऽस्तु नः केवलं
> येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे ॥

" जाति रसातळमां जाओ अने गुणसमूह तेथी पण नीचे जाओ, शीळ पर्वतना शिखर उपरथी नीचे पडो, सगांवहालां अग्निथी वळी जाओ, शूरवीरपणा उपर जलदी वज्र पडो, परंतु अमने मात्र धन मळो; केमके एक धन विना आ समग्र गुणो तृणलव जेवा छे. "

बीजी बेनोने तेनो भाइ सघळां कार्यो विगेरेमां पण पूछेछे, परंतु चाणाक्यनी पत्नी जे पोतानी बेन तेनी तो सामुं पण जोतो नथी; तेथी ते खेद करती सती

घरने खुणे बेसीने विचारे छे के ' मारा धनरहित जीवनने धिकार छे! कारण के सगा भाइए पण ते कारणथी पंक्तिभेद कर्यो.' पछी विवाहनुं कार्य समाप्त थये खिन्न मने ते पोताने घेर आवी. चाणाक्ये पूछ्युं के ' तुं उद्वेग मनवाळी केम जणाय छे ? ' एटले तेणे सघळुं भ्रातृस्वरूप निवेदन कर्युं. ते सांभळी चाणाक्ये मनमां विचार कर्यो के ' निर्धन एवी मारी स्त्रीने तेना सगा भाइए पण आदर आप्यो नहि; तेथी हुं धन मेळवीने मारी स्त्रीनो मनोरथ पूर्ण करीश. ' एम चिंतवी ते परदेश चाल्यो. फरतां फरतां पाटलीपुर नगरमां नंद राजाने याचवा माटे गयो. त्यां राजसभामां राजानुं मुख्य आसन हतुं तेना उपर जइने बेठो. दासीए कह्युं के ' हे ब्राह्मण ! आ राजानुं भद्रासन छोडीने अन्य आसन उपर वेसो. ' त्यारे चाणाक्ये कह्युं के ' ते अन्य आसन उपर मारुं कमंडल रहेशे. ' ए प्रमाणे कही तेणे तेना उपर पोतानुं कमंडल मूक्युं. पछी दासीए त्रीजुं आसन बताव्युं. त्यारे चाणाक्ये कह्युं के ' ते आसन उपर मारो दंड रहेशे. ' एम कही त्यां दंड मूक्यो. त्यारे दासीए चोथुं आसन बताव्युं. त्यां तेणे माळा मुकी त्यारे दासीए पांचमुं आसन बताव्युं. त्यां तेणे यज्ञोपवीत मूक्युं. ए प्रमाणे तेणे पांचे आसनो रोक्यां, त्यारे कोपित थयेली दासीए कह्युं के ' अरे! तुं कोइ मोटो धृष्ट देखाय छे. कारण के प्रथमनुं भद्रासन तुं छोडतो नथी ने नवां नवां आसनो रोके छे. ' पछी दासीए तेने पादप्रहार कर्यो. तेथी पादप्रहार करायेला सर्पनी माफक क्रोधथी उभो थइने ते बोल्यो के ' हे दुष्ट चाकरडी ! तुं अत्यारे मारी अवगणना करे छे, परंतु ज्यारे परंपराथी आवेला नंदना राज्यने उखेडी नांखी आ स्थाने नवीन राजाने बेसाडुं त्यारेज मारुं नाम चाणाक्य खरुं. ' ए प्रमाणे कही नगरनी बहार नीकळी मनमां विचार करवा लाग्यो के 'प्रथम साधु मुनिराजे मारी बाबतमां कह्युं छे के ' आ बाळक विंबांतरित[1] राजा थशे. ' माटे हुं राजा थवा लायक कोइ पुरुषने शोधी काढुं.' ए प्रमाणे विचारी घणां गामो ने नगरो जोतो जोतो नंद राजाना मयूरपालकना गाममां आव्यो, अने सन्यासीना वेषे भिक्षा अर्थे फरवा लाग्यो. त्यां मयूरपालकनी स्त्रीने गर्भना माहात्म्यथी त्रीजे महिने चंद्रपान करवानो दोहद थयो छे. ते दोहद कोइ पण उपायथी पूर्ण थवानुं अशक्य धारी ते पोताना भर्तारने कहेती नथी, अने दिवसे दिवसे दुर्बल थती जाय छे. पछी तेना भर्तारे तेने आग्रहथी पूछ्युं एटले तेणे यथार्थ हकीकत जणावी. मयूरपालक पण चाणाक्यने जोइ दोहदने पूर्ण करवानो उपाय तेने पूछवा लाग्यो. त्यारे चाणाक्ये तेने कह्युं के ' जो ए गर्भमां रहेलो पुत्र मने आपो तो आ दोहद पूर्ण करवानो उपाय हुं करुं, नहितो दोहद पूर्ण कर्या शिवाय स्त्रीनो अने

१ नामधारक कोइ राजानी नीचे पूर्ण सत्ताधारी तरीके थवुं ते.

गर्भनो-वंनेनो विनाश थशे.' ए प्रमाणे सांभळी पंचनी समक्ष पुत्र आपवानुं कबुल कर्युं. एटले चाणाक्ये एक घासनुं घर बनाव्युं अने तेना उपर एक छिद्र राख्युं. एक माणसने क्रमेक्रमे छिद्र ढांकवा माटे एक ढांकणुं आपी ते घर उपर राख्यो अने घरनी अंदर गर्भवती स्त्रीने राखी. पछी ज्यारे पूर्णिमानो चंद्र अर्ध रात्रिए आकाशना मध्य भागमां आव्यो त्यारे दूधनी भरेली थाळी लइ ते स्त्रीनी आगळ मूकी, अने ते थाळीमां चंद्रनुं प्रतिबिंब पड्युं त्यारे चाणाक्ये कह्युं के 'हे भाग्यवती! तारा भाग्यथी आ चंद्र अत्र आव्यो छे, तेथी हर्षित थइ तेनुं पान कर.' ए प्रमाणे कहेतां तेणे चंद्रनुं पान करवानी शरुआत करी. जेम जेम ते दुधनुं पान करती हती तेम तेम छापरा उपर रहेलो माणस पेला ढांकणवती छिद्रने ढांकतो हतो. थाळीनी अंदर रहेला प्रतिबिंबित चंद्रनुं संपूर्ण पान थयुं एटले पेलुं छिद्र पण पूर्ण ढंकाइ गयुं. तेनो दोहद पूर्ण थयो. कारणके ते समजी के 'में चंद्रनुं पान कर्युं.' ए प्रमाणे तेनो दोहद पूर्ण करी 'आ गर्भ राज्यनो अधिपति थशे' एम निश्चय करी चाणाक्य धातुविद्या शिखवाने माटे देशांतर गयो.

देशाटन करतां केटलेक काळे चाणाक्ये स्वर्णसिद्धि मेळवी. अहीं पेली बाइए पुत्र प्रसव्यो. तेनुं चंद्रगुप्त नाम पाड्युं. अनुक्रमे ते आठ वर्षनो थयो. ते गाममां सरखी वयना बाळको साथे क्रीडा करेछे; तेमां पोते राजा थायछे अने कोइने गाम आपेछे, कोइने देश आपेछे अने कोइने किल्लानुं अधिपतिपणुं आपेछे. तेवा वखतमां चाणाक्ये पण त्यां आवीने ते जोयुं, अने तेनी पासे याचना करी के 'हे राजन्! सघळाओने ज्यारे तुं मनवांछित आपेछे त्यारे मने पण कांइक वांछित आप.' त्यारे चंद्रगुप्त बोल्यो के 'आ सघळी गायो हुं तने आपुंछुं ते तुं ग्रहण कर.' ए प्रमाणे सांभळीने चाणाक्य बोल्यो के 'आ बधी पारकी गायो छे ते माराथी केम लइ शकाय?' त्यारे चंद्रगुप्ते कह्युं के 'जे समर्थ होय तेनीज आ पृथ्वी छे.' त्यारे चाणाक्ये छोकराओने पूछ्युं के 'आ बाळक कोनो छे?' बाळकोए कह्युं के 'एक परिव्राजकने आपेलो अने चंद्रपानना दोहदथी उत्पन्न थयेलो चंद्रगुप्त नामनो आ बाळक छे.' ए सांभळीने चाणाक्ये चंद्रगुप्तने कह्युं के 'हे वत्स! जो तारे राज्यनी इच्छा होय तो मारी साथे चाल, हुं तने राज्य मेळवी आपीश.' ए प्रमाणे कही चंद्रगुप्तने साथे लइ चाल्यो. अनुक्रमे धातु विद्यावडे धन उत्पन्न करी थोडुं सैन्य मेळवी पाटलीपुरने घेरो घाल्यो. नंदराजाए पोताना मोटा सैन्यथी ते सैन्यने पराजित कर्युं, तेथी चाणाक्य चंद्रगुप्तने लइने नासी गयो. नंदराजाए तेने पकडवाने पाछळ सैन्य मोकल्युं. तेमांनो एक स्वार नजीक आवी पहोंच्यो, त्यारे चंद्रगुप्तने सरोवरमां राखीने चाणाक्य पोते ध्यान धरी योगी थइने बेठो. ते वखते ते स्वारे आवीने पूछ्युं के 'हे योगीश्वर! नंदराजाना वैरी चंद्रगुप्तने जतां तमे

जानी साथे मैत्री करी. केटलाक दिवस गया पछी पर्वत राजाने अर्धुं राज्य आपवुं कबुल करी मोटुं सैन्य मेळवी आसपासना अनेक देशोने साधीने पछी चाणाक्य पाटलीपुत्र आव्यो. नंदराजानी साथे मोटुं युद्ध थयुं. तेमां नंदराजा हार्यो. तेथी तेणे धर्मद्वार मागी लीधुं, एटले पोताने नीकळी जवानो रस्तो आपवानी याचना करी. चाणाक्ये ते वात स्वीकारी तेथी ते रथमां बेसी पोतानी स्त्री, पुत्री अने थोडुं सारभूत द्रव्य लइ नगर बहार नीकळी गयो.

ते वखते रथमां बेठेली नंदराजानी पुत्री नगरमां प्रवेश करता चंद्रगुप्तनुं लावण्य जोइ मोह पामी. नंदराजाए ते जाण्युं, एटले चंद्रगुप्त उपर पुत्रीनो स्नेह जोइ नंदराजाए तेने पोताना रथमांथी उतारी मूकी. ते तरतज चंद्रगुप्तना रथ उपर चढी गइ. ते वखते रथना नव आरा भांगी गया. ते जोइ चंद्रगुप्ते चाणाक्यने कह्युं के 'हे पिताजी! नगरप्रवेश वखते आ अपशुकन थायछे.' चाणाक्ये कह्युं के 'हे वत्स! आ शुभ शुकन छे, कारणके रथना नव आरा भांग्याछे तेथी तारुं राज्य नव पुरुष सुधी (नव पेढी सुधी) स्थिर थशे.' पछी नगरमां आवी चंद्रगुप्ते नंदराजानी पुत्री साथे पाणिग्रहण कर्युं.

नंदराजा राज्यमहेलनी अंदर एक रुपवती विषकन्या मूकी गयो हतो. तेने चाणाक्ये अनुमानथी दोषवडे दूषित जाणीने पर्वत राजानी साथे परणावी. तेना अंगना स्पर्शथी पर्वत राजानुं शरीर विषव्याप्त थइ गयुं. ते वखते चंद्रगुप्ते कह्युं के 'आ पर्वत राजानी सहायथी आपणे राज्य मेळव्युं छे अने आ मित्र मरी जायछे, माटे तेनी चिकित्सा करवी जोइए.' चाणाक्ये कह्युं के 'चिकित्सा करवाथी सर्युं, औषध विना व्याधि जायछे.' आ प्रमाणे कार्य साधी मरता मित्र प्रत्ये तद्दन बेदरकारी बतावी. तेथी मित्रस्नेह पण कृत्रिम छे, एवो आ कथानो उपदेश छे.

नियर्यावि नियर्यकज्जे, विसंवयंतंमि हुंति खरफरसा ।
जह राम सुभुमकओ, बंभ खत्तस्स आसि खओ ॥ १५१ ॥

अर्थ—"पोताना स्वजनो पण पोतानुं कार्य विघटमान थये सते अर्थात् धार्या प्रमाणे सिद्ध नहि थये सते खर के० रौद्र कर्मना करनारा अने फरस के० कर्कश वचनो बोलनारा थायछे. जेम राम ते फरसुराम अने सुभूम चक्रवर्तीनो करेलो ब्राह्मणो अने क्षत्रियोनो क्षय थयो तेम." १५१. परशुरामे सात वखत निःक्षत्री पृथ्वी करी, ने सुभूमे एकवीश वखत अब्राह्मणी पृथ्वी करी. पोताना कार्यनी सिद्धिने माटे आ प्रमाणे मोटो क्षय कर्यो, जेमां पोताना स्वजनोनो पण क्षय थइ गयो. माटे स्वजनस्नेह पण व्यर्थ छे. अहीं परशुराम ने सुभूमनो संबंध जाणवो. ४६

गाथा १५१—नियकज्जे-नियकज्जो, रकरफरुसा. सुभूम. राम—परशुराम.

परशुराम अने सुभूमनी कथा.

सुधर्मा नामना देवलोकमां विश्वानर अने धन्वंतरि नामना बे मित्रदेवो हता. पहेलो जैन हतो अने बीजो तापसभक्त हतो. तेओ परस्पर धर्मवार्ता करता सता पोतपोताना धर्मने वखाणता. तेनो निर्णय करवा माटे धर्मनी परीक्षा करवाना हेतुथी तेओ मृत्युलोकमां आव्या. ते समये मिथिला नगरीनो राजा पद्मरथ राज्य छोडीने श्रीवासुपूज्य मुनिनी पासे चारित्र ग्रहण करवाने जतो हतो. नवीन भावचारित्रवाळा तेने जोइने जैनदेवे कह्युं के 'प्रथम आपणे आनी परीक्षा करीए, पछी तमारा तापसनी परीक्षा करीशुं.' पछी भिक्षाने माटे अटन करता ते नवीन भावचारित्रीने अनेक प्रकारनी उत्तम रसवती बतावी, पण ते भावसाधु सत्त्वथी चलित थया नहि. पछी बीजी शेरीमां जतां तेना मार्गमां चारे तरफ देडकीओ विकुर्वी अने बीजे रस्ते कांटा वेर्या. पद्मरथ भावमुनि मंडूकीवाळो मार्ग तजी दइ कांटावाळा रस्ते चाल्या. ते वखते कांटा पगमां भोंकावाथी लोहीनी धारा वहेवा लागी अने अत्यंत वेदना थवा लागी. परंतु तेओ जरा पण खिन्न थया नहि, तेमज ईर्यासमितिथी चालतां लेशमात्र पण क्षोभ पाम्या नहि. पछी त्रीजी वार देवे निमित्तियो थइ हाथ जोडी विनय पूर्वक कह्युं के "हे भगवन्! तमे दीक्षा लेवाने जाओछो, पण हुं निमित्तना प्रभावथी जाणुंछुं के तमारुं आयुष्य हजु लांबुं छे अने तमने युवावस्था प्राप्त थइछे तो हमणा राज्यमां रही विविध प्रकारना भोग भोगवो, पछी वृद्धावस्थामां चारित्र ग्रहण करजो; कारणके ते वधारे सारुं छे. वळी आ सरस विषयोनो स्वाद क्यां अने रेतीना कोळीआ जेवो आ विरस योगमार्ग क्यां?" त्यारे भावसाधुए कह्युं के 'हे भव्य! जो मारुं आयुष्य लांबुं होय तो वधारे सारुं, हुं घणा दिवस सुधी चारित्र पाळीश, जेथी मने मोटो लाभ थशे. वळी धर्म संबंधी उद्यम तो युवावस्थामांज करवो जोइए. आगममां पण कह्युंछे के—

> जरा जावं न पीडेई, वाही जाव न वट्टई ।
> जाविंदिआ न हायंति, ताव सेयं समायरे ॥

"ज्यांसुधी जरा पीडा करे नहि, ज्यांसुधी कोइ प्रकारनो व्याधि थाय नहि, अने ज्यांसुधी इंद्रियो हानि पामे नहि त्यांसुधीमां धर्म आचरवो." वृद्धावस्थामां ग्रस्त थयेलो मनुष्य इंद्रियो निर्बळ थवाथी धर्मकरणीमां उद्यम केवी रीते करी शके?" कह्युं छे के—

> दंतैरुच्चलितं धिया तरलितं पाण्यंघ्रिणा कंपितं
> दृग्भ्यां कुड्मलितं बलेन ललितं रूपश्रिया प्रोषितम् ।

प्राप्ताया यमभूपतेरिहमहाधाटया जरायामियं
तृष्णा केवलमेककैव सुभटी हृत्पत्तने नृत्यति ॥

" यम राजानी मोटी धाडरूप आ वृद्धावस्था प्राप्त थतां दांत हालेछे, बुद्धि नष्ट थायछे, हाथपग कंपेछे, नजर क्षीण थायछे, बळ जतुं रहेछे अने रूप तथा लावण्य चाल्युं जायछे, मात्र तृष्णा एकलीज सुभटनुं आचरण करती सती हृदयरूपी नगरमां नृत्य करी रहेछे. "

आ प्रमाणे ते भावमुनिनी दृढता जोइ बंने देव खुशी थया अने प्रशंसा करवा लाग्या. पछी जैनदेवे तापसदेवने कह्युं के ' जैनोनुं स्वरूप जोयुं ? हवे आपणे तापसनी परीक्षा करीए. ' ए प्रमाणे कही तेओ वनमां गया. त्यां तेओए एक जटाधारी, वृद्ध, तीव्र तप करतो अने ध्यानमां आरूढ थयेलो यमदग्नि नामनो तापस जोयो. तेनी परीक्षा करवा माटे ते देवो चकला चकलीनुं रूप धारण करी तेनी दाढीनी अंदर माळो बांधीने रह्या. पछी चकलो मनुष्यवाणीथी बोल्यो के ' हे बाला ! तुं अत्र सुखथी रहे, हुं हिमालय पर्वते जइने आवुंछुं. ' त्यारे चकलीए कह्युं के ' हे प्राणनाथ ! हुं तमने जवा दइश नहि; कारण के तमे पुरुषो ज्यां जाओछो त्यां लुब्ध थइ जाओछो. जो तमे पाछा न आवो तो मारी शी गति थाय ? हुं अबळा एकली अहीं केम रही शकुं ? तमारो वियोग माराथी केवी रीते सहन थइ शके ? ' ते सांभळी चकलाए कह्युं के ' हे बाळा ! तुं शामाटे कदाग्रह करेछे ? हुं जलदी आवीश. जो हुं आवुं नहि तो मने ब्राह्मणनी, स्त्रीनी, बाळकनी ने गायनी हत्यानुं पाप लागे.' त्यारे चकलीए कह्युं के ' हुं सोगनो मानती नथी. पण जो तमे न आवो तो यमदग्नि तापसनुं पाप मस्तक उपर धारण करो तो हुं तमने जवा दउं. ' त्यारे चकलो बोल्यो के ' तुं एम बोल नहि. एनुं पाप कोण अंगीकार करे? ए वचनो सांभळीने यमदग्नि ध्यानथी चलित थयो अने क्रोधवश थइ चकला चकलीने पकडी कहेवा लाग्यो के ' मारुं शुं एटलुं बधुं पाप छे?' चकलीए कह्युं के ' हे मुनि ! क्रोध करो नहि. आपनां धर्मशास्त्र जुओ. कारण के–

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति, स्वर्गो नैव च नैव च ।
तस्मात् पुत्रमुखं दृष्ट्वा, स्वर्गं गच्छंति मानवाः ॥

" पुत्र विनाना माणसनी सद्गति थती नथी, अने स्वर्गमां तो तेनी गति छेज नहि. तेथी माणसो पुत्रनुं मुख जोइने स्वर्गमां जायछे. "

तमे पुत्ररहित छो तो तमारी शुभ गति केवी रीते थाय ? तेथी तमारुं पातक

मोटुं छे. ' ए प्रमाणे कही परीक्षा करीने देवो पोताने स्थाने गया, अने मिथ्यादृष्टि देव हतो ते पण परम जैन थयो.

तेमना गया पछी यमदग्नि पण पक्षिना मुखनां वचनो सांभळी विचार करवा लाग्यो के ' एमणे कही ते बाबत खरी छे, तेथी कोइ स्त्रीनी साथे पाणिग्रहण करी पुत्र उत्पन्न करुं तो मारी शुभ गति थाय. ' ए प्रमाणे विचार करी कोष्टक नगरना राजा जितशत्रु समीपे जइ एक कन्या मागी. त्यारे राजाए कह्युं के ' मारे सो पुत्रीओ छे, तेओमांथी जे तमने पसंद करे ते कन्या तमे ग्रहण करो. ' ते सांभळीने यमदग्नि अंतःपुरमां आव्यो. त्यां रहेली सर्वे कन्याओए जटाधारी, दुर्बळ, मळथी मलीन गात्रवाळा अने विपरीत रूपवाळा यमदग्निने जोइने थुथुकार कर्यो (थुंकी). तेथी तेंणे क्रोधवश थइने ते सर्व कन्याओने कुब्जा करी नांखी. पाछा वळतां तेणे महेलना आंगणामां धूळमां रमती एक राजपुत्रीने जोइ, तेने तेणे बीजोरुं बताव्युं; एटले ते लेवाने तेणे लांबो हाथ कर्यो, तेथी तापसे राजा पासे जइने कह्युं के ' आ कन्या मने इच्छेछे. ' एम कहीने तेने ग्रहण करी. भय पामेला राजाए हजार गायो ने केटलाक दासदासीओ सहित ते पुत्री तेने आपी; तेथी प्रसन्न थयेला ऋषिए शेष रहेला पोताना तपनी शक्तिथी पेली सर्व कुब्जा राजपुत्रीओने सारी करी. ए प्रमाणे सर्व तपने खपावी रेणुका बालाने लइने ते वनमां आव्यो. त्यां एक झुंपडी बनावीने तेओ रह्या.

अनुक्रमे रेणुका यौवनवती थइ, एटले तेनी साथे तेणे पाणिग्रहण कर्युं. प्रथम ऋतुकाले यमदग्निए रेणुकाने कह्युं के ' हे सुलोचना ! सांभळ, तारे माटे एक चरु मंत्रीने तने आपुंछुं, ते खावाथी तने एक सुंदर पुत्र थशे. ' त्यारे रेणुकाए कह्युं के ' हे स्वामिन्! बे चरु मंत्री आपो के जेमांना एक चरुथी ब्राह्मणपुत्र थाय अने बीजाथी क्षत्रियपुत्र थाय. हुं क्षात्रियचरु हस्तिनापुरना राजा अनंतवीर्यनी स्त्री मारी बेन अनंगसेनाने आपीश अने ब्राह्मणचरु हुं खाइश. ' ए प्रमाणे रेणुकाना कहेवाथी यमदग्निए बे चरु मंत्री पोतानी स्त्रीने आप्या. पछी रेणुकाए विचार कर्यो के ' मारो पुत्र शूरवीर थाय तो सारुं. ' एम विचारी तेणे क्षत्रियचरुनुं भक्षण कर्युं अने ब्राह्मणचरु तेनी बेन अनंगसेनाने मोकल्यो. तेणे ते खाधो. तेने एक पुत्र थयो तेनुं नाम कीर्तिवीर्य पाड्युं, रेणुकाने पुत्र थयो तेनुं नाम राम पाडवामां आव्युं.

राम युवान थयो एवामां अतिसारना रोगथी पीडित एक विद्याधर ते आश्रममां आव्यो. रामे तेनो सत्कार कर्यो अने औषधना प्रयोगथी तेने स्वस्थ कर्यो, तेथी ते विद्याधरे प्रसन्न थइने रामने परशुविद्या आपी. तेणे परशुविद्या साधी, तेथी ते परशुरामना नाम-

थी प्रसिद्ध थयो. पछी देवताथी अधिष्ठित थयेली परशु (कुहाडी) ने लइने अजय्य एवो ते ज्यां त्यां फरवा लाग्यो.

अन्यदा परशुरामनी माता रेणुका हस्तीनापुरमां पोतानी बेनने मळवा अर्थे गइ. त्यां पोतानी बेनना पति अनंतवीर्यनी साथे संबंध थवाथी तेने गर्भ रह्यो. अनुक्रमे तेने पुत्र थयो. पछी पुत्र सहित रेणुकाने यमदग्निए पोताना आश्रममां आणी. परशुरामे मातानुं दुष्चरित जाणी पोतानी पुत्रवती माताने मारी नांखी. आ खबर अनंतवीर्यने पडवाथी तेणे त्यां आवी यमदग्निना आश्रमने भांगी नांख्यो. तेथी क्रोधित थयेला परशुरामे परशुथी अनंतवीर्यनुं मस्तक छेदी नांख्युं. पछी तेनो पुत्र कीर्तिवीर्य राज्याधिकारी थयो. तेणे पितानुं वेर वाळवा माटे परशुरामना पिता यमदग्निने मारी नांख्यो. तेथी परशुरामे त्यां जइ परशुना प्रभावथी कीर्तिवीर्यने हणी हस्तीनापुरनुं राज्य लइ लीधुं. ते वखते चौद स्वप्नथी सूचित गर्भ जेणे धारण कर्यो छे एवी कीर्तिवीर्य राजानी तारा नामनी स्त्री पोताना पतिना मरण समये नासी गइ. ते वनमां तापसोना आश्रमे पहोंची. त्यां जइ तेणे तापसोने पोतानुं सर्व स्वरूप (वृत्तांत) कह्युं. दयाथी आर्द्र चित्तवाळा तापसोए तेने गुप्त रीते भोंयरामां राखी. अनुक्रमे तेने त्यां पुत्र थयो. तेनुं सुभूम नाम पाड्युं. अनुक्रमे ते मोटो थवा लाग्यो. परशुरामे क्षत्रियो उपर क्रोध करीने सात वार नक्षत्री पृथ्वी करी अने मारेला क्षत्रियोनी दाढोने एकठी करीने एक थाळ भरी मूक्यो.

एक दिवस फरतो फरतो परशुराम पेला तापसोनी झुंपडीए आव्यो, त्यारे परशुनी अंदरथी ज्वाला नीकळवा लागी. तेथी परशुरामे तापसोने पूछ्युं के ' खरुं बोलो, कोइ पण क्षत्रिय अहीं छे ? कारणके मारी परशुमांथी अंगारा वर्षे छे. ' त्यारे तापसोए कह्युं के ' अमे क्षत्रियो छीए. परशुरामे तपस्वीओ धारीने तेमने छोडी दीधा. ए प्रमाणे सर्व क्षत्रियोने मारीने ते निष्कंटकपणे हस्तीनापुरनुं राज्य भोगववा लाग्यो. एक दिवसे परशुरामे कोइ निमित्तियाने पूछ्यु के ' मारुं मृत्यु कोनाथी थशे ? ' निमित्तिके कह्युं के 'जेनी दृष्टिथी आ क्षत्रियोनी दाढो क्षीररूप थइ जशे अने तेनुं भोजन जे करशे ते तमने मारशे. ' ते सांभळीने परशुरामे पोताना मारनारने ओळखवा माटे एक दानशाला बंधावी अने त्यां सिंहासन उपर दाढोनो थाळ मूक्यो.

अहीं वैताढ्यवासी मेघनाद नामना विद्याधरे निमित्तियाना कहेवाथी पोतानी पुत्रीनो वर सुभूम थशे एम जाणीने त्यां आवी सुभूमने पोतानी पुत्री अर्पण करी, अने पोते तेनो सेवक थइ त्यां रह्यो. एक दिवस सुभूमे पोतानी माताने पूछ्युं के ' हे माता ! शुं भूमि आटलीज छे ? ' एवा पुत्रना शब्दो सांभळीने नेत्रमां अश्रु लावी गद्-

गद्‌ स्वरपूर्वक तारा राणीए पूर्वेनी सघळी हकीकत जणावीने कह्युं के 'हे पुत्र! तारा पिता अने पितामहने हणीने तथा सर्व क्षत्रियोनो नाश करीने परशुराम आपणुं राज्य भोगवे छे, अने तेना भयथी नासीने आपणे आ तापसनो आश्रय करी भोंयरामां रह्या छीए.' ए प्रमाणे माताना मुखथी सांभळीने सुभूम क्रोधित थइ एकदम भोंयरामांथी वहार नीकळ्यो, अने मेघनाद साथे हस्तीनापुर जइ दानशाळाए आव्यो. ते वखते दाढोनो थाळ सुभूमनी दृष्टिए पडतां ते दाढोनी क्षीर थइ गइ, एटले ते क्षीर सुभूम खावा लाग्यो. परशुरामे ते वात जाणी, एटले सन्नद्ध थइने जाज्वल्यमान परशु लइ वहार नीकळ्यो, परंतु परशुरामनुं ते हथियार सुभूमनी दृष्टि पडतांज तेना पूर्वना पुण्यथी निस्तेज थइ गयुं. पछी सुभूमे भोजन कर्या पछी उठीने ते थाळ परशुराम उपर फेंक्यो, एटले ते थाळनुं सहस्र देवताओए अधिष्ठित करेलुं चक्र वनी गयुं; अने ते चक्रे परशुरामनुं शिर कापी नांख्युं. ते वखते सुभूमने चक्रवर्तीपदनो उदय थयो, जय जय शब्दो वोलावा लाग्या, अने देवोए पुष्पनी वृष्टि करी. पछी परशुरामे मारेला क्षत्रियोना वैरनुं स्मरण करीने तेणे एकवींश वखत ब्राह्मणरहित पृथ्वी करी.

चक्रना वळथी आ भरतक्षेत्रना छखंड जीतीने विशेष लोभी वनी धातकीखंडमां आवेला भरतक्षेत्रने साधवा चाल्यो. अडताळीश गाउ विस्तारवाळा चर्मरत्न उपर पोताना सर्व सैन्यने स्थापीने लवणसमुद्रनी उपर थइने चाल्या जतां समकाळे चर्मरत्नना अधिष्ठायक हजारे देवोए चर्मरत्न मूकी दीधुं. एटले चर्मरत्न ने सैन्यसहित जळमां डुवीने ते मरण पाम्यो अने अतिशय पापकर्मना योगथी सातमी नरके गयो. ए प्रमाणे संवंधीओनो स्नेह पण कृत्रिम छे, एवो आ कथानो उपदेश छे.

कुल घर नियय सुहेसुअ, सयणेय जणेअ निच्च मुणिवसहा।
विहरंति अणिस्साए, जह अज्जमहागिरि भयवं ॥ १५२॥

अर्थ—" मुनिवृषभो—श्रेष्ठ मुनिओ (धर्मधुरंधर होवाथी) कुळ ते कुटुंव, घर, पोताना संवंधीओ तथा ग्रामनगरादिजन्य सुख—तेने विषे तेमज स्वजनमां अने सामान्य लोकमां निरंतर अनिश्राए (कोइना पण आलंवन विना) विचरेछे. जेम आर्य महागिरि भगवंत निश्रा विना विचर्या तेम." १५२. अहीं आर्यमहागिरिनो संवंध जाणवो. ४७.

आर्यमहागिरि प्रबंध.

श्रीस्थूलिभद्रसूरिने आर्यमहागिरि ने आर्यसुहस्ती नामे वे शिष्यो हता. ते

गाथा—१५२ अज्जमहागिरि।

वेमां मोटा श्रीआर्यमहागिरिसूरि आर्यसुहस्तीसूरिने गणशिक्षा (गच्छनुं शिक्षण अर्थात् गच्छ) सोंपीने पोते विशेष वैराग्यथी जिनकल्पनी तुलना करवाने माटे उद्युक्त थइ एकला विचरवा लाग्या. ते विशेषपणे क्रियामां उद्यमवंत रहे छे. ज्यारे आर्यसुहस्ती सूरि गामनी अंदर समवसरे छे त्यारे श्रीआर्यमहागिरि गामनी बहार रहेछे, एम गच्छनी निश्राए विहार करे छे.

एकदा श्रीसुहस्तीसूरि विहार करतां करतां पाटलीपुर पधार्या. त्यां आर्यमहागिरि क्षेत्रना छ विभाग करीने पांच पांच दिवस सुधी एक एक विभागमां भिक्षार्थे जायछे अने नीरस आहार ग्रहण करे छे. एक वखत श्रीआर्यसुहस्तीसूरि वसुभूति नामना श्रावकना कुटुंबने प्रतिबोध करवाने माटे तेने घेर गया हता अने धर्मदेशना आपता हता. ते समये श्रीआर्यमहागिरि अजाणतां वसुभूतिने घेर भिक्षार्थे आव्या. तेमने जोइ आर्यसुहस्तीसूरिए उभा थइ विनयपूर्वक वंदन कर्युं. एटले आर्यमहागिरि भिक्षा ग्रहण कर्या शिवाय पाछा वळी गया. वसुभूति श्रावके आर्यसुहस्ती, महाराजने पूछ्युं के 'जेमनो आपे आटलो विनय कर्यो ए महामुनि कोण छे?' त्यारे आर्य सुहस्तीसूरिए कह्युं के 'ए अमारा मोटा गुरुभाइ छे अने महा अनुभाववाळी जिनकल्पनी तुलना करे छे.' ते सांभळीने वसुभूति श्रावके बीजे दिवसे आखा नगरमां बधे उत्तम आहार कराव्यो. आर्यमहागिरिए तेने अकल्प्य जाणीने ग्रहण कर्यो नहि. पछी उपाश्रये आवीने तेमणे सुहस्तीसूरिने ओळंभो आप्यो के 'तमे बहु विरुद्ध आचरण कर्युं के वसुभूतिने घेर मारो अभ्युत्थानादि विनय कर्यो. तेम करवाथी तमे सर्वत्र अशुद्ध आहार करी दीधोछे. माटे हवे आजथी मारे तमारी साथे एक क्षेत्रमां रहवुं उचित नथी.' ए प्रमाणे कही आर्यमहागिरिए जुदो विहार कर्यो अने गच्छनो आश्रय छोडी दइ एकाकी तपसंयम पाळी स्वर्गे गया. ए प्रमाणे वीजाए पण प्रतिबंध करवो नहि, एवो आ कथानो उपदेश छे.

रुवेण[1] जुव्वणेण[2] यं[3], कन्ना[4] सुहेहिं[5] वरसिरीए[6] यं ।
नय[7] लुंभंति[8] सुविहिया[9], निदरसणं[10] जंबूनामंत्ति[11] ॥ १५३ ॥

अर्थ—" रूपे करीने, यौवने करीने, गुणवती कन्याओथी, सांसारिक सुखोथी तेमज श्रेष्ठ एवी लक्ष्मीथी सुविहितो—साधु पुरुषो—उत्तम जनो लोभाता नथी. अहीं जंबू नामे महा मुनिनुं निदर्शन के० दृष्टांत जाणवुं." १५३. जंबूस्वामीनुं दृष्टांत पूर्वे आवेलुं छे तेथी अहीं लख्युं नथी.

उत्तमकुल[1]पसूया, रायकुलवडिंसगावि[2] मुणिवसहा[3] ।
बहुजण[4]जईसंघट्टं, मेहकुमारुव्व विसहंति[6] ॥ १५४ ॥

गाथा १५३—रुव्वेण। कन्नाहिं। घरसिरीएहिं। निदरिसणं। जंबुनामुत्ति।
गाथा १५४—मेहकुमारव्व।

अर्थ-" उत्तम कुळमां उत्पन्न थयेला, राजकुळमां मुगट समान एवा मुनिवृषभो-मुनिश्रेष्ठो अनेक कुळमां उत्पन्न थयेला घणा मुनिजनोनो संघट्ट मेघकुमारनी जेम विशेष प्रकारे सहन करेछे." १५४. अहीं मेघकुमारनुं दृष्टांत जाणवुं. ४८

मेघकुमारनुं दृष्टांत.

मगधदेशमां राजगृह नगरमां श्रेणिक राजा राज्य करतो हतो. तेनी धारिणी नामे राणी हती. तेनी कुक्षिने विषे कोइ जीव उत्पन्न थयो. तेना प्रभावथी तेने अकाळे मेघनो दोहद थयो. अभयकुमारे अट्ठमभक्तथी कोइ देवने आराधीने तेनी सहायथी ते दोहद पूर्ण कर्यो. उत्तम समये पुत्रनो प्रसव थयो. स्वप्नने अनुसारे तेनुं नाम मेघकुमार पाड्युं. अनुक्रमे तेणे युवावस्था प्राप्त करी. श्रेणिक राजाए तेने स्वरूपवती आठ कन्या एक लग्ने परणावी. ते स्त्रीओ साथे विषयसुख भोगवतो मेघकुमार अन्यदा वीरप्रभु त्यां समवसरवाथी वांदवाने गयो. प्रभुनी देशना सांभळी तेणे वैराग्य प्राप्त थवाथी चारित्र ग्रहण कर्युं. भगवंते तेमने शिक्षा ग्रहण करवा माटे स्थविर (वृद्ध) मुनि पासे मोकल्या. हवे रात्रिए पौरुषी भणाव्या पछी संथारा करतां वृद्धलघुत्वना (नाना मोटाना) व्यवहारथी मेघमुनिनो संथारो सर्व साधुनी पछी उपाश्रयनी बहार आव्यो. त्यां रात्रिए जता आवता साधुना चरणना प्रहारथी अने तेमना अथडावा विगेरेथी मेघमुनि बहु खिन्न थया. ते विचारवा लाग्या के " अरे ! मारो सुखकारी आवास क्यां ! मारी कोमळ पुष्पशय्या क्यां ! अंगनाना अंगसंगथी उत्पन्न थतुं सुख क्यां ! अने आ कठिन भूमिमां आळोटवुं क्यां ! आ साधुओ प्रथम तो मारा प्रति आदरवाळा हता अने हवे तो तेज साधुओ मने पग विगेरेना संघट्ट करेछे, तेथी जो आजनी रात्रि सुखे सुखे जाय तो प्रातःकाळमां वीरप्रभुने पूछी रजोहरण आदि वेष पाछो सोंपीने हुं मारे घेर चाल्यो जइश." ए प्रमाणे चिंतवी मेघमुनि प्रातःकाळे प्रभु पासे आव्या. भगवाने मेघमुनिना बोल्या पहेलांज कह्युं के ' हे मेघ ! तें आज रात्रिना चारे पहोर दुःख अनुभव्युं छे अने घेर जवानो विचार करेलो छे. आ हकीकत खरी छे ? ' मेघमुनिए कह्युं के ' ए हकीकत खरी छे.' त्यारे भगवाने कह्युं के " हे मेघमुनि ! आ दुःख तो शुं छे ! पण जे दुःख तें आ भवथी त्रीजे भवे अनुभवेलुं छे ते सांभळ-तुं पूर्वे वैताढ्य पर्वतनी भूमिमां श्वेतवर्णी, घणो उंचो अने एक हजार हाथणीना टोळानो अधिपति छ दांतवाळो सुमेरुप्रभ नामनो हाथी हतो. एक दिवस वनमां दावानळ लाग्यो. तेनाथी भय पामी तृषातुर थइ वनमां भटकतां थोडा पाणिवाळा ने घणा कीचडवाळा सरोवरमां पेठो. त्यां तुं कीचडनी अंदर खुती गयो. तुं जळ सुधी पहोंच्यो नहि एटले तने जळ पण

मळ्युं नहि, अने बहार पण नीकळी शक्यो नहीं. पछी घणा वैरी हाथीओए आवीने तने दंतमुशळना प्रहार कर्या. ए प्रमाणे सात दिवस सुधी पीडा अनुभवी सो वर्षनुं आयुष्य पूर्ण करी काळ करीनें तुं विंध्यभूमिमां चार दांतवाळो, रक्त वर्णवाळो ने सातसे हाथणीनो पति मेरुप्रभ नामे हाथी थयो. त्यां पण अग्नि लागेलो जोइ जातिसमरणथी तें तारो पूर्वभव दीठो. पछी दावानळथी भय पामीने तें एक योजनप्रमाण भूमिनी अंदरथी तृण काष्ठ आदि सर्व दूर फेंकी दीधुं, अने नवा उगेला तृण वल्ली अंकुरो विगेरेने शुंढवडे परिवारनी मददथी मूळमांथी उखेडी नांखवा लाग्यो. एक वखत फरीथी दावानळ प्रकट्यो. ते वखते तुं परिवार सहित पेला एक योजन प्रमाणवाळा मंडळमां आवी गयो. बीजां पण घणां वनचर प्राणीओ त्यां आव्यां. ते वखते तें शरीर खणवाने माटे एक पग उंचो कर्यो, तेवामां एक ससलो कोइ जग्याए तेने स्थान नहि मळवाथी तारा पग नीचेनी जग्याए आवीने उभो रह्यो. पग नीचे मूकतां तें ससलाने जोयो; एटले तेना उपरनी दयाने लीधे तारुं मन आर्द्र थवाथी तें तारो पग उंचो ने उंचो राख्यो. ए प्रमाणे अढी दिवस सुधी एक पग उंचो राखीने रह्यो. दावानळ शांत थतां सर्व प्राणीओ पोतपोताने स्थाने गया. एटले पग नीचे मूकतां शरीर घणुं स्थूळ होवाथी पर्वतनुं शिखर त्रुटी पडे तेम तुं पडी गयो, अने घणी वेदना भोगवी, सो वर्षनुं आयुष्य पूरुं करी दयाना परिणामथी शुभ कर्म बांधी श्रेणिक राजानो पुत्र थयो. हवे तुं विचार कर के समकितनो पण लाभ मळ्यो नहोतो ते वखतमां तिर्यंचना भवमां थोडुं कष्ट सहन करवाथी तें मनुष्यनुं आयुष्य बाध्युं, तो चारित्र ग्रहण कर्या पछी कष्ट सहन करवाथी तो मोटुं फळ मळेछे; अथवा आ जीवे घणी वार नरकादिनां घणां दुःखो भोगव्यांछे, तो तुं आ साधुओना पादसंघट्टथी उत्पन्न थयेला दुःखथी शामाटे दुभाय छे ? साधुना चरणनी रज पण वंद्य छे, तेथी आ चारित्र तजी देवानो तारो मनोरथ योग्य नथी. अग्निमां प्रवेश करवो सारो, विषनुं भक्षण करवुं सारुं, पण ग्रहण करेला व्रतनो भंग करवो ए सारुं नहि. " इत्यादि भगवंतनां कहेलां वचनोथी मेघमुनिने जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न थयुं, एटले सघळुं प्रभुना कहेवा प्रमाणे जोयुं. पछी भगवानने वांदीने मेघमुनि बोल्या के " हे भगवन् ! भवकूपमां पडतां तमे मारो बचाव कर्योछे. आजथी मांडीने बे चक्षु शिवाय बीजा कोइ अंगनी मारे शुश्रुषा करवी नहि एवो हुं अभिग्रह करुंछुं. " आ प्रमाणेनो अभिग्रह लइ, निर्दोष चारित्र पाळी, गुणरत्न संवत्सरादि करी, निर्मळ ध्यानवडे पोतानुं आयुष्य पूर्ण करी, समाधिथी मृत्यु पामीने विजय नामना अनुत्तर विमानने विषे देवपणे उत्पन्न थया. त्यांथी च्यवी महाविदेहक्षेत्रमां मनुष्य थइने मोक्षे जशे.

अवरुप्परसंबाहं, सुक्खं तुच्छं सरीरपीडाय ।
सारण वारण चोयण, गुरुजणआयत्तया य गणे ॥ १५५ ॥

अर्थ–" गच्छमां वसवाथी परस्पर संबाध ते मळवापणुं थाय अने स्वेच्छाए प्रवर्तवा रूप सुख अथवा इंद्रियजन्य जे सुख ते तुच्छ के० स्वल्प थाय-तेनुं ओछापणुं थाय, परीसहादिकवडे शरीरने पीडा थाय, कोइ पण कार्य न कर्युं होय तो तेनुं सारण के० संभारी देवुं थाय, कोइ पण कार्यमां प्रमाद करतां वारण के० वारवुं थाय, सारा कार्यमां चोयण के० मधुर के कर्कश वचनवडे पण प्रेरणा थाय अने गुरुजननी आधीनता थाय. एटला गुणो थाय; माटे अवश्य गच्छमांज वसवुं, एकला न रहेवुं. " १५५.

इक्कस्स कओ धम्मो, सच्छंदगईमइपयारस्स ।
किं वा करेउ इक्को, परिहरउ कह मकज्जं वा ॥ १५६ ॥

अर्थ–" स्वच्छंद जे गति तेमां छे मतिनो प्रचार जेनो अर्थात् स्वच्छंदे वर्तवानी छे बुद्धि जेनी एवा एकला मुनिने धर्मज क्यांथी होय ? अपितु न होय. वळी एकलो तपक्रिया विगेरे शुं करे ? अथवा एकलो अकार्यने पण केम परिहरवा शक्तिमान थाय ? अर्थात् न थाय. माटे गुरुकुळवासमांज रहेवुं. " १५६.

कत्तो सुत्तत्थागम, पडिपुच्छणा चोयणा च इक्कस्स ।
विणओ वेयावच्चं, आराहणया य मरणंते ॥ १५७ ॥

अर्थ–"एकला मुनिने सूत्रार्थनी प्राप्ति पण क्यांथी थाय ? प्रतिपृच्छा के० संदिग्धनुं पूछवुं ते कोनी पासे करे ? चोयणा के० प्रमादमां पडेलाने शिक्षादान कोण आपे ? एकलो विनय कोनो करे ? वैयावच्च कोनी करे ? अने मरणांते नमस्कार स्मरण, अणसणादि आराधना पण तेने कोण करावे ? अर्थात् एटलां वानां (एटला लाभ) एने क्यांथी प्राप्त थाय ? न थाय. " १५७.

पिल्लिज्जेसण मिक्को, पइन्नपमयाजणाउ निच्चं भयं ।
काउं मणोवि अकज्जं, न तरइ काऊण बहुमज्झे ॥ १५८ ॥

अर्थ–" एकलो मुनि एषणा जे आहारनी शुद्धि तेनुं पण उल्लंघन करे छे, अर्थात कदाचित् अशुद्ध आहार पण ग्रहण करे छे. वळी प्रकीर्ण के० एकाकी एवो जे प्रमदा-

---

गाथा–१५५ अवरुपर–परस्पर । गाथा—१५६ कओ–कुत. । करेइ । परिहरउं ।

गाथा–१५७ सुतथ्थागम । पडिपुच्छण । य । एक्कस्स । आगम. प्राप्तिः ।

जन–स्त्रीजन तेनाथी तेने निरंतर भय रह्या करे छे; अने बहु मुनिना मध्यमां तो अकार्य करवानुं मन पण करवाने शक्तिवान थवातुं नथी तो अकार्य करे तो शेनोज ? माटे स्थविरकल्पी मुनिओने एकाकी विहार युक्त नथी. ” १५८.

उच्चार पासवण वंत पित्त मुच्छाइ मोहिओ इक्को ।
सद्दव भायणं विहथ्थो, निक्खिवइ कुणइ उड्डाहं ॥ १५९ ॥

अर्थ–“ उच्चार ते पुरीष, पासवण ते प्रश्रवण (लघुनीति), वांत ते वमन अने पित्त मूर्छा विगेरे–आदिशब्दथी वायुविकार विशुचिकादिनुं ग्रहण करवुं. एवा व्याधिथी–कष्टथी व्याकुळ थयेलो एकलो साधु पाणी सहित जे भाजन तेनाथी व्यग्रहस्तवाळो होतो सतो जो ते भाजन हाथमांथी मूकी दे तो संयम विराधना–आत्मविराधना थाय, अने जो ते भाजन हाथमां रहेवा दइने उच्चार (वडी नीति) विगेरे करे तो शासननी उड्डाह (लघुता) थाय. तेथी मुनिने एकला रहेवुं कोइ रीते योग्य नथी.” १५९

एगदिवसेण बहुआ, सुहाय असुहाय जीवपरिणामा ।
इक्को असुहपरिणओ, चइज्झ आलंबणं लद्धुं ॥ १६० ॥

अर्थ–“ एक दिवसमां पण जीवना परिणाम शुभ अने अशुभ एवा बहु प्रकारना थायछे, तेथी एकलो मुनि अशुभ परिणामवाळो थयो सतो कांइक आलंबन–कारणने पामीने चारित्रने तजी देछे अथवा अनेक प्रकारना दोष लगाडेछे. ”१६०

सव्वजिणपडिकुठ्ठं, अणवथ्था थेरकप्पभेओअ ।
इक्को अ सुहावत्तोवि, हणइ तवसंजमं अइरा ॥ १६१ ॥

अर्थ–“ एकाकीपणे विचरवुं सर्व जिनेश्वरोए निषेध करेलुं छे. वळी तेथी अनवस्था के० मर्यादानो भंग थाय छे अने स्थविरोनो कल्प जे आचार तेनो भेद थायछे, तेथी एकाकी रहेवुं अयुक्त छे. वळी एकलो शुभ आयुक्त के० गाढ आचारयुक्त होय तोपण थोडा काळमां तप अने संयमने हणी नांखेछे, अर्थात् तेमां दोष लगाडेछे. ” १६१.

वेसं जुन्नकुमारिं, पउथ्थवइअं च बालविहवं च ।
पासंडरोह मसइं, नवतरुणिं थेरभज्जं च ॥ १६२ ॥

गाथा १५९–निख्खवइ । गाथा १६०–एकदिवसेण । चइज्ज ।
गाथा १६१–सुयाउत्तोवि । सुहाउत्तोवि । पडिकुट्ठ=निषिद्धं । अइरा–अचिरात्

सविडंकुब्भडरुवा, दिट्ठी मोहेइ जा मणं इत्थी ।
आयहियं चिंतंता, दूरयरेणं परिहरंति ॥ १६३ ॥

अर्थ–वेश्या, वृद्ध कुमारिका एटले मोटी उम्मरवाळी कुमारिका, परदेश गयेला पतिवाळी स्त्री,बाळ विधवा एटले जेनो पति बाल्यावस्थामांज मरण पामेलो छे एवी अति कामविह्वळ स्त्री, पाखंडव्रते करीने जेणे विषयनो रोध करेलो छे एवी स्त्री–तापसणी प्रमुख, असती ते व्यभिचारिणी स्त्री, नवयौवना, वृद्ध भर्त्तारनी भार्या, शभ अध्यवसायने दूर करी दे एवा उदभट रूपवाळी अथवा विकार सहित मनोहर रूपवाळी, अने देखवा मात्रथीज जे मनने मोहित करे एवी स्त्री–आटला प्रकारनी स्त्रीओने आत्महितने चिंतवनार पुरुष अति दूरथीज त्यजी दे छे. ” १६२. १६३.

सम्मद्दिट्ठीवि कयागमोवि, अइविसयरागसुहवसओ ।
भवसंकडंमि पविसइ, इत्थं तुह सच्चईनायं ॥ १६४ ॥

अर्थ–“ सम्यग् दृष्टि छतां अने सिद्धांतनो जाण छतां अतिशय विषयराग संबंधी जे सुख तेना परवशपणाथी भवसंकटने विषे प्रवेश करेछे, अर्थात् बहु भवभ्रमण करेछे. ते संबंधमां हे शिष्य ! तारे सत्यकीनुं उदाहरण जाणवुं. ” १६४. अहीं सत्यकी विद्याधरनो संबंध जाणवो. ४९

सत्यकी विद्याधरनी कथा.

विशाळ लक्ष्मीवाळी विशाळा नगरीमां चेटक नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने सुज्येष्ठा अने चिल्लणा नामे बे पुत्रीओ हती. ते बंनेने अरस्परस घणोज स्नेह हतो. अभयकुमारनी सलाहथी ते बन्ने कन्याओए श्रेणिक राजानी साथे पाणिग्रहण करवानो अभिग्रह कर्यो हतो. पछी अभयकुमारे एक सुरंग खोदावी, अने ते सुरंगद्वारा श्रेणिक राजाए विशाळा नगरीए आवी बन्ने कन्याओने लीधी. सुरंगना मुख आगळ आवतां चिल्लणाए विचार कर्यो के ‘ सुज्येष्ठा रूपमां माराथी अति श्रेष्ठ छे, तेथी श्रेणिक राजा तेने बहु मान दइ पट्टराणी करशे. ’ ए प्रमाणे विचारी चिल्लणाए सुज्येष्ठाने कहुं के ‘ हे भगिनी ! तुं पाछी जइने मारो रही गयेलो घरेणांनो डाबलो जलदी लइ आव. ’ ए प्रमाणे कही सुज्येष्ठाने पाछी मोकली. पछी चिल्लणाए श्रेणिक राजाने कहुं के ‘ हे स्वामिन् ! अहींथी जलदी चालो. जो कोइ जाणशे तो बहु विपरीत थशे. ’ ए प्रमाणे भय बतावीने तेओ सुरंगमांथी बहार नीकळी गया. त्यार पछी आवेली सुज्येष्ठाए चिंतव्युं के “ प्राणथी पण वधारे प्रिय एवी मारी बेन चिल्लणाए मारा उपर आवुं कपट रच्युं,

गाथा १६३–कृतागम–ज्ञातागमः ।

माटे केवळ स्वार्थमां रचीपची रहेल कुटुंबवर्गथी सर्यु, अने सर्पनी फणा जेवा विषयो
पण धिक्कार छे. " ए प्रमाणे वैराग्य थवाथी सुज्येष्ठाए पाणिग्रहण न करतां चंदनबाल
साध्वी पासे जइने चारित्र ग्रहण कर्यु.

छठ्ठ अठ्ठम आदि अनेक प्रकारनां तप करती ते एक दिवस आतापना ग्रह
करीने रहेली छे. एवे समये पेढाल नामना विद्याधरे त्यांथी जतां तेने जोइ. एटले
मनमां विचारवा लाग्यो के ' आ सती ध्यानमां स्थित थइछे अने ते महा रूपवती छे, तेथ
जो हुं आ साध्वीनी कुक्षिनी अंदर पुत्रने उत्पन्न करुं तो ते पुत्र मारी विद्यानुं पा
थाय. ' ए प्रमाणे विचार करीने विद्याना बळथी अंधकार विकुर्वी ते न जाणे एवी री
भ्रमरनुं रूप करी तेने भोगवीने तेनी योनिमां वीर्य मूक्युं. पछी तेनी कुक्षिने विषे उत्प
थयेलो जीव अनुक्रमे वधवा लाग्यो, तेथी सुज्येष्ठा साध्वीने मनमां संदेह उत्पन्न थय
तेणे ते संबंधी ज्ञानीने पूछ्युं एटले ज्ञानीए तेनो संदेह भांगीने कह्युं के 'एमां तारो दो
नथी, तुं तो सती छे. अनुक्रमे ते साध्वीने पुत्र थयो तेनुं नाम सत्यकी पाडवा
आव्युं. ते साध्वीना उपाश्रयमां मोटो थयो. त्यां साध्वीना मुखथी आगमोनुं श्रव
करतां तेने सर्व आगमो मुखपाठ थइ गया.

एक दिवस सुज्येष्ठा वीरभगवानने वांदवाने माटे समवसरणमां गइ. सत्यकी प
तेनी मानी साथे गयो. ते अवसरे कालसंदीपक नामना विद्याधरे भगवानने पूछ्युं
' हे भगवन् ! मने कोनाथी भय छे? ' भगवाने कह्युं के 'तने आ सत्यकी बाळकथी भ
छे. ' ते सांभळीने कालसंदीपके सत्यकीनी अवज्ञा करीने तेने पोताना पगमां पाडी दीध
तेथी सत्यकी तेना उपर क्रोधित थयो. पछी सत्यकीना पिता पेढाल विद्याध
तेने रोहिणी विद्या आपी. ते विद्याने साधतां सत्यकीने कालसंदीपक वि
करवा लाग्यो. ते वखते रोहिणी विद्याएज कालसंदीपकने तेम करतां अटकाव्यो; कार
के सत्यकीना जीवे प्रथम पांच भवने विषे रोहिणी विद्याने साधतां मरण प्राप्त कर्युं ह
छठ्ठे भवे रोहिणी विद्याने साधतां तेना आयुष्यमां छ मासज अधुरा रहेला होवाथी रो
णी विद्याए प्रत्यक्ष थइने कह्युं हतुं के ' हे सत्यकी ! तारा आयुष्यमां मात्र छ मास
बाकी रह्याछे, तेथी तुं जो कहेतो होय तो आ भवमां हुं सिद्ध थाउं, नहितो आव
भवमां हुं सिद्ध थइश, त्यारे सत्यकीना जीवे कह्युं हतुं के ' जो मारुं आयुष्य थोडुंक
बाकी होय तो आवता भवमां तुं सिद्ध थजे, आ प्रमाणे पूर्व भवमां कह्युं हतुं तेथी रो
णी विद्या आ भवमां थोडा काळमांज सिद्ध थइ, अने प्रत्यक्ष थइ सत्यकीने कह्युं

(कपाळ) वताव्युं. रोहिणी विद्या ललाटमार्गेथी अंगमां पेठी, अने ललाटमां त्रीजुं लोचन उत्पन्न थयुं. पछी तेणे प्रथम पोताना पिता पेढालनेज साध्वीना व्रतनो भंग करनार जाणी विद्यावळथी मार्यो. कालसंदीपक विद्याधर सत्यकीने विद्यावळथी दुर्जय जाणीने मायाथी त्रिपुरासुरनुं स्वरूप धारण करीने नासी गयो, अने लवणसमुद्रमां जइने पाताळकळशमां पेठो. लोकनी अंदर एवी सिद्धि थइ के 'आणे त्रिपुरासुरने पाताळमां पेसाडी दीधो, तेथी आ सत्यकी अग्यारमो रुद्र पेदा थयोछे.'

पछी सत्यकी विद्याधरे भगवाननी पासे समकित अंगीकार कर्युं, अने देवगुरुनो अत्यंत भक्त थयो. त्रणे संध्याए ते भगवाननी आगळ नृत्य करेछे. परंतु अत्यंत विषयसुखमां लोलुप होवाथी राजानी, प्रधाननी के कोइ व्यापारी विगेरेनी रूपवती स्त्रीने ते जुए के तरतज तेने गाढ आलिंगन आपीने ते भोगवेछे. तेने वारवाने माटे कोइ शक्तिमान थतुं नथी. एक दिवस महापुरी उज्जयिनीमां चंडप्रद्योत राजाना अंतःपुरमां प्रवेश करीने तेणे पद्मावती शिवाय वीजी तमाम राणीओने भोगवी. तेथी चंडप्रद्योत राजा क्रोधित थइ कहेवा लाग्यो के 'जे कोइ आ दुष्टकर्मी सत्यकीने मारी नांखशे तेने हुं मनवांछित आपीश.' आ प्रमाणे पटह वगडावीने तेणे लोकोने जणाव्युं. ते वखते ते नगरमां रहेनारी एक उमा नामनी वेश्याए वींडुं झडप्युं. पछी एक दिवसे उमा पोताना घरना गोखमां वेठी हती ते वखते तेणे सत्यकीने विमानमां वेसीने आकाशमार्गे जतो जोइ कह्युं के 'हे चतुरशिरोमणि! हे सुरूपजनमां मुगुट रूप! हे तेजथी सूर्यने जीतनार! तुं प्रतिदिवस मुग्धा (विषयरसनी अजाण) स्त्रीओने चाहेछे; परंतु अमारा जेवी कामकळामां कुशळ स्त्री तरफ दृष्टि पण करतो नथी. माटे आजे तो मारुं आंगणुं कृतार्थ कर, अने एक वखत तुं अमारुं कामचातुर्य जो.' इत्यादि वचनोथी रंजित थयेलो अने कटाक्षविक्षेपथी जेनुं मन आकर्षायुं छे एवो सत्यकी विमानमांथी उतरीने ते नायिकाना घरमां गयो. ते वेश्याए पण अनेक प्रकारना कामक्रीडाना विनोदथी तेनुं मन आधीन करी लीधुं. तेथी ते तेने छोडीने अन्य कोइ स्थाने जतो नथी; हमेशां त्यांज आवेछे. तेमनी वच्चे परस्पर घणीज प्रीति थइ गइ छे. आ प्रमाणे अत्यंत विश्वास पमाडीने तेणे एकवार सत्यकीने पूछ्युं के 'हे स्वामिन्! तमे स्वेच्छाए परस्त्रीओने भोगवो छो पण तमने मारवाने कोइ शक्तिमान थतुं नथी ते कोना वळथी?' त्यारे सत्यकीए कह्युं के 'हे सुंदर लोचनवाळी स्त्री! मारी पासे विद्यानुं वळ छे, तेना प्रभावथी मने कोइ मारतुं नथी.' फरीथी वेश्याए पूछ्युं के 'तमे ते विद्याने कोइ वखत दूर राखोछो के नहि?' सत्यकीए कह्युं के 'ज्यारे हुं विषयसेवन करुंछुं त्यारे विद्याने दूर राखुंछुं.' ते सांभळीने ते उमा वेश्याए जइ राजाने

कह्युं के ' सत्यकीने मारवानो एकज उपाय छे. परंतु जो तमे मारो बचाव करो तो तेने खुशीथी मारो. ' ए प्रमाणे प्रस्तावना करीने तेणे सर्व हकीकत कही बतावी. पछी ते वेश्याना उदर उपर कमळपत्रो रखावी तेणे ते कमलपत्रोने छेदी नांख्या, परंतु वेश्याना शरीर उपर जरा पण खड्ग लाग्युं नहि. एम करी ' आवी रीते तारो बचाव करशुं ' एवो विश्वास उत्पन्न करावीने तेने घेर मोकली. पछी राजाए रात्रिए पोताना सेवकोने बंनेने मारी नाखवानुं समजावी वेश्याने घरे मोकल्या. ते सेवकोने वेश्याए गुप्त रीते राख्या. तेवामां सत्यकी आव्यो अने उमा साथे विषयसेवन करवा लाग्यो. एटले गुप्त रहेला राजसेवकोए आवीने बंनेना मस्तको छेदी नाख्यां.

सत्यकी विद्याधरना नंदीश्वर नामना गणे ते हकीकत सांभळी, एटले ते क्रोधित थइने त्यां आव्यो अने आकाशमां शिला विकुर्वीने कहेवा लाग्यो के ' तमे मारा विद्यागुरुने मार्या छे, तेथी जेवी स्थितिमां तेने मार्या छे तेवीज स्थितिमां तेनी मूर्ति बनावीने जो तमे सर्व नगरजनो पूजशो तो तमने सघळाने छोडीश, नहितो आ शिलाथी सर्वेने चूर्ण करी नाखीश. ' एवुं सांभळीने भयभीत थयेला राजा आदि सर्व लोकोए तेवीज स्थितिवाळी युग्मरूप मूर्ति करावीने एक मकाननी अंदर स्थापी, अने सर्व पूजा करवा लाग्या. सत्यकी काळे करीने नरकभूमिमां गयो. पछी केटलेक काळे तेवी लज्जा उत्पादक मूर्तिने जोइने ते काढी नांखी तेनी जग्याए लिंगनी स्थापना करी. माटे विषयमां अनुराग न करवो एवो आ कथानो उपदेश छे.

सुतवस्सियाण पूया, पणाम सक्कार विणयकज्जपरो ।
बद्धंपि कम्ममसुहं, सिढिलेई दसारनेयावा ॥ १६५ ॥

अर्थ—" सुतपस्वी—भला चारित्री—महामुनिओनी पूजा ते वस्त्रादि आपवुं, प्रणाम ते मस्तकवडे वंदन करवुं, सत्कार ते तेमना गुणनुं वर्णन करवुं, अने विनय ते तेओ आवे एटले उभा थवुं—इत्यादि कार्यमां तत्पर एवो पुरुष, बांधेलुं—आत्म प्रदेशनी साथे श्लिष्ट करेलुं एवुं पण अशुभ—मध्यम जे कर्म तेने शिथिळ करे छे. कोनी जेम ? दशारनेता जे दशारना स्वामी कृष्ण तेनी जेम. " १६५. अहीं कृष्णनो संक्षेपथी संबंध जाणवो. ५०.

श्रीकृष्ण प्रबंध.

अन्यदा विहार करतां करतां श्रीनेमिनाथ भगवान द्वारिकामां समवसर्या. तेमने

गाथा १६५—पूआ । दसारनेयव्वा । दसारनेता इव ।

वांदवाने माटे श्रीकृष्ण परिवार सहित आव्या. तेने मनमां एवी इच्छा थइ के ' आजे हुं आ अढार हजार साधुओमांना दरेकने द्वादशावर्त वंदनथी वांदुं. ' ए प्रमाणे विचारी पोताना भक्त वीरा साळवीनी साथे सर्व साधुओने उपर प्रमाणे वंदन करवाथी श्रमातुर थयेला कृष्ण, भगवान पासे आवी बोल्या के ' हे भगवन् ! आज हुं अढार हजार साधुओने वांदवाथी अति श्रमित थयोछुं. में आज सुधीमां त्रणसे ने साठ युद्धो कर्यां तेमां कोइ वखत हुं आटलो श्रमित थयो नहोतो. ' ते वखते भगवाने कह्युं के ' हे महानुभाव ! जेम वंदन करवाथी तुं घणो श्रमित थयो छे तेम तें लाभ पण घणो मेळव्योछे. कारणके वंदनदानथी तें क्षायिक समकित मेळव्युंछे अने तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन कर्युंछे. वळी संग्राम करीने सातमी नरकभूमिने योग्य जे कर्म बांध्युं हतुं तेने खपावीने त्रीजी नरकभूमि योग्य रहेवा दीधुं छे. एटलो लाभ तने थयोछे. ' ते सांभळीने कृष्णे कह्युं के ' फरीथी अढार हजार मुनिने वांदीने त्रीजी नरकभूमि योग्य कर्म पण खपावी दउं. ' त्यारे भगवाने कह्युं के ' हे कृष्ण ! हवे तेवो भाव आवे नहि, कारणके हवे तमे लोभमा प्रवेश करेलो छे. ' कृष्णे फरीथी पूछ्युं के ' मने ज्यारे आटलो बधो लाभ थयोछे, त्यारे मारा अनुयायी वीरा साळवीने केटलो लाभ थयोछे ? ' भगवाने कह्युं के ' एने तो मात्र कायक्लेश थयोछे, कारण के तेणे तो मात्र तारी अनुवृत्तिथीज वंदन कर्युंछे, तेथी भाव विना कांइ फळ मळतुं नथी. ' आ प्रमाणे बीजाओए साधुओनी पूजाभक्ति विगेरे भाव पूर्वक करवी.

अभिगमण[2] वंदण[3] नमंसणेण[4], पडिपुच्छणेण[5] साहूणं[1] ।
चिरसंचियंपि[6] कम्मं[7], खणेण[8] विरलत्तण[9] मुवेइ ॥ १६६ ॥

अर्थ—" अभिगमन ते सन्मुख जवुं, वंदन ते वंदना करवी, नमंसण के० सामान्ये नमस्कार करवो, अने पडिपुच्छण ते शरीरना निराबाधपणा विगेरेनी पृच्छा करवी, साधुने एटलां वानां करवाथी चिरसंचित के० घणा काळनुं बहुभवनुं उपार्जन करेलुं कर्म पण क्षणमात्रमां—थोडा काळमां विरलपणाने पामेछे अर्थात् पापकर्मनो क्षय थायछे." १६६.

केई[1] सुसीला[2] सुहमाई[3] सज्जणा[4], गुरुजणस्सवि[6] सुसीसा[5] ।
विउलं[8] जणंति[9] सद्धं[7], जह[10] सी[12]सो चंडरुद्दस्स[11] ॥ १६७ ॥

अर्थ—"कोइक सुशील के० निर्मळ स्वभाववाळा अने सुधर्मा के० अतिशय धर्मवाळा अने सज्जन के० सर्वनी उपर मैत्रीभाववाळा एवा सुशिष्यो, गुरुजननी—पोताना गुरुनी

गाथा १६७—सुह माइ ।

पण श्रद्धाने विस्तीर्ण करेछे, अर्थात् आस्तिक्य लक्षणवाळी श्रद्धाने दृढ करेछे. कोनी-जेम ? चंडरुद्र आचार्यना शिष्यनी जेम. चंडरुद्र आचार्यनी श्रद्धा तेना शिष्ये दृढ करी तेम. " १६७. अहीं चंडरुद्र आचार्य ने तेना शिष्यनो संबंध जाणवो. ५१.

चंडरुद्राचार्य कथा.

महापुरी उज्जयिनीमां अन्यदा चंडरुद्राचार्य समवसर्या. ते अत्यंत ईर्षाळु अने क्रोधी हता, तेथी ते पोतानुं आसन शिष्योथी दूर राखता हता. एक दिवस एक नवो परणेलो वणिकपुत्र पोताना मित्रोथी परिवृत थइने त्यां आव्यो अने तेणे सर्व साधु-ओने वांद्या. पछी तेना बाळमित्रोए हांसी करी के 'हे स्वामिन् ! आने तमे शिष्य करो.' त्यारे मुनिओए कह्युं के 'हे महानुभाव ! जो तेने दीक्षा ग्रहण करवानो मनोरथ होय तो पेला दूर बेठेला अमारा गुरुनी पासे जाओ.' तेथी ते बाळमित्रो वणिकपुत्र सहित गुरु पासे आव्या. त्यां पण गुरुने वांदीने तेओ हास्यथी बोल्या के 'महाराज ! आने दीक्षा आपो.' ते सांभळीने आचार्य मौन रह्या. त्यारे बाळकोए फरीथी कह्युं के 'हे स्वामिन् ! आ नवा परणेला अमारा मित्रने आप शिष्य करो.' छतां पण गुरु तो मौन रह्या. त्यारे तेओए त्रीजीवार पण तेज प्रमाणे कह्युं, एटले चंडरुद्राचार्यने क्रोध चढ्यो तेथी बलात्कारे ते नवा परणेला बाळकने पकडी, बे पगनी वच्चे राखी तेना केशनो लोच करी नांख्यो. ते जोइने बीजा सर्वे बाळको त्यांथी नासी गया. तेओ विचार करवा लाग्या के 'अरे ! आ शुं थयुं !' ए प्रमाणे विलखा पडी तेओ जोवा पण उभा रह्या नहि. पछी नवदीक्षित शिष्ये गुरुने कह्युं के 'हे भगवन् ! हवे आपणे अहींथी अन्य स्थाने चाल्या जइए. कारणके मारां मातापिता तथा श्वसुरपक्ष विगेरे जो आ वात जाणशे तो तेओ अहीं आवी तमने मोटो उपद्रव करशे.' त्यारे गुरुए कह्युं के 'हुं रात्रिए जवाने अशक्त छुं.' त्यारे ते नवदीक्षित शिष्य गुरुने पोतानी खांध उपर बेसाडी-ने त्यांथी चाल्यो. अंधारी रात्रिए चालतां तेना पग उंची नीची भूमिपर पडवाथी चंडरुद्राचार्य क्रोधित थइ तेना मस्तक उपर दंडनो प्रहार करवा लाग्या. तेथी तेना माथा-मांथी रुधिर नीकळ्युं अने घणी वेदना थवा लागी; पण तेना मनमां लेश मात्र पण क्रोध उत्पन्न थयो नहि. ते तो तेमां पोतानोज वांक माने छे अने विचार करे छे के 'मने पापीने धिक्कार छे ! कारणके आ गुरु मारे लीधे कष्ट भोगवे छे. प्रथम तो गुरुमहाराज स्वाध्याय अने ध्यानमां स्थित थयेला हता, तेने में दुष्टे रात्रिए चलाव्या, आ अपराधथी हुं केवी रीते मुक्त थइश ?' आ प्रमाणे शुभ भावनाने भावतां शुभ ध्यानथी घातिकर्मनो क्षय करीने ते केवळज्ञान पाम्या. पछी तो सर्वत्र प्रकाश

निवेदन कर्युं त्यारे गुरुए विचारीने कह्युं के ' हे शिष्यो ! आजे कोइ अभव्य गुरु पांचसे शिष्योथी परिवृत थइ अहीं आवशे, ए प्रमाणे तमारुं स्वप्न फलित थशे. ' एटलामां तो रुद्रदेव नामे आचार्य पांचसे शिष्योथी परिवृत थयेला त्यां आव्या. पूर्वस्थित साधुओए तेमनुं आतिथ्य कर्युं. पछी बीजे दिवसे अभव्य गुरुनी परीक्षा करवाने माटे मात्रु करवा जवाना (पिशाब करवाना) स्थानके (रस्तामां) विजयसेन सूरिए पोताना शिष्यो पासे ते रुद्रदेव सूरि न जाणे एवी रीते कोयला पथराव्या. रात्रिए ते अभव्य गुरुना शिष्यो लघुशंका करवाने माटे उठ्या तो तेमने पगे कोयला दबाया, तेथी शब्द थतां तेओ ' आ कोयला छे' एवुं नहि जाणवाथी पश्चात्ताप करवा लाग्या के 'अरे ! अरे! अंधकारमां अमे अजाणतां कोइ जीवने चांपी नांख्या ' ए प्रमाणे कही पुनः पुनः मिथ्या दुष्कृत देवा लाग्या; अने पछी संथारामां जइने सुइ गया. एवामां रुद्रदेवाचार्य पोते लघुशंका करवाने उठ्या. तेना चरणथी पण कोयला दबाया. एटले तेनो शब्द सांभळी वधारे वधारे चांपवा लाग्या अने मुखेथी बोल्या के ' आ अर्हतना जीवो दबायाथी पोकार करे छे.' एवुं वचन विजयसेन सूरिए सांभळ्युं. तेथी तेणे प्रातःकाळे रुद्रदेवना शिष्योने कह्युं के ' आ तमारा गुरु अभव्य छे, माटे तमारे तेने छोडी देवा जोइए.' ते सांभळीने तेओए रुद्रदेवने गच्छनी बहार कर्यो. पछी ते पांचसे शिष्यो निरतिचार संयम पाळी प्रांते समाधिथी मृत्यु पामीने देवपणे उत्पन्न थया.

त्यांथी च्यवीने तेओ वसंतपुर नगरमां दिल्लीप राजाने घेर पांचसे पुत्रो थया. अनुक्रमे तेओ युवावस्था पाम्या. एक वखत ते पांचसे राजपुत्रो गजपुर नगरमां कनकध्वज राजानी पुत्रीना स्वयंवरमां गया हता. ते वखते अंगारमर्दकाचार्यनो (रुद्रदेवनो) जीव संसारमां परिभ्रमण करतां उंटपणे उत्पन्न थयो हतो, ते पण त्यां आव्यो हतो. भारना आरोपण वखते अति तीव्र शब्द करता ते उंटने जोइने ते राजपुत्रोने दया आवी. तेथी तेओ बोल्या के ' अरे ! जुओ, आ बिचारो उंट अत्यंत भारथी आक्रांत थयेलो होवाथी मोटा वराडा पाडे छे. आणे पूर्व भवमां शुं अशुभ कर्म कर्युं हशे ?' आ प्रमाणे वारंवार चिंतवन करतां ते पांचसे राजपुत्रोने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी तेओए पोताना पूर्व भवनुं स्वरूप जोयुं, जेथी तेओ बोल्या के ' अरे ! आ अमारो पूर्व भवनो अभव्य गुरु उंटपणे उत्पन्न थयोछे. कर्मनी गति विचित्र छे. कारणके आणे पूर्व भवमां ज्ञान मेळव्युं हतुं, पण श्रद्धा विनानुं ते निष्फळ थयुं. तेथी ते आवी अवस्थाने प्राप्त थयेलो छे, अने हजु ते अनंता जन्ममरण करशे. ' ए प्रमाणे कही ते उंटने तेना धणी पासेथी छोडाव्यो.

पछी ते पांचसे राजपुत्रो विचारवा लाग्या के ' आ संसार अनित्य छे. किंपाकना

फळ जेवा अने चिरपरिचित एवा भोगथी सर्युं. हस्तीना कर्ण जेवी चंचळ आ राज्यलक्ष्मीने धिक्कार छे!' आ प्रमाणे वैराग्यपरायण थइ तेओए चारित्र ग्रहण कर्युं. प्रांते सर्वे सद्गतिना भाजन थया.

आ प्रमाणे सुशिष्यो अन्य भवमां पण उपकारी थायछे. एवो आ स्थाने उपदेश छे.

संसारवंचणा नवि गणंति, संसारसूअरा जीवा।
सुमिणगएणावि केई, बुझंति पुप्फचूलावा ॥ १७० ॥

अर्थ—"संसारने विषे आसक्त शूकर—भुंड जेवा जीवो संसारनी वंचनाने गणता नथी (विषयासक्त जीवो विषयनेज सारभूत गणे छे); अने केटलाक (लघुकर्मी जीवो) स्वप्न मध्ये देखवा मात्रथी पण पुष्पचूलानी जेम प्रतिबोध पामे छे." १७०. जेम पुष्पचूला नामे राणी स्वप्नमां नरकादि स्वरूपने जोइने प्रतिबोध पामी, एवा पण केटलाक जीवो होय छे. ५३

पुष्पचूलानी कथा.

पुष्पभद्र नामना नगरमां पुष्पकेतु नामे राजा हतो. तेने पुष्पवती नामे पट्टराणी हती. एक दिवस तेणे बे बाळको (पुत्रपुत्री रूप युग्म) ने जन्म आप्यो. तेमां पुत्रनुं नाम पुष्पचूल पाड्युं अने पुत्रीनुं नाम पुष्पचूला पाड्युं. अनुक्रमे ते बंने यौवनावस्था पाम्या अने सर्व कळामां कुशळ थया. तेओने परस्पर अति स्नेह बंधायो, तेथी एक बीजा विना तेओ एक क्षण पण रही शकता नहोता. ते जोइने एकदा तेना पिताए विचार कर्यो के 'आ साथे जन्मेला पुत्रपुत्री परस्पर अत्यंत स्नेहवाळा छे, तेथी जो तेमांथी पुत्रीने बीजे परणावीश तो तेमना स्नेहनो भंग थशे; माटे ए बंनेनोज परस्पर लग्नसंबंध थाय तो तेमनो वियोग न थाय.' ए प्रमाणे चिंतवी नागरिक लोकोने बोलावीने राजाए पूछ्युं के 'अंतःपुरमां उत्पन्न थयेला रत्नने स्वेच्छाथी जोडवाने कोण समर्थ छे ते कहो.' ते सांभळीने तेनो आशय नहि जाणनारा प्रधान पुरुषोए कह्युं के 'हे राजन्! संसारमां जे जे रत्न उत्पन्न थाय छे तेने अन्यनी साथे जोडवाने राजा समर्थ थाय छे, तो अंतःपुरमां उत्पन्न थयेलां रत्नने जोडवाने राजा समर्थ थाय तेमां तो शुं कहेवुं!' ए प्रमाणे छळवडे तेओनी अनुज्ञा मेळवीने अंतःपुरनी स्त्रीओए अटकाव्या छतां पण राजाए ते बे भाइ बेननो लग्नसंबंध कर्यो. ए कार्य घणुंज असमंजस (अयोग्य) थयेलुं जोइ तेनी माता पुष्पवतीए वैराग्यपरायण थइने दीक्षा ग्रहण करी. पछी ते तप तपी

गाथा १७०—सूयरा। पुष्पचूला इव।

काळ करीने देवपणे उत्पन्न थइ. पुष्पकेतु राजा पण अनुक्रमे परलोकमां गयो एटले पुष्पचूल कुमार राजा थयो. तेणे पोतानी परणेली बेन पुष्पचूलाने पट्टराणी करी अने तेनी साथे विषयसुख भोगवतो सतो घणो काळ व्यतीत कर्यो.

एक समये तेमनी मातानो जीव जे देव थयो छे तेणे अवधिज्ञानथी जोयुं, एटले तेने पूर्व भवना पुत्रपुत्री उपर प्रीति उत्पन्न थवाथी ते मनमां विचार करवा लाग्यो के 'आ मारा पूर्व भवना पुत्र अने पुत्री आवा प्रकारनुं पापकर्म करी नरकमां जशे, तेथी हुं तेमने प्रतिबोध पमाडुं.' एम विचारी तेणे पोतानी पुत्री पुष्पचूलाने रात्रिए स्वप्ननी अंदर नरकनां दुःखो देखाड्यां. ते जोइने ते भयभीत थइ गइ. सवारमां तेणे राजानी आगळ स्वप्ननी हकीकत कही. राजाए पण नरकनुं स्वरूप पूछवाने माटे अन्यदर्शनी योगिओ विगेरेने बोलाव्या अने नरकनुं स्वरूप पूछयुं. त्यारे तेओए जणाव्युं के 'हे राजन्! शोक, वियोग, रोग अने भोगमां पराधीनता विगेरे नरकनां दुःखो जाणवां.' त्यारे पुष्पचूला राणीए कह्युं के 'में जे दुःखो रात्रे स्वप्नमां जोयां छे ते तो भिन्न छे.' पछी अर्णिकापुत्र आचार्यने बोलावीने राजाए पूछयुं के 'हे स्वामिन्! नरकनां दुःखो केवां होयछे?' तेना उत्तरमां आचार्ये राणीए जेवां नरकनां दुःखो स्वप्नमां जोयां हतां तेवांज कही बताव्यां. ते सांभळीने आश्चर्य पामेली राणीए पूछयुं के 'हे स्वामी! आपे पण शुं एवुं स्वप्न जोयुं छे? के जेथी में स्वप्नमां जेवां नरकनां दुःखो जोयां हतां तेवांज आपे कह्यां.' आचार्ये कह्युं के 'अमे स्वप्नमां तो जोयां नथी, पण आगमना वचनथी ते जाणीए छीए.' पछी राणीए पूछयुं के 'कया कर्मथी एवां दुःखो प्राप्त थायछे?' गुरुए कह्युं के 'पांच आश्रवना सेवनथी अने काम क्रोध विगेरे पापाचरणथी प्राणीओने नरकनां दुःखो प्राप्त थायछे.' इत्यादि कहीने गुरु पोताने स्थानके गया. फरीथी बीजे दिवसे पुष्पचूलानी मातानो जीव जे देव हतो तेणे राणीने स्वप्नमां देवताओनां सुख बताव्यां. प्रातःकाळे राणीए ते स्वप्ननी हकीकत राजाने कही. तेथी राजाए अन्य दर्शनीओने बोलावीने पूछयुं के 'स्वर्गनां सुख केवां होयछे?' तेओए कह्युं के 'हे राजन्! उत्तम प्रकारनां भोजन, श्रेष्ठ वस्त्रपरिधान, प्रियजनसंयोग, उत्तम अंगनाओ साथे विलास इत्यादि स्वर्गनां सुखो छे.' त्यारे राणीए कह्युं के 'जे स्वर्गनां सुखो में स्वप्नमां जोयां छे तेमनी साथे सरखावतां तमे कहेलां सुखो असंख्यातमे भागे पण आवी शकतां नथी.' पछी अर्णिकापुत्र आचार्यने बोलावीने स्वर्गसुखनुं स्वरूप पूछयुं. तेणे राणीए स्वप्नमां जोयेलां सुखो जेवांज स्वर्गनां सुखो कही बताव्यां. राणीए पूछयुं के 'एवां सुखो केवी रीते मेळवाय?' गुरुए कह्युं के 'यतिधर्म पाळवाथी मेळवी शकाय.' पछी धर्मनुं सर्व स्वरूप जाणवाथी पुष्पचूलाने वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी तेणे

चारित्र ग्रहण करवाने माटे पतिनी आज्ञा मागी. त्यारे राजाए कह्युं के 'तुं मने अतिप्रिय छे. माराथी तारो वियोग सहन थइ शकशे नहि, तेथी हुं तने दीक्षा ग्रहण करवानी आज्ञा केवी रीते आपी शकुं ?' राणीए घणा उपदेशवडे राजाने वाळ्यो, त्यारे राजाए कह्युं के 'जो दीक्षा ग्रहण करी अहींज रहे अने मारा घरनी भिक्षा ले तो हुं तने दीक्षा ग्रहण करवानी आज्ञा आपुं.' राणीए ए बाबत कबुल करी अने अर्णिकापुत्र आचार्य पासे दीक्षा लीधी. पछी ते त्यांज रहीने राजाने घेरथी दररोज शुद्ध भिक्षा लेछे अने शुद्ध चारित्रधर्म पाळेछे.

एक दिवस अर्णिकापुत्र आचार्ये बार वर्षनो दुष्काळ पडवानुं ज्ञानवडे जाणी सर्व यतिओने जुदी जुदी दिशाओमां मोकली दीधा, अने पोते नहि चाली शकवाथी त्यांज रह्या. पुष्पचूला साध्वी दररोज गुरुने आहार लावी आपेछे अने तेमनी पितानी माफक सेवा करेछे. ए प्रमाणे प्रतिदिन गुरुभक्तिपरायण रहेतां पुष्पचूलाने शुभ ध्यानना योगथी केवलज्ञान उत्पन्न थयुं, तोपण ते गुरुने आहार विगेरे लावीने आपेछे. एक वखत मेघ वरसतो हतो, छतां पण पुष्पचूला भिक्षा लइने आवी. तेने गुरुए कह्युं के 'हे वत्से ! तुं आ शुं करेछे ? एक तो हुं एकस्थानवासी छुं, बीजुं हुं साध्वीनो आणेलो आहार ग्रहण करुंछुं, वळी वरसाद वरसेछे छतां पण तुं आहार लावीने मने आपेछे, ते शुं उचित करेछे ?' त्यारे पुष्पचूलाए कह्युं के 'हे स्वामी ! आ मेघ अचित्त छे.' गुरुए कह्युं के 'ते तो केवली होय तेज जाणे. त्यारे पुष्पचुलाए कह्युं के 'स्वामिन् ! आपनी कृपाथी ते ज्ञान मने पण छे.' ते सांभळीने आचार्य पश्चात्ताप करवा लाग्या के 'अरे ! मने धिक्कार छे के में केवलीनी आशातना करी.' आ प्रमाणे खेद करीने तेणे मिथ्यादुष्कृत दीधो. पछी साध्वीए कह्युं के 'हे स्वामिन् ! तमे शामाटे खिन्न थाओ छो ? तमे पण गंगा नदी उतरतां केवळज्ञान पामी मोक्षे जशो.' ते सांभळीने गुरु गंगाने कांठे आवी नावनी अंदर बेठा, तेटलामां पूर्वभवना वैरी कोइ देवे आवीने जे बाजुए गुरु बेठेला छे ते भागने जळमां डुबाववा मांड्यो, त्यारे गुरु नावना मध्य भागमां बेठा, एटले आखी नाव बुडवा लागी. ते जोइ अनार्य लोकोए जाण्युं के 'अरे ! आ यतिने लीधे सघळाओनुं मरण थशे.' ए प्रमाणे चिंतवी तेओए मळी आचार्यने उपाडीने जळनी अंदर नांखी दीधा. ते समये पेला देवे आवीने तेनी नीचे त्रिशूल धारण कर्युं अने ते वडे अर्णिकापुत्र आचार्यने वींधी लीधा. ते वखते पोताना शरीरमांथी नीकळता रूधिरने जोइ आचार्य मनमां विचार करवा लाग्या के 'अरेरे ! आ मारा रुधिरथी जळना जीवोनी विराधना थाय छे.' ए प्रमाणे अनित्य भावना भावतां घातिकर्मनो क्षय थवाथी केवलज्ञान पामीने मोक्षे गया. त्यां

देवोए आवीने तेनो महिमा कर्यो. तेथी लोकोए जाण्युं के 'जे गंगामां मरेछे ते मोक्षे जायछे.' पछी ते स्थाने प्रयाग नामना तीर्थनी लोकोए स्थापना करी.

जो अविकलं तवसंजमं च, साहू करिज्ज पच्छावि ।
अन्नियसुयव्व सो नियग-मट्ठमचिरेण साहेइ ॥ १७१ ॥

अर्थ—" जे साधु अविकळ के० संपूर्ण एवुं तप (बार प्रकारनो) अने संयम (सर्व जीवरक्षा रूप सत्तर प्रकारनुं) पश्चात् एटले वृद्धावस्थामां पण करेछे—साधेछे ते (वृद्धावस्थामां धर्म करनार) अर्णिकापुत्र आचार्यनी जेम पोताना अर्थने एटले परलोकना साधनने अचिर के० थोडा काळमां पण साधेछे." १७१. अर्थात् जे यौवनावस्थामां विषयासक्त होय छतां अंतकाळमां पण धर्म करेछे ते आत्मानुं हित साधी शकेछे. अहीं उपरनी कथामां कहेतां अविशिष्ट रहेलो अर्णिकापुत्रनो प्रथमनो संबंध जाणी लेवो. ५४.

अर्णिकापुत्र संबंध.

उत्तरमथुरा नगरीमां कोइ व्यापारीना कामदेव अने देवदत्त नामना बे पुत्रो रहेता हता. ते बंनेने परस्पर अति गाढ मित्रता हती. तेओ एकदा पोतानां मातापितानी आज्ञा लइने व्यापारार्थे दक्षिणमथुराए गया. त्यां तेमने जयसिंह नामना एक वणिकपुत्र साथे मैत्री थइ. जयसिंहने आर्णिका नामे बेन हती. ते घणी रूपवती हती. एक दिवस जयसिंहे पोतानी बेन अर्णिकाने कह्युं के 'आज सरस रसोइ बनाव, कारणके मारा बे मित्र कामदेव ने देवदत्त आपणे त्यां भोजन करवाना छे. तेथी अर्णिकाए उत्तम रसोइ बनावी. पछी भोजनसमये त्रणे मित्रो एक पात्रमां भेळा जमवा बेठा. अर्णिकाए भोजन पीरस्युं. पछी ते अर्णिका तेमनी पासे उभी रहीने पोताना वस्त्रना छेडाथी वायु नाखवा लागी. ते वखते तेना हाथना कंकणनो रणत्कार, तेनां स्तन, उदर ने कटिप्रदेश तथा नेत्र ने वदननो विलास जोइने देवदत्त अत्यंत कामातुर थयो. तेमज घीना पात्रनी अंदर प्रतिबिंबित थयेलुं तेनुं रूप जोइने ते अति कामरागथी परवश बनी गयो. तेने भोजन विषरूप थयुं, तेथी तेणे कंइ पण खाधुं नहि अने जलदी उठी गयो.

बीजे दिवसे तेणे पोतानो अभिप्राय कामदेवनी मारफत जयसिंहने जणाव्यो. त्यारे जयसिंहे कह्युं के " हे मित्र ! मारी आ बेन मने अतिप्रिय छे अने तमे तो परदेशी छो, तेथी तेनो वियोग माराथी केवी रीते सहन थइ शके ? माटे जे कोइ आ अर्णिकानुं

गाथा १७१—तवसंयमं । अनियसुयव्व । नियगमट्ठं= निजकं अर्थं ।

पाणिग्रहण करीने मारा घरमांज वास करशे तेने हुं मारी वेन परणाववानो छुं; तेम छतां जो देवदत्त एक पुत्रनी उत्पत्ति थतां सुधी पण अत्र निवास करे तो हुं अर्णिकाने तेनी साथे परणावुं." देवदत्ते ए सघळुं कबुल कर्युं अने अर्णिकाने परण्यो. पछी तेनी साथे मनवांछित विषयसुख भोगवता तेणे त्यां घणो काळ व्यतीत कर्यो. तेवामां अर्णिका गर्भवती थइ.

अन्यदा उत्तरमथुराथी देवदत्तना पितानो पत्र आव्यो, तेमां लख्युं हतुं के 'हे पुत्र! तने देशांतरमां गयाने घणो काळ थयो छे; तेथी हवे तारे अहीं सत्वर आववुं, विलंब करवो नहि.' ए प्रमाणे पितानो पत्र वारंवार वांचीने मुखथी बोली न शकाय एवा पितापरना प्रेमभावने प्राप्त थयेलो देवदत्त मनमां विचार करवा लाग्यो के 'मने धिक्कार हो के हुं विषयाभिलाषने लीधे वचनथी बंधाइ गयो अने वृद्धावस्थावाळां मातापिताने तजीने अहीं रह्यो. ए प्रमाणे खेद करता पोताना पतिने जोइने अर्णिकाए पति पासेथी पत्र लइ लीधो, अने ते वांचीने तेणे अंदरनी बीना जाणी. पछी ससराने मळवाने उत्कंठित थयेली अर्णिकाए महा आग्रह पूर्वक भाइनी आज्ञा मेळवी अने पोताना भर्तार साथे सासरे जवा चाली; मार्गमां तेने पुत्रप्रसव थयो. पछी देवदत्ते कह्युं के 'आ पुत्रनुं नाम अर्णिक (अर्णिकानो पुत्र) पाडवुं. पछी मातापिता तेनुं जे नाम पाडशे ते प्रमाण करशुं.' अनुक्रमे तेओ घेर आव्या अने मातापिताना चरणमां पड्या. पिताने घणो आनंद थयो. तेणे पूछ्युं के 'हे वत्स! आटला वखत सुधी त्यां रहीने तें शुं मेळव्युं?' त्यारे देवदत्ते अर्णिकाथी जन्मेलो पोतानो पुत्र पिताना खोळामां मूक्यो, अने पोतानी वहु वतावीने कह्युं के 'आटलुं मेळवीने हुं आव्यो छुं.' ते वखते पौत्र अने पुत्रवधूने जोइने मातापिता घणा खुशी थया अने पिताए पोताना पौत्रनुं उचित नाम पाडयुं, परंतु अर्णिकापुत्र एवुं नाम विशेषपणे लोकमां प्रसिद्ध थयुं.

अनुक्रमे अर्णिकापुत्र युवान थयो, परंतु विषयमां विरक्त होवाथी वैराग्यपरायण वनीने तेणे चारित्र ग्रहण कर्युं. तेणे आगमनुं रहस्य जाणी, घणा जीवोने प्रतिबोध पमाडी आचार्यपद मेळव्युं पछी साधुसमुदायथी परिवृत्त थइ विहारकरता करता पुष्पभद्र नगरे पधार्या. त्यारपछी जे हकीकत वनी ते उपर कहेली पुष्पचूलानी कथाथी जांणी लेवी.

सुहिओ न चयइ भोए, चयइ जहा दुक्खिओ त्ति अलियमिणं ।
चिक्कणकम्मोलित्तो, न इमो न इमो परिच्चयई ॥ १७२ ॥

गाथा १७२—म इमो ।

पाणिग्रहण कर ...र्मां करता नथी. " अर्थात् तेओना मरणनुं चिंतवन छतां जो दे ... नथी, तेओनो द्रोह करता नथी. १७६.
तेनी साथे
मनवांछि
गर्भवती

...भक्खाणदाणपरधणविलोवणाईणं ।
...जहन्नो उदओ, दसगुणिओ इक्कसिकयाणं ॥ १७७ ॥

अर्थ—" एकवार करेला एवा वध (लाकडी विगेरेथी मारवुं), मारण (प्राण ...दे... करवो), अभ्याख्यान दान (अछता दोषनो आरोप करवो) अने परधनने ... करवो एटले चोरी करवी,आदि शब्दथी कोइना मर्म बोलवा, गुप्त वात प्रगट करवी ... आ सर्व पापकर्मोनो जन्घयपणे उदय (ओछामां ओछो उदय थाय तो) दश-... थाय छे. एटले के एकवार मारेलो जीव पोताना मारनारने दशवार मारनार थाय ... छे). आ सामान्य फळ जाणवुं." १७७.

तिव्वयरे उ पओसे, सयगुणिओ सयसहस्सकोडिगुणो।
कोडाकोडिगुणो वा, हुज्ज विवागो बहुतरो वा ॥ १७८ ॥

अर्थ—" तीव्रतर द्वेष छते एटले अति क्रोधवडे वधादिक करवाथी सोगणो वि... उदय आवे छे, तेथी पण अधिक तीव्रतर द्वेष छते सो हजार एटले लाखगणो ...विपाक उदय आवे छे अथवा करोडगणो उदय आवेछे; अने तेथी तीव्रतम अतिशय क्रो-...वडे वधादिक करनारने कोटाकोटि गणो विपाक उदय आवे छे, अथवा तेथी पण अ-धिक विपाक उदय आवे छे. एटले के जेवा कषायवडे कर्म बांध्युं होय तेवो विपाक उदय आवे छे. " १७८.

के इत्थ करंतालंबणं, इमं तिहुयणस्स ... ।
जइ नियमाखवियंगी, मरुदेवी भ... ॥ १७९ ॥

अर्थ—" केटलाएक पु... वधादिक ... विपे... आश्चर्यकारक एवुं आ आलं... के जे ... अंग क्षपित थयुं नथी, एटले ... मात ... भगवती मरुदेवी माता मोक्ष पाम्या ... पण ...

गाथा १७७—विलोवणाईयं।
गाथा १७७—उपओसे । हुज्जु
गाथा १७८—करंति आलंबणं ।

अर्थ–"जेम दुःखी माणस विषयभोगादिकनो त्याग करे छे तेम सुखी माणस भोगादिकनो त्याग करी शकतो नथी, एम लोको जे कहे छे. ते असत्य छे, नियत वाक्य नथी. केमके चीकणां कर्मोथी उपलिप्त थयेलो सुखी के दुःखी कोइ पण भोगने तजतो नथी. १७२." जो कर्मनी लघुता होय तोज भोगोने तजी शके छे, ते सिवाय कोइ तजी शकतो नथी, एम सिद्ध थाय छे.

जह चयइ चक्कवट्टी, पवित्थरं त्तियं मुहुत्तेण ।
न चयइ तहा अहन्नो, दुब्बुद्धी खप्परं दमओ ॥ १७३ ॥

अर्थ–"जेम चक्रवर्ती एक क्षणवारमां तेवी विस्तारवाळी राज्यलक्ष्मीने तजी दे छे, तेम अधन्य (अपुण्यशाळी) अने दुष्ट बुद्धिवाळो द्रमक (भीखारी) गाढ कर्मथी अवलिप्त होवाथी मात्र एक खपर जे भिक्षा मागवानुं पात्र तेने पण तजी शकतो नथी." १७३

देहो पिपीलियाहिं, चिलाईपुत्तस्स चालणी व्व कओ ।
तणुओ वि मणपउसो, न चालिओ तेण ताणुवरिं ॥१७४॥

अर्थ–"कीडीओए चिलातिपुत्रना देहने चालणीनी जेवो छिद्रवाळो करी नांख्यो, तोपण तेणे ते कीडीओ पर थोडो पण मनमां द्वेष कर्यो (आण्यो) नहि." १७४.

पाणच्चए वि पावं, पिवीलियाए वि जे न इच्छंति ।
ते कह जई अपावा, पावाइं करंति अन्नस्स ॥ १७५ ॥

अर्थ–" जेओ प्राणनो नाश थाय तोपण कीडीओ जेवा जीवो पर पण पाप कर्म करवा इच्छता नथी, ते (तेवा) पापरहित मुनिओ बीजा जीवो पर पापकर्म तो क्यांथी ज करे ? अर्थात् बीजाओ पर तो प्रतिकूळ आचरण सर्वथा न ज करे. " १७५. शरीरने चालणी प्राय करनार कीडीओनो विनाश पण जे न इच्छे ते अन्यनुं अहित तो करेज केम ? ए तात्पर्य समजवो.

जिणपहअपंडियाणं, पाणहराणं पि पहरमाणाणं ।
न करंति य पावाइं, पावस्स फलं वियाणंता ॥ १७६ ॥

अर्थ–" वळी जे पापनुं फळ (नरकादिक छे एम) जाणेछे एवा मुनिओ जैन-मार्गने नहीं जाणनारा (अधम) लोको के जेओ खड्गादिकवडे प्रहार करीने प्राणोनो

गाथा १७३–पवित्थरं=प्रविस्तरा विस्तरवर्ती राज्यलक्ष्मीं ।

गाथा १७४–पिवीलियाहिं । चालिणिव्व ।

गाथा १७५–पायं । पिपीलियाए

नाश करेछे, तेओना पर पण पापकर्मो करता नथी. " अर्थात् तेओना मरणनुं चिंतवन करवा रूप पापकर्म आचरता नथी, तेओनो द्रोह करता नथी. १७६.

वहमारणअब्भक्खाणदाणपरधणविलोवणाईणं ।
सव्वजहन्नो उदओ, दसगुणिओ इक्कसिकयाणं ॥ १७७ ॥

अर्थ–" एकवार करेला एवा वध (लाकडी विगेरेथी मारवुं), मारण (प्राणनो नाश करवो), अभ्याख्यान दान (अछता दोषनो आरोप करवो) अने परधननो विलोप करवो एटले चोरी करवी,आदि शब्दथी कोइना मर्म बोलवा, गुप्त वात प्रगट करवी विगेरे. आ सर्वे पापकर्मोनो जघन्यपणे उदय (ओछामां ओछो उदय थाय तो) दशगणो थाय छे. एटले के एकवार मारेलो जीव पोताना मारनारने दशवार मारनार थाय छे (हणे छे). आ सामान्य फळ जाणवुं." १७७.

तिव्वयरे उवओसे, सयगुणिओ सयसहस्सकोडिगुणो ।
कोडाकोडिगुणो वा, हुज्ज विवागो बहुतरो वा ॥ १७८ ॥

अर्थ–" तीव्रतर द्वेष छते एटले अति क्रोधवडे वधादिक करवाथी सोगणो विपाक उदय आवे छे, तेथी पण अधिक तीव्रतर द्वेष छते सो हजार एटले लाखगणो विपाक उदय आवे छे अथवा करोडगणो उदय आवेछे; अने तेथी तीव्रतम अतिशय क्रोधवडे वधादिक करनारने कोटाकोटि गणो विपाक उदय आवे छे, अथवा तेथी पण अधिक विपाक उदय आवे छे. एटले के जेवा कषायवडे कर्म बांध्युं होय तेवो विपाक उदय आवे छे. " १७८.

के इत्थ करंतालंबणं, इमं तिहुयणस्स अच्छेरं ।
जह नियमाखवियंगी, मरुदेवी भगवई सिद्धा ॥ १७९ ॥

अर्थ–" केटलाएक पुरुषो आ (वधादिक विपाकरूप) अर्थने विषे त्रण जगतने आश्चर्यकारक एवुं आ आलंबन ग्रहण करेछे के जेम तप संयमादिक नियमोवडे जेनुं अंग क्षपित थयुं नथी, एटले पूर्वे जेणे धर्म प्राप्त कर्यो नथी एवी भगवती (पूज्य) मरुदेवी माता मोक्ष पाम्या छे, तेवी रीते अमे पण वधादिकना विपाकने अनुभव्या विना

गाथा १७७–विलोवणाईयं।
गाथा १७७–उपओसे । हुज्जु ।
गाथा १७८–करंति आलंबणं । नियिमादभिरक्षपित अंग यस्या. सा।

गति–अवस्था सांभळीने ज्यांसुधी रुधिरमांसथी रहितपणाए करीने जेना अस्थि (हाडकां) श्वेत एटले उज्वळ थयेलां छे एवो धार्मिक (धर्मस्वभाव) थाय त्यांसुधी पण विषयरागादिकनो विश्वास करवो नहीं. अर्थात् शरीरमां रुधिर तथा मांस शुष्क थइ जाय अने हाडकां श्वेत थाय तो पण धर्मवान् साधुए विषयादिकनो विश्वास करवो नहीं.”१८२. अहीं सुकुमालिकानी कथा जाणवी. ५६

सुकुमालिकानी कथा.

वसंतपुर नगरमां सिंहसेन राजा राज्य करतो हतो. तेने सिंहला नामनी राणी हती. ते राणीनी कुक्षिथी उत्पन्न थयेला ससक अने भसक नामना तेने बे पुत्रो हता. ते बन्ने हजार हजार योद्धाओनो पराजय करे तेवा बळवान हता. ते बन्नेने सुकुमालिका नामे अति रूपवान एक बहेन हती. एकदा कोइ आचार्य पासे अनुपम रसवाळी अमृत सरखी धर्मदेशना सांभळीने ससक अने भसके चारित्र ग्रहण कर्युं. तेओ अनुक्रमे गीतार्थ मुनि थया, एटले तेमणे आवीने पोतानी बहेन सुकुमालिकाने प्रतिबोध कर्यो; तेथी तेणे पण चारित्र ग्रहण कर्युं. पछी ते साध्वीओनी समीपे रहीने छठ्ठ अठ्ठम विगेरे आतापना सहित तप करती सती पोताना सौंदर्यना दर्पने दळन करवा लागी; तोपण तेना अनुपम रूपथी मोह पामेला अनेक कामी पुरुषो त्यां आवीने तेनी सन्मुख बेसी रहेता हता, अने तेनी साथे विषयनी अभिलाषा करता हता. एक क्षण पण तेना संगने तेओ मूकता नहीं. ते जाणीने बीजी साध्वीओए तेने उपाश्रयमां ज राखवा मांडी. तोपण तेना रूपथी मोह पामेला कामी पुरुषो उपाश्रयना द्वारे आवीने बेसी रहेवा लाग्या, अने तेना मुखने जोवानी लालसाथी उन्मत्तनी जेम भमवा लाग्या. तेथी कंटाळीने साध्वीओए जइने आचार्यने कह्युं के “ हे स्वामी ! आ सुकुमालिकाना चारित्रनुं रक्षण अमाराथी बनवुं अशक्य छे, केमके कामसेवाना अर्थी घणा युवानो उपाश्रये आवीने उपद्रवो करे छे. तेओने अमे शी रीते निवारी शकीए ? ’ ते सांभळीने सूरिए ते सुकुमालिकाना भाइओ ससक भसकने बोलावीने कह्युं के–“ हे वत्सो ! तमे साध्वीने उपाश्रये जाओ, अने तमारी बेननी रक्षा करो. शीलपालनमां तेने सहाय करवाथी तमने मोटो लाभ छे. ” आ प्रमाणे गुरुनुं वाक्य सांभळीने ते बन्ने भाइओ त्यां जइने बहेननी रक्षा करवा लाग्या. तेमांथी एक जण निरंतर उपाश्रयने बारणे बेसी रहे छे अने बीजो गोचरी माटे जाय छे. एक वखत तो युवान कामी पुरुषोनी साथे तेमने युद्ध थयुं. ते जोइने सुकुमालिकाए विचार्युं के ‘ मारा रूपने धिक्कार छे ! के जेथी मारा भाइओ मारे माटे स्वाध्याय, ध्यान, अध्ययन विगेरे मूकीने

दुःखी थइ, तो कृत्रिम अने एकतरफी स्नेहने धिक्कार छे! पुत्र कोण अने माता पण कोण ? आ सर्व दुनिया स्वार्थनीज सगी छे. वास्तविक कोइ कोइने वहालुं नथी. " आ रीते अनित्य भावनाने भावतां घातिकर्मनो क्षय थवाथी केवळज्ञान पामी अंतर्मुहूर्तमांज मोक्षपदने पाम्या. ' आ मरुदेवी माता प्रथम सिद्ध या ' एम कहीने देवोए तेमनो देह क्षीरसागरमां नांख्यो.

आ दृष्टांत लइने केटलाएक माणसो एम कहे छे के–" तप संयम विगेरे अनुष्ठान कर्या विना जेम मरुदेवी माता सिद्धिपद पाम्या, तेम अमे पण मोक्ष पामीशुं. " एवुं आलंबन ग्रहण करे छे, पण विवेकी पुरुषोए तेवुं आलंबन ग्रहण करवा लायक नथी.

किंपि कहिंपि कयाई, एगे लद्धीहिं केहिवि निभेहिं ।
पत्तेअबुद्धलाभा, हवंति अच्छेरयब्भूया ॥ १८० ॥

अर्थ–" केटलाएक (प्रत्येकबुद्ध) पुरुषो, कोइक वखत, कांइक वस्तु जोइने, कोइक स्थानने विषे, आवरणकारी कर्मना क्षयोपशम रूप लब्धिवडे करीने, कोइक वृद्ध वृषभ (बळद) विगेरे वस्तु जोवा रूप निमित्तवडे प्रत्येकबुद्धपणे सम्यक् दर्शन चारित्रादिकनो लाभ प्राप्त करे छे ते आश्चर्यभूत छे, एटले तेवां दृष्टांतो थोडांकज होय छे, माटे तेनुं आलंबन पण ग्रहण करवा योग्य नथी. " १८०.

निहिं संपत्त महन्नो, पडिच्छंतो जह जणो निरुत्तप्पो ।
इह नासइ तह पत्तेअबुद्धलच्छिं पडिच्छंतो ॥ १८१ ॥

अर्थ–" जेम आ जगतमां (निधिने) इच्छतो पण तेने लेवा माटे (बलिविधान रूप) उद्यमने नहीं करतो एवो अधन्य एटले अपुण्यशाळी माणस ते प्राप्त थयेला (रत्नसुवर्णादिकथी भरेला) निधिने पण नाश पमाडे छे, तेम प्रत्येकबुद्धपणानी लक्ष्मीने वांछतो एवो पुरुष पण तप संयमादिक बलिविधान नहीं करवाथी मोक्ष रूप निधानने नाश पमाडे छे. " १८१.

सोऊण गई सुकुमालियाए, तह ससगभसगभयणीए ।
ताव न विसंसीयव्वं, सेयट्ठीधम्मीओ जाव ॥ १८२ ॥

अर्थ " तथा ससक अने भसक नामना बे भाइओनी बहेन सुकुमालिकानी

गाथा १८०–कइंपि । कइव । अच्छेरयभूया । केहिविनिभेहि=केश्चिदपि निमित्तैः ।

गाथा १८१ –पत्यितो–पच्छितो । निरुत्तप्पो निरुद्यमः ।

गाथा १८२–सुकुमालियाइ । सेयट्ठि धम्मिओ ।

दुःखी थइ, तो कृत्रिम अने एकतरफी स्नेहने धिक्कार छे! पुत्र कोण अने माता पण कोण ? आ सर्व दुनिया स्वार्थनीज सगी छे. वास्तविक कोइ कोइने वहालुं नथी. " आ रीते अनित्य भावनाने भावतां घातिकर्मनो क्षय थवाथी केवळज्ञान पामी अंतर्मुहूर्तमांज मोक्षपदने पाम्या. ' आ मरुदेवी माता प्रथम सिद्ध था ' एम कहीने देवोए तेमनो देह क्षीरसागरमां नांख्यो.

आ दृष्टांत लइने केटलाएक माणसो एम कहे छे के-" तप संयम विगेरे अनुष्ठान कर्या विना जेम मरुदेवी माता सिद्धिपद पाम्या, तेम अमे पण मोक्ष पामीशुं. " एवुं आलंबन ग्रहण करे छे, पण विवेकी पुरुषोए तेवुं आलंबन ग्रहण करवा लायक नथी.

किंपि कहिंपि कयाई, एगे लद्धीहिं केहिवि निभेहिं ।
पत्तेअबुद्धलाभा, हवंति अच्छेरयब्भूया ॥ १८० ॥

अर्थ-" केटलाएक (प्रत्येकबुद्ध) पुरुषो, कोइक वखत, कांइक वस्तु जोइने, कोइक स्थानने विषे, आवरणकारी कर्मना क्षयोपशम रूप लब्धिवडे करीने, कोइक वृद्ध वृषभ (बळद) विगेरे वस्तु जोवा रूप निमित्तवडे प्रत्येकबुद्धपणे सम्यक् दर्शन चारित्रादिकनो लाभ प्राप्त करे छे ते आश्चर्यभूत छे, एटले तेवां दृष्टांतो थोडांकज होय छे, माटे तेनुं आलंबन पण ग्रहण करवा योग्य नथी. " १८०.

निहिं संपत्त महन्नो, पडिच्छंतो जह जणो निरुत्तप्पो ।
इह नासइ तह पत्तेअबुद्धलच्छिं पडिच्छंतो ॥ १८१ ॥

अर्थ-" जेम आ जगतमां (निधिने) इच्छतो पण तेने लेवा माटे (बलिविधान रूप) उद्यमने नहीं करतो एवो अधन्य एटले अपुण्यशाळी माणस ते प्राप्त थयेला (रत्नसुवर्णादिकथी भरेला) निधिने पण नाश पमाडे छे, तेम प्रत्येकबुद्धपणानी लक्ष्मीने वांछतो एवो पुरुष पण तप संयमादिक बलिविधान नहीं करवाथी मोक्ष रूप निधानने नाश पमाडे छे. " १८१.

सोऊण गई सुकुमालियाए, तह ससगभसगभयणीए ।
ताव न विसंसीयव्वं, सेयट्ठीधम्मीओ जाव ॥ १८२ ॥

अर्थ " तथा ससक अने भसक नामना वे भाइओनी वहेन सुकुमालिकानी

गाथा १८०-कहंपि । कहव । अच्छेरयभूया । केहिविनिभेहि=कैश्चिदपि निमित्तैः ।

गाथा १८१ -पत्थिंतो-पच्छितो । निरुत्तप्पो निरुद्यमः ।

गाथा १८२-सुकुमालियाइ । सेयट्ठि धम्मिओ ।

गति–अवस्था सांभळीने ज्यांसुधी रुधिरमांसथी रहितपणाए करीने जेना अस्थि (हाडकां) श्वेत एटले उज्वळ थयेलां छे एवो धार्मिक (धर्मस्वभाव) थाय त्यांसुधी पण विषयरागादिकनो विश्वास करवो नहीं. अर्थात् शरीरमां रुधिर तथा मांस शुष्क थइ जाय अने हाडकां श्वेत थाय तो पण धर्मवान् साधुए विषयादिकनो विश्वास करवो नहीं."१८२. अहीं सुकुमालिकानी कथा जाणवी. ५६

सुकुमालिकानी कथा.

वसंतपुर नगरमां सिंहसेन राजा राज्य करतो हतो. तेने सिंहला नामनी राणी हती. ते राणीनी कुक्षिथी उत्पन्न थयेला ससक अने भसक नामना तेने बे पुत्रो हता. ते बन्ने हजार हजार योद्धाओनो पराजय करे तेवा बळवान हता. ते बन्नेने सुकुमालिका नामे अति रूपवान एक बहेन हती. एकदा कोइ आचार्य पासे अनुपम रसवाळी अमृत सरखी धर्मदेशना सांभळीने ससक अने भसके चारित्र ग्रहण कर्युं. तेओ अनुक्रमे गीतार्थ मुनि थया, एटले तेमणे आवीने पोतानी बहेन सुकुमालिकाने प्रतिबोध कर्यो; तेथी तेणे पण चारित्र ग्रहण कर्युं. पछी ते साध्वीओनी समीपे रहीने छट्ठ अट्ठम विगेरे आतापना सहित तप करती सती पोताना सौंदर्यना दर्पने दळन करवा लागी; तोपण तेना अनुपम रूपथी मोह पामेला अनेक कामी पुरुषो त्यां आवीने तेनी सन्मुख बेसी रहेता हता, अने तेनी साथे विषयनो अभिलाषा करता हता. एक क्षण पण तेना संगने तेओ मूकता नहीं. ते जाणीने बीजी साध्वीओए तेने उपाश्रयमां ज राखवा मांडी. तोपण तेना रूपथी मोह पामेला कामी पुरुषो उपाश्रयना द्वारे आवीने बेसी रहेवा लाग्या, अने तेना मुखने जोवानी लालसाथी उन्मत्तनी जेम भमवा लाग्या. तेथी कंटाळीने साध्वीओए जइने आचार्यने कह्युं के " हे स्वामी ! आ सुकुमालिकाना चारित्रनुं रक्षण अमाराथी बनवुं अशक्य छे, केमके कामसेवाना अर्थी घणा युवानो उपाश्रये आवीने उपद्रवो करे छे. तेओने अमे शी रीते निवारी शकीए ? ' ते सांभळीने सूरिए ते सुकुमालिकाना भाइओ ससक भसकने बोलावीने कह्युं के–" हे वत्सो ! तमे साध्वीने उपाश्रये जाओ, अने तमारी बेननी रक्षा करो. शीलपालनमां तेने सहाय करवाथी तमने मोटो लाभ छे. " आ प्रमाणे गुरुनुं वाक्य सांभळीने ते बन्ने भाइओ त्यां जइने बहेननी रक्षा करवा लाग्या. तेमांथी एक जण निरंतर उपाश्रयने बारणे बेसी रहे छे अने बीजो गोचरी माटे जाय छे. एक वखत तो युवान कामी पुरुषोनी साथे तेमने युद्ध थयुं. ते जोइने सुकुमालिकाए विचार्युं के 'मारा रूपने धिक्कार छे ! के जेथी मारा भाइओ मारे माटे स्वाध्याय, ध्यान, अध्ययन विगेरे मूकीने

क्लेश सहन करे छे; तो हवे हुं अनशन ग्रहण करीने जे शरीरने माटे आ कामी पुरुषो ताप पामे छे ते शरीरनो त्याग करुं." ए रीते विचारीने तेणे अनशन ग्रहण कर्युं. तेथी मालतीना पुष्पनी जेम ते थोडा दिवसमां करमाइ (सूकाइ) गइ, तेनुं शरीर क्षीण थयुं, अने एकवार तो श्वासनुं रुंधन थवाथी ते मूर्छा पामी. ते जोइने तेना भाइओ तेने मरेली जाणी गाम वहार जइ वननी भूमिमां परठवी आव्या. पछी ते वन्ने गाममां आव्या. अहीं थोडी वारे अरण्यना शीतळ वायुथी सुकुमालिकाने चेतना आवी. तेथी ते उभी थइने चोतरफ जोवा लागी. तेवामां त्यां कोइ सार्थवाह आव्यो. तेना सेवको जळ अने काष्ठ लेवा माटे वनमां भमता हता. तेमणे तेनुं वनदेवता समान स्वरूप जोइने तेने लइ जइ सार्थवाहने सोंपी. ते सार्थवाहे पण तेने तैलमर्दनादि करावीने सज्ज करी, अने पथ्य भोजनादिक करावीने पाछी नवा यौवनवाळी करी. पछी तेना रूपथी मोह पामेला सार्थवाहे तेने कह्युं के "हे सुंदरी! आ तारुं शरीर पुरुषना भोगव्या विना शोभतुं नथी. जो कदाच विषयसुखना स्वादमां तने विमुखपणुं होय, तो तारुं आवुं अनुपम स्वरूप विधिए शा माटे कर्युं? हे कमळसमान नेत्रवाळी! तने जोया पछी मने बीजी स्त्री रुचती नथी. जेम कल्पवल्लीनी वांछावाळो भ्रमर बीजी वल्लीनो मनोरथ करतो नथी, तेम तारा रूपथी जेनुं मन मोह पामेलुं छे एवा मने बीजी स्त्री गमती नथी. माटे मारापर कृपा कर अने कामदेवरूपी समुद्रमां डुबी गयेलो जे हुं तेनो उद्धार कर." आ प्रमाणेनां सार्थवाहनां वचनो सांभळीने सुकुमालिकाए विचार्युं के "आ संसारमां कर्मनी गति विचित्र छे. विधाताना विलासनी संभावना थइ शकती नथी. कह्युंछे के—

> अघटितघटितानि घटयति, सुघटितघटितानि जर्जरीकुरुते ।
> विधिरेव तानि घटयति, यानि पुमान्नैव चिन्तयति ॥ १ ॥

"विधिज (विधाताज) अयोग्य संयोगवाळा पदार्थोने एकत्र करे छे, अने सारी रीते योग्यताथी संयोग पामेलाने जर्जरित (जूदा) करे छे. पुरुष जेने मनमां पण कोइ वखत चिंतवतो नथी तेने ते विधिज संयोगी करी दे छे."

आ प्रमाणे जो विधातानोज विलास न होय तो मारा भाइओज मने मरेली धारीने शा माटे वनमां मूकी दे? अने आ सार्थवाहनो संबंध पण शी रीते थाय? तेथी हुं धारुं छुं के हजु मारे कांइक पण भोगकर्म भोगववुं वाकी रह्युं छे. वळी आ सार्थवाह पण मारो मोटो उपकारी छे, तेथी मारा संगम माटेनो तेनो अभिलाप हुं पूर्ण करुं."

एम विचारीने सुकुमालिका सार्थवाहना चरणमां पडीने हाथ जोडी बोली के " हे स्वामी आ मारी देहलता तमारे आधीन छे, माटे आ स्तनरूपी बे गुच्छने ग्रहण करो, अने तमारो मनोरथ पूर्ण करो. " ते सांभळीने हर्षित थयेलो सार्थवाह तेने पोताना नगरमां लइ गयो, अने त्यां तेनी साथे निःशंकपणे विषयसुख अनुभवतां तेनो घणो काळ व्यतीत थयो.

आ अवसरे विहार करता करता ससक अने भसक मुनि तेज नगरमां आव्या. आहार लेवा माटे तेमणे नगरमां प्रवेश कर्यो;फरतां फरतां कर्मयोगे तेमणे सुकुमालिकानेज घेर जइने धर्मलाभ आप्यो. तेमने जोइने सुकुमालिकाए तो पोताना भाइओने ओळख्या, पण भाइओए तेने बराबर ओळखी नहीं. तेथी तेओ तेना सामुं जोवा लाग्या. एटले सुकुमालिकाए पूछ्युं के " हे मुनिराज ! तमे मारी सन्मुख जोइने केम उभा छो ? " तेओ बोल्या के " तारा जेवी अमारे एक बेन पहेलां हती. " ते सांभळीने नेत्रोमांथी अश्रुपात करती सुकुमालिकाए पूर्वनुं सर्व वृत्तांत भाइओने कह्युं. पछी ते भाइओए सार्थवाहने प्रतिबोध पमाडीने तेने गृहवासथी छोडावी फरी दीक्षा आपी. ते शुद्ध (निरतिचार) चारित्रनुं आराधन करी अन्ते शुद्ध आलोचना पूर्वक मृत्यु पामीने स्वर्गे गइ.

आ सुकुमालिकानी कथा सांभळीने धर्मवान पुरुषे विषयोनो विश्वास करवो नहीं; अने ' हुं जरावस्थाथी जीर्ण थयो छुं, माटे हवे मने विषयो शुं करवाना छे ? ' एम कदी पण विचारवुं नहीं.

खरकरहतुरयवसहा, मत्तगयंदा वि नाम दम्मंति ।
इक्को नवरि न दम्मइ, निरंकुसो अप्पणो अप्पा ॥ १८३ ॥

अर्थ—" गधेडा, उंट, अश्व, वृषभ (बळद) अने मदोन्मत्त गजेन्द्रो पण दमी शकाय छे—वश कराय छे; परंतु एक निरंकुश एवो पोतानो आत्मा वश करातो नथी" १८३

वरं मे अप्पा दंतो, संजमेण तवेण य ।
मा हं परेहिं दम्मंतो, बंधणेहिं वहेहि अ ॥ १८४ ॥

अर्थ—" मारो (पोतानो) आत्मा संयमवडे अने तपवडे दमन करायेलो थाय तो ते श्रेष्ठ छे, परंतु कुगतिमां गयेलो हुं बीजा पुरुषोथी शृंखला रज्जु विगेरेना बंधनवडे अने लाकडी वीगेरेना प्रहारवडे दमन करायेलो—ताप पमाडाएलो (वश करायेलो) थाउं ते श्रेष्ठ नथी, अर्थात् तेम न थाय तो ठीक. " १८४.

अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो ।
अप्पा दंतो सुही होई, अस्सिं लोए परत्थ य ॥ १८५ ॥

अर्थ—" निश्चये करीने आत्मा दमन करवा योग्य छे—वश करवा योग्य छे. केमके (एक) आत्मा ज दुर्दम (दुःखे करीने दमन थाय तेवो) छे. ते आत्मानुं दमन कर्युं होय तो ते आलोकमां तथा परलोकमां सुखी थाय छे. " १८५.

निच्चं दोससहगओ, जीवो अविरहिय मसुहपरिणामो ।
नवरं दिन्ने पसरे, तो देई पमाय मयरेसु ॥ १८६ ॥

अर्थ—" नित्ये द्वेषनी साथे रहेलो एटले रागद्वेषनो सहचारी थयेलो एवो आ जीव निरंतर अशुभ परिणामवाळो रहेछे. ते आत्माने जो प्रसार आप्यो होय एटले जो तेने मोकळो (छूटो) मूक्यो होय तो ते आ संसारसागर मध्ये लोकविरुद्ध अने आगमविरुद्ध एवां कार्योमां विषय कषायादिक प्रमादने आपे छे. " १८६.

अच्चिय वंदिय पूइअ, सक्कारिय पणमिओ महग्घविओ ।
तं तह करेइ जीवो, पाडेई जह अप्पणो ठाणं ॥ १८७ ॥

अर्थ—" गंधादिकवडे अर्चन (पूजन) करेलो, अनेक लोकोए गुणस्तुतिवडे वंदना करेलो—स्तुति करेलो, वस्त्रादिकवडे पूजेलो, उभा थवुं विगेरे विनयवडे सत्कार करेलो, मस्तकवडे प्रणाम करेलो अने आचार्यादिक पद आपीने महत्व पमाडेलो एवो जीव गर्विष्ठ थइने ते प्रमादादिक अकार्योने एवी रीते करेछे के जेथी ते जीव पोताना महत्ववाळा स्थानने पाडी देछे,एटले आचार्यादिक महत्ववाळा स्थानथी ते भ्रष्ट थाय छे."१८७

सीलव्वयाइं जो बहुफलाइं, हंतूणय सुक्ख महिलसइ ।
धीइदुब्बलो तवस्सी, कोडीए कागिणिं किणई ॥ १८८ ॥

अर्थ—" संतोषवडे दुर्बल—असमर्थ (संतोष विनानो—अतृप्त) एवो जे तपस्वी जेनाथी स्वर्गमोक्षादिक घणां फळो प्राप्त थायछे एवा शील ते सदाचार अने व्रत ते पंचमहाव्रत तेने हणीने—तेनो नाश करीने विषयसेवनरूप सुखनो अभिलाष करेछे ते मूर्ख कोटी द्रव्य आपीने रुपीआना एंशीमा भागरूप काकिणीने खरीद करे छे." १८८.

जीवो जहामणसियं, हियइच्छियपत्थिएहिं सुक्खेहिं ।
तोसेऊण न तीरई, जावज्जीवेण सव्वेण ॥ १८९ ॥

गाथा १८९—जहामणसियं=यथा मनश्चिंतितं मनोऽभिलाषानुकूलैः । तोसेऊण=तोषयितुं ।

अर्थ–" आ संसारी जीव मननी अभिलाषाने अनुकूळ अथवा जे प्रमाणे मनमां चिंतव्युं होय ते प्रमाणेनां हितकारक, इच्छेलां अने प्रार्थना करेलां एवां स्त्री विगेरेनां सुखोए करीने सर्व जीवन पर्यंत अनुभव कर्या छतां अर्थात् ते सुखो भोगव्यां छतां पण संतोष पामवाने समर्थ थतो नथी; एटले जावज्जीव निरंतर अनुभवेला विषयसुखथी पण आ जीव संतोषने पामतो नथी." १८९.

सुमिणंतराणुभूयं, सुक्खं समइत्थियं जहा नत्थि।
एवमिमं पि अईयं सुक्खं, सुमिणोवमं होई॥ १९०॥

अर्थ–" जेम स्वप्न मध्यें अनुभवेलुं सुख जागृत थया पछी होतुं नथी, तेम आ (प्रत्यक्ष अनुभवेलुं विषयसुख) पण वर्तमानकाळनुं उल्लंघन थया पछी एटले भोगवी रह्या पछी स्वप्ननी उपमावाळुं एटले स्वप्न तुल्यज थाय छे. माटे ते विषयसुखमां आदर करवो नहीं." १९०.

पुरनिद्धमणे जक्खो, महुरा मंगू तहेव सुयनिहसो।
बोहेइ सुविहियजणं, विसूरइ बहुं च हियएण॥ १९१॥

अर्थ–" तेमज श्रुतनी एटले सिद्धान्तनी परीक्षाना निकष एटले कसोटीना पाषाण तुल्य अर्थात् बहुश्रुत एवा मंगू नामना आचार्य मथुरा नगरीमां नगरनी खाळ पासे (यक्षप्रासादमां) यक्षपणे उत्पन्न थया; अने पछी ते सुविहित जन एटले साधु जनने (पोताना शिष्योने) बोध पमाडवा लाग्या अने हृदयमां घणो शोक करवा लाग्या. एटले शिष्योने बोध करतां पोताना हृदयमां अत्यंत शोक करता हता. (ते वात हवे पछीनी गाथामां कहेवामां आवशे)." १९१. अहीं मंगू आचार्यनो संबंध जाणवो. ५७

मंगूसूरिनी कथा.

एकदा श्रुतरूपी जळना सागररूप युगप्रधान श्रीमंगू नामना आचार्य मथुरा नगरीमां पधार्या. ते नगरीमां घणा धनाढ्य श्रावको रहेता हता. तेओ साधुओनी अत्यंत भक्ति करनारा हता. तेथी तेओए ते आचार्यनी घणी सेवा करी. आचार्य पण त्यांज रहीने पठन, पाठन तथा व्याख्यान करवा लाग्या. तेथी तेमणे श्रावकोनां चित्त अत्यंत आवर्जित कर्यां, एटले तेओ मंगूसूरिपर अधिक भक्तिवाळा थया. आचार्यनी सर्व रीत-

---

गाथा १९०–समइत्थियं=समतीतं जागरणानंतरं।
गाथा १९१–पुरनिद्धमणे=नगरजलनिर्गममार्गे।

भात उंचा प्रकारनी जोइने तेओ एम विचारवा लाग्या के "आ सूरिने आहारादिकनुं दान करवाथी आपणे भवसागरनो पार पामीशुंज." एम जाणीने त्यांना श्रावको तेमने मिष्ट अने सरस आहार आपवा लाग्या. तेवो आहार भोगवतां आचार्यने रसलोलुपता थइ. एटले तेमणे विचार कर्यो के "जुदे जुदे स्थाने विहार करतां आवो आहार कोइ पण स्थाने हुं पाम्यो नथी. वळी अहींना श्रावको पण विशेष प्रकारे भक्ति करेछे; माटे आपणे तो अहींज स्थिरता करवी योग्य छे." एम विचारीने ते आचार्य स्थानवासीपणाए करीने (एक स्थानेज रहेवापणाए करीने) त्यांज रह्या. धीरे धीरे गृहस्थीओनी साथे परिचय वधतो गयो. तेथी मिष्ट आहारना भोजनवडे, अति कोमळ शय्यामां शयन करवावडे अने सुंदर उपाश्रयमां रहेवावडे ते आचार्य रसगृध्र थइ गया, आवश्यकादिक नित्यक्रिया पण छोडी दीधी, अने मनमां अहंकार करवा लाग्या के 'मने श्रावको केवो रसवाळो आहार आपेछे? ए प्रमाणे ते रसगौरव करवा लाग्या. अनुक्रमे त्रणे गौरवमां निमग्न थइने सर्व जगतने तृण समान मानवा लाग्या. मूळ गुणमां पण कोइ कोइ वखत अतिचारादिक लगाडवावडे शिथिल थया. ए प्रमाणे चिरकाळ सुधी अतिचारादिकथी दूषित थयेला चारित्रनुं पालन करीने छेवटे तेनी आलोचना कर्या विना मृत्यु पामी तेज नगरना जळने नीकळवानी खाळ पासेना यक्षालयमां यक्षपणे उत्पन्न थया. त्यां तेणे विभंगज्ञानवडे पूर्वभव जोइने पश्चात्ताप कर्यो के "हा, हा! में मूर्खाए जिह्वाना स्वादमां लंपट थइने आवी कुदेवनी गति प्राप्त करी." पछी पोताना शिष्यो बहिर्भूमिए (स्थंडिल) जइने पाछा आवतां ते यक्षनी नजीक आव्या त्यारे तेमने उद्देशीने ते यक्षे पोतानी जिह्वा मुखथी बहार काढीने देखाडी. ते जोइने ते सर्वे शिष्योए मन दृढ राखीने तेने पूछ्युं के–' हे यक्ष! तुं कोण छे? अने शा माटे जिह्वाने बहार काढे छे?" यक्ष बोल्यो के "हुं तमारो गुरु मंगू नामनो आचार्य जिह्वाना स्वादमां पराधीन थइने आवो अपवित्र देव थयो छुं. में गृहनो त्याग करी चारित्र लइने पण जिनेश्वरे कहेला धर्मनी आराधना न करी अने त्रण गौरववडे आ आत्माने मलीन कर्यो; चारित्रनी शिथिलतामां समग्र आयुष्य गुमाव्युं. हवे अधन्य, पुण्यरहित अने विरति विनानो एवो हुं शुं करुं? आ भवमां तो हुं विरति पाळवाने समर्थ नथी; तेथी मारा आत्मानो हुं शोक करुं छुं. आ पापी जीव वीतरागना धर्मने पाम्या छतां पण ते धर्मनुं सम्यक् प्रकारे पालन नहीं करवाथी घणो काळ संसारमां भटकशे. माटे हे साधुओ! तमे श्रीजिनधर्मने पामीने रसलंपट थशो नहिं. जो कदाच जिह्वाना स्वादमां लुब्ध थशो तो मारी जेम पश्चात्ताप करवानो वखत आवशे." आ प्रमाणे पोताना पूर्वभवना शिष्योने उपदेश आपीने ते यक्ष अदृश्य थयो. पछी ते साधुओ शुद्ध चारित्रनुं पालन

करीने सद्गतिने पाम्या. आ दृष्टांत सांभळीने सर्व कोईए जिह्वाना स्वादनो त्याग करवो. हवे ते यक्षे जे प्रमाणे शोक कर्यो ते नीचेनी गाथामां बतावे छे.

निग्गंतूण घराओ, न कओ धम्मो मए जिणक्खाओ ।
इड्ढिरससायगुरुयत्तणेण, न य चेइओ अप्पा ॥ १९२ ॥

अर्थ—" में गृहथी बहार नीकळीने पण निवासस्थान, वस्त्र विगेरेनी ऋद्धिथी ऋद्धिगारव, मिष्ट आहारादिकना रसथी रसगारव अने कोमळ शय्यादिकना सुखथी सातागारव—एम ए त्रणेने विषे आदरपणाए करीने एटले तेमनो आदर करीने श्रीजिनेश्वरे कहेलो धर्म कर्यो नहीं (पाळ्यो नहिं), अने मारा आत्माने में चेतित—सावधान कर्यो नहिं." १९२.

ओसन्नविहारेणं, हा जह झीणंमि आउए सव्वे ।
किं काहामि अहन्नो, संपइ सोयामि अप्पाणं ॥ १९३ ॥

अर्थ—" अरे ! जे प्रकारे चारित्रविषयमां शिथिल व्यवहार करवावडे मारुं सर्व आयुष्य जीर्ण—क्षीण थयुं, तो हवे अधन्य—निर्भाग्य एवो हुं शुं करुं ? हवे तो मात्र मारा आत्माना शोकज करुं." १९३.

हा जीव पाव भमिहिसि, जाईजोणीसयाइं बहुयाइं ।
भवसयसहस्सदुलहं पि, जिणमयं एरिसं लध्धुं ॥ १९४ ॥

अर्थ—" हे पापी (दुरात्मा) जीव ! सो हजार (लाख) भवोवडे पण दुर्लभ (दुष्प्राप्य) अने आवो अचिंत्य चिंतामणि सदृश श्रीजिनमत (जिनकथित धर्म) पामीने पण (तेनी आराधना नहिं करवाथी तुं) एकेंद्रियादिक जाति अने शीतोष्णादिक योनिओना घणा सेंकडाओमां भटकीश." १९४.

पावो पमायवसओ, जीवो संसारकज्जमुज्जुत्तो ।
दुक्खेहिं न निव्विन्नो, सुक्खेहिं न चेव परितुट्ठो ॥ १९५ ॥

अर्थ—" पापी अने प्रमादने वश थयेलो तथा संसारना कार्यमां उद्यमवान एवो (आ) जीव दुःखोवडे एटले अनेक प्रकारनां दुःखो भोगवतां छतां पण निर्वेद (खेद)

गाथा १९२—गुरुयत्तणेण—गुरुकत्वेन—आदरवत्त्वेन ।

गाथा १९३—ओसन्नविहारीणं=उत्सन्नविहारेण—चारित्रविषये शिथिलत्वेन व्यवहरणं तेन । झीणंमि=क्षीणे क्षयं गते ॥ गाथा १९५—संसारकज्जमुज्जुत्तं ।

पाम्यो नहीं (जेम जेम दुःख पामे छे तेम तेम पापकर्म वधारे करेछे), अने सुखोवडे एटले सुखो भोगवतां पण परितुष्ट (संतुष्ट) थयो नहीं (केमके जेम जेम सुख मळेछे तेम तेम नवां सुखनी वांछा करेछे.)" १९५.

परितप्पिएण तणुओ, साहारो जइ घणं न उज्जमइ ।
सेणियराया तं तह, परितप्पंतो गओ नरयं ॥ १९६ ॥

अर्थ—" जो (तप—संयमादिकने विषे) घणो उद्यम न करे, तो (मात्र) परितापवडे एटले पापकर्मनी निंदा, गर्हा अने पश्चात्तापादिकवडे थोडोज आधार थाय छे, अर्थात् तेथी लघुकर्मोनो क्षय थइ शके छे, पण महाकर्मोनो क्षय थतो नथी. तेथी करीनेज श्रेणिक राजा तेवा प्रकारनो (हा इति खेदे! में विरति न करी एवो)परिताप कर्या छतां पण नरके गयो. (अथवा आ श्लोकना पूर्वार्धनो एवो अर्थ करवो के' जो तप संयमादिकने विषे घणो उद्यम न करे तो मात्र परितापवडे कर्म लघु थतां नथी, एटले के गर्हादिक करवाथी शिथिल कर्मनोज नाश थाय छे, पण दृढ बांधेलां कर्मनो नाश—क्षय थतो नथी.) " १९६.

जीवेण जाणि विसज्जियाणि, जाईसएसु देहाणि ।
थोवेहिं तओ सयलं पि, तिहुयणं हुज्ज पडिहत्थं ॥ १९७ ॥

अर्थ—" जीवे (प्राण धारण करनारे) एकेन्द्रियादि सेंकडो जातिओने विषे पूर्वे ग्रहण करी करीने जेटलां शरीरो त्याग कर्यां छे तेमांथी थोडां पण शरीरोए करीने (सर्व शरीरवडे नहीं) सकल त्रिभुवन (त्रण जगत) पण संपूर्ण थाय एटले के त्रण भुवन भराइ जाय तेटलां शरीरो जीवे पूर्वे ग्रहण करीने मूक्यां छे, तो पण ते जीव संतोष पामतो नथी. " १९७.

नहदंतमंसकेसट्ठिएसु, जीवेण विप्पमुक्केसु ।
तेसु वि हविज्ज कइलासमेरुगिरिसन्निभा कूडा ॥ १९८ ॥

अर्थ—"जीवे पूर्वभवोमां ग्रहण करी करीने मूकेलां (तजेलां) जे नख, दांत, मांस, केश अने अस्थिओ, ते सर्वने विषे पण एटले ते सर्व नखादिकने एकत्र करीए तो कैलास (हिमवान), मेरु अने बीजा सामान्य पर्वतो जेवडा पुंज—ढगला थाय. माटे तेने विषे पण प्रतिबंध करवो नहीं. " १९८.

गाथा १९७—जीवेन । जाणि उ । पडिहत्थ=परिपूर्णम् । गाथा १९८—कैलासो=हिमगिरिः ।

हिमवंतमलयमंदरदीवोदहिधरणिसरिसरासीओ ।
अहिअयरो आहारो, छुहिएणाहारिओ होज्जा ॥ १९९ ॥

अर्थ—"क्षुधित थयेला (भूख्या) एवा आ जीवे हिमवान पर्वत, दक्षिण दिशामां रहेलो मलयाचळ पर्वत, मंदर (मेरु) पर्वत, जंबूद्वीप विगेरे असंख्याता द्वीपो, लवणसमुद्रादिक असंख्य समुद्रो अने रत्नप्रभादिक सात पृथ्वीओ—तेमनी जेवडा मोटा ढगलाओथी पण (तेटला मोटा ढगला करीए तो तेथी पण) अति अधिक आहार (अशन विगेरे) भक्षण करेलो छेः अर्थात् एक जीवे अनंता पुद्गल द्रव्यो भक्षण कर्या छे, तोपण तेनी क्षुधा शांत थइ नथी." १९९.

जंन्नेनं जलं पीयं, घम्मायवजगडिएण तं पि ईहं ।
सव्वेसु वि अगडतलायनईसमुद्देसु नं वि हुज्जा ॥ २०० ॥

अर्थ—"घर्म—ग्रीष्म ऋतुना आतपथी पीडा पामेला आ जीवे जे जळ पीधुं छे ते पूर्वे पीधेलुं जळ आ संसारमां एकत्र करीए तो तेटलुं जळ सर्वे कूवा, तळावो, गंगादिक नदीओ अने लवणादिक समुद्रोमां पण न होयः अर्थात् एक जीवे पूर्वे जे जळ पीधुं छे ते सर्व जळाशयोना जळथी पण अनंतगणुं छे." २००.

पीयं थणयच्छीरं, सागरसलिलाओ होज्ज बहुअयरं ।
संसारंमि अणंते, माऊणं अन्नमन्नाणं ॥ २०१ ॥

अर्थ—"आ जीवे जेनो अंत नथी एवा अनंता संसारमां भिन्न भिन्न माताओनुं पीधेलुं स्तननुं दूध समुद्रना जळथी पण बहुतर (अनंतगणुं) होयः अर्थात् समुद्रना जळथी पण अनंतगणुं दूध आ जीवे पूर्व भवोमां जूदी जूदी माताओनुं पीधुं छे."२०१.

पत्ता य कामभोगा, कालमणंतं ईहं सउवभोगा ।
अपुव्वंपि वं मन्नई, तहविय जीवो मणे सुक्खं ॥ २०२ ॥

अर्थ—"वळी आ संसारमां अनंत काळ सुधी जीवे उपभोग (वारंवार भोगवी शकाय तेवां घर, स्त्री, वस्त्र, अलंकारादिक) पदार्थो सहित कामभोगो प्राप्त करेला छे; तोपण आ जीव पोताना मनमां ते विषयादिक सुखने जाणे अपूर्व—नवीन ज होय तेम माने छेः

गाथा १९९—हरिओ=आहारितो-भक्षितो । हुज्ज-हुज्जा ।

गाथा२००—जन्नेन=यदनेन जीवेन । जगडिएण=पीडितेन । अगडाः=कूपाः । घंमाइव । होजा ।

गाथा २०१—थणय छीर । माऊणं=मातृणा । बहुभरं ।

अर्थात् जाणे पोते पूर्वे कोइ वखत ते सुख भोगव्युंज नथी–नवुंज भोगवे छे एम माने छे." २०२.

जाणइ जहा भोगिड्ढिसंपया सव्वमेवं धम्मफलं ।
तहवि दढमूढहियओ, पावे कम्मे जणो रमेई ॥ २०३ ॥

अर्थ–" आ जीव जाणे छे के ' भोग–इंद्रियोथी उत्पन्न थतां सुखो, ऋद्धि–राज्यलक्ष्मी अने संपदा–धन धान्य विगेरे–ते सर्व धर्मनुं ज फळ (कार्य) छे, अर्थात् धर्मरूप कारणथीज भोगादिक कार्य प्राप्त थाय छे.' तोपण दृढमूढ के० अत्यंत मूढ-अज्ञानथी व्याप्त छे हृदय जेनुं एवो आ जीव पापकर्ममां रमे छे–क्रीडा करे छे (पाप कर्म करवा उत्सुक थाय छेः अर्थात् जाणता छतां पण अजाण्यानी जेम पापकर्ममां प्रवर्ते छे)."२०३

जाणिज्जइ चिंतिज्जइ, जम्मजरामरणसंभवं दुक्खं ।
न य विसएसु विरज्जई अहो सुबद्धो कवडगंठी ॥ २०४ ॥

अर्थ–" जन्म, जरा अने मरणथी उत्पन्न थयला दुःखने आ जीव गुरुनो उपदेश सांभळवाथी जाणे छे तथा मनमां चिंतवे छे (विचारे छे), तोपण आ जीव विषयोने विषे विरक्त थतो नथी. अहो ! कपटग्रंथि (मोहग्रंथि) केवी सुबद्ध (कोइथी पण शिथिल करवाने अशक्य) छे ? ते मोहग्रंथिना वशवर्तिपणाथीज आ जीव विषयोमां आसक्त थाय छे." २०४.

जाणइ य जह मरिज्जइ, अमरंतं पि जरा विणासेई ।
न य उव्विग्गो लोओ, अहो रहस्सं सुनिम्मायं ॥ २०५ ॥

अर्थ–" वळी लोको जाणे छे के ' सर्व प्राणी पोतपोताना आयुष्यना क्षये मरवाना ज छे, अने जरा (वृद्धावस्था) नहीं मरेला (जीवता) प्राणीने पण नाश पमाडे छे.' तोपण लोको उद्वेग एटले संसारथी वैराग्य पामता नथी. अहो ! मोटुं आश्चर्य ! आ रहस्य केवुं गुप्तपणे निर्माण करायुं छे ?" २०५.

दुप्पयं चउप्पयं बहुपयं, च अपयं समिद्धमहणं वा ।
अणवकए वि कयंतो, हरइ हयासो अपरितंतो ॥ २०६ ॥

अर्थ–" हणी छे आशाओ जेणे एवो कृतांत (मृत्यु) मनुष्यादिक बे पगवाळाने,

---

गाथा २०४–कवडगंठी=कपटग्रंथिर्मोहग्रंथिः ।

गाथा २०५–उव्विग्गो=उद्विग्नः–संसारात् खिन्नः ।

गाथा २०६–अणवकए=अनपकृतेपि–अपराधमंतरेणापि । अपरितंतो=अपरिक्लिन्नोऽखिन्नः । दुपयं चउपयं।

गाय भेंश विगेरे चार पगवाळाने, भ्रमर विगेरे घणा पगवाळाने अने पग विनाना सर्पादिकने तथा धनाढ्यने अने अधन ते धनरहितने तेमज वा शब्दे पंडित, मूर्ख विगेरे सर्वेने अपराध विना पण अश्रांतपणे–थाक्या विना–खेदरहित थइने हणे छे–मारे छेः अर्थात् सर्व जीवोने हणवामां ते मृत्युने किंचित्पण खेद एटले श्रम लागतो नथी."२०६

न य नज्जइ सो दियहो, मरियव्वं चावसेण सव्वेण ।
आसापासपरद्धो, न करेइ य जं हियं बज्झो ॥ २०७ ॥

अर्थ–" वळी जीव ते (मरणनो) दिवस जाणतो नथी, अर्थात् कये दिवसे मरीश ते जाणतो नथी; पण सर्व जीवोए अवश्ये करीने मरवुं तो छेज (एम जाणे छे). तोपण आशा रूपी पाशथी बंधायेलो (पराधीन थयेलो) अने वध्य एटले मृत्युना मुखमां रहेलो एवो आ जीव जे हितकारक धर्मानुष्ठान छे ते करतो नथी. " २०७.

संझरागजलबुब्बूओवमे, जीविए अ जलबिंदुचंचले ।
जुव्वणे य नईवेगसंनिभे, पावजीव किमयं न बुज्झसि॥२०८॥

अर्थ–"वळी जीवित संध्याकाळना राता पीळा रंगनी तथा जळना बुद्बुद् (परपोटा)नी उपमावाळुं (क्षणिक) छे, तेमज (दर्भना अग्रभाग पर रहेला) जळना बिंदुनी जेवुं चंचळ छे; तथा युवावस्था नदीना वेग जेवी (थोडो काळ रहेवावाळी) छे; तोपण हे पापी जीव ! ते सर्व जाणतां छतां पण तुं केम प्रतिबोध पामतो नथी?"२०८

जं जं नज्जइ असुइं, लज्जिज्जइ कुच्छणिज्ज मेयंति ।
तं तं मग्गइ अंगं, नवरमणंगुत्थ पडिकूलो ॥ २०९ ॥

अर्थ–"जे जे अंग अशुचि जणाय छे, जे अंग जोवाथी लज्जा आवे छे, अने जे अंग जुगुप्सा करवा लायक छे–एवा स्त्रीओना जघन विगेरे–ते ते अंगोनी मूढ पुरुष अभिलाषा करे छे. ते मात्र प्रतिकूळ (शत्रुरूप) एवा कामदेवना कारणने लीधेज छेः अर्थात् कामदेवना वशथीज जीव निंद्य एवा स्त्रीना अंगने पण अति रमणीय माने छे. " २०९.

सव्वगहाणं पभवो, महागहो सव्वदोसपायट्टी ।
कामग्गहो दुरप्पा, जेणभिभूयं जगं सव्वं ॥ २१० ॥

गाथा २०७–नज्जइ–ज्ञायते । परद्धो=व्याप्तः परवश. । वज्झो=वध्यो–मरणमुखे तिष्ठन् । चिअ मवस्स ।

गाथा २०८–बुबुउवमे–अ ने य नदी–नयवेग ।

गाथा २०९–कुच्छणिय । मग्गइ=मार्गयति–अभिलषाति। अणंगुथ्य मणंगोथ्थ=अनगो ऽत्र अनंगः कामदेवः।

गाथा २१०–पायट्टी–प्रवर्त्तकः । जेणभिभूयं=येनाभिभूतं–पराभूतं । कामगहो ।

अर्थ–" सर्व ग्रहोनुं (उन्मादोनुं) उत्पत्तिस्थान, महाग्रह (मोटा उन्मादरूप) अने परस्त्रीगमनादिक सर्व दोषोने प्रवर्तावनार कामदेवरूपी ग्रह एटले कामथी उत्पन्न थयेलो चित्तभ्रम महादुष्ट छे के जेणे आ आखुं जगत पराभव पमाड्युं छे–पोताने वश कर्युं छे. माटे कामग्रह ज दुस्त्याज्य (महाकष्टे तजी शकाय तेवो) छे. " २१०.

जो सेवइ किं लहइ, थामं हारेइ दुब्बलो होइ ।
पावेइ वेमणस्सं, दुक्खाणि अ अत्तदोसेणं ॥ २११ ॥

अर्थ–" जे पुरुष कामने (विषयने) सेवे छे ते शुं पामे छे ? ते कहे छे—ते पुरुष पोताना ज दोषथी वीर्यने हारे छे–गुमावे छे, दुर्बळ थाय छे, अने वैमनस्य (चित्तनी उद्वेगता) तथा क्षयरोगादिक दुःखोने पामे छे. " २११.

जह कच्छुल्लो कच्छुं, कंडुयमाणो दुहं मुणइ सुक्खं ।
मोहाउरा मणुस्सा, तह कामदुहं सुहं बिंति ॥ २१२ ॥

अर्थ–" जेम खसवाळो माणस खसने नखाग्रे करीने खणतो छतो दुःखने सुखरूप माने छे, तेम मोहवडे आतुर–विह्वळ थयेला मनुष्यो, जेनुं रुधिर विकृत थइ गयुं छे–विकार पाम्युं छे तेवा अंगवाळानी जेम विषयसेवनना दुःखने सुखरूप माने छे. " २१२.

विसयविसं हालाहलं, विसयविसं उक्कडं पियंताणं ।
विसयविसाइन्नंपिव, विसयविसविसूइया होई ॥ २१३ ॥

अर्थ–"शब्दादिक विषयो रूपी विष (संयम रूप जीवितनो नाश करनार होवाथी) हालाहल तरतज मारी नांखनार विष समान छे, अने उज्वळ एवुं कामसेवनरूपी विष उत्कट के॰ कालकूट विष समान छे. ते विषनुं पान करनारा एटले सेवन करनारा प्राणीओने अति सेवन करेलो ते विषयरूपी विषथी, घणो आहार करवाथी जेम अजीर्ण थाय तेम विषयरूपी विषनी पण विसूचिका (अजीर्ण) थाय छे; जेथी ते अनंता मरणने पामे छे. " २१३.

एवं तु पंचहिं आसवेहिं, रय मायणित्तु अणुसमयं ।
चउगइदुहपेरंतं, अणुपरियट्टंति संसारे ॥ २१४ ॥

गाथा २११–थामं=बलं वीर्यं । गाथा २१२–कच्छु । बिंति=ब्रुवन्ते–मन्यन्ते । कंडुमाणा । सोक्खं ।
गाथा २१३–अइन्नंपिव=बहूवाहारादजीर्णमिव । गाथा २१४–पेरंतं=पर्यंतं ।

अर्थ–"वळी ए प्रमाणे पांचे इंद्रियोवडे अथवा प्राणातिपातादिक पांच आश्रव वडे करीने प्रतिसमये (क्षणे क्षणे) पापकर्म रूप रजने ग्रहण करीने (आ जीव) नरकादिक चारे गतिनां दुःखोना पर्यंत सुधी (छेडा सुधी) आ संसारमां भटके छे."२१४.

सव्वगईपक्खंदे, काहंति अणंतए अकयपुन्ना ।
जे य न सुणन्ति धम्मं, सोऊण य जे पमायंति ॥ २१५ ॥

अर्थ–"वळी जेओए पुण्य कर्युं नथी एवा जे मनुष्यो, दुर्गतिमां पडता प्राणीने धारण करनार श्रीजिनप्ररूपित धर्मनुं श्रवण करता नथी, अने सांभळीने पण जेओ मद्यादिक (मद्य, विषय, कषाय, निद्रा ने विकथारूप) प्रमादनुं आचरण करे छे तेओ आ अनन्त संसारमां सर्व गतिओने विषे भ्रमण करे छेः अर्थात् अनंतीवार चतुर्गतिमा परिभ्रमण करे छे." २१५.

अणुसिट्ठा य बहुविहं, मिच्छद्दिट्ठी य जे नरा अहमा ।
बद्धनिकाईयकम्मा, सुणंति धम्मं न य करंति ॥ २१६ ॥

अर्थ–"मिथ्यादृष्टि एटले सम्यक्ज्ञान रहित अने अधम तथा जेओए निकाचित एटले उद्वर्तनादिक करणोमांथी कोइ पण करणवडे क्षीण न थाय एवां ज्ञानावरणीयादिक कर्मो बांधेलां छे एवा जे मनुष्यो छे तेओ कदाच घणे प्रकारे धर्मोपदेशादिकवडे स्वजनोए प्रेर्या होय तो धर्मनुं श्रवण करे छे, परंतु सम्यक् रीते ते धर्मनुं आचरण करता नथी. माटे लघुकर्मीओनेज आ धर्म सुप्राप्य छे, सहेजे प्राप्त थइ शके छे." २१६.

पंचेव उज्झिऊणं, पंचेव य रक्खिऊण भावेणं ।
कम्मरयविप्पमुक्का, सिद्धिगइमणुत्तरं पत्ता ॥ २१७ ॥

अर्थ–" हिंसादिक पांच पदनो (पांच आश्रवोनो) त्याग करीने तथा अहिंसादिक पांच महाव्रतोनुं भाववडे एटले आत्माना शुद्ध परिणामवडे रक्षण करीने (पाळीने) ज्ञानावरणादिक कर्मरूपी रज–मलथी मुक्त थयेला एटले आठ कर्म रूपी रजोमलना नाशथी जेमने निर्मळ आत्मभाव प्राप्त थयो छे एवा अनेक प्राणीओ सर्वोत्कृष्ट सिद्धिगतिने पाम्या छे. माटे हिंसादिकनो त्याग अने अहिंसादिकनुं पालन एज सिद्धिगतिनुं कारण छे." २१७.

गाथा २१५–पक्खंदे=प्रस्पंदा परावर्तरूपाः। अणंतए=अंतरहितेऽर्थात् संसारे ।

गाथा २१६–करिंति ।

नाणे दंसणचरणे, तवसंयमसमिइगुत्तिपच्छित्ते ।
दमउस्सग्गववाए, दव्वाइअभिग्गहे चेव ॥ २१८ ॥
सद्दहणायरणाए, निच्चं उज्जुत्त एसणाइठिओ ।
तस्स भवोअहितरणं, पव्वज्जाए य जम्मं तु ॥२१९॥ युग्मम् ॥

अर्थ–"सम्यक् अवबोध रूप ज्ञानने विषे, तत्त्व श्रद्धानरूप दर्शनने विषे, आश्रवनो निरोध करवा रूप चारित्रने विषे, बार प्रकारना तपने विषे, सत्तर प्रकारना संयमने विषे, सम्यक् प्रवृत्ति रूप इर्यासमिति विगेरे पांच समितिने विषे, निवृत्ति रूप मनोगुप्ति विगेरे त्रण गुप्तिने विषे, पापक्रियानी निवृत्ति करनार दश प्रकारना प्रायश्चित्तने विषे, पांच इंद्रियोना दमनने विषे, शुद्धमार्गना आचरण रूप उत्सर्गने विषे, रोगादिक कारणे निषिद्ध वस्तुनुं ग्रहण करवारूप अपवादने विषे, द्रव्यादिक एटले द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावरूप चार प्रकारना अभिग्रहने विषे तथा श्रद्धा पूर्वक आचरणने विषे अर्थात् पूर्वोक्त पदार्थोमां श्रद्धापूर्वक आचरण करवाथी–केमके श्रद्धारहित धर्माचरण मोक्षने साधनारुं थतुं नथी." कह्युं छे के–

क्रियाशून्यस्य यो भावो, भावशून्यस्य या क्रिया ।
अनयोरन्तरं दृष्टं, भानुखद्योतयोरिव ॥

"क्रियारहित पुरुषनो भाव अने भावरहित पुरुषनी क्रिया, ए बन्नेमां सूर्य अने खद्योत (पतंग)ना जेटलुं अन्तर जोयेलुं छे, अर्थात् तेटलुं अंतर छे. क्रियाशून्य भाव सूर्य जेवो छे अने भावशून्य क्रिया खजुआ जेवी छे."

"माटे ते सर्वने विषे (संयमने विषे) श्रद्धा पूर्वक आचरण करवामां निरंतर उद्यमवाळा अने एषणा एटले बेंताळीश दोष रहित एवा आहारनी शुद्धिमां रहेला एवा साधुने प्रव्रज्या भवसागरनुं तारण थाय छे (अर्थात् ते साधु भवसागर तरे छे), अने तेनीज दीक्षा अने मनुष्यजन्म सफळ छे. एवा गुणोथी रहित मनुष्यनी दीक्षा तथा जन्म बन्ने निरर्थक छे." २१८–२१९.

जे घरसरणपसत्ता, छक्कायरिऊ सकिंचणा अजया ।
नवरं मुत्तूण घरं, घरसंकमणं कयं तेहिं ॥ २२० ॥

अर्थ–"जे यतिओ गृह (उपाश्रयादिक)ने सज्ज करवामां आसक्त छे, छकाय जीवना शत्रु छे, एटले पृथिव्यादिक छ कायना विराधक छे; द्रव्यादिकना परिग्रह सहित

गाथा २१८–दमउस्सग्गुववाइ । गाथा २१९–उज्जत्त ।

गाथा २२०–सकिंचण असंजया । अजया=असंयता–असंवृतमनोवाक्काययोगाः ।

छे, तथा मन वचन अने कायाना योगनुं संयम करता नथी तेओए केवळ पूर्वनुं घर मूकीने साधुवेषना मिषथी गृहसंक्रमण एटले नवा घरने विषे प्रवेशज कर्यो छे एम जाणवुं, वीजुं कांइ कर्युं नथी." २२०

उस्सुत्तमायरंतो, बंधइ कम्मं सुचिक्कणं जीवो ।
संसारं च पवड्ढइ, मायामोसं च कुव्वइ य ॥ २२१ ॥

अर्थ–"आ जीव उत्सूत्र (सूत्रविरुद्ध) आचरण करतो सतो अत्यंत चिकणा कर्म बांधे छे, एटले अति गाढ निकाचित एवां ज्ञानावरणादि कर्मने आत्माना प्रदेशो साथे संश्लिष्ट करे छे, तेमज संसारने वृद्धि पमाडे छे, अने मायामृषा एटले माया सहित असत्य भाषण (सत्तरमुं पापस्थान) करे छे: अर्थात् तेम करवाथी ते अनंत संसारनी वृद्धि करे छे." २२१

जइ गिह्णइ वयलोवो, अहव न गिह्णइ सरीरवुच्छेओ ।
पासत्थसंगमो वि य, वयलोवो तो वरमसंगो ॥ २२२ ॥

अर्थ–" जो पासत्थाए आणेका आहारादिकने (मुनि) ग्रहण करे तो व्रतनो (पंच महाव्रतनो) लोप थाय छे, अथवा जो ते ग्रहण न करे तो शरीरनो व्युच्छेद–नाश थाय छे (बन्ने रीते कष्ट छे); परंतु ज्यारे पासत्थानो संग मात्र करवाथी ज व्रतनो लोप थाय छे, त्यारे तो ते पासत्थानो असंग करवो (संग न करवो) तेज श्रेष्ठ छे." २२२. अर्थात् शरीरनो व्युच्छेद भले थाओ पण पासत्थानो संग न करवो ए तात्पर्य छे.

आलावो संवासो, वीसंभो संथवो पसंगो अ ।
हीणायारेहिं समं, सव्वजिणिंदेहिं पडिकुट्ठो ॥ २२३ ॥

अर्थ–" हीन आचारवाळा पासत्थादिकनी साथे आलाप–वातचीत, संवास–तेनी भेळा रहेवुं, विस्रंभ–विश्वास राखवो, संस्तव–परिचय करवो, अने प्रसंग एटले वस्त्रादिक लेवां देवांनो व्यवहार करवो–ते सर्वनो सर्व जिनेंद्रोए–ऋषभादि तीर्थंकरोए निषेध कर्यो छे: अर्थात् पासत्थादिकनी साथे मुनिओए आलापादिक कांइ पण करवुं नहीं." २२३

अन्नुन्नजंपिएहिं, हसिउद्धसिएहिं खिप्पमाणोअ ।
पासत्थमज्झयारे, बलावि जइ वाउली होई ॥ २२४ ॥

गाथा २२३–जिणंदेहिं । पडिकुट्ठो=निषिद्धः ।
गाथा २२४–अन्नोन्न । खिप्पमाणोअ–प्रेर्यमाणः । हसिउद्धसिएहिं ।

गिरिशुक अने पुष्पशुकनी कथा.

वसंतपुर नगरमां कनककेतु नामे राजा हतो. ते एकदा वनक्रीडा करवा माटे नगर बहार नीकळ्यो. अश्वपर स्वार थइने राजाए अश्व दोडाव्यो. एटले ते विपरीत शिक्षा पामेलो अश्व अति त्वराथी दोडीने एक मोटा जंगलमां राजाने लइ गयो. छेवट थाकीने अश्व एक स्थाने उभो रह्यो. एटले राजा पण थाकी गयेलो होवाथी तेना परथी उतरीने ते अरण्यमां एकलो आम तेम फरवा लाग्यो. तेवामां थोडे दूर घणा माणसोनो कोलाहल सांभळीने विश्राम लेवा माटे राजा ते तरफ चाल्यो. तेटलामां एक वृक्षनी शाखापर बांधेला पांजरामां रहेलो एक पोपट बोल्यो के " अरे भिल्लो ! दोडो, दोडो, कोई मोटो राजा आवे छे, तेने पकडी ल्यो, जेथी तमने लक्ष रुपीआ ते आपशे. " ते पोपटनुं वाक्य सांभळीने घणा भिल्लो राजा तरफ दोड्या. तेमने आवता जोइने राजा पण पवन सरखा वेगवाळा पेला अश्व पर स्वार थइने एकदम भाग्यो. एक क्षण वारमां ते एक योजन दूर जतो रह्यो. त्यां तेणे एक तापसनो आश्रम जोयो. ते आश्रमनी फरती एक सुंदर पुष्पनी वाडी हती. तेमां एक उंचा वृक्ष पर पांजरुं लटकावेलुं हतुं. तेमां एक पोपट हतो. ते नासता राजाने ते तरफ आवतो जोइने बोल्यो के " हे तापसो ! आवो, आवो, तमारा आश्रम तरफ कोइ महान् अतिथि आवे छे; तेनी तमो सेवाभक्ति करो. " आ प्रमाणे पोपटनां वाक्य सांभळवाथी हर्षित थयेला सर्वे तापसो सन्मुख जइने ते राजाने पोताना आश्रममां लाव्या, अने स्नान भोजनादिवडे तेनी सेवा करी. तेथी राजा अत्यंत संतुष्ट थयो. पछी राजाए ते पोपटने पूछ्युं के " हे शुकराज ! ताराज जेवो एक पोपट में भिल्लोनी पल्लीमां जोयो. तेणे मने बांधवानो उपाय कर्यो, अने तें मारी मोटी भक्ति करावी तेनुं शुं कारण ते तुं कहे." शुक बोल्यो के " हे राजा ! कादंबरी नामनी मोटी अटवीमां ते (पोपट) अने हुं बन्ने भाइओ रहेता हता. अमारां बन्नेनां मातापिता एकज छे. परंतु एटलो तफावत थयो के तेने पल्लीना भिल्लोए पकड्यो, अने ते पर्वतनी समीपे रह्यो, तेथी तेनुं नाम पर्वत (गिरि)शुक प्रसिद्ध थयुं; अने मने तापसोए पकडीने आ वाडीमां राख्यो, तेथी मारुं नाम पुष्पशुक पड्युं. ते त्यां रहेवाथी भिल्लोना मुखथी मारण, बंधन, कुट्टन, ग्रहण विगेरे वचनो सांभळीने तेवुं शीख्यो, अने मने तापसना संगथी शुभ वचनो सांभळतां शुभ गुण प्राप्त थया. माटे हे राजा ! तमे शुभ अने अशुभ संगतिनुं प्रत्यक्ष फळ जोयुं छे. कह्युं छे के—

महानुभावसंसर्गः, कस्य नोन्नतिकारणम् ।
गंगाप्रविष्टरथ्यांबु, त्रिदशैरपि वंद्यते ॥

"मोटा माहात्म्यवाळानो संग कोनी उन्नतिनुं कारण थतो नथी? सर्वनी उन्नतिनुं कारण थाय छे. जुओ के गंगानदीमां मळेला शेरीना जळने देवो पण वंदन करे छे.' वळी कह्युं छे के-

वरं पर्वतदुर्गेषु, भ्रान्तं वनचरैः सह।
न मूर्खजनसंपर्कः, सुरेन्द्रभवनेष्वपि॥

"पर्वतना दुर्गोमां वनचरो (भिल्ल विगेरे)नी साथे भमवुं ए कांइक ठीक छे परंतु देवेन्द्रना भवनमां (स्वर्गमां) पण मूर्खजननो संग सारो नथी."

ते सांभळीने राजा प्रसन्न थयो. तेटलामां राजानुं सर्व सैन्य के जे पाछळ आवतुं हतुं ते त्यां आवी पहोंच्युं. तेनी साथे राजा पोताना नगरमां गयो.

आ प्रमाणे संगतिनुं फळ जाणीने यतिओए भ्रष्टाचारीनो संग तजी तपस्यामां यत्न करवो. सिद्धांतमां पण कह्युं छे के-

वरमग्गिंमि पवेसो, वरं विसुद्धेण कम्मुणा मरणं।
मा गहियव्वयभंगो, मा जीयं खलियसीलस्स॥

"अग्निमां प्रवेश करवो श्रेष्ठ छे, अने विशुद्ध कर्म जे अणसण तेवडे एटले अणसण अंगीकार करीने मरण पामवुं ते श्रेष्ठ छे. परंतु ग्रहण करेला व्रतनो भंग करवो श्रेष्ठ नथी, अने जेनुं शील स्खलित-भ्रष्ट थयुं छे एवा साधुनुं जीववुं ते श्रेष्ठ नथी."

ओसन्नचरणकरणं, जइणो वंदंति कारणं पप्प।
जे सुविइयपरमत्था, ते वंदंते निवारंति॥ २२८॥

अर्थ-"यतिओ कारण पामीने एटले निर्वाहादिक कारणनी अपेक्षा राखीने जेमनुं महाव्रतादिक मूळ गुणरूप चरण अने पंच समित्यादिक उत्तर गुणरूप करण अवसन्न-शिथिल-भ्रष्ट थयुं होय तेवा शिथिलाचारीने पण वंदना करे छे. परंतु जेओए सारी रीते परमार्थने जाण्यो छे, एटले के 'आपणने सुविहित (उत्तम) साधुओने वंदाववा ते योग्य नथी.' एम पोताना दोषने जेओ जाणे छे तेवा पासत्थाओ पोताने वंदना करनार साधुओने निवारे छेः अर्थात् 'तमे अमने वंदना करशो नहीं' एम कही तेमने अटकावे छे." २२८

सुविहिय वंदावंतो, नासेइ अप्पयं तु सुपहाओ।
दुविहपहविप्पमुक्को, कहमप्प न याणई मूढो॥ २२९॥

गाथा २२८-उसन्न। सुविइय। गाथा २२९-सुविहिअ।

अर्थ—" सुविहित साधुओने वंदावनार (पासत्थादिक) एटले वांदनारने निषेध नहीं करनार पासथ्थादि सुपथथी (मोक्षमार्गथी) पोताना आत्मानो ज नाश करे छे; अने बंने प्रकारना (साधु श्रावक नामना) मार्गथी भ्रष्ट थयेलो ते मूर्ख केम पोताना आत्माने पण जाणतो नथी के हुं बन्ने मार्गथी भ्रष्ट थाउं छुं, तेथी मारी शी गति थशे? " २२९.

हवे श्रावकना गुण वर्णवे छे.

वंदइ उभओ कालं पि, चेईयाइं थईथूईपरमो ।
जिणवरपडिमाघरधूवपुप्फगंधच्चणुज्जुत्तो ॥ २३० ॥

अर्थ—" जे चैत्योने (जिनबिंबोने) बन्ने काळ पण वंदना करेछे; मूळमां 'अपि ' शब्द लख्यो छे, माटे मध्याह्न काळ पण लेवो. एटले त्रणे काळ वंदना करे छे. स्तव एटले भक्तामर विगेरे स्तवन अने थुई एटले संसारदावादिक स्तुति, तेमने विषे प्रधान एटले स्तव अने स्तुति करनारो तथा जिनवरनी प्रतिमाओ अने तेमना चैत्योने विषे अगरु प्रमुख धूप, मालती विगेरे पुष्पो अने सुगन्ध द्रव्योए करीने अर्चन (पूजा) करवामां उद्यमवान होय छे, ते श्रावक कहेवाय छे. " २३०.

सुविणिच्छियएगमइ, धम्मंमि अनन्नदेवओ अ पुणो ।
न य कुसमएसु रज्जइ, पुव्वावरवाहयत्थेसु ॥ २३१ ॥

अर्थ—" जिनधर्मने विषे सुविनिश्चित एटले निश्चळ एकाग्र मतिवाळो अने जेने जिनेश्वर सिवाय बीजो देव नथी तेवो श्रावक पूर्वापर व्याहत के० पूर्वापर विरुद्ध अर्थवाळा अर्थात् छद्मस्थे कहेला होवाथी असंबद्ध अर्थवाळा कुसमय–कुशास्त्रोने विषे रक्त-आसक्त थतो नथी." २३१.

दट्ठूण कुलिंगीणं, तसथावरभूयमद्दणं विविहं ।
धम्माओ न चालिज्जइ, देवेहिं सइंदएहिं पि ॥ २३२ ॥

अर्थ—" कुत्सित लिंगधारी बौद्धादिकना स्वयंपाकादिकमां विविध प्रकारे त्रस (द्वींद्रिय विगेरे) अने स्थावर (पृथिव्यादिक) प्राणीओनुं मर्दन (विनाश) थतुं जोइने श्रावक इन्द्र सहित देवताओथी पण जिनभाषित धर्मथकी चलायमान थतो नथी." २३२

गाथा २३०–थइथुइ। गाथा २३१–देवओ पुणो। वाहियथ्थेसु। कुसमएसु=कुशास्त्रेषु।

वंदइ पडिपुच्छइ, पज्जुवासेइ साहूणो सययमेवं ।
पढइ सुणेइ गुणेइ अ, जणस्स धम्मं परिकहेइ ॥ २३३ ॥

अर्थ–" श्रावक निरंतर मुक्तिमार्गना साधक एवा साधुओने वंदना करे छे, तेमने पोतानो संदेह पूछे छे, अने तेमनी पर्युपासना (सेवा) करे छे. वळी ते सुश्रावक धर्मशास्त्र भणे छे, ते जिनभाषित धर्मने अर्थथी श्रवण करे छे, अने भणेलानो अर्थथी विचार करे छे, तथा अज्ञान जनोने ते धर्मनुं कथन करे छे: अर्थात् पोतानी बुद्धि प्रमाणे बीजाओने बोध पमाडे छे." २३३.

दढसीलव्वयनियमो, पोसहआवस्सएसु अक्खलिओ ।
महुमज्जमंसपंचविहबहुबीयफलेसु पडिकंतो ॥ २३४ ॥

अर्थ–" शील ते सदाचार अने व्रत ते अणुव्रतो तेनो नियम जेने दृढ होय, वळी जे पौषध (धर्मनुं पोषण करनार होवाथी पौषध), अने अवश्य करवा लायक सामायिक विगेरे छ आवश्यक (प्रतिक्रमण)ने विषे अस्खलित–अतिचार रहित होय, तथा जे मध, मद्य (मदिरा), मांस अने वडला, उंबरा विगेरे पांच प्रकारना वृक्षोना बहु जीववाळा फळो तथा बहु बीजवाळा वृत्तांक (रींगणा) विगेरेथी निवृत्ति पामेलो होय, एटले अभक्ष्यादिकना त्यागवाळो होय, ते श्रावक कहेवाय छे." २३४. अष्टम्यादि पर्वणीने विषे सावद्यत्यागरूप नियम विशेष ते पौषध कहेवाय छे; अने दररोज बे टंक अवश्य करवाना होवाथी प्रतिक्रमण ते आवश्यक कहेवाय छे.

नाहम्मकम्मजीवी, पच्चक्खाणे अभिक्खमुज्जुत्तो ।
सव्वं परिमाणकडं, अवरज्झइ तं पि संकंतो ॥ २३५ ॥

अर्थ–" वळी श्रावक पन्नर प्रकारना कर्मादान पैकी कोइ पण प्रकारना अधर्म कर्मथी आजीविका करतो न होय, एटले शुद्ध–निर्दोष व्यापार करतो होय, तथा दश प्रकारना प्रत्याख्यानमां निरंतर उद्यमवान होय, वळी जेने सर्व धन धान्य विगेरे परिमाण करेलुं होय, एटले जे परिग्रहना प्रमाणवाळो होय, अने जे आरंभादिक जे कांइ अपराधवाळुं–दोषवाळुं कार्य करे ते पण शंकित थइने करे: अर्थात् निःशंकपणे करे नहीं अने कर्या पछी पण आलोयण लइने ते दोषथी शुद्ध–मुक्त थाय. (श्रावक एवो होय.)" २३५

निक्खमणनाणनिव्वाणजम्मभूमीओ वंदइ जिणाणं ।
न य वसइ साहुजणविरहियंमि देसे बहुगुणे वि ॥ २३६ ॥

गाथा २३३–साहुणो । गुणेइ जणस्स । गाथा २३४–बहुविह । गाथा २३५–मुजत्तो । अवरज्झइ= अपराध्यति । गाथा २३६–साहूजण ।

अर्थ–" वळी श्रावक जिनेश्वरोना निष्क्रमण (दीक्षा), केवळज्ञान, निर्वाण (मोक्ष) अने जन्मभूमि रूप कल्याणक स्थानोने वंदना करे छे, अर्थात् तीर्थयात्रानो करनारो होय छे; अने बीजा घणा गुण होय–घणी जातनां द्रव्यादिकनी प्राप्तिनां साधन होय, छतां पण साधुजन रहित एटले साधुजनना विहाररहित देशमां वसतो नथी.' '२३६

परतित्थियाण पणमण, उब्भावण थुणण भत्तिरागं चं ।
सक्कारं सम्माणं, दाणं विणयं चं वज्जेइ ॥ २३७ ॥

अर्थ–" वळी श्रावक बौध्ध तापस विगेरे परतीर्थिकोनुं प्रणमन (वंदना करवी), उद्भावन (बीजानी पासे तेओना गुणनी प्रशंसा करवी), स्तवन (ते बौद्धादिकनी पासे तेमना देवनी स्तुति करवी), भक्तिराग (तेमने बहुमान आपवुं), सत्कार (तेमने वस्त्रादिक आपवुं), सन्मान (तेओ आवे त्यारे उभा थइ मान आपवुं), दान (तेमने सुपात्रनी बुद्धिथी भोजनादिक आपवुं), तथा पादप्रक्षालन विगेरे करीने विनय करवो; ते सर्वनो त्याग करे छेः अर्थात् एटलां वानां करतो नथी." २३७.

हवे श्रावक सुपात्रनी बुद्धिथी भोजनादिक कोने आपे छे ते कहे छे–

पढमं जईण दाऊण, अप्पणा पणमिऊण पारेइ ।
असईअ सुविहिआणं, भुंजेइ कयदिसालोओ ॥ २३८ ॥

अर्थ–" श्रावक प्रथम यतिओने (इंद्रियोनुं दमन करवाना प्रयत्नवाळा साधुओने) प्रणाम पूर्वक आपीने पछी पोते भोजन करे छे.कदाच साधुओ न होय तो ते सुविहित साधुओनी दिशानो आलोक करतो छतो भोजन करे छे. एटले साधुओ जे दिशा तरफ विचरता होय ते दिशा तरफ जोइने 'जो साधुओ आवे तो सारुं' एम विचारतो भोजन करवा बेसे छे (भोजन करे छे)." २३८.

साहूण कप्पणिज्जं, जं नवि दिन्नं कहिंपि किंचि तहिं ।
धीरा जहुत्तकारी, सुसावगा तं न भुंजंति ॥ २३९ ॥

अर्थ–" साधुओने कल्पनीय–एषणीय (शुद्ध) एवुं जे कांइ अन्नादिक थोडुं पण कोइ पण देशकाळने विषे ते साधुओने नथी ज आप्युंः अर्थात् मुनिए नथी लीधुं एवा ते अन्नादिकने धीर (सत्त्ववान) अने यथोक्तकारी एटले जेवो श्रावकनो मार्ग

गाथा २३७–पणमन । उब्भावण=उद्भावनं–परस्याग्रे तद्गुणप्रशंसनं ।

गाथा २३८–पारेइ=पारयंति–भोजन करोतीति यावत् । असइ अ=असति च ।

गाथा १३९–कहिंचि किंपि तहिं ।

छे तेज प्रमाणे वर्तनारा सुश्रावको वापरता नथी; अर्थात् साधुओने आप्या विनानी कोइ पण चीज पोते वापरता नथी; जे वस्तु मुनिमहाराज ग्रहण करे ते वस्तुज पोते वापरे छे. " २३९.

वसहीसयणासणभत्तपाणभेसज्जवत्थपत्ताइ ।
जइ वि न पज्जत्तधणो, थोवा वि हु थोवयं देई ॥ २४० ॥

अर्थ—"यद्यपि (जोके) नथी पर्याप्त—संपूर्ण धन जेने एवो एटले संपूर्ण धनवान नहीं होवाथी संपूर्ण आपवाने असमर्थ एवो कोइ श्रावक होय, तो ते पोतानी पासेना थोडामांथी पण थोडुं एवुं वासस्थान, शयन (सुवानी पाट), आसन (पादपीठादिक), भक्त-अन्न, पान-जळ, भैषज्य-औषध, वस्त्र अने पात्र विगेरे आपे छे, पण अतिथि संविभाग कर्या विना वापरतो नथी " २४०.

संवच्छरचाउम्मासिएसु, अट्ठाहियासु अ तिहीसु ।
सव्वायरेण लग्गइ, जिणवरपूयातवगुणेसु ॥ २४१ ॥

अर्थ—" वळी सुश्रावक संवत्सरी पर्वमां, त्रणे चातुर्मासमां, चैत्र आसो विगेरेनी अट्ठाइमां अने अष्टमी विगेरे तिथिओमां (ए सर्व शुभ दिवसोमां) विशेषे करीने सर्व आदरवडे (सर्व उद्यमवडे) जिनेश्वरनी पूजा, छट्ठ अट्ठमादिक तप अने ज्ञानादिक गुणोने विषे लागे छे एटले आसक्त थाय छे. " २४१.

वळी श्रावक शुं करे छे ते कहे छे—

साहूण चेईयाण य, पडणीयं तह अवन्नवायं च ।
जिणपवयणस्स अहिअं, सव्वत्थामेण वारेई ॥ २४२ ॥

अर्थ—" साधुओना अने चैत्य एटले जिनप्रासाद तथा जिनप्रतिमाओना प्रत्यनीकने—उपद्रव करनारने तथा अवर्णवाद एटले कुत्सित वचन बोलनारने (वांकुं बोलनारने) अने जिनशासनना अहित करनारने (शत्रुने) सुश्रावक पोताना सर्व प्रकारना बळे करीने निवारण करे छे. पण ' बीजा घणा जण छे ते संभाळ करशे ' एम धारीने तेनी उपेक्षा करता नथी. " २४२.

विरया पाणिवहाओ, विरया निच्चं च अलियवयणाओ ।
विरया चोरिकाओ, विरया परदारगमणाओ ॥ २४३॥

गाथा २४१—चाउमासिएसु । तिहिसु ।
गाथा २४२—चेईयाण । पडिणीयं ।

अर्थ–" वळी सुश्रावको हंमेशां प्राणीवध थकी विरति पामेला होय छे, अलीक वचन-मिथ्या भाषण थकी विरति (निवृत्ति) पामेला होय छे, चोरीथी विरति पामेला होय छे, अने परस्त्रीगमनथी निवृत्ति पामेला होय छे. " २४३.

विरया परिग्गहाओ, अपरिमिआओ अणंततहाओ ।
बहुदोससंकुलाओ, नरयगइगमणपंथाओ ॥ २४४ ॥

अर्थ–" वळी ते सुश्रावको जेनुं परिमाण कर्युं नथी, जेनाथी अनंत तृष्णा-लोभ उत्पन्न थाय छे, जे घणा वध बंधनादिक दोषोथी संकुल-भरेलो छे, तथा जे नरक गतिमां जवाना मार्गरूप छे, एवा धनधान्यादिक नव प्रकारना परिग्रह थकी विरति पामेला होय छे. " २४४.

मुक्का दुज्जणमित्ती, गहिया गुरुवयणसाहुपडिवत्ती ।
मुक्को परपरिवाओ, गहिओ जिणदेसिओ धम्मो ॥ २४५ ॥

अर्थ–" जे श्रावकोए दुर्जन (खळ) नी मैत्री-दोस्ती मूकी छे, जेओए तीर्थकरादिक गुरुना वचननी सारी (शोभावाळी) प्रतिपत्ति (प्रतिज्ञा) ग्रहण करी छे, जेओए पर परिवाद--परना अपवादनुं (परनिंदानुं) कथन मूकी दीधुं छे, अने जेओए जिनदर्शित एटले जिनेश्वरे कहेलो धर्म ग्रहण कर्यो छे. " २४५.

तवनियमसीलकलिया, सुसावगा जे हवंति इह सुगुणा ।
तेसिं न दुलहाइं, निव्वाणविमाणसुक्खाइं ॥ २४६ ॥

अर्थ–" आ लोकमां जे सुश्रावको बार प्रकारनां तप, नियम ते अनंतकायादिकनुं प्रत्याख्यान अने शील ते सदाचार तेथी युक्त तथा सारा गुणोवाळा होय छे, तेओने निर्वाण (मुक्ति) अने विमान (स्वर्ग) मां सुखो दुर्लभ–दुष्प्राप्य नथीः अर्थात् तेओ स्वर्गनां सुखो भोगवीने अनुक्रमे मुक्ति पण पामे छे." २४६.

सीइज्ज कयावि गुरु, तं पि सुसीसा सुनिऊणमहुरेहिं ।
मग्गे ठवंति पुणरवि, जह सेलगपंथगो नायं ॥ २४७ ॥

अर्थ–" कदाचित् एटले कर्मनी विचित्रताने लीधे कोइ वखत गुरु पण सीदाय एटले मार्गथी शिथिल (भ्रष्ट) थाय; तो तेवे वखते तेवा भ्रष्टाचारी गुरुने पण सारा (उत्तम) शिष्यो अत्यंत निपुण अने मधुर (कोमल) वाक्योए करीने फरीथी पण

गाथा २४५–पडिवित्ती । मुक्का । गाथा २४६–दुल्लहाइ । सोक्खाइं ।
गाथा २४७–सिएज्ज । सीइज्ज=सीदत्=मार्गात् शिथिलो भवेत् । नायं=ज्ञातं–उदाहरणं ।

संयममार्गमां स्थापन करे छे, एटले उत्पथमां गयेलाने सन्मार्गे लावे छे. जेम सेलक आचार्य अने पंथक शिष्य ए बेनुं ज्ञात (दृष्टांत) अहीं जाणवुं." २४७.

सेलकाचार्य अने पंथक शिष्यनी कथा:

कुबेरे बनावेली श्रीद्वारिकापुरीमां श्रीकृष्ण वासुदेव राज्य करता हता. ते वखते ते पुरीमां एक थावच्चा नामनी सार्थवाहनी स्त्री रहेती हती. तेनो थावच्चाकुमार नामनो अति रूपवान पुत्र बत्रीश स्त्रीओनो पति हतो. ते पोताना घरमां दोगुंदक देवनी जेम पोतानी स्त्रीओ साथे विषयसुख भोगवतो हतो. एकदा श्रीनेमिनाथ जिनेश्वर ते नगरीनी बहारना उपवनमां समवसर्या. ते खबर जाणीने थावच्चाकुमार श्रीजिनेश्वरने वांदवा गयो. त्यां तेणे भगवानना मुखथी संसारनो नाश करनारी देशना सांभळी; तेथी संसारनी अनित्यता जाणी मातानी आज्ञा लइ श्रीजिनेश्वर पासे एक हजार पुरुषो सहित तेणे दीक्षा ग्रहण करी. अनुक्रमे तेणे चौद पूर्वनो अभ्यास कर्यो. पछी एक वखत श्रीनेमिनाथनी आज्ञा लइने पोताना हजार शिष्यो सहित विहार करता थावच्चापुत्र मुनि सेल्लक नामना पुरमां आव्या. ते पुरनो राजा सेलक मुनिने वांदवा आव्यो. मुनिना मुखथी देशना सांभळीने प्रतिबोध पामेलो सेलक राजा ते थावच्चापुत्र आचार्य पासे बार व्रतधारी श्रावक थयो. त्यांथी विहार करीने आचार्य सौगंधिका नगरीना नीलाशोक वनमां पधार्या. ते नगरीमां सुदर्शन नामनो श्रेष्ठी शुक नामना परिव्राजकनो परम भक्त रहेतो हतो. ते श्रेष्ठी थावच्चापुत्र आचार्य पासे गयो, त्यां तेणे प्रतिबोध पामीने मिथ्यात्वनो तथा शौचमूळ धर्मनो त्याग करीने श्रीजिनभाषित विनयमूळ धर्म अंगीकार कर्यो. ते वातनी शुक परिव्राजकने खबर थतां ते पोताना हजार शिष्यो सहित त्यां आव्यो. सुदर्शन श्रेष्ठी पासे आवीने तेणे पूछ्युं के "हे सुदर्शन! अमारा शौच-मूळ धर्मनो त्याग करीने तें आ विनयमूळ धर्म कोनी पासे ग्रहण कर्यो?" सुदर्शने जवाब आप्यो के "में विनयमूळ धर्म श्रीथावच्चापुत्र आचार्य पासे ग्रहण कर्यो छे अने ते आचार्य महाराज पण अहींज छे." ते सांभळीने शुक परिव्राजक आचार्यनी स्पर्धाथी सुदर्शनने साथे लइने आचार्य पासे आव्यो. त्यां वादमां आचार्ये तेने निरुत्तर कर्यो. एटले विनयमूळ धर्मने सत्य मानीने हजार शिष्यो सहित शुक परिव्राजके ते आचार्य पासे दीक्षा ग्रहण करी. अनुक्रमे द्वादशांगीनो अभ्यास कर्यो. तेने योग्य जाणीने थावच्चापुत्रे आचार्यपद आप्युं, अने पोते श्रीशत्रुंजय पर जइने हजार साधुओनी साथे एक मासनी संलेखना करी प्रांते केवळज्ञान पामीने मोक्षे गया.

एकदा श्रीशुकाचार्य हजार शिष्यो सहित सेलकपुर गया. सेलक राजा तेमने वांदवा आव्यो. तेमना मुखथी धर्मदेशना सांभळीने प्रतिबोध पामेला राजाए पोताना

मंडुककुमार पुत्रने राज्य सोंपी पंथक विगेरे पांचसो मंत्रीओ सहित चारित्र ग्रहण कर्युं. अनुक्रमे सेलक मुनि द्वादशांगीने धारण करनार थया. तेमने योग्य जाणी आचार्यपदे स्थापन करीने श्रीशुकाचार्य हजार साधुओ सहित श्रीसिद्धाचळ पधार्या. त्यां सर्व मुनिओ सहित अनशन ग्रहण करी मासने अन्ते केवळज्ञान पामीने मोक्षे गया.

त्यार पछी श्रीसेलकाचार्यना शरीरमां नीरस अने लूखा आहारने लीधे महा व्याधिओ उत्पन्न थया. ते व्याधिओ असह्य हता, तोपण सेलकाचार्य दुस्तप तपमांज उद्युक्त रहेता हता. एकदा विहारना क्रमे तेओ सेलकपुर आव्या. तेमने आव्या जाणीने मंडुक राजा वंदना करवा आव्यो. त्यां गुरुना मुखथी धर्मदेशना श्रवण करी मंडुक राजा जीवाजीवादिक नव तत्त्वोनो जाणनार थयो. पछी पोताना पिता सेलक राजर्षिनुं शरीर रुधिरमांस रहित शुष्क थइ गयेलुं जोइने मंडुक राजाए विज्ञप्ति करी के " हे स्वामी ! आपनुं शरीर रोगथी जजरित देखाय छे. तो अहींज मारी यान-शाळामां आप रहो; जेथी हुं शुद्ध औषधवडे तथा पथ्य भोजनवडे आपनुं शरीर नीरोगी करुं." ते सांभळीने आचार्ये तेनुं वचन अंगीकार करी तेनी यानशाळामां निवास कर्यो. राजाए औषधादिकथी तेमनी चिकित्सा करावी, तेथी आचार्यना शरीरमांथी रोगो नष्ट थया. परंतु राजानो रसवालो आहार लेवाथी आचार्य रसलुब्ध थइ गया. तेथी तेओए त्यांथी क्यांइ पण विहार कर्यो नहीं. एटले एक पंथक शिष्यने तेमनी सेवा करवा राखीने बीजा सर्व शिष्योए त्यांथी विहार कर्यो. पछी तो सेलकाचार्य धीमे धीमे अत्यंत रसलंपट थया; पण पंथक मुनि तेमनी सारी रीते सेवा करवा लाग्या, अशुद्ध आहार पण लावीने गुरुने आपवा लाग्या अने पोते शुद्ध आहार करवा लाग्या.

एकदा कार्तिक चोमासीने दिवसे रसवाळो आहार करीने आचार्य संध्या समयेज सुखनिद्रामां सुइ गया. ते वखते पंथक साधु चोमासी प्रतिक्रमण करतां गुरुना चरणमां मस्तक मूकीने चोमासी प्रायश्चित्तनी खामणा करवा लाग्या. तेना स्पर्शथी गुरु निद्रामांथी जागृत थया, तेथी ते क्रोधातुर थइने बोल्या के " अरे कया पापीए मारी निद्रानो भंग कर्यो ?" ते सांभळी पंथक मुनि बोल्या के-" हे पूज्य ! आजे चोमासी खामणा करतां मारुं मस्तक आपना चरणने अडक्युं, तेथी आपनी निद्रामां अंतराय थयो छे, ए मारो अपराध आप क्षमा करो, हवेथी आवो अपराध हुं नहीं करुं. " आ प्रमाणे वारंवार पोताना ज अपराधने कहेता शिष्यने जोइने गुरुनुं चित्त सावधान थयुं. तेथी ते मनमां विचारवा लाग्या के "अहो ! आ शिष्य केवो क्षमावान छे ! आ शिष्य ज धन्य छे, अने हुं ज अधन्य छुं. केमके हुं आज चोमासीने दिवसे पण रसवाळो आहार करीने सुतो छुं. " ए प्रमाणे आत्मनिंदा करतां तेमना मनमां वैराग्य उत्पन्न थयो. तेथी तेमणे पंथकने

कह्युं के“ हे वत्स ! भवसागरमां पडतां एवा मने आजे तें उद्धर्यो (खेंची काढ्यो) छे.” एम कहीने प्रमाद दूर करी शुद्ध चारित्र ग्रहण कर्युं. ते वात सांभळी सर्व शिष्यो पण तेमनी पासे आव्या. पछी चिरकाळ सुधी विहार करी घणा भव्य जीवोने प्रतिबोध पमाडीने पांचसो शिष्यो सहित सिद्धाचळपर अनशन ग्रहण करी सेलकाचार्य सिद्धिपदने पाम्या. आवी रीते सारा शिष्यो पोताना प्रमादी गुरुने पण सन्मार्गे लावे छे.

दस दस दिवसे दिवसे, धम्मं बोहेइ अहव अहिअयरो ।
इअ नंदिसेणसत्ती, तहविय से संजमविवत्ती ॥ २४८ ॥

अर्थ–“ दिवसे दिवसे (हंमेशां) दश दश पुरुषोने धर्मनो बोध करे, अथवा तेथी पण अधिकतर माणसोने बोध पमाडे, एवी नंदिषेण मुनिनी शक्ति–वचनलब्धि (देशना लब्धि) हती, तोपण ते नंदिषेणना चारित्रनी विपत्ति थइ (विनाश थयो). ए उपरथी निकाचित कर्मनो भोग अति बळवान छे एम समजवुं.” २४८. अहीं नंदिषेणनो संबंध जाणवो. ६०

श्रीनंदिषेणनी कथा.

प्रथम नंदिषेणनो पूर्वभव सारी रीते कहे छे–कोइ एक गाममां सुखप्रिय नामनो ब्राह्मण रहेतो हतो. तेणे एकदा छुटक छुटक मळीने लक्ष ब्राह्मणोने भोजन कराववानो संकल्प कर्यो. ते वखते तेणे विचार्युं के“ जो मारे घेर कामकाज करवा माटे एक नोकर होय तो बहु सारुं” एम विचारीने पोतानी पडोशमां रहेता एक भीम नामना दासने तेणे पूछ्युं. त्यारे तेणे कह्युं के“ जो ए ब्राह्मणोनुं भोजन थइ रह्या पछी वधेलुं अन्नादिक तुं मने आपे तो हुं तारा घरनुं कामकाज करुं.” ते सांभळीने ते ब्राह्मणे तेनी मागणी कबूल करी, एटले ते भीम तेना घरनुं कामकाज करवा लाग्यो; अने ब्राह्मणोनुं भोजन थइ रह्या पछी बाकी रहेलुं अन्न नगरमां रहेला साधु साध्वीओने बोलावीने वहोराववा लाग्यो. आ प्रमाणे पुण्य करवाथी तेणे भोगकर्म उपार्जन कर्युं. छेवट आयुष्य क्षये मरण पामीने ते दासनो जीव देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थयो. त्यांथी आयुष्यक्षये चवीने राजगृह नगरमां श्रेणिक राजानो नंदिषेण नामे पुत्र थयो; अने पेलो लक्ष ब्राह्मणने भोजन करावनार ब्राह्मणनो जीव घणा भवोमां भ्रमण करीने कोइ अटवीमां हाथिणीनी कुक्षिमां उत्पन्न थयो. ते हाथिणीनो स्वामी हाथीने जे बाळको थाय तेने मारी नाखतो हतो, तेथी ते हाथिणीए विचार्युं के“ मारी कुक्षिमां गर्भ उत्पन्न थयो छे, तेने

कोइ पण उपायथी गुप्त रीते प्रसवुं तो ते जीवतो रहे, अने यूथनो (हाथिणीना टोळानो) अधिपति थाय." एम विचारीने ते हाथिणी खोटीरीते एक पगे लंगडी थइने चालवा लागी. तेथी कोइ वखत एक पहोरे ते पोताना यूथ भेगी थती, कोइ वखत बे पहोरे थती, कोइ वखत एक दिवसे थती अने कोइ वखत बे दिवसे यूथ भेगी थती. ए प्रमाणे करतां प्रसवकाळ समीप आवेलो जाणीने ते तृणनो पूळो लइने कोइ तापसोना आश्रममां गइ. त्यां तेणे पुत्र (हाथी)ने जन्म आप्यो. पछी आवीने पोताना यूथ भेगी थइ गइ. पछी दररोज यूथनी पाछळ रहीने तापसोना आश्रममां जइ पोताना बाळकने स्तनपान करावी पाछी यूथ भेगी थती. एवी रीते ते बाळकनुं तेणे पोषण कर्युं. ते आश्रममां रहेला हस्तिबाळकनुं तापसोए पुत्रनी जेम पालन कर्युं, तेथी ते तेओनो अत्यंत प्रीतिपात्र थयो. पछी ते तापसोनी संगतिथी ते हाथी पण पोतानी सूंढमां पाणी भरी लावीने आश्रमनां वृक्षोने पाणी पावा लाग्यो. तेथी तापसोए तेनुं सेचनक एवुं यथार्थ नाम पाड्युं. ते सेचनक अनुक्रमे वृद्धि पामी महा बळवान थयो. एकदा सेचनक वनमां फरतो हतो, तेवामां तेणे पेलो यूथस्वामी के जे पोतानो पिता हतो तेने जोयो, अने ते यूथपतिए पण तेने जोयो. तेथी ते बन्नेने परस्पर युद्ध थयुं. तेमां महा बळवान सेचनक पोताना पिताने यमद्वारे मोकल्यो (मारी नाख्यो). अने पोते यूथपति थयो. पछी सेचनके मनमां विचार्युं के" जेम मारी माताए मने गुप्त रीते प्रसव्यो, त्यारे हुं पिताने मारी यूथपति थयो, तेवी रीते बीजी कोइ हाथिणी पण गुप्त रीते आ आश्रममां प्रसवशे तो ते मने मारीने यूथपति थशे." एम विचारीने तेणे ते तापसोना झुंपडा भांगी नांख्या. ते वखते तापसोए विचार कर्यो के" अहो! आ हाथी महा कृतघ्नी थयो. आपणे तो पुत्रनीजेम तेनुं लालनपालन कर्युं, अने तेणे तो महा विरुद्ध आचरण कर्युं;माटे आने आपणे कोइ प्रकारना कष्टमां नाखीए." एम विचारीने ते तापसोए श्रेणिक राजा पासे जइने कह्युं के "हे राजा! अमो जे वनमां रहीए छीए, ते वनमां राज्यने योग्य एक हस्तिरत्न छे,माटे ते आपने ग्रहण करवा योग्य छे." ते सांभळीने श्रेणिक राजाए परिवार सहित वनमां जइ हेड विगेरे घणा उपायोवडे तेने पकडवा मांड्यो पण ते पकडायो नहीं. एवामां नंदिषेण कुमार त्यां आव्यो.तेनो शब्द सांभळीने तेना सामुं जोतां ते हस्तीराजने अवधिज्ञान[1] उत्पन्न थयुं, एटले तेणे पोतानो पूर्वभव जोयो, तेथी ते शांत थइ गयो. नंदिषेण कुमारे ते हस्तीनी सुंढ पकडी तेना उपर चडी तेने नगरमां लावीने राजद्वारे बांध्यो, अनुक्रमे नंदिषेण पण युवावस्था पाम्यो. पिताए

---

१ जातिस्मरण संभवेछे अथवा विभंग संभवेछे.

तेने पांचसो स्त्रीओ साथे पाणिग्रहण कराव्युं, ते स्त्रीओ साथे ते विषयसुख भोगववा लाग्यो.

एकदा श्रीवर्धमान स्वामीने नगर बहार उद्यानमां समवसरेला जाणीने नंदिषेण कुमार भगवानने वांदवा गयो. प्रभुने वांदीने नंदिषेणे पूछ्युं के " हे भगवान! मने जोइने सेचनक हाथीने मारापर स्नेह केम उत्पन्न थयो ? " त्यारे भगवाने ते बन्नेना पूर्व भवनुं सर्व वृत्तांत तेने कह्युं. ते सांभळीने नंदिषेणे विचार्युं के " ज्यारे साधुओने अन्नादिक आपवाथी आटलुं बधुं पुण्य थयुं त्यारे दीक्षा लइने जो तपस्या करी होय तो तो घणुं मोटुं फळ मळे. " ए प्रमाणे विचारीने तेणे भगवानने विज्ञप्ति करी के " हे प्रभु ! दीक्षा आपीने मारो उद्धार करो. " प्रभु बोल्या के " हे वत्स ! तारे निकाचित भोगकर्म हजु बाकी रहेलुं छे, तेथी तुं दीक्षा न ले." ते वखते तेज प्रमाणे आकाशवाणी पण थइ. तोपण नंदिषेण दृढ चित्तवाळो थइने पांचसो स्त्रीओना उपभोगनो त्याग करी चारित्र ग्रहण करवा उद्युक्त थयो. एटले भगवाने पण तेवो भावीभाव जाणीने तेने दीक्षा आपी अने स्थविर साधुओने सोंप्यो. त्यां तेणे सामायिकथी आरंभीने दश पूर्वनो अभ्यास कर्यो. ते नंदिषेण मुनि जेम जेम छठ, अठम, आतापना विगेरे तपस्या पूर्वक महाकष्ट करवा लाग्या अने उपसर्गो सहन करवा लाग्या, तेम तेम तेने घणी लब्धिओ प्राप्त थइ. ते साथे दिनप्रतिदिन कामनो उदय पण वृद्धि पामवा लाग्यो. नंदिषेण मुनि मनमां जाणता हता के " देवताओए तथा भगवाने निषेध कर्या छतां पण में दीक्षा ग्रहण करी छे, माटे कंदर्प (कामदेव)ना परतंत्रपणाथी मारा व्रतनो भंग न थाओ. " एम विचारीने कामदेवथी भय पामतां तेमणे आत्मघात करवाना हेतुथी शस्त्रघात, कंठपाश (गळाफांसो) विगेरे अनेक उपायो कर्या; परंतु ते सर्वे शासनदेवीए निष्फळ कर्या. एकदा तेने अति उग्र काम व्याप्त थयो. ते वखते ते झंपापात करवा माटे पर्वत पर चडीने पडवा गया. तेवामां शासनदेवताए तेने झीली लइ कह्युं के " हे महानुभाव ! आ प्रमाणे आत्मघात करवाथी शुं निकाचित कर्मनो क्षय थशे ? नहीं थाय. माटे आ तारो विचार वृथा छे. तीर्थंकरोने पण भोगकर्म भोगव्या विना सर्व कर्मनो क्षय थतो नथी, तो तारा जेवाने माटे शुं कहेवुं ! " आ प्रमाणे शासनदेवीनुं वचन सांभळीने नंदिषेणमुनि एकला विहार करतां करतां एकदा छठने पारणे राजगृही नगरीमां गया. आहारमाटे उंचा नीचा कुळोमां भमतां अजाणतां वेश्याने घेर जइने धर्मलाभ आप्यो. ते सांभळीने वेश्या बोली के " हे साधु ! अमारे घेर तो अर्थलाभनी जरुर छे, अने तमे तो रांक अने धनरहित छो. " ते वचन सांभळतां ज मुनिने अभिमान आव्युं, तेथी तेणे तेना घरनुं एक तृण खेंचीने पोताना तपनी लब्धिथी साडाबार

करोड सोनैयानी वृष्टि करी; अने कह्युं के ' जो तारे धर्मलाभनुं प्रयोजन न होय तो आ धननो ढगलो ग्रहण कर. ' एम बोलीने ते मुनि पाछा वळी नीकळवा जाय छे, तेटलामां ते गणिका तेनी आगळ आवीने मुनिना वस्त्रनो छेडो पकडी उभी रही, अने कहेवा लागी के " हे प्राणेश ! आ धन लेवुं अमने घटतुं नथी. केमके अमे पण्यांगना कहेवाइए छीए; एटले के अमे अमारा देहवडे पुरुषोने सुख उत्पन्न करीने तेनुं चित्त प्रसन्न करी पछी तेओए पोतेज उपार्जन करीने आपेलुं धन अमे ग्रहण करीए छीए. माटे आ धन तमे लइ जाओ, अथवा तो अहीं रहीने आ धनवडे मारी साथे विषयसुख भोगवो. हे नाथ ! आ तमारी युवावस्था क्यां ! अने आ तपनुं कष्ट क्यां ! आ धन, आ युवावस्था अने आ मारो सुंदर आवास–ते सर्व सहेजे प्राप्त थयेलुं अने भोगववा योग्य छे. तेने पामीने कयो मुग्ध जन तपस्यादिकनां कष्टो सहन करी देहने शोषण करे ?" आ प्रमाणेनां अत्यंत कोमळ ते वेश्यानां वचनो सांभळीने भोगकर्मना उदयने लीधे ते नंदिषेण तेनाज घरमां रह्या. पछी हंमेशां दश दश पुरुषोने प्रतिबोध पमाडवानो अभिग्रह कइ रजोहरण विगेरे साधुना वेषने उंचो खींटीए मूकी ते वेश्या साथे विषयसुख भोगववा लाग्या. दररोज प्रातःकाळे दश पुरुषोने प्रतिबोध पमाड्या विना ते पोताना मुखमां जळ पण नांखता नहीं, अने जेओने ते प्रतिबोध पमाडता तेओ भगवंत पासे आवीने दीक्षा ग्रहण करता. ए प्रमाणे वेश्याने घेर रहेतां तेमने बार वर्ष व्यतीत थयां. बार वर्षने अंते एक दिवस नव पुरुषो प्रतिबोध पाम्या. दशमो सोनी मळ्यो ते कोइ रीते प्रतिबोध पाम्यो नहीं; पण उलटो नंदिषेणने कहेवा लाग्यो के" तमे बीजाने प्रतिबोध करो छो, पण तमेज चारित्रनो त्याग करीने अहीं वेश्याने घेर केम रह्या छो ? " एम ते प्रतिकूळ वचनो कहेवा लाग्यो पण प्रतिबोध पाम्यो नहीं. ते वखते वेश्या उत्तम रसवाळी रसवती (भोजन) तैयार करीने तेने बोलाववा आवी अने कह्युं के" हे प्राणनाथ ! रसवती ठंडी थइ जाय छे, माटे जमवा उठो. " नंदिषेणे कह्युं के" आ एक दशमा पुरुषने प्रतिबोध पमाडीने हमणां आवुं छुं. " एम कहीने तेने पाछी वाळी. थोडी वारे फरीथी नवी रसोइ बनावीने तेज प्रमाणे बोलाववा आवी. ते वखत पण जमवा न उठ्या. एवी रीते त्रीजी वार पण बोलाववा आवी, अने बोलीके " हे प्राणनाथ ! संध्यासमय थवा आव्यो छे, आप जमेला न होवाथी हुं पण भूखीज रही छुं. " त्यारे नंदिषेण बोल्या के" हे सुंदर नेत्रवाळी! दशमाने प्रतिबोध पमाड्या विना भोजन करवाथी मारा नियमनो भंग थाय छे, तेथी हुं शी रीते आवी शकुं? " ते सांभळीने ते हास्यथी बोली के" जो आजे दशमो कोइ बोध पामतो न होय तो तेने स्थाने तमे थाओ. " ए प्रमाणे वेश्यानुं वाक्य सांभळीने पोताना भोगकर्मनो क्षय थयेलो जाणी, तरतज उभा थइ तेणे राखी मूकेलो पोतानो यतिवेष धारण करी ते वेश्याने धर्मलाभ आप्यो. ते वखते वेश्या बोली के" हे

स्वामी ! में तो हास्यथी कह्युं हतुं; माटे मने एकली मूकीने तमे केम जाओ छो?" नंदिषेणे कह्युं के " तारे ने मारे एटलोज संबंध हतो. " एम कहीने श्रीमहावीरस्वामीनी समीपे आवी तेमणे फरीथी चारित्र ग्रहण कर्युं. पछी शुद्ध निरतिचार चारित्रनुं प्रतिपालन करी, छेवट अनशन ग्रहण करी मृत्यु पामीने देवलोके गया.

आ प्रमाणे ते नंदिषेण मुनि दशपूर्वधारी हता, तेमज देशनानी अपूर्व लब्धिवाळा हता; तोपण ते निकाचित कर्मना भोग थकी मूकाया नहीं, तो बीजानी शी वात करवी ? माटे कर्मनो विश्वास करवो नहीं.

कलुसीकओ अ किट्टीकओ अ, खउरीकओ मलिणिओ अ ।
कम्मेहिं एस जीवो, नाऊण वि मुज्झई जेण ॥ २४९ ॥

अर्थ–" जे कारण माटे आ जीव ज्ञानावरणादिक आठ कर्मोए (कर्मरूपी धूळवडे) करीने जेम धूळथी व्याप्त थयेलुं जळ पंकिल (कादववाळुं-डोळुं) थाय छे तेम कलुषित करायेलो छे, लोढाने जेम काट वळे तेम किट्टीकृत–काटवाळो करायो छे, जेम जेनो रस (स्वाद) नाश पाम्यो छे एवा मोदक जुदा स्वभावने पामे (गंधाइ जाय) तेम आ जीव पण जूदा (ज्ञानादिक रहित) स्वभावने पाम्यो छे; वळी आ जीव कर्मोवडे मलिन करायो छे, एटले जेम वस्त्र मेलवाळुं (मलिन) थाय छे तेम आ जीव पण मेलो करायो छे. ए प्रमाणे होवाथी आ जीव जाणतां छतां पण मोह पामेछे–मूढ बने छे. (ते सर्व निकाचित कर्मनोज दोष छे.)" २४९

कम्मेहिं वज्जसारोवमेहिं, जउनंदणो वि पडिबुद्धो ।
सुबहुं पि विसूरंतो, न तरइ अप्पक्खमं काउं ॥ २५० ॥

अर्थ–" यदुनंदन (श्रीकृष्ण) प्रतिबुद्ध एटले क्षायिक सम्यक्त्वे करीने जागृत छतां पण तथा घणो पश्चात्ताप करतां छतां पण वज्रसारनी उपमावाळा (वज्रसार जेवा अति कठण–निकाचित) कर्मोए करीने (कर्मोने लीधे) आत्मक्षम एटले आत्माने हितना कारण एवा क्रियानुष्ठानादिक करवाने शक्तिमान थया नहीं. " २५०.

गाथा २४९–खउरीकओय ।
गाथा २५०–विसूरंतो=पश्चात्तापं कुर्वन्–तरइ–शशाक ।

वाससहस्सं पि जइ, काऊणं संयमं सुविउलं पि।
अंते किलिट्ठभावो, न विसुज्झइ कंडरीउव्व ॥ २५१ ॥

अर्थ–" कंडरीकनी जेम (तेणे घणां वर्ष तपस्या करी तोपण अंते क्लिष्ट परिणामथी नरके गयो) कोइ पण यति हजार वर्ष सुधी पण अति विपुल संयम (चारित्र) करीने (पाळीने) पण जो कदाच अंते क्लिष्टभाव (अशुभ परिणाम) थाय तो ते विशुद्ध थतो नथी. अर्थात् ते कर्मक्षय करी शकतो नथी, अने दुर्गतिने पामे छे. " २५१.

अप्पेण वि कालेणं, केइ जहागहियसीलसामन्ना ।
साहंति निययकज्जं, पुंडरीयमहारिसि व्व जहा ॥ २५२ ॥

अर्थ–" जेवा भावे ग्रहण करेलुं होय तेवाज भाववाळुं जेमनुं शील–सदाचार अने श्रामण्य–चारित्र छे, एवा केटलाएक साधुओ पुंडरीक महाऋषिनी जेम (पुंडरीक महाऋषि थोडा काळमांज सद्गति पाम्या तेम) अल्प काळे करीने ज पोताना (मोक्षसाधन रूप) कार्यने साधे छे. " २५२. विस्तारथी तेनो संबंध कथानकगम्य होवाथी अहीं कंडरीक अने पुंडरीकनो संबंध जाणवो. ६१.

कंडरीक अने पुंडरीकनी कथा.

जंबूद्वीपना महाविदेहक्षेत्रमां आवेला पुष्कलावती विजयमां पुंडरीकिणी नामे महा नगरी छे. ते नगरीमां महापद्म नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने पद्मावती नामे राणी हती. ते राणीनी कुक्षिथी उत्पन्न थयेला पुंडरीक अने कंडरीक नामे तेने बे पुत्रो हता. तेमांथी मोटा पुत्र पुंडरीकने राज्यपर स्थापन करीने अने कंडरीकने युवराजपदे स्थापीने महापद्म राजाए स्थविरमुनि पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. ते महापद्म मुनि चारित्रनुं आराधन करीने अनुक्रमे केवळज्ञान पामी मोक्षे गया. पुंडरीक राजा राज्यनुं पालन करतो हतो, तेवामां एकदा बन्ने भाइओ कोइ स्थविर मुनि पासे धर्मोपदेश सांभळीने प्रतिबोध पाम्या. घरे आवीने मोटा भाइ पुंडरीके नाना कंडरीकने कह्युं के " हे भाइ ! आ राज्यने तुं ग्रहण कर, अने प्रजानुं पुत्रनी जेम पालन करजे. हुं स्थविरमुनि पासे चारित्र ग्रहण करीश. " ते सांभळीने कंडरीक बोल्यो के " हे भाइ ! मारे राज्यनुं शुं काम छे ? पिताए तमने राज्य आप्युं छे, माटे तेने तमेज भोगवो. हुं तो स्थविरमुनिनी पासे जइ दीक्षा लेवानो छु. " एम कहीने ज्येष्ठ बंधुनी रजा लइ कंडरीके चारित्र ग्रहण

गाथा २५१–जइ । विसुज्झइ । कंडरीयव्व ।
गाथा २५२–अप्पेण । पुंडरिय ।

कर्युं. अनुक्रमे ते अगियार अंगने धारण करनार थयो. स्थविरमुनिओनी साथे विहार करतां अने नीरस तथा लूखो आहार करतां कंडरीक मुनिना शरीरमां मोटा रोगो उत्पन्न थया. एकदा कंडरीक मुनि स्थविर साधुओनी साथे विहार करतां पुंडरीकिणी नगरीए आव्या. ते वात सांभळीने पुंडरीक राजा तेमने वंदना करवा गयो. प्रथम स्थविरोने वंदना करी, तेमनी पासे धर्म श्रवण करीने पछी तेणे पोताना भाइ कंडरीकने वंदना करी. ते वखते तेना शरीरमां रोगोत्पत्ति जाणीने राजाए तेमने पोतानी यानशाळामां राख्या. त्यां कंडरीकनी शुद्ध औषधथी चिकित्सा करावी, तेथी ते अनुक्रमे नीरोगी थया, एटले स्थविरोए विहार करवा माटे राजानी रजा मागी. परंतु मिष्ट खानपानमां मूर्छा पामेला कंडरीके राजा पासे विहार करवानी रजा मागी नहीं. त्यारे पुंडरीक राजा स्थविरने वंदना करी पोताना भाइनी प्रशंसा करवा लाग्यो के "हे भाइ! तमने धन्य छे, तमे पुण्यवान छो अने तमे कृतार्थ छो, तमे उत्तम मनुष्यजन्मनुं अने जीवितनुं फळ पाम्या छो. केमके तमे चारित्र ग्रहण करी तप अने संयमनुं आराधन करो छो, अने हुं तो अधन्य छुं अने अपुण्यवान छुं. केमके राज्यमां मूर्छा पामीने रहेलो छुं." आ प्रमाणे राजाए ते कंडरीक मुनिनी घणी स्तुति करी, परंतु ते मनमां जरा पण आनंद पाम्यो नहीं, तो पण तेणे लज्जित थइने राजानी आज्ञा लइ स्थविर साथे विहार कर्यो. ए प्रमाणे एक हजार वर्ष सुधी कंडरीक मुनि चारित्रनुं पालन करी छेवट भ्रष्ट परिणामवाळो थयो. तेथी ते एकलोज गुरुनी आज्ञा लीधा विना पुंडरीकिणी नगरीमां आव्यो, अने राजाना महेलनी पासेना अशोक वनमां अशोक वृक्षनी शाखापर पोतानां उपकरणो मूकीने ते वृक्षनी नीचे दुभायेला मनवाळो ते चिंतातुरपणे बेठो. ते वखते तेने राजानी धाव्यमाताए जोयो, एटले तेणे आवीने पुंडरीक राजाने ते वृत्तांत कह्युं. ते सांभळीने राजा तेनी पासे गयो. तेने जोइनेज तेणे तेनो अभिप्राय जाणी लीधो एटले एकांतमां राजाए तेने पूछ्युं के "हे भाइ! तने भोग भोगववानी अभिलाषा थइ छे?" ते बोल्यो के "हा, मने राज्य भोगववानी इच्छा थइ छे." ते सांभळीने पुंडरीक राजाए पोताना कुटुंबीओने बोलावीने कंडरीकने राज्याभिषेक कर्यो, एटले कंडरीक राजा थयो. तेज दिवसे कृश शरीरवाळा ते कंडरीके अति रसवाळो आहार कर्यो; तेथी तेना देहमां महा वेदना उत्पन्न थइ, पण तेनुं कोइए कांइ पण औषध कर्युं नहीं. सर्वेए जाण्युं के "आ पापिष्ठे चारित्र मूकीने राज्य ग्रहण कर्युं छे, ते अमने शुं सुख आपवानो हतो?" आ प्रमाणे थवाथी कंडरीकने प्रधान विगेरेनी उपर अत्यंत क्रोध चड्यो. तेथी तेणे विचार कर्यो के "ठीक छे, हमणां कोइ पण मारी सेवा करतुं नथी, परंतु ज्यारे हुं सारो थइश त्यारे आ सर्वनो निग्रह करीश." ए प्रमाणे अत्यंत रौद्र ध्यान करतो तेज रात्रिए मृत्यु पामीने ते सातमी नरके तेत्रीश सागरोपमना आयुष्यवाळो नारकी थयो.

आ प्रमाणे जे कोइ चारित्रनो त्याग करीने विषयनी अभिलाषा करे ते कंडरीकनी जेम दुर्गतिने पामे छे.

कंडरीकने राज्य आपीने तरतज पुंडरीक पोतानी मेळे चार महाव्रतनो उच्चार करी, ते कंडरीकनांज उपकरणो लइ, स्थविरने वंदना कर्या पछी ज आहार लेवानो अभिग्रह करी, घरमांथी बहार नीकळ्यो. मार्गमा कांटा तथा कांकराना उपसर्गोने सहन करतो ते पुंडरीक मनमां विचारे छे के " हुं स्थविर महाराजाने क्यारे वंदना करीश ? " एवा परिणामवडे चालतां बीजे दिवसे ते पुंडरीक स्थविर मुनि पासे आवी पहोंच्यो. गुरुने वंदना करीने फरीथी तेमनी पासे चार महाव्रतो उच्चर्यां. पछी छठने पारणे लूखो अने नीरस-जेवो तेवो आहार कर्यो. तेथी मध्यरात्रिने समये तेना शरीरमां महा व्यथा उत्पन्न थइ. तेने दृढ परिणामथी सहन करी, विशुद्ध ध्यानमां रही, तेज वखते काळ करीने सर्वार्थसिद्ध नामना महा विमानमां तेत्रीश सागरोपमना आयुष्यवाळा देव थया. त्यांथी चवीने महाविदेह[1] क्षेत्रमां उत्पन्न थइ सिद्धिपदने पामशे.

"आ प्रमाणे अल्प समय पण जे शुद्ध रीते चारित्रनुं प्रतिपालन करे छे ते पुंडरीक ऋषिनी जेम अक्षय सुखने पामे छे."

इति कंडरीकपुंडरीकयोः संबन्धः ॥ ६१ ॥

काऊणं संकिलिट्ठं, सामन्नं दुल्लहं विसोहिपयं ।
सुज्झिज्जा एगयरो, करिज्ज जइ उज्जमं पच्छा ॥ २५३ ॥

अर्थ–" पहेलां श्रामण्य (चारित्र)ने संक्लिष्ट (मलिन) करीने पछी ते चारित्रविराधकने विशोधिपद दुर्लभ छेः एटले के जेणे प्रथम चारित्रने मलिन कर्युं होय तेने पछीथी चारित्रने निर्मळ करवुं ते घणुं दुर्लभ छे. जो कदाच पाछळथी एटले प्रथम चारित्रनी विराधना कर्या पछी प्रमादनो त्याग करीने चारित्र पालन करवानो उद्यम करे, तो कोइक भाग्यवान शुद्ध (निर्मळ) थइ पण शके छे. " २५३.

उज्झिज्ज अंतरच्चिय, खंडिय सबलादउव्व हुज्ज खणं ।
ओसन्नो सुहलेहड, न तरिज्जव पच्छ उज्जमिउं ॥ २५४ ॥

अर्थ–" मध्यमां (चारित्र लीधा पछी वच्चे) चारित्रनो त्याग करे, व्रतभंग

---

[1] महाविदेहमा चार महाव्रत होय छे. अहीं बावीश प्रभुने वारे होय छे तेम.

गाथा २५३–काऊण । सुज्झेज्ज । सुज्झिज्जा=शुध्येत ।

गाथा २५४–अंतरिच्चिय । सबलादउव्व नानाविधातिचाराचरणेन मलिनम् । सुहलेहड=सुखलंपट । तरिज्जव=शक्नुयात् । उज्जमिअ ।

करवाथी चारित्रने खंडित करे, तथा क्षणे क्षणे नाना प्रकारना अतिचारे करीने चारित्रने मलिन करे एवो अवसन्न (शिथिल) अने सुखलंपट साधु पाछळथी पण चारित्रने विषे उद्यम करवा शक्तिमान थतो नथी-उद्यम करी शकतो नथी. " २५४.

अवि[1] नाम चक्कवट्टी[2], चइज्ज[6] सव्वं[3] पि[4] चक्कवट्टिसुहं[5] ।
न[11] य[7] ओसन्नविहारी, दुहिओ[8] ओसन्नयं[10] चयई[12] ॥ २५५ ॥

अर्थ-" वळी छ खंडनो अधिपति एवो चक्रवर्ती सर्व एवा पण चक्रवर्तीना सुखनो त्याग करे छे; परंतु शिथिल विहारी पुरुष दुःखी थया छतां पण शिथिलपणानो त्याग करतो नथी. एटले चिकणा कर्मवडे लेपायेलो होवाथी तजी शकतो नथी." २५५.

नरयत्थो[1] ससिराया[2], बहु[3] भणइ[4] देहलालणासुहिओ[6] ।
पडिओमि[7] भए[8] भाओअ[5], तो[9] मे[10] जाएअ[13] तं[11] देहं[12] ॥२५६॥

अर्थ-" नरकमां रहेलो शशि (शशिप्रभ) राजा पोताना भाइने घणुं कहे छे के 'हे भाइ! हुं देहनुं लालनपालन करवाथी सुख पाम्यो (सुखलंपट थयो), तेथी आ भयमां नरकमां पड्यो छुं. माटे मारा ते (पूर्वभवना) देहने तुं पीडा कर. (पीडा पमाड-कदर्थना कर). " २५६. अहीं शशिप्रभ राजानी कथा छे ते नीचे प्रमाणे—

शशिप्रभ राजानी कथा.

कुसुमपुर नगरमां जितारी नामे राजा हतो. तेने शशिप्रभ अने सुरप्रभ नामना बे पुत्रो हता. तेमां मोटा शशिप्रभने राज्यपर बेसाडी नाना सूरप्रभने युवराजपद आपी जितारी राजा धर्मकर्ममां उद्यमी थयो. एकदा त्यां चार ज्ञानने धारण करनार श्रीविजयघोष सूरि समवसर्या. तेमने वंदना करवा माटे शशिप्रभ अने सुरप्रभ गया. गुरुना मुखथी धर्मदेशना सांभळीने सुरप्रभ प्रतिबोध पाम्यो. पछी घेर आवीने सुरप्रभे शशिप्रभने कह्युं के" हे बंधु! आ संसार असार छे, तेथी विषयसुखनो त्याग करी चारित्र लइ तपसंयमने विषे उद्यम करीए; जेथी स्वर्ग तथा मोक्षनी पण प्राप्ति थाय. " ते सांभळीने शशिप्रभे कह्युं के" हे भाइ! आजे तुं कोइ धूर्तथी वंचना करायो (ठगायो) देखाय छे. केमके प्राप्त थयेलां विषयसुखोनो त्याग करीने आगळपरनां (भविष्यनां) सुखनी वांछा करे छे, माटे तुं महा मूर्ख छे; भविष्यनां सुख कोणे जोयां छे? धर्मनुं फळ थशे (मळशे) के नहीं ते कोण जाणे छे? " त्यारे सुरप्रभ बोल्यो के "हे भाइ! आ तमे शुं कह्युं? धर्मनुं फळ निश्चित मळेज छे. केमके पुण्य अने पापनां फळो प्रत्यक्ष

गाथा २५५—उसन्न विहारि। उसन्नयं। चयइ।
गाथा २५६—बहुं। भाउअ। जाएह। जाएअ=यातय, पीडयत्वयं।

ऊर्णं उच्चुच्चयरं, मज्झं हीणं चं हीणतरगं वा ।
जेणं जहिं गंतव्वं, चिट्ठा वि से तारिसी होई ॥ २६२ ॥

अर्थ–" देवलोकरूपी उच्च, मोक्षगतिरूप उच्चतर (अति उंचुं), मनुष्यगतिरूप मध्यम अने तिर्यंचगतिरूप हीन अथवा नरकगतिरूप हीनतर स्थान मध्ये (ते स्थानमांथी) जे स्थाने जे जीवे (जीवने) जवानुं छे ते जीवनी (पुरुषनी) चेष्टा पण तेवीज (तेवाज प्रकारनी) थाय छे. जल्लेसे मरइ तल्लेसे उववज्जइ–जे लेश्याए प्राणी मरे छे ते लेश्याए उत्पन्न थाय छे–एवुं सिध्धान्ततुं वचन छे. २६२.

जस्स गुरुंमि परिभवो, साहुसु अणायरो खमा तुच्छा ।
धम्मे य अणहिलासो, अहिलासो दुग्गइं एओ ॥ २६३ ॥

अर्थ–" जे पुरुषने गुरुने विषे परिभव–अवज्ञा करवापणुं होय, मोक्षमार्गना साधक साधुओने विषे अनादर होय, जेने तुच्छ (थोडी) क्षमा होय अने जेने क्षांति विगेरे दश प्रकारना यतिधर्मने विषे अनभिलाष (इच्छारहितपणुं–अनिच्छा) होय ते पुरुषने आ दुर्गतिनो अभिलाष जाणवो (ते दुर्गतिमां जवाने इच्छे छे, एम जाणवुं)." २६३.

सारीरमाणसाणं, दुक्खसहस्साण वसणपरिभीया ।
नाणंकुसेण मुणिणो, रागगइंदं निरुंभंति ॥ २६४ ॥

अर्थ–" शरीर संबंधी अने मन संबंधी हजारो दुःखना व्यसन (कष्ट-पीडा)-थी भय पामेला (पराभव पामेला) मुनिओ त्रिकालज्ञानरूपी अंकुशे करीने रागरूपी गजेन्द्रनो निरोध करे छे. (राग गजेन्द्रने प्रसरवा देता नथी-आववा देता नथी). २६४.

सुग्गईमग्गपईवं, नाणं दिंतस्स हुज्ज किमदेयं ।
जह तं पुलिंदएणं, दिन्नं सिवगस्स नियगच्छिं ॥ २६५ ॥

अर्थ–"मोक्षरूपी सद्गतिना मार्गने (प्रकाश करवावडे) प्रदीप समान ज्ञान (जेनाथी वस्तुस्वरूप जणाय ते श्रुतज्ञान)ने आपनार एटले ज्ञाननुं दान करनार गुरुने शुं अदेय–न आपवा लायक वस्तु होय ? कांइज नहीं, अर्थात् ज्ञानदाता गुरु जीवित मागे तो ते पण सुशिष्ये आपवुं जोइए. तथा–जेम ते पुलिंदे (भिल्ले) शिव (महादेव)ने पोतानुं नेत्र आप्युं हतुं. " ते स्वरूप कथाथी जाणवुं. २६५.

गाथा २६३–परिभवः=पराभवोऽवज्ञाकरणमिति । धम्मे अ अणहीलासो । दोग्गई एउ । एओ=अयम्
गाथा २६४–पराभूया । गाथा २६५–सुगइ । नियगच्छिं=निजकाक्षि–निजनेत्रम् ।

पुलिंद (भिल्ल) नी कथा.

विंध्यवनमां पर्वतनी एक गुफामां कोइ व्यंतरथी अधिष्ठित थयेली शिव (महादेव)नी एक मूर्ति हती. तेनी पूजा करवा माटे नजीकना गाममां रहेनारो एक मुग्ध नामे माणस हंमेशां त्यां आवतो हतो. ते आवीने प्रथम ते स्थान वाळीने साफ करतो. पछी पवित्र जळवडे ते शिवनी मूर्तिने पखाळी केसरमिश्रित चंदन विगेरे सुगंधी द्रव्योवडे पूजा करतो. पछी पुष्पमाळा चडावी, धूप दीप विगेरे यथाविधि करी, एक पगे भूमिपर उभो रही ते शिवनी स्तुति ध्यान विगेरे करी, मध्याह्न समये घेर जइ भोजन करतो. ए रीते ते प्रतिदिन पूजा करवा आवतो हतो. एकदा ते मुग्ध पूजा करवा आव्यो, त्यारे पोते गइ काले करेली पूजाने (पूजासामग्रीने) काढी नांखीने कोइए धतूरा अने कणेर विगेरेनां पुष्पोवडे पूजेली शिवनी मूर्तिने जोइ तेणे विचार कर्यो के "अहो! आ अरण्यमां एवो कयो पुरुष छे के जे मारी करेली पूजाने दूर करीने हंमेशां शिवनी पूजा करे छे? तो आजे तेने हुं जोउं तो खरो." एम विचारीने ते गुप्त रीते त्यां रह्यो. तेवामां त्रीजा प्रहरे एक भिल्ल त्यां आव्यो. तेना शरीरनो वर्ण श्याम हतो, तेणे डाबा हाथमां धनुष धारण करेलुं हतुं, जमणा हाथमां आकडानां, धतूरानां अने कणेर विगेरेनां पुष्पो विगेरे पूजानी सामग्री धारण करी हती अने मुखमां जळ भरेलुं हतुं. एवी रीते भयंकर मूर्तिवाळो ते भिल्ल पगमां पहेरेला जोडा सहित मूर्ति पासे आव्यो. पछी तुरतज तेणे मुखना जळथी ते मूर्तिने एक पगवडे पखाळी आकडानां अने धतूरानां पुष्पो चडाव्यां, अने ते मूर्तिना मुख पासे एक मांसनी पेशी मूकी. आवा प्रकारनी भक्ति करीने मात्र 'महादेव परमेश्वरने नमस्कार हो' एटलाज शब्दो बोली तेणे नमस्कार कर्यो. पछी तरतज ते बहार नीकळ्यो. तेज वखते महादेवे प्रकट थइने तेने बोलाव्यो अने कह्युं के "हे सेवक! आजे केम आटलो बधो विलंब थयो? तने भोजन तो सुखेथी मळे छे के? अने तुं विघ्नरहित वर्त्ते छे के?" आ प्रमाणे सुखशाताना प्रश्न पूर्वक महादेवे तेनी संभाळ लीधी; त्यारे भिल्ल बोल्यो के "हे स्वामी! ज्यारे आप मारापर प्रसन्न छो, त्यारे मारे शी चिंता होय?" एम कहीने ते भिल्ल चाल्यो गयो. त्यार पछी गुप्त रहेला पेला मुग्धे प्रगट थइ महादेव पासे आवीने कह्युं के "हे शिव! में तारुं ऐश्वर्य आजे जाण्युं. जेवो आ भिल्ल सेवक छे तेवोज तुं देव जणाय छे; केमके हुं हंमेशां केसरमिश्रित चंदन तथा सुगंधी पुष्पधूपादिकवडे पवित्रताथी तारी पूजा करुं छुं, तोपण तुं मारापर प्रसन्न थयो नहीं अने मारी साथे कोइ दिवस वातचीत करी नहीं, अने आ अपवित्र तथा आशातना करनार भिल्लनी साथे प्रत्यक्ष थइने वातचीत करी." ते सांभळीने महादेव बोल्या के "हे वत्स! ते भिल्लनी अने तारी भक्तिमां

केटलुं अंतर छे ते हुं तने देखाडीश." ते सांभळीने ते मुग्ध पोताने घेर गयो. बीजे दिवसे तेज प्रमाणे मुग्ध शिवपूजा करवा आव्यो. ते वखते शिवे पोतानुं एक (त्रीजुं) भाळमां (कपाळमां) रहेलुं नेत्र अदृश्य कर्युं. ते जोइने ते मुग्धगण मनमां खेद पाम्यो अने 'अरेरे! आ शुं थयुं? कोइ पापीए आ परमेश्वरना भाळमां रहेलुं नेत्र काढी नाखेलुं जणाय छे.' एम कहीने ते मोटे स्वरे रुदन करवा लाग्यो. ए रीते घणी वार सुधी रुदन करीने पछी तेणे पूजादिक नित्य कृत्य कर्युं. थोडी वारे भिल्ल पण त्यां आव्यो. तेणे पण शिवनुं भाळनेत्र जोयुं नहीं; एटले तेणे क्षणवार शोक करीने तरतज पोताना बाणवडे पोतानुं एक नेत्र काढीने शिवना भाळमां चोटाड्युं. त्यारे त्रणे लोचन पूरां थयां. पछी तेणे नित्यना नियम प्रमाणे पूजा करी. ते वखते शिव प्रत्यक्ष थइने बोल्या के "हे वत्स! तारी भक्तिथी हुं प्रसन्न थयो छुं, माटे आजथी तने घणी संपत्ति प्राप्त थशे." ए प्रमाणे तेने वरदान आपीने शिवे पेला मुग्धगणने कह्युं के "तारी अने भिल्लनी भक्तिमां केटलुं अंतर छे ते तें जोयुं? अमे आंतर भक्तिथी प्रसन्न थइए छीए, मात्र बाह्य भक्तिथी प्रसन्न थता नथी." एम कहीने शिव अदृश्य थया.

जेवी रीते ते भिल्ले शिवनी आंतर भक्ति करी, ते प्रमाणे बीजा शिष्योए पण ज्ञानदाता गुरुनी भक्ति करवी, ए आ कथानुं तात्पर्य छे.

॥ इति भिल्लसंबन्धः ॥ ६३.

सिंहासणे[1] निसन्नं[2], सोवागं[3] सेणिओ[4] नरवरिंदो[5] ।
विज्जं[6] मग्गइ[7] पयओ[8], इअ[9] साहुजणस्स[10] सुअविणओ[11] ॥२६६॥

अर्थ—"सिंहासनपर पोतेज (राजाए) बेसाडेला श्वपाक (चांडाळ) पासे नरवरेन्द्र श्रेणिक राजाए प्रणाम करीने एटले बे हाथ जोडीने विद्या मागी (याचना करी): तेवी रीते एटले जेम श्रेणिक राजाए विद्याने माटे श्वपाकनो विनय कर्यो, तेवी रीते साधुजननो श्रुतविनय शिष्योए पण करवो." २६६. ते कथा आ प्रमाणे—

चंडालनी कथा.

मगधदेशमां राजगृह नामे नगर छे. तेमां श्रेणिक नामे राजा राज्य करता हता. तेने चिल्लणा नामे राणी हती. तेने एकदा गर्भना प्रभावथी चोतरफ वाडी सहित एक स्तंभवाळा प्रासादमां वसवानो मनोरथ (दोहद) थयो. ते वात राजाए अभयकुमारने जणावी. अभयकुमारे देवतानी आराधना करीने सर्व ऋतुनां फळफूलवाळां वृक्षो सहित तथा फरता किल्ला सहित एक स्तंभवाळो महेल निष्पन्न कर्यो. ते जोइने

गाथा २६६—सोवाग=स्वपाक—चाण्डालिक । पयओ=प्रणतो हस्तद्वययोजनपूर्वक । इय । इअ=अनेन दृष्टान्तेन ।

चिल्लणा हर्ष पामी. ते वाडी सर्व (छए) ऋतुओनां फळ अने पुष्पो सहित रहेती हती. ते वाडी फरता राजाना सुभटो तेनी रक्षा करवा माटे रात्रिदिवस रहेता हता. तेथी ते वाडीमांथी एक पांदडुं पण लेवा कोइ शक्तिवान थतुं नहोतुं.

हवे ते नगरमां कोइ एक विद्यावान चंडाळ रहेतो हतो. तेनी स्त्रीने गर्भना प्रभावथी कार्तिक मासमां आम्रफळनुं भक्षण करवानो दोहद थयो. तेणे ते दोहद पोताना धणीने जणाव्यो. ते सांभळीने चंडाळे विचार्युं के " आज अकाळे आम्रफळ मात्र राजाना देवनिर्मित उद्यानमांज वर्त्ते छे; बीजे कोइ पण स्थाने वर्तता नथी. " एम विचारीने रात्रिने वखते ते चंडाळ ते उद्यान तरफ गयो. किल्लानी अंदर चोकी होवाथी ते किल्लानी बहारज उभो रह्यो. पछी तेणे अवनामिनी विद्याना बळथी आम्रवृक्षनी शाखा नीचे नमावी फळो तोडी लीधां, अने पछी उन्नामिनी विद्यावडे पाछी हती तेम शाखा उंची करी दीधी. ए रीते ते फळो लइने तेवडे पोतानी स्त्रीनो दोहद तेणे पूर्ण कर्यो. प्रातःकाळे आम्रफळ विनानी शाखा तथा तेनी नीचे किल्लानी बहार माणसनां पगलां जोइने रक्षकोए ते वृत्तांत राजाने निवेदन कर्युं. राजाए सर्वत्र तेनी (चोरनी) शोध करावी, पण चोर हाथ लाग्यो नहीं; एटले राजाए अभयकुमारने बोलावीने कह्युं के " आम्रफळना चोरने पकडी लाव. " अभये कह्युं के ' बहु सारुं, लावुं छुं. ' एम कहीने अभयकुमार चौटामां गयो. त्यां घणा लोको नटनी रमत जोवा माटे एकठा थयेला हता. तेमनी पासे जइने अभये कह्युं के " हे लोको! आ नट ज्यां सुधीमां नाटक शरु करे नहीं तेटलामां हुं एक कथा कहुं ते सांभळो. " लोको सर्वे सांभळवा लाग्या. एटले अभयकुमारे नीचे प्रमाणे कथा कही.

पुण्यपुर नगरमां गोवर्धन नामे श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने युवावस्थाए पहोंचेली सुंदरी नामनी कुमारिका पुत्री हती. ते सुंदरी स्वरूप अने युवावस्थाथी अत्यंत सुंदर लागती हती. ते हंमेशां योग्य वरनी प्राप्तिने माटे कोइ एक वाडीमांथी छानी रीते पुष्पो लइने तेवडे कामदेव नामना यक्षनी पूजा करती हती. एकदा ते वाडीना माळीए तेने पुष्पो चुंटती जोइ. तेनो हाथ पकडी, तेने माथे चोरीनुं कलंक मूकी माळी बोल्यो के " हे स्त्री ! जो तुं मारुं कहेवुं कबूल करे तो तने मूकी दउं, नहींतो राजा पासे लइ जइश. " त्यारे ते बोली के " हे मित्र! कहे." माळी बोल्यो के " तारे मारी कामक्रीडा संबंधी वांच्छा पूर्ण करवी." कन्या बोली के "सांभळ, हजु सुधी हुं कुमारिका छुं, आजथी पांचमे दिवसे मारा लग्न थवाना छे, ते दिवसे हुं परण्या पछी तरत प्रथम तारी पासे आवी पछी मारा स्वामी पासे जइश." माळीए ते वात कबूल करी, एटले ते सुंदरी प्रतिज्ञा पूर्वक वचन आपीने पोताने घेर आवी. पछी पांचमे दिवसे पाणिग्रहण

थया पछी ते सुंदरी पति पासे गइ. त्यारे प्रथम तेणे माळी पासे करेली प्रतिज्ञा पोताना स्वामीने निवेदन करी. ते सांभळीने तेना पतिए तेने सत्यवादी जाणीने जवानी रजा आपी, एटले ते भोगनी सर्व सामग्री लइ सुंदर वेष धारण करीने मध्य रात्रिने समये घर बहार नीकळी. गामनी बहार जतां रस्तामां तेने प्रथम चोर मळ्या. ते चोरो तेने सर्व आभूषणोथी भूषित जोइ लुंटवा लाग्या. त्यारे ते सुंदरीए तेमनी आगळ माळी पासे जवा संबंधी सर्व वृत्तांत जणावीने कह्युं के 'हुं पाछी आवीश, त्यारे तमने सर्व अलंकारादिक उतारी आपीश.' ते सांभळीने चोरोए तेने सत्यवादी जाणीने जवा दीधी. आगळ जतां तेने एक राक्षस मळ्यो. ते तेने खाइ जवा तैयार थयो एटले तेने पण सर्व वृत्तांत कही तेणे पाछा आववानुं कबूल कर्युं, तेथी राक्षसे पण तेने मूकी दीधी. पछी ते सुंदरी अनुक्रमे ते वाडीमां माळी पासे गइ, एटले नवी परणेली, नवा यौवनवाळी अने अत्यंत अद्भुत रूपवाळी तेने जोइने ते माळी हर्षित थयो. तेणे तेने पूछ्युं के "हे सुंदर नेत्रवाळी स्त्री! तुं अत्यारे रात्रिने समये एकली अहीं केम आवी?" त्यारे तेणे पोते आपेलुं वचन जणावीने पोताना पति संबंधी तथा मार्ग संबंधी सर्व वृत्तांत कह्युं. ते सांभळीने माळीए विचार्युं के "अहो! धन्य छे आ स्त्रीने! के जे वचनथी बंधायेली आवी अंधारी रात्रे बुद्धिना बळथी चोरने तथा राक्षसने पण वचन आपीने अहीं मारी पासे आवी. ज्यारे तेने तेना पतिए, चोरोए अने राक्षसे मूकी दीधी त्यारे मारे पण आ सत्यवादी स्त्रीने मूकी देवीज जोइए." एम विचारीने माळीए तेने कह्युं के-"हुं तारो भाइ छुं. अने तुं मारी बेन छे. मारो अपराध क्षमा कर." एम कही तेना पगमां पडी (नमस्कार करी)ने तेने पाछी मोकली. पाछा आवतां मार्गमां राक्षस मळ्यो. तेनी पासे तेणे माळीनुं सर्व वृत्तांत कह्युं. ते सांभळीने राक्षसे विचार्युं के 'आवी नव यौवनवाळी सुंदरीने ते माळीए न भोगवतां मूकी दीधी, तो हुं आवी सत्यवादी सतीने शामाटे भक्षण करुं?' एम विचारीने तेणे पण 'तुं मारी बेन छे' एम कही मूकी दीधी. फरी आगळ जतां चोरो मळ्या, तेमनी पासे पण माळीनुं तथा राक्षसनुं वृत्तांत कह्युं, एटले तेओ लुंटवा आव्या हता तोपण तेमणे तेने बेन कहीने मुक्त करी. पछी अनुक्रमे ते पति पासे आवी. तेने सर्व वृत्तांत निवेदन कर्युं. ते सांभळीने ते अत्यंत खुशी थयो अने तेणे घरनो सर्व अधिकार तेने सोंप्यो."

आ प्रमाणे कथा कहीने अभयकुमारे सर्व लोकोने पूछ्युं के "हे लोको! कहो, आ चारे (पति, चोर, राक्षस अने माळी)मां दुष्कर काम कोणे कर्युं कहेवाय?" ते सांभळीने जेओ स्त्री उपर अविश्वासु हता तेओ बोल्या के "तेनो पति दुष्कर काम करनार कहेवाय. केमके तेणे नवी परणेली अने नवा यौवनवाळी पोतानीज पत्नीने

प्रथम संगम वखतेज परपुरुष पासे मोकली. पछी परस्त्रीलंपट कामी पुरुषो बोल्या के "माळी दुष्कर काम करनार कहेवाय. केमके तेणे रात्रिने वखते निर्जन प्रदेशमां जातेज सामी आवेली सुंदर स्त्रीनो त्याग करी पोताना मनने कवजे राख्युं. माटे धन्य छे ते माळीने!" पछी जेओ मांस खावामां लुब्ध हता तेओए राक्षसनी प्रशंसा करी अने तेने दुष्करकारी कह्यो. छेवट पेलो आम्रफळनो लेनार चोर बोल्यो के "ते त्रणे करतां चोरो ज दुष्कर कार्य करनारा कहेवाय. केमके तेओए आभरणोथी भूषित थयेली अने समीपे आवेली ते स्त्रीने मूकी दीधी, अने लुंटी नहीं. तेथी तेओनेज धन्य छे!" ते सांभळीने अभयकुमारे ते चंडाळने पकडी लीधो. पछी तेने एकांतमां लइ जइ अभये कह्युं के "तुंज आम्र फळनो चोर छे, माटे सत्य वात कही दे; नहीं तो तारो निग्रह करीश." त्यारे चंडाळ बोल्यो के "हा, में फळो लीधां छे." अभये पूछ्युं के "शामाटे अने केवी रीते लीधां ?" त्यारे तेणे पोतानी स्त्रीना दोहदनुं अने विद्याना सामर्थ्यनुं स्वरूप यथार्थ निवेदन कर्युं. एटले तेने लइने अभयकुमार श्रेणिक राजा पासे आव्यो. राजाए ते चोरने मारवानी आज्ञा करी. त्यारे दयालु अभये कह्युं के "हे स्वामी! एक वार एनी पासेथी विद्या तो ग्रहण करो; पछी जेम करवुं होय तेम करजो." ते सांभळीने राजाए सिंहासन पर बेठाबेठाज हाथ बांधीने आगळ उभा राखेला चोर पासे विद्या शीखवा मांडी. ते चंडाळ विद्या शीखववा लाग्यो; पण राजाना मुखे एक अक्षर पण चड्यो नहीं. त्यारे अभयकुमारे कह्युं के "हे राजा! ए प्रमाणे विद्या आवडे नहीं. विनयथी विद्या प्राप्त थाय छे. माटे तेने सिंहासनपर बेसाडो, अने तमे हाथ जोडीने सन्मुख बेसो." ते सांभळीने राजाए तेम कर्युं, एटले तरतज विद्या आवडी. पछी फरीथी राजाए तेनो वध करवानी आज्ञा करी, त्यारे अभयकुमारे कह्युं के "हे राजा! ए आपनी आज्ञा अयोग्य छे. केमके एक अक्षरनो पण जे आपनार होय तेने जे गुरु तरीके माने नहीं, ते सो वार कूतरानी योनिमां जन्म लइ छेवट चंडाळमां उत्पन्न थाय छे, एम नीतिशास्त्रमां कह्युं छे; तेथी आ चंडाळ आपनो विद्यागुरु थयो छे माटे तेने केम मराय? हवे तो ते आपने पूज्य थयो छे." ते सांभळीने राजाए ते चंडाळनी घणी भक्ति करी, अने धन वस्त्र विगेरे आपवावडे तेनो सत्कार करीने तेने घेर मोकल्यो. तेज प्रमाणे शिष्ये पण विनयपूर्वक गुरु पासे विद्यानो अभ्यास करवो ए आ कथानुं तात्पर्य छे. वळी बीजे प्रकारे विनयनीज प्ररूपणा करे छेः—

॥ इति चंडाळ दृष्टान्तः ॥ ६४.

विज्जाए कासवसंतिआए, दगसूअरो सिरिं पत्तो ।
पडिओ मुसं वयंतो, सुअनिह्नवणा इय अपिथ्था ॥ २६७ ॥

अर्थ–" दकशूकर के० कोइ त्रिकाळ स्नान करनार त्रिदंडी काश्यप के० हजामे आपेली विद्यार्थी लक्ष्मीने पाम्यो हतो; परंतु पछीथी मृषा (असत्य) बोलवाथी एटले पोताना विद्यागुरुनो अपलाप करवाथी ते पड्यो–नष्ट विद्यावाळो थयो, एवी रीते एटले आ दृष्टांत जाणीने श्रुतनिन्हवणा करवी अर्थात् श्रुतज्ञान आपनारनो अपलाप करवो ए अपथ्य एटले कर्मरूपी रोगने वृद्धि करनार छे एम जाणवुं." २६७.

त्रिदंडीनी कथा

स्तंबपुर नगरमां एक चंडिल नामे अति कुशळ हजाम रहेतो हतो. ते विद्याना बळथी हजामत करीने ते अस्त्राने आकाशमां अधर राखतो हतो. एकदा कोइएक त्रिदंडीए ते हजामनो प्रभाव जोयो. तेथी त्रिदंडीए ते हजामनी आराधना (सेवा) करीने तेनी पासेथी ते विद्या ग्रहण करी. पछी ते त्रिदंडी फरतो फरतो गजपुर (हस्तिनापुर) मां आव्यो. ते वखते त्यां पद्मरथ राजा राज्य करतो हतो, ते पुरमां जइने ते त्रिदंडी पोताना त्रिदंडने आकाशमां अधर राखवा लाग्यो. ते जोइने घणा लोको आश्चर्य पामी तेनी अत्यंत पूजा (सेवा) करवा लाग्या. ते वृत्तांत राजाए पण लोकोना मुखथी सांभळ्युं. त्यारे तेणे तेना पगमां पडी (प्रणाम करी) विनय पूर्वक पूछ्युं के " हे स्वामी ! तमे आ त्रिदंडने आकाशमां राखो छो, ते कोइ तपनो प्रभाव छे के विद्यानो प्रभाव छे ? " त्रिदंडीए जवाब आप्यो के ' हे राजा ! आ विद्यानुं सामर्थ्य छे. ' फरीथी राजाए पूछ्युं के " कहो, कोनी पासेथी आ चित्तने चमत्कार करनारी विद्या तमे शीख्या ?" त्यारे ते त्रिदंडीए लज्जाने लीधे ते हजामनुं नाम दीधुं नहीं, अने कल्पित जवाब आप्यो के " हे राजा ! पूर्वे में हिमवान पर्वतपर तपकष्टादिक अनुष्ठानवडे सरस्वतीनी आराधना करी हती. ते वखते ते देवीए प्रत्यक्ष थइने मने आ अंबरालंबनी विद्या आपी हती. तेथी सरस्वती मारी विद्यागुरु छे. " ए प्रमाणे ते त्रिदंडी बोल्यो के तरतज तेनो आकाशमां रहेलो त्रिदंड खडखड शब्द करतो पृथ्वीपर पड्यो. तेथी ते अत्यंत लज्जा पाम्यो अने लोकोए तेने अत्यंत धिक्कार्यो. प्रांते ते अति दुःखी थयो.

जेम त्रिदंडी गुरुनो अपलाप करवाथी दुःख पाम्यो, तेवी रीते बीजा कोइ पण जो गुरुनो अपलाप करशे तो तेओ दुःखी थशे.

॥ इति त्रिदंडिकोपदेशः ॥ ६५ ॥

गाथा–२६७ कासवसंतियाए=काश्यपेन नापितेन समर्पितया। दगसूयरो=त्रिकालस्नानकर्ता कश्चिद्दण्डिक। सिरिं=श्रियम् । इय–अनेन प्रकारेण । अप्पिच्छा–अपथ्या ।

सयलंमि वि जियलोए, तेण इहं घोसिओ अमाघाओ ।
इक्कं पि जो दुहत्तं, सत्तं बोहेइ जिणवयणे ॥ २६८ ॥

अर्थ–"जे मनुष्य एक पण दुःखार्त (दुःखथी पीडित) सत्व (प्राणी) ने जिनवचनने विषे (जिनवचनोवडे) बोध पमाडे छे, ते पुरुषे अहीं (आ लोकमां) रह्या थकाज सकल जीवलोकने विषे (चौद राजलोकने विषे) पण अमारी पटह वगडाव्यो एम जाणवुं."

सम्मत्तदायगाणं, दुप्पडियारं भवेसु बहुएसु ।
सव्वगुणमेलियाहि वि, उवयारसहस्सकोडीहिं ॥ २६९ ॥

अर्थ–"घणा भवोने विषे पण सर्वगुणामिलित एटले (गुरुए करेला उपकार थी) वे गणा, त्रण गणा, चारगणा, एम करतां करतां सर्व गणा (अनंत गुणा) एवा पण हजारो करोडो उपकारोए करीने पण समकित आपनार गुरुनो प्रतिकार (प्रत्युपकार) करवो अशक्य छे: अर्थात् जे गुरुए समकित आपीने उपकार कर्यो छे तेनाथी अनंतगणा करोडो उपकारोए करीने पण तेनो प्रत्युपकार करी शकातो नथी, (थइ शकतो नथी) माटे समकितदाता गुरुनी मोटी भक्ति करवी." २६९.

हवे समकितनुं फळ कहे छे–

सम्मत्तंमि उ लद्धे, ठइयाइं नरयतिरियदाराइं ।
दिव्वाणि माणुसाणि य, मोरकसुहाइं सहीणाइं ॥ २७० ॥

अर्थ–"तुं पुनः (वळी) समकित पामे छते (ज्यारे समकित प्राप्त थाय त्यारे) नरकगति अने तिर्यंचगतिनां द्वारो वंध थइ जाय छे (ते गतिओमां जन्म थतो नथी). केमके समकित पामेला मनुष्यो देवायुज वांधे छे, अने देवो मनुष्यायुज वांधे छे, तेथी ते द्वारो वंध थाय छे. ए अहीं तात्पर्य छे. तथा देव संवंधी, मनुष्य संवंधी अने मोक्ष संवंधी सुखो पोताने स्वाधीन थाय छे." २७०. अहीं नरकगति अने तिर्यंचगतिना भेदो घणा होवाथी तेनां द्वारो एम वहुवचन वापर्युं छे.

वळी वीजे प्रकारे समकितनुंज फळ वतावे छे.–

कुसमयसुईण महणं, सम्मत्तं जस्स सुट्ठियं हियए ।
तस्स जगुज्जोयकरं, नाणं चरणं च भवमहणं ॥ २७१ ॥

अर्थ–"जे पुरुषना हृदयमां कुसमय श्रुति के० अन्य दर्शनीओना सिद्धान्तनां

गाथा २६८–इमाघाओ=अमारिपटहः । दुहत्त=दुःखार्तम् । वोहेयइ । गाथा २६९–दु प्रतिकार ।
गाथा २७०–ठइयाइं=स्थापितानि–मुद्रितानीति यावत् । मुरक सुहाइं । सहीणाइं=स्वाधीनानि ।

श्रवणोने मथन करनारुं (नाश करनारुं) एवुं समकित सुस्थित (अति स्थिर) होय छे ते पुरुषने जगतने विषे उद्योत करनारुं जगत्प्रकाशक केवळज्ञान अने भव (संसार)ने मथन (नाश) करनारुं चरण (यथाख्यात चारित्र) प्राप्त थाय छे. (तेवा ज्ञान ने चारित्रनो उदय थाय छे). अर्थात् समकित न होय, तो ज्ञान न होय, अने ज्ञान न होवाथी मोक्ष मळी शके नहीं. माटे मोक्षनुं मुख्य कारण समकितज छे." २७१.

सुपरिच्छियसम्मत्तो, नाणेणालोइयत्थसब्भावो ।
निव्वणचरणाउत्तो, इच्छियमत्थं पसाहेइ ॥ २७२ ॥

अर्थ–"सुपरीक्षित छे समकित जेनुं एवो (दृढ समकितवाळो) अने (दृढ समकिते करीने उत्पन्न थयेला) सम्यक् ज्ञानवडे जीवादिक पदार्थोनुं सद्भाव स्वरूप जेणे जाणेलुं छे, अने तेथी करीनेज जे व्रण (अतिचार) रहित (निर्दोष) चारित्रने विषे आयुक्त एटले निरतिचार चारित्रमां उपयोगवाळो छे, ते पुरुष इप्सित एटले मनने इष्ट एवा मोक्षसुख रूपी अर्थने साधे छे–सिद्ध करे छे-प्राप्त करे छे." २७२.

हवे प्रमादथी समकित मलिन थाय छे, ते दृष्टांते करीने बतावे छे.

जह मूलताणए पंडुरंमि, दुव्वन्नरागवन्नेहिं ।
बीभिच्छा पडसोहा, इय सम्मत्तं पमाएहिं ॥ २७३ ॥

अर्थ–"जेम श्वेत मूळ तांतणामां (सुतरना तंतुमां) काळा, राता विगेरे खराब वर्णवाळा तंतुओए करीने वस्त्रनी शोभा बीभत्स के० खराब थाय छे, तेम प्रमादे करीने समकित पण बीभत्स–मलिन थाय छे. माटे समकितना शत्रु रूप प्रमादोनो त्याग करवो योग्य छे ए तात्पर्य छे." २७३.

नरएसु सुरवरेसु य, जो बंधइ सागरोवमं इक्कं ।
पलिओवमाण बंधइ, कोडिसहस्साणि दिवसेण ॥ २७४ ॥

अर्थ–" सो वर्षना आयुष्यवाळो जे पुरुष पापकर्म करवाथी नरकगतिमां (नरकगति संबंधी) अने पुण्यकर्म करवाथी देवगतिमां (देवगति संबंधी) एक सागरोपमनुं आयुष्य बांधे छे ते पुरुष एक दिवसे (सो वर्षमांना दरेक दिवसे) दुःख सुख (नरक–स्वर्ग) संबंधी पल्योपमना करोडो हजारो जेटलुं आयुष्य बांधे छेः अर्थात् सो वर्षना दिवसोनो एक सागरोपमना दश कोडाकोडी पल्योपम साथे भांगाकार करतां तेटला आयुष्यने बांधवावाळुं पाप अने (अथवा) पुण्य एक दिवसमां जीव उपार्जन

गाथा २७२–सुपरीक्षितसम्यक्त्वः–सुपरिज्ञातं सम्यक्त्वं यस्य । निर्व्रणचरणायुक्तः ।
गाथा २७३–दुर्वर्णरागवर्णैः–दुष्टो वर्णो यस्य स चासौ रागश्च तद्वर्णैः । ईयु॥
गाथा २७४–दिवसेण

करे छे. माटे प्रमादना आचरणनो त्याग करीने निरंतर पुण्य उपार्जन करवामां उद्यम करवो, ए आ गाथानुं तात्पर्य छे." २७४.

पलिओवमसंखिज्जं, भागं जो बंधइ सुरगणेसु ।
दिवसे दिवसे बंधइ, स वासकोडी असंखिज्जा ॥ २७५ ॥

अर्थ—" जे सो वर्षना आयुष्यवाळो नरभवमां रहेलो पुरुष पुण्याचरणवडे देवजातिना समूहमां पल्योपमना संख्यातमा भागने (तेटला अल्प आयुष्यने) बांधे छे, (ते पुरुषने प्रतिदिन केटला करोड वर्ष आवे ? ते उत्तरार्ध गाथामां कहे छे). ते (देवगतिमां पल्योपमना संख्यातमा भागपरिमाण आयुष्यने बांधनार सो वर्षना आयुष्यवाळो) पुरुष दिवसे दिवसे (प्रत्येक दिवसे) असंख्याता करोडो वर्ष (नुं आयुष्य) बांधे छे. एटले के जो पल्योपमना संख्यातमा भागना वर्षोना विभाग करीने सो वर्षना दरेक दिवसमां वहेंचीए तो ते दरेक दिवसे असंख्याता करोड वर्ष आवे." २७५.

एस कमो नरएसु वि, बुहेण नाऊण नाम एयं पि ।
धम्मंमि कह पमाओ, निमेसमित्तं पि कायव्वो ॥ २७६ ॥

अर्थ—" आज क्रम नरकने विषे पण छे (जाणवो). एटले के पापकर्म करनार सो वर्षना आयुष्यवाळो पुरुष प्रत्येक दिवसे असंख्याता करोड वर्षनुं नरकायुष्य बांधे छे. ते—पूर्वे कहेलुं पुण्यपापने उपार्जन करवानुं स्वरूप (नाम प्रसिद्धार्थक छे) जाणीने पंडित पुरुषे क्षांत्यादिक दश प्रकारना धर्मना आराधनमां एक निमेषमात्र पण प्रमाद (शिथिलता) शामाटे करवो जोइए ? सर्वथा प्रमाद न ज करवो जोइए." २७६.

दिव्वालंकारविभूसणाइं, रयणुज्जलाणि य घराइं ।
रूवं भोगसमुदओ, सुरलोगसमो कओ इहयं ॥२७७॥

अर्थ—" आ (मनुष्य) लोकने विषे सुरलोकनी जेवां दिव्य अलंकारो (सिंहासन, छत्र विगेरे) अने मुकुटादिक आभूषणो, रत्नोए करीने उज्वळ (निर्मळ) गृहो, रूप (शरीरनुं सौभाग्य) अने भोगसमुदाय एटले भोगनो संयोग (ए सर्व) क्यांथी होय ? " अर्थात् सर्वथा नज होय. माटे धर्मकार्यने विषे उद्यम करवो, जेथी तेवां सुख प्राप्त थाय, ए आ गाथानो उपदेश छे." २७७.

देवाण देवलोए, जं सुक्खं तं नरो सुभणिओ वि ।
न भणइ वाससएण वि, जस्स वि जीहासयं हुज्जा ॥२७८॥

गाथा—२७७ सुरलोएसमो । कओ=कृतः ।

अर्थ—"जे (कोइ पण) पुरुषने सो जिह्वा होय तेवो सुभणित (वाचाळ) माणस पण सो वर्षे करीने (पण) देवलोकमां देवताओने जे सुख छे ते सुखने कही शकतो नथीः अर्थात् सो जिह्वावाळो वाचाळ पुरुष सो वर्ष सुधी देवताओना सुखनुंज वर्णन कर्या करे, तोपण ते सुखना वर्णननो पार आवे नहीं, तेटलां बधां सुख देवलोकमां छे; तो बीजो साधारण माणस तो ते सुखनुं वर्णन शी रीतेज करी शके ? " २७८.

नरएसु जाइं अइकक्खडाइं, दुक्खाइं परम तिक्खाइं ।
को वन्नेही ताइं, जीवंतो वासकोडी वि ॥ २७९ ॥

अर्थ—"नरकोने विषे अति कर्कश (दुस्सह) अने विपाकनी वेदनाए करीने परम तीक्ष्ण—अति तीक्ष्ण एवां क्षुधा तृषा पारवश्यादि दुःखो छे, ते दुःखोने करोड वर्ष सुधी पण जीवतो एवो कयो मनुष्य वर्णन करवा शक्तिमान छे ? कोइज शक्तिमान नथीः अर्थात् ते दुःखो सतत करोड वर्षो सुधी कहेतां पण कही शकाय तेटलां नथी." २७९.

कक्खडदाहं सामलि असिवण वेयरणि पहरणसएहिं ।
जा जायणाउ पावंति, नारया तं अहम्मफलं ॥ २८० ॥

अर्थ—" नारकीओ कर्कश दाह (अग्निमां पकाववुं), शाल्मलि (शाल्मलि वृक्षनां पत्रोवडे अंगनुं छेदन), असिवन (खड्ग जेवां जेनां पांदडां होय छे तेवा वृक्षवाळा वनमां भमवुं), वैतरणी (वैतरणी नामनी नदीना तपावेला सीसा जेवा जळनुं पान करवुं) अने कुठारादिक सेंकडो जातिनां प्रहरण (शस्त्रो)वडे अंगछेदन—तेणे करीने जे यातनाओ (पीडाओ) पामे छे, ते सर्व अधर्मनुं (धर्म विरुद्ध करेलां कृत्योनुं—पापोनुं) फळ जाणवुं. " २८०. हवे तिर्यंचगतिनां दुःखोनुं वर्णन करे छे—

तिरिया कसंकुसारानिवायवहबंधणमारणसयाइं ।
न वि इहयं पावंता, परत्थ जइ नियमिया हुंता ॥ २८१ ॥

अर्थ—" जो तिर्यंचो (हाथी, घोडा, बळद विगेरे) परभवे (पूर्वभवे) नियमवाळा थया होत, तो आ भवे तेओ कशा (कोरडानो मार), अंकुश, आर (परोणा), निपात (पृथ्वीपर पाडी नांखवुं), वध (दंडादिकथी मारवुं), बंधन (दोरडा, सांकळ विगेरेथी बांधवुं) अने मारण (जीवितनो नाश) ते सर्व दुःखोना सेंकडाओ पाम्या न होत, अर्थात् न पामत.' २८१. हवे मनुष्यगतिनां दुःखोनुं वर्णन करे छे—

गाथा—२८० जायणाय । जायणा=यातना. पीडा. कदर्थनाः इत्यर्थ. ।

गाथा २८१—कशांकुशारनिपातवधबंधनमारणशतानि । निवाइ । इहइं पाविंता । निअमिआ

आजीवसंकिलेसो, सुरकं तुच्छं उवद्दवा बहुया ।
नीयजणसिट्ठणा विय, अणिट्ठवासो अ माणुस्से ॥ २८२ ॥

अर्थ—"अपि च (वळी) मनुष्यभवमां जावजीव (जीवन पर्यंत) संक्लेश (मननी चिंता), तुच्छ—असार—अल्प काळ रहेनारुं एवुं विषयादिकनुं सुख, अग्नि चोर विगेरेथी उत्पन्न थता घणा उपद्रवो, नीच (अधम) लोकोना आक्रोशादिक दुर्वचनो सहन करवां, अने अनिष्ट स्थाने परतंत्रताथी वसवुं. ए सर्वे दुःखना हेतुओ छे."२८२.

चारगरोहवहबंधरोगधणहरणमरणवसणाइं ।
मणसंतावो अजसो, विग्गोवणया य माणुस्से ॥ २८३ ॥

अर्थ—"वळी मनुष्यभवमां कोइ पण अपराधने लीधे कारागृहमां रुंधन, दंडादिकना मार, रज्जु शृंखला विगेरेथी बंधन, वात पित्त अने कफथी उत्पन्न थता रोगो, धननुं हरण, मरण अने व्यसन (कष्ट), तथा मननो संताप (चित्तनो उद्वेग), अपयश (अपकीर्ति), अने बीजां पण घणा प्रकारनां विगोपनो (वगोणां) ए सर्वे ज्यां (मनुष्यभवमां) दुःखनां कारणो छे, त्यां (ते मनुष्यभवमां) शुं सुख छे? कांइ ज नथी."२८३.

चिंतासंतावेहिय, दारिद्दरूआहिं दुप्पउत्ताहिं ।
लध्धूण वि माणुस्सं, मरंति केवि सुनिव्विणा ॥ २८४ ॥

अर्थ—"मनुष्यभव पामीने पण केटलाएक प्राणीओ कुटुंबना भरणपोषणादिकनी चिंताए करीने अने चौरादिकथी उत्पन्न थता संतापे करीने तथा पूर्वभवमां करेलां दुष्कर्मोए प्रेरेलां एवां दारिद्र्य (निर्धनपणुं) अने क्षयादिक रोगोए करीने सुनिर्विण्ण एटले अत्यंत निर्वेद—खेद पाम्या सता (खेद पामीने) मरण पामे छे. माटे एवी रीते चिंतादिके करीने मनुष्यभव निष्फळ जवा देवो योग्य नथी; किंतु अमूल्य मनुष्य जन्म पामीने धर्म कार्यने विषे उद्यम करवो योग्य छे ए तात्पर्यार्थ छे."२८४.

हवे देवताओने पण सुख नथी. ते वात कहे छे—

देवा वि देवलोए, दिव्वाभरणाणुरंजियसरीरा ।
जं परिवडंति तत्तो, तं दुरकं दारुणं तेसिं ॥ २८५ ॥

अर्थ—"देवलोकने विषे दिव्य अलंकारोथी अनुरंजित (अलंकृत—शोभायमान) छे शरीर जेमनां एवा देवो पण जे ते (देवलोक)थी पाछा पडे छे—चवे छे, एटले

गाथा २८२—बहूया । नीचजनाक्रोशनम् ।

गाथा २८३—चारगनिरोह । चारके कारागृहे रोधः—निरोधः । अयसो ।

गाथा २८४—रूयाइं । दारिद्र्यरुग्भिः=दारिद्र्यैरोगैश्च=दु.प्रयुक्ताभिः=दुष्कर्मप्रयुक्ताभिः रुग्भिः ।

देवलोकथी चवीने अशुचिथी भरेला एवा गर्भावासमां आवे छे, ते तेओने अति दारुण (दुःसह) दुःख छे; तेथी देवलोकमां पण सुख नथी." २८५.

तं सुरविमाणविभवं, चिंतिय चवणं च देवलोगाओ ।
अइबलियं चिय जं न वि, फुट्टइ सयसक्करं हिययं ॥२८६॥

अर्थ-" ते (प्रसिद्ध एटले अत्यंत अद्भुत) देवलोकना विभवने (ऐश्वर्यने) अने ते देवलोकथकी चवनने मनमां विचारीने (चिंतिय--चिंतायित्वा--विचारीने ए पदनो घंटालाला एटले टोकरीनी वच्चे रहेली लाला--ना न्याये करीने बन्ने ठेकाणे संबंध करवो). एटले के सुरविमाननो वैभव क्यां ? अने हवे नीच स्थानमां (मृत्यु-लोकना गर्भावासमां) उपजवुं ए क्यां ? एवो विचार करीने तेओनुं हृदय जेथी करीने सो प्रकारे (सेंकडो ककडा थइने) फाटी जतुं नथीज, तेथी करीने अति बळवान--अति कठणज तेमनुं हृदय छे, पण कोमळ नथीः अर्थात् तेमनुं हृदय शतखंड थइ जवुं जोइए. एटलुं बधुं तेओने दुःख छे. " २८६.

फरीथी देवगतिना प्रकृष्ट दुःखनुंज वर्णन करेछे---

ईसाविसायमयकोहमाणमायालोभेहिं एवमाईहिं ।
देवा वि समभिभूया, तेसिं कत्तो सुहं नाम ॥ २८७ ॥

अर्थ-" देवो पण ईर्ष्या (परस्पर मत्सर), बीजा देवोए करेला पराभवथी उत्पन्न थयेलो विषाद, मद (अहंकार), अप्रीतिरूप क्रोध, मान (परना गुणनुं असहनपणुं), माया (कापट्यप्रवृत्ति) अने लोभ (गृद्धि--आसक्ति) ए विगेरे चित्तना विकारोथी अत्यंत पराभव पामेला होयछे, तो तेओने पण सुख क्यांथी होय ? सुखनुं नाम पण क्यांथी होय ? न ज होय. " २८७.

धम्मं पि नाम नाऊण, कीस पुरिसा सहंति पुरिसाणं ।
सामित्ते साहीणे, को नाम करिज्ज दासत्तं ॥ २८८ ॥

अर्थ-" नाम ए अव्यय प्रसिद्ध अर्थमां छे. एटले के दुःखनुं निवारण करवाथी अने मोक्षसुखने आपवाथी प्रसिद्धिने पामेला एवा धर्मने जाणीने पुरुषो शामाटे बीजा पुरुषोनी आज्ञाने--हुकमने सहन करता हशे ? (हुकम उठावता हशे ?) केमके

गाथा २८६ चिंतीय । स्फुटति । सयसक्करं=शतखंड यथास्यात्तथा ।

गाथा २८७ मायलोभेहिं । कत्तो=कुतः ।

गाथा २८८--कीस=किमर्थम् । पुरिसाणं=पुरुषाज्ञा ।

मनुष्य सर्वे समान अवयवोने धारण करनारा छे. (आज्ञा करनारमां ने आज्ञा उठावनारमां अवयवनो कांइ फेरफार नथी). स्वामीपणुं पोताने स्वाधीन छतां कयो माणस दासपणुं (अंगीकार) करे ? कोइ न करे. एटले बीजानी आज्ञा उठाववानी जेम जो श्रीजिनेश्वरनी आज्ञा उठावे, तो तेओ सर्वनुं स्वामीपणुं पामे तेम छे, माटे जिनप्ररूपित धर्मनी आज्ञा मानवी जोइए. " २८८.

संसारचारए चारए व्व, आवीलियस्स बंधेहिं ।
उव्विग्गो जस्स मणो, सो किर आसन्नसिद्धिपहो ॥ २८९॥

अर्थ—" कारागृहनी जेवा आ चार गतिवाळा संसारना भ्रमणमां कर्मरूप बंधनोए करीने पीडा पामेला (बंधायला) एवा जे पुरुषनुं मन उद्वेग पामेलुं होय, ते पुरुष निश्चे आसन्नसिद्धिपथ (जेने सिद्धिमार्ग नजीकमां रहेलो छे तेवो) जाणवो. आ परिमित संसारीनुं (जेना संसारनुं प्रमाण थयुं छे तेनुं) लक्षण छे. " २८९.

आसन्नकालभवसिद्धियस्स, जीवस्स लक्खणं इणमो ।
विसयसुहेसु न रज्जइ, सव्वत्थामेसु उज्जमइ ॥ २९० ॥

अर्थ—" जेनी अल्पकाळमांज भवथकी—संसारथकी सिद्धि (मुक्ति) थवानी छे एवा जीवनुं ए लक्षण छे के—तेवो जीव पांच इंद्रियोना शब्दादिक विषयोमां रंजित—आसक्त थतो नथी, अने सव्व के० सर्वत्र (तप संयमादिकना अनुष्ठानमां) पोतानी सर्व शक्तिवडे उद्यम करे छे. " २९०. अहीं गाथामां प्राकृत भाषा होवाथी तृतीयाना अर्थमां सप्तमी विभक्ति छे.

हुज्ज व न व देहबलं, धिइमइसत्तेण जइ न उज्जमसि ।
अत्थिहिसि चिरं कालं, बलं च कालं च सोअंतो ॥२९१॥

अर्थ—" हे शिष्य ! देहनुं बळ—शरीरनुं सामर्थ्य होय के न होय, तोपण जो तुं धृति (मननी धीरज), मति (पोतानी बुद्धि) अने सत्त्व—साहसवडे करीने (धर्ममां) उद्यम करीश नहीं, तो पाछळथी बळने (एटले शरीरनुं सामर्थ्य हाल नथी एम) तथा कालने (एटले आज धर्म करवानो काळ नथी एम) शोच करतो (विचार करतो) चिरकाळ सुधी संसारमां रहीश—भ्रमण करीश—तारे भ्रमण करवुं

गाथा २८९—चारयव्व । आविलीयस्स । चारके इव=कारागारे इव । आवीलियस्स=आपीडितस्य । किर=किल । गाथा २९०—इणमो=इदम् । सव्वत्थामेसु=सर्वस्थाम्ना प्राकृतत्वात्तृतीयार्थे सप्तमी । गाथा २९१—धि[illegible]यसत्तेण । अत्थिहिसि=आस्थास्यसि । सोयंतो ।

पडशेः अर्थात् धर्म नहीं करवाथी तुं पाछळथी घणा काळ सुधी शोक करीश के हवे शुं करुं ! शरीरमां सामर्थ्य नथी. एम तारे शोक करवानो वखत आवशे. " २९१.

लद्धिल्लियं च बोहिं, अकरिंतो नागयं च पत्थिंतो ।
अन्नंदाइं बोहिं, लब्भिसि कयरेण मुल्लेणं ॥ २९२ ॥

अर्थ--" हे मूर्ख ! आ भवे प्राप्त करेली बोधिने (जैन धर्मनी प्राप्तिने) नहीं करतो (नहीं आचरतो) अने अनागत एटले आवता भव संबंधी धर्मनी प्राप्तिनी प्रार्थना करतो (इच्छतो) एवो तुं बीजा भवमां ते बोधिने कया मूल्ये करीने पामीश ? अर्थात् आ भवमां तुं धर्मने पाम्या छतां तेनुं आराधन करतो नथी, तो आवता भवमां तुं शी रीते तेने पामीश ? " २९३.

फरीथी धर्मना उद्यमरहित पुरुषोने उपदेश आपे छे––

संघयण कालबलदूसमारुयालंबणाइं घित्तूणं ।
सव्वं चिय नियमधुरं, निरुज्जमाओ पमुच्चंति ॥ २९३ ॥

अर्थ–"निरुद्यमी (आलस्यवाळा) मनुष्यो संहनन (आजे प्रथमना जेवुं बळवान संघयण नथी), काळ (हाल दुष्काळ वर्ते छे), बळ (प्रथमना जेवुं आज बळ नथी), दुषमाकाळ (हाल पांचमो आरो वर्ते छे), अने अरुज (आज नीरोगपणुं नथी माटे शी रीते धर्म थइ शके ?) एवी रीतना आलंबनोने ग्रहण करीने (जवाब दइने) प्राप्त थयेली चारित्र, क्रिया, तप विगेरे सर्व नियमनी धूंसरी (भार)ने 'चिय' के० नक्की मूकी दे छे. पण तेवुं आलंबन लेवुं योग्य नथी. केमके समय प्रमाणे आळस तजीने यथाशक्ति धर्ममां उद्यम करवो जोइए." २९३.

कालस्स य परिहाणी, संयमजोगाइं नत्थि खित्ताइं ।
जयणाई वट्टियव्वं, न हु जयणा भंजए अंगं ॥ २९४ ॥

अर्थ–"वळी 'दिवसे दिवसे काळनी हानि थती जाय छे, अने संयमने योग्य एवां क्षेत्रो पण हालमां रह्यां नथी; तेथी शुं करवुं ?" ए रीतना शिष्यना प्रश्नपर गुरु उत्तर आपे छे के–यतनावडे एटले यतना पूर्वक वर्तवुं. केमके 'हु' के० निश्चे यतना राखवाथी चारित्ररूपी अंग भांगतुं नथी–चारित्ररूपी अंगनो भंग थतो नथी-विनाश थतो नथी. तेथी करीने यतना पूर्वक यथाशक्ति चारित्रने विषे उद्यम करवो, ए तात्पर्यार्थ छे." २९४.

गाथा २९२–लद्धिल्लिय=लब्धाम् । लब्भिसि । मोल्लेण–मुल्लेण ।
गाथा २९३–रूयालंबणाइं ।

समिईकसायगारवइंदियमयबंभचेरगुत्तीसु ।
सज्झायविणयतवसत्तिओ अ, जयणा सुविहियाणं ॥ २९५ ॥

अर्थ-"सारुं (शोभन) छे विहित (आचरण) जेमनुं एवा सुविहित साधुओने(साधुओए) इर्यादिक पांच समितिनुं पालन करवुं, क्रोधादिक कषायनो निग्रह करवो, ऋद्धि, रस अने साता ए त्रण गारवनुं निवारण करवुं, इन्द्रियोने वश करवी, जाति विगेरे आठ प्रकारना मदनो त्याग करवो, नव प्रकारनी ब्रह्मचर्यगुप्तिनुं पालन करवुं तथा वाचनादिक पांच प्रकारनो स्वाध्याय करवो, दश प्रकारनो विनय करवो, बाह्य अने अभ्यंतर भेदे करीने बार प्रकारनुं तप करवुं, तथा पोतानी शक्तिनुं गोपन करवुं नहीं. इत्यादिक यतना करवी जोइए." २९५.

हवे यतनानुंज निरूपण करे छे.

जुगमित्तंतरदिट्ठी, पयं पयं चक्खुणा विसोहिंतो ।
अव्वक्खित्ताउत्तो, इरियासमिओ मुणी होई ॥ २९६ ॥

अर्थ-" युगमात्र (चार हाथ प्रमाण) क्षेत्रनी अंदर दृष्टि राखनार, पगले पगले चक्षुवडे पृथ्वीनुं विशोधन करतो एटले सारी रीते अवलोकन करतो, तथा शब्दादिक विषयोमां व्याक्षेपरहित (स्थिर मनवाळो) होवाथी धर्मध्यानमांज रहेलो एवो मुनि (त्रिकाळने जाणनार) ईर्या (गमन) ने विषे समित एटले सारी रीते उपयोगवाळो (ईर्यासमितिनुं पालन करनार) कहेवाय छे." २९६.

कज्जे भासइ भासं, अणवज्जमकारणे न भासइ य ।
विगहविसुत्तियपरिवज्जिओ अ जइ भासणासमिओ ॥२९७॥

अर्थ-" ज्ञानादिक कार्य सते (उपदेशादि-पठनपाठनादि निमित्ते) अनवद्य (निर्दोष) भाषा (वचन) बोले, अने कारण विना बोलेज नहीं, तथा चार विकथा अने विरुद्ध वचन बोलवा (चिंतववा)ए करीने वर्जित (रहित) एवो यति भाषासमित एटले बोलवामां सावधान कहेवाय छे." २९७.

बायालमेसणाओ, भोयणदोसे य पंच सोहेइ ।
सो एसणाई समिओ, आजीवी अन्नहा होई ॥ २९८ ॥

गाथा २९५-इंदिअ । गाथा २९६-विसोहतो ।
गाथा २९७-भासई । विसोत्तिय । विगह । विकथा च विरुद्धवचनजल्पनं च ताभ्यां परिवर्जितः ।
गाथा २९८-भोयणदोसेइ । भोयणादोसेय । एसणासमिओ । एसणाइसमिओ ।

अर्थ–"जे बेंताळीश प्रकारनी एषणा (आहारना दोष)ने तथा संयोजना विगेरे पांच प्रकारना भोजनना दोषोने शुद्ध करे छे, एटले तेवा दोषरहित आहार करे छे ते (साधु) एषणा (आहार)ने विषे समित (उपयोगवान) कहेवाय छे, (एषणासमित कहेवाय छे). अन्यथा एटले अशुद्ध अने दोषथी दुष्ट थयेलो आहार ग्रहण करे, तो ते आजीवी–आजीविकाकारी कहेवाय छे. एटले साधुनो वेष धारण करीने तेनावडे आजीविका (उदरनिर्वाह) करनार कहेवाय छे." २९८.

पुव्विं चक्खू परिक्खिय, पमज्जिउं जो ठवेइ गिह्णइ वा ।
आयाणभंडनिक्खेवणाइ, समिओ मुणी होई ॥ २९९ ॥

अर्थ–"जे (मुनि) प्रथम (वस्तु ग्रहण कर्या पहेलां) चक्षुवडे परीक्षा करीने (सारी रीते जोइने) पछी रजोहरणादिकवडे प्रमार्जना करीने (पुंजीने) कोइ पण वस्तु भूमिपर स्थापन करे (मूके) छे, अथवा भूमिपरथी ग्रहण करे छे, ते मुनि आदान (भूमिपरथी वस्तुनुं ग्रहण) अने भांडना (उपकरणना) निक्षेप (पृथ्वीपर स्थापन) ने विषे समित (सावधान) होय छे. अर्थात् यतना (जयणा) पूर्वक कोइ पण वस्तुने ग्रहण करतो अथवा मूकतो साधु आदान निक्षेपणासमित कहेवाय छे." २९९.

उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाण ए य पाणविही ।
सुविवेइए पएसे, निसिरंतो होई तस्समिओ ॥ ३०० ॥

अर्थ–"उच्चार (वडीनीत), प्रस्रवण (लघुनीत), खेल (मुखनो मळ--कफ विगेरे), जल्ल (शरीरनो मेल); अने सिंघाण (नासिकानो मेल) तथा च शब्दे बीजा पण परिष्ठापन करवा योग्य (परठववा योग्य) अशुद्ध भक्तपान विगेरे--ते सर्वने सुविविक्त एटले त्रसस्थावर जंतुरहित एवा सारी रीते शोधेला प्रदेशने विषे परिष्ठापन करतो (परठवतो) मुनि ते समितिवाळो एटले पारिष्ठापनिका समितिवाळो होय छे–कहेवाय छे." ३००

कोहो माणो माया, लोभो हासो रई य अरई य ।
सोगो भयं दुगंछा, पच्चक्खकली इमे सव्वे ॥ ३०१ ॥

अर्थ–"क्रोध (अप्रीति), मान (बीजाना गुणनुं असहन), माया (कपट), लोभ (गृध्रता), हास (हास्य), रति (प्रीति), अरति (अप्रीति), शोक, भय अने

गाथा २९९–चक्खु । गिह्णइ । निक्खेवणाए ।
गाथा ३००–सुविवेइए=सुविवेचिते–सम्यग् शोधिते ।

जुगुप्साः ए सर्वे साक्षात कलि--क्लेशरूप छे. ए दशेने–क्लेशरूप जाणवा." ३०१.

प्रथम क्रोधना भेद (पर्यायो) कहे छे.

> कोहो कलहो खारो, अवरुप्परमच्छरो अणुसओ अ ।
> चंडत्तणमणुवसमो, तामसभावो अ संतावो ॥ ३०२ ॥
> निच्छोडण निब्भंछण, निराणुवत्तित्तणं असंवासो ।
> कयनासो अ असम्मं, बंधइ घणचिक्कणं कम्मं॥३०३॥ युग्मम्॥

अर्थ–"क्रोध (अप्रीति मात्र), कलह (वचननी मारामारी), खार (बीजापर दुष्ट आशय राखवो), परस्पर मत्सर (मांहोमांहे मत्सर–अदेखाइ धारण करवी), अनुशय (पश्चात्ताप एटले क्रोध करवाथी पाछळथी पश्चात्ताप थाय छे, माटे अनुशय पण क्रोधनुं नाम कहेवाय), चंडत्व (भृकुटि चडाववी–वांकी करवी), अनुपशम (उपशमनो अभाव–शांतपणुं न राखवुं ते), तामस भाव (तमोगुण राखवो ते), अने सन्ताप (ए सर्वे क्रोधना पर्यायो–बीजां नाम छे). ३०२. वळी निश्छोटन (क्रोधथी आत्मानुं मलिन थवुं), निर्भर्त्सन (क्रोधथी बीजानी तर्जना करवी), निरानुवर्तित्व (क्रोधथी बीजानी मरजी प्रमाणे न चालवुं– न वर्तवुं), असंवास (परिवार साथे न रहेवुं–क्रोधथी माणस एकलो विचरे छे, माटे असंवास पण क्रोधनो पर्याय कहेवाय), कृतनाश (कोइए करेला उपकारनो नाश करवो) तथा अशाम्य (समपणानो अभाव), ए सर्वे क्रोधना फळरूप होवाथी क्रोधना पर्यायो छे. तेमने विषे वर्ततो जीव गाढ चिकणां (अत्यंत कटुरसवाळां निकाचित) कर्म बांधे छे. माटे क्रोधनो त्याग करवो, ए अहीं तात्पर्यार्थ छे." ३०३.

हवे मानना पर्यायो कहे छे.—

> माणो मयं हंकारो, परपरिवाओ अ अत्तउक्करिसो।
> परपरिभवो विय तहा, परस्स निंदा असूआ यं ॥ ३०४ ॥
> हीला निरोवयारित्तणं, निरवणामया अविणओ अ ।
> परगुणपच्छायणया, जीवं पाडंति संसारे ॥ ३०५ ॥ युग्मम् ॥

अर्थ–"मान एटले सामान्य रीते अभिमान, मद (जाति विगेरेनो उत्कर्ष), अहंकार (अहंता–हुंकार), परनो (अन्यनो) परिवाद (अवर्णवाद—ते पण माननुं नाम छे), (अ–च) अने आत्मोत्कर्ष (पोतानो उत्कर्ष–आपवडाई, (अ- पिचनो अर्थ समुच्चय–समुदाय रूप छे); तथा परपरिभव (बीजानो पराभव करवो),

---

गाथा ३०४–असूया । गाथा ३०५–पच्छावणया । पाडति ।

परनिंदा (बीजानी निंदा करवी), असूया (बीजाना गुणोने विषे दोषो प्रकट करवा–दोषनो आरोप करवो), ३०४. हीला (बीजानी हीन जाति विगेरे प्रकट करीने तेनी हीलना करवी), निरुपकारित्व (कोइनो पण उपकार करवो नहीं ते) निरवनामता (स्तब्ध–अकडपणुं–अनम्रता), अविनय (गुरुने देखी उभा न थवुं, आसन विगेरे न आपवुं ते), अने परगुणप्रच्छादना (बीजाना ज्ञानादिक गुणोनुं आच्छादन करवुं–ढांकी देवा ते). आ सर्वे मानरूप अथवा मानना फळरूप होवाथी मानना पर्यायो छे. तेमनुं सेवन करवाथी तेओ प्राणीओने चतुर्गति रूप संसारमां पाडे छे–नांखे छे. माटे तेओ शत्रुनुं काम करनार होवाथी (शत्रुरूप होवाथी) तजवा योग्य छे." ३०५.

हवे मायाना पर्यायो कहे छे–

माया कुडंगि पच्छन्नपावया, कुडकवडवंचणया ।
सव्वत्थअसब्भावो, परनिक्खेवावहारो अ ॥ ३०६ ॥
छल छोम संवईयरो, गूढायारत्तणं मई कुटिला ।
वीसंभघायणं पिय, भवकोडिसएसु वि नडंति ॥३०७॥ युग्मम्

अर्थ–" माया–सामान्य माया, कुडंगि ते महागहन (गाढ–निबिड माया), प्रच्छन्नपापा ते छानी रीते पापकर्मनुं करवुं, कूड (छद्म), कपट, वंचनता (मायावडे बीजाने छेतरवुं ते), सर्वे पदार्थोनो असद्भाव (असत्प्ररुपणा) एटले होय बीजुं अने कहेवुं बीजुं, परना निक्षेप (न्यास–थापण)नो अपहार (ओळववुं) ते परन्यासापहार, च के० अने मायावडे परने छळे माटे छळ पण मायानो पर्याय छे, छोम ते छद्म, संव्यतिकर (पोतानुं कार्य साधवा माटे मायावडे गांडुं बनवुं), गूढाचारित्व (मायावडे गुप्त विचरवुं), कुटिल (वक्र) मति, अने विश्वासघातः ए सर्वे मायाना पर्यायो छे. ते माया सो कोटी संसारने (भवने) विषे पण नडे छे–दुःखदायी थाय छे. अर्थात् मायावडे बांधेलां कर्मो क्रोडोगमे भव थइ गया छतां पण भोगव्यां विना क्षय पामतां नथी. माटे ते तजवी–" ३०६–३०७.

हवे लोभना भेदो कहे छे—

लोभो अइसंचयसीलया य, किलिट्ठत्तणं अइममत्तं ।
कप्पन्नमपरिभोगो, नट्ठविनट्ठे य आगल्लं ॥ ३०८ ॥
मुच्छा अइबहुधणलोभया य, तब्भावभावणाय य सया ।
बोलंति महाघोरे, जरमरणमहसमुद्दंमि ॥ ३०९ ॥ युग्मम् ॥

गाथा ३०७–सवइरे । गुढायारित्तणं । कुडिला गाथा ३०८–किलइत्तणं ।

अर्थ–" लोभ–सामान्य लोभ, अतिसंचयशीलता (लोभवडे एक जातनी अथवा घणी जातनी वस्तुओनो अति संचय करवाना स्वभावपणुं), क्लिष्टत्व (लोभवडे मननी क्लिष्टता–कलुषता), अति ममत्व (वस्तुपर अत्यंत ममता–मारापणुं), कल्प्यान्ननो अपरिभोग (भोगववा योग्य अन्नादिक वस्तुनो अपरिभोग एटले ते न भोगववुं अने कृपणताने लीधे खराब अन्नने पण नांखी न देतां खावुं ते), अश्वादिक वस्तुओ नाश पामे छते अने धान्यादिक वस्तुओनो विनाश थये छते आगल्ल एटले रोगादिक उत्पन्न थवा, ते नष्ट विनष्टाकल्प्य नामनो लोभप्रकार कहेवाय छे. ३०८. तथा मूर्छा (मूढता–धन उपर तीव्रराग), अतिबहुधनलोभता (घणा धन उपर अत्यंत लोभपणुं) तथा सदा--सर्वदा तद्भावभावना (लोभपणाए करीने मनमां तेज भावनुं वारंवार चिंतवन–करवुं)–ए सर्वे लोभना सामान्य अने विशेष भेदो छे. तेओ संसारी (प्राणी)ने महाघोर (अति भयंकर) जरामरणना प्रवाहरूप महासमुद्रमां बोळे छे–डुबाडे छे–माटे तेवा दारुण लोभनो त्याग करवा योग्य छे." ३०९.

एएसु जो न वट्टिज्जा, तेण अप्पा जहट्ठिओ नाओ ।
मणुआण माणणिज्जो, देवाण वि देवयं हुज्जा ॥ ३१० ॥

अर्थ–"ए क्रोधादिक कषायोने विषे जे (तत्त्वज्ञ) पुरुष नथी वर्ततो–कषायोने नथी करतो, ते पुरुषे पोताना आत्माने यथास्थित (सत्य–कर्मथी भिन्न–शुद्ध स्वरूपवाळो) जाणेलो छे एम समजवुं, अने ते पुरुष मनुष्योने माननीय तथा इंद्रादिक देवोना पण दैवत रूप (इंद्रोने पण पूज्य) थाय छे." ३१०

हवे ते कषायोने सर्पादिकनी उपमा आपे छे—

जो भासुरं भुअंगं, पयंडदाढाविसं विघट्टेइ ।
तत्तो चिय तस्संतो, रोसभुअंगोवमाणमिणं ॥ ३११ ॥

अर्थ–" जे पुरुष भासुर (रौद्र–भयंकर) अने जेनी दाढमां प्रचंड विष रहेलुं छे एवा भुजंग (सर्प)नो (लाकडी विगेरेथी) स्पर्श करेछे, तो निश्चे ते सर्पथकीज ते (पुरुष)नो अंत (मरण) थाय छे. आ रौद्र रोष (क्रोध) रूपी भुजंगनुं अहीं उपमान जाणवुंः एटले के रोष भुजंगनो पण स्पर्श कर्यो होय तो ते संयम (चारित्र) रूपी जीवितनो नाश करे छे. माटे रौद्र सर्पनी जेम तेनो त्याग करवो." ३११.

जो आगलेइ मत्तं, कयंतकालोवमं वणगइंदं ।
सो तेण चिय चुज्जइ, माणगइंदेण इत्थुवमा ॥ ३१२ ॥

गाथा ३११–भुयंगं । भासुरं=रौद्रं । रोसभुयगो ।

गाथा ३१२–आगलेइ=आकर्षयति–गृह्णाति । वणगयंदं । छुज्जइ । चुनइ= चूर्ण्यते–चूर्णीक्रियते । माणगयंदेण । इत्थमुपमा ।

सोगं संतावं अधिइं च, मन्नुं च वेमणुस्सं च ।
कारुन्न रुन्नभावं, न साहूधम्मंमि इच्छंति ॥ ३१९ ॥

अर्थ-" पोताना संबंधीना मरणथी शोक करवो, संताप (अत्यंत उचाट करवो), अधृति (अरे ! हुं शी रीते आवा गामने अथवा आवा उपाश्रयने छोडी शकीश ? एम विचारवुं), मन्यु (इंद्रियोनो रोध अथवा विकलता), वैमनस्य (चित्तनी विकळता एटले के शोकवडे आत्मघातनो विचार करवो), कारुण्य (थोडुं रुदन करवुं), तथा रुन्नभाव ते मोटेथी रुदन करवुं. आ सर्वे शोकना भेदोमांथी एक पण प्रकारने साधुओ इच्छता नथी-करता नथी. " ३१९.

हवे भयद्वार कहेछे—

भय संखोह विसाओ, मग्गविभेओ विभीसियाओ अ ।
परमग्गदंसणाणि य, दढधम्माणं कओ हुंति ॥ ३२० ॥

अर्थ-" कातरपणा (बीकणपणा)ए करीने अकस्मात भय पामवो, संक्षोभ एटले चौरादिकने जोइने नासी जवुं, विषाद ते दीनता, मार्गविभेद ते मार्गमां सिंहादिकने जोइने त्रास पामवो, विभीषिका ते वेताळ—भूत विगेरेथी त्रास पामवो (आ बे प्रकार जिनकल्पीने माटेज जाणवा), तथा भयथी अथवा स्वार्थथी परतीर्थिकना मार्गनी प्ररूपणा करवी अथवा बीजाओने भये करी मार्ग देखाडवो. आ सर्वे भयना प्रकारो दृढ धर्मवाळा साधुओने क्यांथी होय ? " नज होय. ३२०.

हवे जुगुप्सा द्वार कहे छे-

कुच्छा चिलीणमलसंकडेसु, उव्वेवओ अणिट्ठेसु ।
चक्खुनियत्तणमसुभेसु, नत्थि दव्वेसु दंताणं ॥ ३२१ ॥

अर्थ-" अपवित्र मले करीने भरेला एवा (मृत कलेवरो)ने विषे कुत्सा (जुगुप्सा), अनिष्ट एवा मलिन देह अने वस्त्रादिकने विषे (तेनी उपर) उद्वेग तथा अशुभ एटले जेनुं कीडाओए भक्षण कर्युं होय एवा कूतरा विगेरे पदार्थोने जोइने नेत्रोने (दृष्टिने) पाछां वाळवां. ए सर्वे जुगुप्साना प्रकार दांत (साधुओ)ने होता नथी. " ३२१.

गाथा ३१९-अधियं । साहुधम्मंमि । गाथा ३२०-विभीसीयाओअ । परमग्गदरिसणाणि ।
गाथा ३२१-मलसंकिलेसु । चिलीण शब्देन अपवित्र । दंताणं=दांताना-मुनिनां ।

एयंपि नाम नाऊण, मुज्झियव्वंति नूण जीवस्स ।
फेडेऊण न तीरइ, अइबलिओ कम्मसंघाओ ॥ ३२२ ॥

अर्थ–" नाम (प्रसिद्ध) एटले जिनभाषित एवा ते पूर्वे कहेला कषायादिकने जाणीने पण निश्चे शुं जीवने मूढ थवुं योग्य छे ? अर्थात् योग्य नथी. (त्यारे शामाटे जीव मूढ थतो हशे ? तेनो जवाब आपे छे के–) तोपण जीव ते कषायोने दूर करवा शक्तिमान थतो नथी. केमके कर्मसंघात–आठ कर्मनो समुदाय अतिबळवान छे; जेथी ते कर्मने पराधीन थयेलो आ जीव अकार्यनी सन्मुख थाय छे, अकार्य करवा तत्पर थाय छे." ३२२.

जह जह बहुस्सुओ सम्मओ अ, सीसगणसंपरिवुडो अ ।
अविणिच्छिओ अ समए, तह तह सिद्धंतपडिणीओ ॥३२३॥

अर्थ–" जेम जेम बहुश्रुत (घणुं श्रुत जेणे सांभळ्युं छे एवो अथवा जेणे घणा श्रुतनो अभ्यास कर्यो छे एवो) थयो, तथा घणा (अज्ञानी) लोकोने संमत (इष्ट) थयो; वळी शिष्यना समूहवडे (घणा परिवारवडे) परिवृत थयो, तोपण जो ते समय (सिद्धान्त)मां अनिश्चित (रहस्यना ज्ञानरहित) एटले अनुभवरहित होय, तो तेम तेम तेने सिद्धान्तनो प्रत्यनीक (शत्रु) जाणवो; अर्थात् तत्त्वने जाणनार थोडा श्रुतवाळो होय तोपण ते मोक्षमार्गनो आराधक छे; पण बहुश्रुत छतां तत्त्वजाण न होय तो ते मोक्षमार्गनो आराधक नथी पण विराधक छे, एम जाणवुं." ३२३.

हवे ऋद्धिगारव विषे कहे छे–

पवराइं वत्थपायासणोवगरणाइं एस विभवो मे ।
अविय महाजणनेया, अहं ति अहं इड्ढिगारविओ ॥ ३२४ ॥

अर्थ–" आ प्रवर (प्रधान) एवां वस्त्रो, पात्रो, आसनो अने उपकरणो विगेरे मारो विभव (वैभव) छे. (अपिच–फरीना अथवा समुच्चयना अर्थमां छे). वळी हुं महाजन एटले प्रधानजनोने विषे नेता (नायक) छुं. महाजननो आगेवान छुं एम विचारनार ऋद्धिगारववाळो कहेवाय छे, अथवा अप्राप्त (नहीं प्राप्त थयेली) ऋद्धिनी वांछा करनार पण ऋद्धिगारववाळो कहेवाय छे." ३२४.

हवे रसगारव कहे छे–

गाथा ३२२–मुज्झियव्वंपि । गाथा ३२४–विहवो । आविअ–अपिच । इह । इड्ढगारविओ ।

अरसं विरसं लूहं, जहोववन्नं च निच्छिए भुत्तुं ।
निद्धाणि पेसलाणि य, मग्गइ रसगारवे गिद्धो ॥ ३२५ ॥

अर्थ-" रसगारवने विषे गृद्ध (लोलुप) थयेलो मनुष्य (साधु) भिक्षाने माटे फरतां जेवो प्राप्त थयो तेवो अरस (रस रहित), विरस (जीर्ण थयेलो) अने वाल विगेरे रुक्ष (लुखो) आहार खावाने इच्छतो नथी; अने स्निग्ध (स्नेहवाळा) एटले घणा घीवाळा तथा पेशल (पुष्टि करनारा) आहारने मागे छे-इच्छे छे. तेवा साधुने रसगारव एटले जिह्वाना रसना गारवमां गृद्ध जाणवो. आ रसगारवनुं स्वरूप जाणवुं. " ३२५.

हवे सातागारव कहे छे—

सुस्सूसई सरीरं, सयणासणवाहणापसंगपरो ।
सायागारवगुरुओ, दुक्खस्स न देई अप्पाणं ॥ ३२६ ॥

अर्थ-" पोताना देहनी शुश्रूषा (स्नानादिकवडे शोभा) करनार तथा कोमळ शयन (शय्या) अने आसन (पादपीठ) विगेरेनी कारण विना वाहना (सेवा)नी-भोगववानी आसक्तिमां तत्पर एवो सातागारववडे गुरु (भारे) थयेलो मनुष्य (साधु) पोतानो आत्मा दुःखने आपतो नथी, एटले पोताना आत्माने दुःख देतो नथी. " ते सातागारव जाणवो. ३२६.

हवे इंद्रियद्वार कहे छे-

तवकुलछायाभंसो, पंडिच्चप्फंसणा अणिट्ठपहो ।
वसणाणि रणमुहाणि य, इंदियवसगा अणुहवंति ॥ ३२७ ॥

अर्थ-" बार प्रकारनुं तप, कुळ ते पितृपक्ष अने छाया ते पोताना शरीरनी शोभा ए त्रणेनो भ्रंश (नाश), पांडित्य (चातुर्य)नी फंसणा ते मलीनता, अनिष्ट पथ (महा संसारमार्ग)नी वृद्धि, अनेक प्रकारनी आपत्ति, मरण विगेरे व्यसनो (कष्टो) तथा रणमुख एटले संग्रामना मोखरामां पडवुं. एटला पदार्थोने इंद्रियने वश थयेला पुरुषो अनुभवे छे. " ३२७.

सद्देसु न रंजिज्जा, रूवं दट्ठुं पुणो न इक्खिज्जा ।
गंधे रसे अ फासे, अमुच्छिओ उज्जमिज्ज मुणी ॥ ३२८ ॥

गाथा ३२५-निच्छए । भुत्तं । लूहं=रूक्ष-रुक्षं ।

गाथा ३२६-सुस्सुसइ । दुक्खनदेइ ।

गाथा ३२७-पंडिच्चफंसणा । पांडित्यमलीनता । वसग्गा ।

गाथा ३२८-रज्जिज्जा । इखिज्जा । इक्खिज्जा=ईक्षेत ।

अर्थ—" गंधने विषे (कर्पूरादिक सुगंधी द्रव्यने विषे), रसने विषे (शर्करा विगेरे मिष्ट पदार्थोना आस्वादने विषे) अने सुकोमळ शय्यादिकना स्पर्शने विषे मूर्छा नहीं पामेला मुनिए वीणाना तथा स्त्रीना संगीतना शब्दोमां रंजित (रक्त) थवुं नहीं; तथा रूप एटले स्त्री विगेरेना अवयवनी सुंदरता जोइने रागबुद्धिथी वारंवार तेनी सन्मुख जोवुं नहीं, परंतु (धर्मने विषे) उद्यम करवो. " ३२८.

निहंयाणि हयाणि यं, इंदिआणि घाएंह णं पयत्तेणं ।
अहियत्थे निहंयाइं, हियंकज्जे पूयणिज्जाइं ॥ ३२९ ॥

अर्थ—" साधुओने इंद्रियोना विषयभूत पदार्थोमां रागद्वेष करवानो अभाव होवाथी तेमनां इंद्रियो निहत (हणायेलां) छे, अने ते इंद्रियोना आकार कायम होवाथी अने पोतपोताना विषयोने ग्रहण करती होवाथी अहत के० नहीं हणायेलां छे. एटले कांइक हणायेलां अने कांइक नहीं हणायेलां होय छे. एवां इंद्रियोनो (णं—वाक्यनी शोभा माटे छे) हे साधुओ ! तमे घात करो एटले प्रयत्नवडे वश करो. ते इंद्रियो पोतपोताना विषयमां रागद्वेष करवा रूप अहित अर्थमां हणवा योग्य छे, अने सिद्धांतादिक हितकार्यमां पूजवा योग्य एटले रक्षण करवा योग्य छे." ३२९.

हवे मदद्वार कहे छे.—

जाइकुलरूवबलसुअतवलाभसरिय अट्ठमयमत्तो ।
एयाइं चिंय बंधइ, असुहाइं बहुं च संसारे ॥ ३३० ॥

अर्थ—" जे (मनुष्य)जाति ते ब्राह्मणादिक, कुळ ते पोतानो वंश, रूप ते शरीरनुं सौभाग्य, बळ ते शरीरनुं सामर्थ्य, श्रुत ते शास्त्रनुं ज्ञान, तप ते छठ्ठ अट्ठमादिक, लाभ ते द्रव्यादिकनी प्राप्ति अने श्री ते ऐश्वर्य—प्रभुता. ए आठ प्रकारना मद (अहंकार)-थी मत्त थयेलो होय—तेनो गर्व करतो होय ते निश्चे आ संसारमां घणीवार ए जाति विगेरेज अशुभ बांधेछे. एटले के आ आठमांथी जे जे वस्तुनो गर्व करे ते ते वस्तुज आवता भवमां हीनतर पामे छे." ३३०.

जाईए उत्तमाए, कुले पहाणंमि रूवमिस्सरियं ।
बलविज्जायतवेण य, लाभमएणं च जो खिंसे ॥ ३३१ ॥

गाथा ३२९—निहियाणि हियाणिय । पयत्तेण । घाएह=घातयत—वशीकुरुत । अहिअत्थे । निहियाइ
गाथा ३३०—सुय । एया चिय बंधई ।
गाथा ३३१—जाईई । विज्जाइ । खिसेत=निंदति ।

संसारमणवयग्गं, नीयट्ठाणाइं पावमाणो य ।
भमेई अणंतं कालं, तम्हाओ मेए विवज्जिज्जा ॥३३२॥ युग्मम्॥

अर्थ—"जे माणस पोतानी उत्तम जातिवडे (मारी जाति उंची छे अने तारी जाति नीच छे एवी रीते), प्रधानकुळमां रह्यो छतो एटले प्रधान (उंच) कुळवडे, रूपवडे, ऐश्वर्यवडे, बळ (सामर्थ्य)वडे, विद्या (ज्ञान)वडे, तपवडे अने लाभना मदे करीने बीजानी खिंसा के० निंदा करे छे. (३३१). ते माणस आ चार गतिरूप अनंत संसारमां नीच स्थानादिक (हीन जात्यादिक)ने पामीने अनंत काळ सुधी भ्रमण करे छे, एटले अनंत संसारनी वृद्धि करे छे. माटे (डाह्या पुरुषे) ते मदो (अहंकारो)-ने वर्जवा—तेनो त्याग करवो." ३३२.

सुट्ठु वि जेई जयंतो, जाईमयाईसु मुज्झई जोउ ।
सो मेअज्जरिसी जहा, हरिएसबलुव्व परिहाई ॥ ३३३ ॥

अर्थ—" जे कोइ यति (साधु) सुष्ठु के० गाढ—अत्यंत यतना करतो छतो पण जाति मदादिकने विषे मोह पामे छे (गर्व करे छे), ते मेतार्य ऋषि (साधु)नी जेम अने हरिकेशीबल साधुनी जेम जात्यादिवडे हीन थाय छे—हीन जातिवाळो थाय छे. आ बन्ने मुनिनी कथा पूर्वे कहेली छे." ३३३.

हवे नव प्रकारनी ब्रह्मचर्यनी गुप्तिनुं द्वार कहे छे—

इत्थिपसुसंकिलिट्ठं, वसहिं इत्थीकहं च वज्जंतो ।
इत्थिजणसंनिसिज्जं, निरूवणं अंगुवंगाणं ॥ ३३४ ॥
पुव्वरयाणुस्सरणं, इत्थीजणविरहरूवविलवं च ।
अइबहुअं अइबहुसो, विवज्जंतो अ आहारं ॥ ३३५ ॥
वज्जंतो अ विभूसं, जइज्ज इह बंभचेरगुत्तीसु।
साहू तिगुत्तिगुत्तो, निहुओ दंतो पसंतो अ ॥३३६॥त्रिभिर्विशेषकम् ॥

अर्थ—" त्रण (मन, वचन, कायानी) गुप्तिए करीने गुप्त एटले मन, वचन

गाथा ३३२—अणवदग्गे=अनंते । तम्हाउ । गाथा ३३३—जायमयाईसु । मुज्झई=मुह्यति । मज्जई=मज्जति । जोउ=यस्तु । मेअज्जरिसि । हरिएसुबलुव्व परिहाइ । गाथा—३३४ संकिलट्ठं । स्त्रीपशुसहितं। गाथा ३३५—विवज्जंतो । रूवविहवं । विलवं=विलापवचनं । रतं कामक्रीडा। अयवहुयं । अयवहुसो । विवज्जयंतो यं । गाथा ३३६— निहुओ=निभृत ।

अने कायाना योगनो निरोध करनार, निभृत (शांतताथी व्यापाररहित), दांत (इंद्रियोनुं दमन करवामां तत्पर) तथा प्रशांत (कषायना बळने जीतनार) एवा साधुए स्त्री (मानुषी अथवा देवी) अने पशु (तिर्यंचो)ए करीने सहित एवी वसति (उपाश्रय)ने वर्जवी (१), स्त्रीओना वेष अने रूप विगेरेनी कथा वर्जवी (२), स्त्रीजननुं आसन (जे स्थाने ते बेठी होय ते स्थान) वर्जवुं (स्त्रीना उठ्या पछी पण अमुक वखत सुधी ते स्थाने बेसवुं नहीं) (३), स्त्रीओना अंगनुं निरूपण ते निरिक्षण न करवुं (स्त्रीओनां चक्षु, मुख, हृदयादिक अंगोपांगने रागबुद्धिथी जोवां नहीं) (४), ३३४. पर्वरतानुस्मरण के० चारित्र ग्रहण कर्या पहेलां गृहस्थाश्रममां करेली कामक्रीडानुं स्मरण वर्जवुं (५), स्त्रीजनना विरहरूप विलापना वचननुं श्रवण रागनो हेतु होवाथी वर्जवुं (६), अति बहु (कंठ सुधी भरीने) आहार वर्जवो (७), अतिबहु प्रकारनो (स्निग्ध, मधुर विगेरे) आहार वर्जवो (८), ३३५. तथा विभूषा (अंगनी शोभा)ने वर्जवी (९). आ नव ब्रह्मचर्यनी गुप्तिने विषे ब्रह्मचर्यना रक्षण माटे यत्न करवो. " ३३६.

गुज्झोरुवयणकक्खोरुअंतरे तह थणंतरे दट्ठुं ।
साहरइ तओ दिट्ठिं, न बंधई दिट्ठिए दिट्ठिं ॥ ३३७ ॥

अर्थ—" साधु पुरुष स्त्रीनुं गुह्यस्थान (स्त्रीचिन्ह), उरु (बे जंघा), वदन (मुख), कक्षा (काख) तथा उरस (हृदय)ना अंतर (मध्यभाग)ने तथा स्तनना अंतरने जोइने ते स्थानोथकी दृष्टिने संहरे छे—दृष्टिने खेंची लेछे, तेमज स्त्रीनी दृष्टि साथे पोतानी दृष्टिने बांधता नथी—मेळवता नथी. अर्थात् कार्यप्रसंगे पण नीचुं मुख राखीनेज स्त्रीनी साथे वात करे छे. " ३३७.

हवे सातमुं स्वाध्याय द्वार कहे छे—

सज्झाएण पसत्थं, झाणं जाणइ य सव्वपरमत्थं ।
सज्झाए वट्टंतो, खणे खणे जाइ वेरग्गं ॥ ३३८ ॥

अर्थ—" वाचनादिक पांच प्रकारना स्वाध्याये करीने प्रशस्त (भव्य) ध्यान (धर्मध्यानादिक) थाय छे, अने सर्व परमार्थ (वस्तुस्वरूप)ने जाणेछे. तेमज स्वाध्यायमां वर्तता मुनिने क्षणे क्षणे वैराग्य प्राप्त थाय छे; अर्थात् रागद्वेष रूप विष दूर थवाथी निर्विष थाय छे. " ३३८.

गाथा ३३७—दिट्ठिउ । गाथा ३३८—जाणेइ ।

उड्ढमहतिरियलोए, जोइसवेमाणिया यँ सिद्धी यँ ।
सव्वो लोगालोगो, सज्झायविउस्स पच्चक्खो ॥ ३३९ ॥

अर्थ–" स्वाध्याय (सिद्धान्त)ने जाणनार एवा मुनिने ऊर्ध्वलोक, अधोलोक ने तिर्यग्लोक–ए त्रणे लोकनुं स्वरूप, चंद्र सूर्यादि ज्योतिष्क, वैमानिकना निवास अने सिद्धिस्थान (मोक्ष), ए सर्व लोकालोकनुं स्वरूप प्रत्यक्ष छे. चौद रज्जु प्रमाण लोक अने तेथी भिन्न अपरिमित अलोक. तेनुं स्वरूप स्वाध्यायने बळे मुनि जाणे छे." ३३९.

जो निच्चकाल तवसंजमुज्जओ, न वि करेइ सज्झायं ।
अलसं सुहसीलजणं, न वि तं ठवेइ साहुपए ॥ ३४० ॥

अर्थ–" जे साधु निरंतर तप तथा पांच आश्रवना निरोध रूप संयमने विषे उद्यमवान छतां पण अध्ययन अध्यापन रूप स्वाध्याय न करे–स्वाध्यायने विषे उद्यम न करे, तो ते आळसु अने सुहशील (सुखमां लंपट) मुनिने लोको साधु मार्गमां स्थापन करता नथी–साधु तरीके गणता नथी. कारण के ज्ञान अने क्रिया ए बन्ने वडेज मोक्ष छे तेथी ते बंनेनुं आराधन करवुं जोइए. " ३४०. सातमुं स्वाध्यायद्वार कह्युं, हवे आठमुं विनयद्वार कहे छे–

विणओ सासणे मूलं, विणीओ संजओ भवे ।
विणयाओ विप्पमुक्कस्स, कओ धम्मो कओ तवो ॥ ३४१ ॥

अर्थ–" विनय ए शासन एटले जिनभाषित द्वादशांगीने विषे (द्वादशांगीनुं) मूळ छे. विनयवाळो साधु ज साधु थाय छे (कहेवाय छे). विनयथी विप्रमुक्त–रहित (भ्रष्ट थयेला) ने धर्म क्यांथी अने तप (पण) क्यांथी होय ? अर्थात् विनय विना धर्म अने तप बंने होतां नथी. " ३४१.

विणओ आवहइ सिरिं, लहइ विणीओ जसं च कित्तिं च ।
न कयाइ दुव्विणीओ, सकज्जसिद्धिं समाणेइ ॥ ३४२ ॥

अर्थ–" विनय बाह्य अने आभ्यंतर लक्ष्मीने प्राप्त करे छे. विनयवान पुरुष यश (सर्व दिशामां व्याप्त थनारुं) अने कीर्ति (एक दिशामां प्रसरनारी)ने पामे छे.

गाथा ३३९–लोयालोगो ।
गाथा ३४०–संजमज्जुओ=संयमयुतः । संजमुज्जओ=संयमोद्यतः ।

दुर्विनीत (विनय रहित) पुरुष पोताना कार्यनी सिद्धिने कदापि पामतो नथी. अविनीतनी कार्यसिद्धि थती नथी." ३४२.

विनयद्वार कह्युं. हवे तपनुं द्वार कहे छे—

जह[1] जह[2] खमइ[4] सरीरं[3], धुवजोगा[7] जहं[5] जहा[6] न[8] हायंति[9] ।
कम्मक्खओ[12] अ[10] विउलो[11], विवित्तया[14] इंदियदमो[15] अ[13] ॥ ३४३ ॥

अर्थ—" जेम जेम (जेवी रीते) शरीर सहन करे (वळहीन न थाय) अने जेम जेम ध्रुवयोग एटले प्रतिलेखना (पडिलेहणा) प्रतिक्रमण विगेरे नित्य योगो (क्रियाओ) हीन न थाय (करी शकाय), ए प्रमाणे तप करवो. तेवी रीते तप करवाथी विपुल (विस्तारवाळो) कर्मनो क्षय थाय छे, तथा विविक्तताए करीने एटले 'आ जीव देहथी भिन्न छे अने आ देह जीवथी भिन्न छे' एवी भावनाए करीने इन्द्रियोनुं दमन पण थाय छे " ३४३.

जइ[1] ता[2] असक्कणिज्जं[3], न[5] तरसि[6] काऊण[4] तो[7] इमं[8] कीस[9] ।
अप्पायत्तं[9] न[13] कुणसि[14], संजमजयणं[11] जईजोगं[10] ॥ ३४४ ॥

अर्थ—" जो कदाच हे शिष्य ! अशक्य एवी साधुप्रतिमा तपस्यादिक क्रिया करवाने तुं शक्तिमान न होय, तो हे जीव ! आ आत्माने स्वाधीन अने साधुजनने योग्य एवी संयम यतनाने (पूर्वे कहेला क्रोधादिकना जयने) केम करतो नथी ? अर्थात् तपस्या करवानी शक्ति न होय तो क्रोधादिकनो जय करवामां यत्न कर." ३४४.

॥ इति तपोद्वारम् ॥

जायंमि[2] देहसंदेहयंमि[1], जयणाए[3] किंचि[4] सेविज्जा[5] ।
अह[6] पुण[7] सज्जो[8] अ निरुज्जमो[9] अ, तो[10] संजमो[11] कत्तो[12] ॥३४५॥

अर्थ—" साधुए देहने विषे संदेह एटले महारोगादिक कष्ट उत्पन्न थाय त्यारे यतनावडे (सिद्धांतनी आज्ञा पूर्वक) कांइक (सावद्य—अशुद्ध आहारादिक) सेवन करवुं. पण पछीथी ज्यारे सज्ज (नीरोगी) थाय त्यारे पण जो ते (साधु) निरुद्यमी थाय, एटले शुद्ध आहारादिक लेवामां उद्योग न करे अने अशुद्धज ग्रहण करे, तो तेनुं संयम शी रीते कहेवाय ? नज कहेवाय. केमके आज्ञा विरुद्ध आचरण करवाथी तेनुं संयम कहेवाय नहीं." ३४५.

गाथा ३४३—जहा जहा । विवत्तया । गाथा ३४४—यदि तावत् । जईजग्गं ।
गाथा ३४५—जयणाइं ।

मा कुणउ जइ तिगिच्छं, अहियासेऊण जइ तरइ सम्मं ।
अहियासिंतस्स पुणो, जइ से जोगा न हायंति ॥ ३४६ ॥

अर्थ–" जो (साधु) ते रोगोने सारी रीते सहन करवाने समर्थ होय, तथा जो रोगने सहन करता एवा ते साधुना जोगो (प्रतिलेखनादिक क्रियाओ) हीन न थाय तो यतिए चिकित्सा (रोगनी प्रतिक्रिया–औषध) न करवी; अर्थात् जो संयमनी क्रियाओ रोगने कीधे सीदाती होय–शिथिल थती होय तो चिकित्सा करवी." ३४६.

निच्चं पवयणसोहाकराण, चरणुज्जुआण साहूणं ।
संविग्गविहारीणं, सव्वपयत्तेण कायव्वं ॥ ३४७ ॥

अर्थ–" नित्य प्रवचननी (जिनशासननी) शोभा (प्रभावना) करनारा, चारित्रने विषे उद्यम करनारा अने संविग्न एटले मोक्षनी अभिलाषावडे विहार करवाना स्वभाववाळा एवा साधुओनुं सर्व प्रयत्न (शक्ति)वडे वैयावच्च करवुं." ३४७.

हीणस्स विसुद्धपरूवगस्स, नाणाहियस्स कायव्वं ।
जणचित्तगहणत्थं, करिंति लिंगावसेसे वि ॥ ३४८ ॥

अर्थ–" विशुद्ध प्ररुपणा करनार अने ज्ञान (सिद्धान्तना ज्ञान)थी अधिक (संपूर्ण) एवा हीननुं पण एटले शिथिलाचारीनुं पण वैयावृत्त्य करवुं; अर्थात् क्रियाहीन छतां पण जो ज्ञानी होय तो तेनुं वैयावृत्त्य करवुं उचित छे. वळी जनना (लोकना) चित्तने ग्रहण (रंजन) करवा माटे एटले के ' आ लोकोने धन्य छे के तेओ गुणवान छतां पण उपकारबुद्धिथी निर्गुणनुं पण वैयावृत्त्य करे छे. ' एवी रीते लोकना चित्तने प्रसन्न करवा माटे मात्र लिंगधारीने विषे पण वैयावृत्त्य करे छे; अर्थात् लोकापवादनुं निवारण करवा माटे ज्ञान अने क्रियाथी हीन एवा वेषधारीनुं पण वैयावृत्त्य करवुं."३४८

समिई कसायगारव० इत्यादि २९९ मी गाथानो विस्तारार्थ कह्यो. हवे लिंगधारीनुं स्वरूप कहे छे–

दगपाणं पुप्फफलं, अणेसणिज्जं गिहत्थकिचाइं ।
अजया पडिसेवंती, जइवेसविडंबगा नवरं ॥ ३४९ ॥

गाथा ३४६–तिगिच्छं=चिकित्सा । आहियासेऊण=अध्यासितुं–अधिसोढुं । आहियासंतस्स ।
गाथा ३४७–सोहागराण । गाथा ३४८–गाहणत्थं । गाथा ३४९–गिहित्थ ।
१ टीकाकार अहीं दश गाथानो अर्थ कर्यो एम लखे छे, परंतु गाथा ५४ थाय छे.

अर्थ–" असंयमीओ (शिथिलाचारीओ) सचित्त जळनुं पान, जात्यादिक पुष्पो, आम्रादिकनां फळो, अणेसणीय (आधाकर्मादि दोषवाळो) आहारादिक, तथा व्यापारादिक श्रावकनां कार्योने करे छे, संयमने प्रतिकूळ आचरण आचरे छे, तेओ केवळ यतिवेषनी विडंवना करनाराज छे, परंतु अल्प पण परमार्थना साधक नथी. " ३४९.

ओसन्नया अबोही, पवयणउब्भावणा य बोहिफलं ।
ओसन्नो वि वरं पिहु–पवयणउब्भावणापरमो ॥ ३५० ॥

अर्थ–" तेवा उपर कहेला भ्रष्ट चारित्रवाळानी अवसन्नता के० पराभव थाय छे, तथा तेमने अबोधि एटले धर्मनी प्राप्तिनो अभाव थाय छे. केमके प्रवचन (शासन)-नी उद्भावना–प्रभावनानी वृद्धि करवाथीज बोधिरूप फळनी प्राप्ति थाय छे; प्रवचननी हीलना करवाथी बोधिलाभ थतो नथी. परंतु पृथु (विस्तारवाळी) प्रवचननी उद्भावना (शोभा)ने विषे तत्पर रहेतो एवो अवसन्नो एटले शिथिलाचारी पण श्रेष्ठ जाणवो; अर्थात् व्याख्यान विगेरेथी शासननी प्रभावना करनार शिथिलाचारी पण श्रेष्ठ जाणवो. " ३५०.

गुणहीणो गुणरयणायरेसु, जो कुणइ तुलमप्पाणं ।
सुतवस्सिणो अ हीलइ, सम्मत्तं कोमलं तस्स ॥ ३५१ ॥

अर्थ–"जे चारित्रादिक गुणे करीने हीन एवा साधु गुणना समुद्र रूप साधु-ओनी साथे पोताना आत्माने तुल्य करे छे. एटले ' अमे पण साधु छीए ' एम माने छे, तथा जे सारा तपस्वीओनी हीलना करे छे ते पुरुषनुं (भ्रष्टाचारी साधुनुं) समकित कोमल–असार छे. अर्थात् तेने मिथ्यादृष्टि जाणवो." ३५१.

ओसन्नस्स गिहिस्स व, जिणपवयणतिव्वभावियमइस्स ।
कीरइ जं अणवज्जं, दढसम्मत्तस्स वत्थासु ॥ ३५२ ॥

अर्थ–" जिनेश्वरना प्रवचन (सिद्धान्त धर्म) वडे जेनी मति भावित (रक्त) थयेली छे; अर्थात् जे जिनधर्मना रागमां रक्त थयेलो छे, तथा जे दृढ समकितवाळो एटले दर्शनमां निश्चळ छे, एवा अवसन्न (पासत्थादिक) नुं अथवा गृहस्थीनुं क्षेत्र काळादिक अवस्थाने विषे (क्षेत्र काळादिक जोइने) जे वैयावृत्त्यादिक करवामां आवे ते अनवद्य–निष्पाप एटले दूषणरहित छे. " ३५२.

गाथा ३५०–अवसन्नता=पराभवः ।
गाथा ३५१–कोमलं=असारं ।
गाथा ३५२–गिहस्स । भावियमयस्स ।

पासत्थोसन्नकुसीलनीयसंसत्तजणमहाच्छंदं ।
नाऊण तं सुविहिया, सव्वपयत्तेण वज्जंति ॥ ३५३ ॥

अर्थ-" पार्श्वस्थ (ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनी पासे रहेनार-तेने नहीं सेवनार पासथ्था), अवसन्न (चारित्रने विषे शिथिलाचारी), कुशील (साधुना शील-आचार रहित), नीच (अविनयवडे भणवाथी ज्ञाननो विराधक), संसक्तजन (ज्यां जेवो-जेनो संग मळे त्यां-तेनी संगतिथी तेवो थाय, ते संसक्त कहेवाय छे), तथा यथाच्छंद (पोतानी मतिथी उत्सूत्रनी प्ररूपणादि करनार) एवा ते पार्श्वस्थादिकने जाणीने (तेमना स्वरूपने जाणीने) सुविहित साधुओ ते पार्श्वस्थादिकनो सर्व प्रयत्न (शक्ति) वडे त्याग करे छे; अर्थात् तेओ चारित्रना विनाश करनार होवाथी तेओनो संग करता नथी. " ३५३. हवे पार्श्वस्थादिकनां लक्षणो कहे छे-

बायालमेसणाओ, न रक्खइ धाइसिज्जपिंडं च ।
आहारेई अभिक्खं, विगईओ संन्निहिं खाई ॥ ३५४ ॥

अर्थ-" जे बेंताळीश एषणा-आहारना दोषोनुं रक्षण करता नथी, अर्थात् बेंताळीश दोषरहित आहार लेता नथी, धात्रीपिंड (छोकरां रमाडवाथी आहार मळे ते) निवारता नथी तथा शय्यातरपिंड ग्रहण करेछे; वळी जे कारण विना निरंतर (वारंवार) दुध दहीं घी विगेरे विकृतिनुं भक्षण करे छे तथा जे रात्रिए खाय छे अथवा लावीने रात्रिए राखी मुकेली वस्तुनुं दिवसे भक्षण करे छे, (ते पार्श्वस्थ कहेवाय छे.) ३५४.

सूरप्पमाणभोजी, आहारेइ अभिक्खमाहारं ।
न य मंडलीइ भुंजइ, न य भिक्खं हिंडइ अलसो ॥ ३५५ ॥

अर्थ-"वळी जे सूर्यप्रमाण एटले सूर्योदयथी मांडीने सूर्यास्त सुधी खावाना स्वभाववाळो छे एटले आखो दिवस खाखा करनारो छे, जे वारंवार आहार करे छे-खाय छे, अने जे साधुनी मंडळीमां (साथे) बेसीने भोजन करतो नथी, एटले एकलोज भोजन करे छे, तथा आळसु एवो जे भिक्षाने माटे अटन करतो नथी, एटले थोडे घेरथी घणो आहार ग्रहण करे छे." ३५५.

गाथा ३५३-पासत्थो ओसन्नकुसीलणीयसंसत्तंजण । नाऊणं ।
गाथा ३५४-रक्खई ।
गाथा ३५५-मोई । मंडलीए । हिंडए ।

कीवो न कुणइ लोअं, लज्जइ पडिमाइ जल्लमवणेइ ।
सोवाहणो अ हिंडइ, बंधइ कडिपट्टमकज्जे ॥ ३५६ ॥

अर्थ–" वळी क्लीब के० कायर एवो जे लोच करतो नथी, कायोत्सर्ग करतां जे लज्जा पामे छे, शरीरना मेलने जे हाथवडे अथवा जळवडे दूर करे छे, तथा जे उपान (जोडा) सहित चाले छे, अने जे कार्य विना केडे चोलपट्टो बांधे छे."३५६.

गामं देसं च कुलं, ममाए पीठफलगपडिबद्धो ।
घरसरणेसु पसज्जइ, विहरइ य सकिंचणो रिक्को ॥ ३५७ ॥

अर्थ–"वळी ते पासत्थादिक गाम, देश अने कुळने विषे ममताए करीने विचरे छे; एटले आ गाम, आ देश, आ कुळ विगेरे मारां छे एवी ममता राखे छे. पीठफलकने विषे प्रतिबद्ध एटले वर्षाऋतु विना पण पीठ फलकादिकनो उपयोग करे छे–ग्रहण करे छे. घरो (उपाश्रयादिक) नवां कराववानो प्रसंग राखे छे, एटले तेनी चिंता धरावे छे, अने सुवर्णादिक द्रव्यनो परिग्रह पासे छतां पण हुं रिक्त (द्रव्यरहित) छुं–निर्ग्रंथ छुं, एम लोको पासे बोलतो विहार करे छे–विचरे छे–फरे छे. "३५७.

नहदंतकेसरोमे, जमेइ अच्छोलधोअणो अजओ ।
वाहेइ य पलियंकं, अइरेगपमाणमच्छुरइ ॥ ३५८ ॥

अर्थ–" नख, दांत, (मस्तकना) केश अने शरीरना रोमनी शोभा करे छे, घणा जळथी हस्तपादादिक धूए छे अने यतनारहित वर्ते छे, गृहस्थीनी जेम पल्यंकादिक वापरेछे तथा अधिक प्रमाणवाळा (प्रमाणथी अधिक एवा उत्तरपट्टादिक) संथाराने पाथरे छे–एटले सुखशय्या करे छे. " ३५८.

सोवइ य सव्वराइं, नीसट्ठमचेयणो न वा झरई ।
न पमज्जंतो पविसइ, निसिहियावस्सियं न करेइ ॥ ३५९॥

अर्थ–" वळी काष्ठनी जेम निभृत (अत्यंत) चेतनारहित एवो ते (पार्श्वस्थादिक) आखी रात्रि (चारे प्रहर) सुइ रहे छे. रात्रिए गणना विगेरे स्वाध्याय

गाथा ३५६ मुवणेइ । सोवाहणोवि । कडिपट्टयमकज्जे । सोपानत्=पादरक्षणसहितः ।

गाथा ३५७–ममायए । विहरई ।

गाथा ३५८–उच्छोल । जमेइ=भूषयति । अस्तोकजलेन धावनं प्रक्षालनं यस्य सः । वाहेई । अच्छुरइ=आस्तरति ।

गाथा ३५९–सोवई=स्वपिति । नीसट्टं=निश्चेष्टः । वाझरई=स्वाध्यायं करोति ।

करतो नथी. रात्रे रजोहरणादिक वडे प्रमार्जन कर्या विना उपाश्रयने विषे प्रवेश करे छे, तथा प्रवेशसमये नैषेधिकी अने निर्गमन वखते आवश्यकी इत्यादि साधु सामाचारीने करतो नथी." ३५९.

पाय पहे न पमज्जइ, जुगमायाए न सोहए इरियं ।
पुढवीदगअगणिमारुअवणस्सइतसेसु निरविक्खो ॥ ३६० ॥

अर्थ—"मार्गमां जतां, गामनी सीमामां प्रवेश करतां अथवा नीकळतां पादनुं प्रमार्जन करतो नथी. युगमात्र (युगप्रमाण—चार हाथ)भूमिने विषे इर्यानी शुद्धि करतो चालतो नथी. पृथ्वीकाय, अप्काय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय अने त्रसकाय ए छ जीवनिकायने विषे निरपेक्ष (अपेक्षा रहित) रहे छे; अर्थात् तेओनी विराधना करतां शंका पामतो नथी." ३६०.

सव्वं थोवं उवहिं, न पेहए न य करेइ सज्झायं ।
सद्दकरो झंझकरो, लहुओ गणभेयतत्तिल्लो ॥ ३६१ ॥

अर्थ—"सर्वथी अल्प एवी उपधि (मुखवस्त्रिकामात्र) नी पण प्रतिलेखना करतो नथी, अने वाचनादिक स्वाध्याय करतो नथी. रात्रिए मोटेथी शब्द करे छे. बीजाओ साथे कलह करे छे. तोछडाइ राखे छे एटले गंभीरतानो गुण राखतो नथी, तथा गण एटले संघाडानो भेद करवामां—अंदर अंदर कुसंप कराववामां तत्पर रहे छे." ३६१.

खित्ताईयं भुंजइ, कालाईयं तहेव अविदिन्नं ।
गिण्हई अणुइयसूरे, असणाई अहव उवगरणं ॥ ३६२ ॥

अर्थ—"क्षेत्रातीत (बे कोशथी वधारे दूर क्षेत्रथी आणेलो आहारादिक) खाय छे, कालातीत (त्रण प्रहर करतां अधिक काळनो लावेलो आहारादिक खाय छे, तथा अदत्त (नहीं आपेला आहारादि) नो उपभोग करे छे. वळी सूर्योदय पहेलां अशनादिक (चार प्रकारनो आहार) अथवा उपकरणोने (वस्त्रादिकने) ग्रहण करे छे. आवा प्रकारना साधु पासत्थादिक कहेवाय छे." ३६२.

ठवणकुले न ठवेई, पासत्थेहिं च संगयं कुणई ।
निच्चमवज्झाणरओ, न य पेहपमज्जणासीलो ॥ ३६३ ॥

गाथा ३६०—पुढवि । मारुय ।

गाथा ३६१—झंझकरो कलहकरः । तत्तिल्लो । गणभेदे तत्परः ।

गाथा ३६२—अणुइए ।

गाथा ३६३—ठवेइय । कुणइ । पेहपमज्जणासीलो=प्रेक्षाप्रमार्जनाशीलः ।

अर्थ—" स्थापना कुळनुं एटले वृद्ध, ग्लान विगेरेनी अत्यंत भक्ति करनारा श्रावकना गृहोनुं रक्षण करतो नथी. एटले के कारण विना पण तेमने घेर आहार लेवा जाय छे. वळी भ्रष्टाचारीओ साथे संगति (दोस्ती) करे छे. निरंतर अपध्यान (दुष्ट ध्यान) मां तत्पर रहे छे; तथा प्रेक्षा (दृष्टिथी जोइने वस्तु ग्रहण करवी ते) अने प्रमार्जना (रजोहरणादिक वडे प्रमार्जन करीने—पुंजीने वस्तु भूमिपर मूकवी ते) करवाना स्वभाववाळो होतो नथी. " ३६३.

रीयइ देवदवाए, मूढो परिभवइ तहय रायणिए ।
परपरिवायं गिह्णई, निट्ठुरभासी विगहसीलो ॥ ३६४ ॥

अर्थ—" वळी उतावळथी (उपयोग विना) चाले छे, तथा मूर्ख एवो ते ज्ञानादिक गुणरत्नोथी अधिक एवा वृद्धोनो पराभव करे छे, एटले तेओनी साथे स्पर्धा करे छे. परनो परिवाद (अवर्णवाद) ग्रहण करे छे—परनी निंदा करे छे; निष्ठुर (कठोर) भाषण करे छे; अने राजकथादिक विकथाओ करवाना स्वभाववाळो होय छे—विकथा करे छे." ३६४.

विज्जं मंतं जोगं, तेगिच्छं कुणइ भूइकम्मं च ।
अक्खरनिमित्तजीवी, आरंभपरिग्गहे रमइ ॥ ३६५ ॥

अर्थ—" देवीअधिष्ठित ते विद्या, देवअधिष्ठित ते मंत्र, अदृश्य करणादिक योग, रोगनी प्रतिक्रिया (ओषध प्रयोग) अने भूतिकर्म (राख विगेरे मंत्रीने गृहस्थीने आपवानुं कर्म) करे छे. अक्षर (लेखकोने अक्षरविद्या आपवी ते) तथा निमित्त (शुभाशुभ लग्नवळादिकना प्रकाश करवा) वडे आजीविका करनार एवो ते आरंभ (पृथ्वीकायादिकना उपमर्दन) अने अधिक उपकरणना संचयरूप परिग्रह तेने विषे रमे छे—आसक्त रहे छे. " ३६५

कज्जेण विणा उग्गहमणुजाणावेइ दिवसओ सुअइ ।
अज्जियलाभं भुंजइ, इत्थिनिसिज्जासु अभिरमइ ॥ ३६६ ॥

अर्थ—" कार्य विना (निरर्थक) गृहस्थोने रहेवा माटे अवग्रह भूमिनी अनुज्ञा करे छे—मागे छे. दिवसे शयन करे छे. आर्यिकाना लाभने (साध्वीए लावेला आहा-

गाथा ३६४—रीअईय=गच्छति च ।

गाथा ३६५—तेगिच्छं—रोगप्रतिक्रियां ।

गाथा ३६५—सुयइ ।

रने) खाय छे. स्त्रीओनी निषंद्या (आसनो) उपर क्रीडा करे छे, एटले स्त्रीओना उठ्या पछी तत्काल ते स्थाने बेसे छे." ३६६.

उच्चारे पासवणे, खेले सिंघाणए अणाउत्तो ।
संथारग उवहीणं, पडिकमई सवासपाउरणो ॥ ३६७ ॥

अर्थ-" उच्चार (मळ), प्रस्रवण (मूत्र), खेल (श्लेष्म-बडखो विगेरे) अने सिंघाण (नासिकानो मळ) परठववाने विषे अनायुक्त (असावधान) एटले यतना विना परठवनार होय छे-परठवे छे. संस्तारक अथवा उपधि उपर रहीनेज वस्त्रना प्रावरण (प्रकर्ष वेष्टन) सहित प्रतिक्रमण करे छे; (अथवा स जूदुं पद राखी, वा एटले अथवा सपाउरणो प्रावरण सहित एवो अर्थ करवो.)" ३६७.

न करेइ पहे जयणं, तलियाणं तह करेइ परिभोगं ।
चरेइ अणुबद्धवासे, सपक्खपरपक्खओमाणे ॥ ३६८ ॥

अर्थ-" मार्गमां चालतां यतना करतो नथी, तथा तलिक एटले पादत्राण (जोडा) मोजा विगेरेनो उपभोग करे छे अने पोताना पक्षमां एटले साधुओमां तथा परपक्षमां एटले अन्यदर्शनीओमां अपमान पामीने अनुबद्ध काळमां-वर्षाऋतुमां पण विहार करे छे." ३६८.

संजोअइ अइ बहुअं, इंगाल सधूमगं अणट्ठाए ।
भुंजइ रूवबलट्ठा, न धरेइ अ पायपुंछयणं ॥ ३६९ ॥

अर्थ-" वळी संयोग करेछे एटले स्वादने माटे जूदा जूदा द्रव्योने मिश्रित करे छे, अतिघणुं जमे छे, इंगाळ के० सारुं भोजन रागबुद्धिथी जमे छे अने सधूमगं के० अनिष्ट भोजन मुखना विकारे करीने एटले मुख मरडीने खाय छे. अनर्थक के० क्षुधा वेदनीयना के वैयावृत्त्य विगेरेना कारण विना रूप अने बळने माटे भोजन करे छे,तथा पादप्रोंछन-रजोहरणने पण धारण करतो नथी-पासे राखतो नथी." ३६९.

अट्ठम छट्ठ चउत्थं, संवच्छर चाउमास पक्खेसु ।
न करेइ सायबहुलो, न य विहरइ मासकप्पेणं ॥ ३७० ॥

अर्थ-" सातावडे (सुखवडे) बहुल एटले सुखना शीलवाळो (सुखनी तीव्र

गाथा ३६८-जइणं । अणुबद्धवासो । परपक्खिओमाणे ।
गाथा ३६९-संजोयइ अइबहुयं ।
गाथा ३७०-चाउम्मास । न करइ सायाबहुलो । मासकप्पेण ।

४०

इच्छावाळो ते (पासत्थादिक) सांवत्सरिक पर्वे अट्ठम, चातुर्मासीए छट्ठ अने पक्ष (चतुर्दशी)ने दिवसे चतुर्थ (उपवास) तप करतो नथी, तथा चातुर्मास शिवाय शेष काळे क्षेत्रो छतां पण मासकल्पनी मर्यादा प्रमाणे विहार करतो नथी. " ३७०.

नीयं गिण्हइ पिंडं, एगागि अत्थए गिहत्थकहो ।
पावसुआणि अहिज्जइ, अहिगारो लोगगहणंमि ॥ ३७१ ॥

अर्थ—" नित्य एटले अमुक घरथी आटलो आहार लेवो एम नियमित रीते पिंड (आहार) ग्रहण करे छे, एकाकी (एकलो) रहे छे, पण समुदायमां रहेतो नथी. गृहस्थोनी कथा (प्रवृत्ति) जेने विषे होय एवी वातो करे छे, पापशास्त्रो (ज्योतिष तथा वैदक विगेरे)नो अभ्यास करे छे तथा लोकोने रंजन (वश) करवा माटे लोकोना मनमां अधिकार करे छे, एटले तेमनी वातोमां मोटाइपद धारण करी मुख्यता मेळवे छे, परंतु पोतानी संयमक्रियाना अधिकारी थता नथी. " ३७१.

परिभवइ उग्गकारी, सुद्धं मग्गं निगूहए बालो ।
विहरइ सायागुरुओ, संजमविगलेसु खित्तेसु ॥ ३७२ ॥

अर्थ—" बाळक (मूर्ख) एवा ते पासथ्थादि उग्रकारीनो एटले उग्र विहार करनार मुनिओनो पराभव करे छे (तेओने उपद्रव करे छे). शुद्ध एवा मोक्षमार्गनुं आच्छादन करे छे—गोपवे छे. अने साता (सुख) ने विषे गुरुक (लंपट) एवो ते संयमथी विकल एटले सारा साधुओथी रहित एवा क्षेत्रोने विषे विहार करे छे." ३७२.

उग्गाइ गाइ हसई, असंवुडो सइ करेइ कंदप्पं ।
गिहिकज्जचिंतगो वि य, ओसन्ने देइ गिण्हइ वा ॥ ३७३ ॥

अर्थ—" असंवृत एटले मुखने पहोळुं करीने मोटा शब्दवडे गायन करे छे अने हसे छे. हमेशां कंदर्प एटले कामने उत्पन्न करे तेवी कथाओ करे छे. वळी ते गृहस्थीओना कार्यनी चिंता (विचार) करे छे, तथा अवसन्न (भ्रष्टाचारी)ने वस्त्रादिक आपे छे अथवा तेनी पासेथी ग्रहण करे छे. " ३७३.

धम्मकहाओ अहिज्जइ, घराघरं भमइ परिकहंतो अ ।
गणणाइ पमाणेण य, अइरित्तं वहइ उवगरणं ॥ ३७४ ॥

गाथा ३७१—अत्थए=तिष्ठति । पावसुयाणि ।
गाथा ३७२—निगूहई । सायागरूओ ।
गाथा ३७३—उग्गाइ=उग्रतया । सय । सइ=सदा । असंवृतः=प्रसारितमुख. । ओसन्नो ।
गाथा ३७४—गणणाय ।

अर्थ–" धर्मनी कथाओने लोकना चित्तनुं रंजन करवा माटे भणे छे, अने ते धर्मकथाओने केहतो छतो भिक्षाने माटे घेर घेर अटन करे छे–भमे छे; तथा गणना (गणतरी) एटले साधुओने चौद अने साध्वीओने पचीश कल्पक चोलपट्ट विगेरे उपकरणोनी गणना (संख्या) कहेली छे, तथा दरेकनुं प्रमाण कहेलुं छे. ते संख्या अने प्रमाणथी अधिक संख्या अने प्रमाणवाळां उपकरणोने धारण करे छे–राखे छे. "३७४.

बारस बारस तिन्नि य, काइयउच्चारकालभूमीओ ।
अंतो बहिं च अहियासि, अणहियासे न पडिलेहे ॥३७५॥

अर्थ–" बार लघुनीतिनी भूमि, बार वडीनीतिनी भूमि अने त्रण काळग्रहणने योग्य भूमि, एम उपाश्रयनी अंदर अने बहार मळीने सतावीश स्थंडिल भूमिओ छे. तेमां जो शक्ति होय तो दूर जवुं योग्य छे, अने दूर जवानी शक्ति न होय तो–खमी शके तेम न होय तो समीप (नजीक)नी भूमि योग्य छे. तेवी भूमिने पडिलेहे नहीं–उपयोग पूर्वक जुए नहीं तेने पासत्थादिक जाणवा. " ३७५.

गीयत्थं संविग्गं, आयरिअं मुअइ वलइ गच्छस्स ।
गुरुणो य अणापुच्छा, जं किंचि वि देइ गिण्हइ वा ॥ ३७६ ॥

अर्थ–" गीतार्थ (सूत्रार्थना जाणनार) अने संविग्न (मोक्षमार्गना अभिलाषी) एवा आचार्य (पोताना धर्माचार्य)ने कारण विना मूकी देछे–तजे छे. गच्छनी सामो थाय छे एटले समुदायने शीखामण आपता एवा गच्छ (समुदाय)-नी–आचार्यनी सामे उत्तर आपे छे–सामुं बोले छे; तथा गुरुनी आज्ञा विना जे कांइ पण वस्तु (वस्त्र विगेरे) बीजाने आपे छे अथवा पोते बीजा पासेथी ग्रहण करे छे. " ३७६.

गुरुपरिभोगं भुंजइ, सिज्जासंथारउवकरणजायं ।
कित्तिय तुमं ति भासइ, अविणीओ गव्विओ लुद्धो ॥३७७॥

अर्थ–" गुरुने उपभोग करवा लायक एवी अथवा गुरु वापरता होय ते शय्या (शयनभूमि), संस्तारक (तृण विगेरेनो संथारो) तथा कपडां कांवली विगेरे उपकरणोना समूहने पोते भोगवे छे–पोते वापरे छे; तथा गुरुए बोलाव्यो छतो अविनीत (विनय रहित), गर्वित (गर्विष्ठ) अने लुब्ध (विषयादिकमां लंपट) एवो ते

गाथा ३७६–आयरियं । वलइ=वलति–सम्मुखमुत्तरं ददाति ।

गाथा ३७७–उवगरण । भासइ ।

'तुं' एम कही जवाव आपे छे–तुंकारो करे छे; भगवन्! एवा बहुमान पूर्वक बोलतो नथी." ३७७.

गुरुपच्चरकाणगिलाणसेहबालाउलस्स गच्छस्स ।
न करेइ नेय पुच्छइ, निद्धम्मो लिंगमुवजीवी ॥ ३७८ ॥

अर्थ–"निधर्म (धर्मरहित) अने लिंगउपजीवी एटले मात्र वेष धारण करीने–वेषना निमित्तवडे ज आजीविका करनार एवो ते (पार्श्वस्थादिक) गुरु (आचार्य उपाध्यायादि), पच्चरखाणवाळा (अनशनादि–उपवासादि तपस्यावाळा), ग्लान (रोगी), सेह–शिष्य (नवदीक्षित) अने बाळ (क्षुल्लक) साधुओथी आकुळ (भरेला) एवा गच्छनुं (समुदायनुं) अपेक्षित वैयावृत्त्यादिक पोते करतो नथी, तथा हुं शुं काम करुं? एम बीजा जाण साधुओने पूछतो पण नथी." ३७८.

पहगमणवसहिआहारसुयणथंडिलविहिपरिट्ठवणं ।
नायरइ नेव जाणइ, अज्जावट्टावणं चेव ॥ ३७९ ॥

अर्थ–"मार्गे चालवानो, वसति (रहेवा माटे उपाश्रय) मागवानो, आहार लेवानो, सुवानो तथा स्थंडिलनो विधि तथा परिष्ठापन एटले अशुद्ध आहारादिकनुं परठववुं–तेने जाणतो छतो पण (धर्मबुद्धि रहित होवाथी) आचरतो नथी, अथवा जाणतो नथी तेथी आचरतो नथी. तेमज आर्या (साध्वी)ओने वर्तावववुं–धर्ममां प्रवर्तावववुं ते पण जाणतो नथी." ३७९.

सच्छंदगमणउट्ठाणसोअणो अप्पणेण चरणेण ।
समणगुणमुक्कजोगी, बहुजीवखयंकरो भमइ ॥ ३८० ॥

अर्थ–"स्वच्छंद (पोतानी मरजी प्रमाणे) गमन करनार, उठनार अने सुनार, तथा पोताना कल्पित आचरणवडे चालनार (वर्तनार), श्रमण (साधु)ना ज्ञानादिक गुणोना योगने मूकनार (तजनार)–ज्ञानादि गुण विनानो तथा बहुजीवोनो क्षय करनार एवो ते (ज्यां त्यां) भ्रमण करे छे." ३८०.

बत्थि व्व वायुपुन्नो, परिभमइ जिणमयं अयाणंतो ।
थद्धो निव्विन्नाणो, न य पिच्छइ किंचि अप्पसमं ॥ ३८१ ॥

गाथा ३७८–निधम्मो । लिंगमुवजीवि ।

गाथा ३७९–सुअण । परिठवणं ।

गाथा ३८०–सोयणो । चरणेणं । अप्पणेण=आत्मना कल्पितेन । भमई ।

गाथा ३८१–वायपुन्नो । वित्थ=वस्ति–हाति ।

अर्थ–“ रागादिक रोगना औषध तुल्य जिनमतने नहीं जाणतो एवो ते वायुथी पूर्ण (भरेला) बस्ति (चामडानी पाणी भरवानी मसक) जेम उछळे तेम गर्वथी भरपूर थइने उच्छृंखलपणे परिभ्रमण करे छे–फरे छे;तथा स्तब्ध (अनम्र) अने निर्विज्ञान–ज्ञानरहित एवो ते कोइने लवलेश पण पोतानी तुल्य जोतो–जाणतो नथी, अर्थात् सर्वने तृण समान गणे छे. ” ३८१.

सच्छंदगमणउट्ठाणसोअणो भुंजइ गिहीणं चे ।
पासत्थाइट्ठाणा, हवंति एमाइया एए ॥ ३८२ ॥

अर्थ–“ वळी स्वच्छंद गमन, उत्थान अने शयनवाळो एवो ते (आ विशेषण ३८० मी गाथामां आप्या छतां अहीं फरीथी आपवानुं कारण गुरुनी आज्ञा विना गुणप्राप्ति थती नथी, एम जणाववा माटे छे.) गृहस्थीओनी मध्ये भोजन करे छे. इत्यादिक पूर्वे कहेला पार्श्वस्थादिकनां स्थानो (लक्षणो) होय छे. ” ३८२.

त्यारे कोइ साधुओ छेज नहीं ? एवी कोइने शंका थाय ते उपर कहे छे—

जो हुज्जओ असमत्थो, रोगेण व पिल्लिओ झरियदेहो ।
सव्वमवि जहाभणियं, कयाइ न तरिज्ज काउं जे ॥ ३८३ ॥
सोविय नियपरिक्कमववसायधिईबलं अगूहंतो ।
मुत्तूण कूडचरियं, जई जयंतो अवस्स जई ॥३८४ ॥युग्मम्॥

अर्थ–“ जे साधु स्वभावेज असमर्थ (बळहीन) होय, अथवा श्वास, कास अने ज्वरादिक रोगथी पीडित सतो जीर्ण देहवाळो होय, तेथी करीने समग्र एवुं पण यथाभणित जिनेश्वरे जेवुं कह्युं छे तेवुं (आचरण) करवाने कदाच शक्तिमान न होय (‘ जे ’ वाक्यालंकारने माटे छे.) ३८३. ते पण (दुर्भिक्ष अने रोगादिक आपत्तिमां पडेलो छतो पण) पोताना पराक्रम (संहनन बळ) ने, व्यवसाय (शरीरना उद्यम)ने, धृति (संतोष)ने अने बळ एटले मनोबळने नहीं गोपवतो तथा कूट चारित्र (कपट)ने मूकीने (तजी दइने) चारित्रने विषे (यथाशक्ति) यतना (उद्यम) करतो एवो यति अवश्य यति कहेवाय छे. ” ३८४. हवे मायावी (कपटी)नुं स्वरूप बतावे छे—

गाथा ३८२–सोयणो । भुंजई । पासत्थाईठाणा । एमाईया ।
गाथा ३८३–झुरियदेहो । कयाइ । गाथा ३८४–पक्किम ववसाइ धिइं ।

अलसो सढो वलित्तो, आलंबणतप्परो अइपमाई ।
एवं ठिओ वि मन्नई, अप्पाणं सुट्ठिओ मि त्ति ॥ ३८५ ॥

अर्थ—" धर्मक्रियामां आळसु, शठ (मायावी), अवलिप्त (अहंकारी), आलंबनमां तत्पर (कोइ पण मिषे करीने प्रमादनुं सेवन करवामां तत्पर) तथा अति प्रमादी (निद्राविकथादिप्रमादवान)—एवो छतो पण 'हुं सुस्थित (भव्य—सारो) छुं' एम पोताना आत्माने माने छे. " ३८५. हवे मायावीने पाछळथी पश्चात्ताप करवो पडे छे, ते विषे कपटक्षप तापसनुं दृष्टान्त—

जो वि य पाडेऊणं, मायामोसेहिं खाई मुद्धजणं ।
तिग्गाममज्झवासी, सो सोअइ कवडखवगु व्व ॥ ३८६ ॥

अर्थ—" वळी जे (मायावी) माया (कपट) करवामां मृषा (कूट) भाषण वडे करीने—मायामृषावादे करीने मुग्ध जनने पाडीने (वश करीने) छेतरे छे, ते पुरुष त्रण गामनी मध्ये (वच्चे) रहेनारा कपटक्षप नामना तपस्वीनी जेम शोक करे छे. " ३८६. संप्रदायागत ते कथा अहीं कहे छे—

कपटक्षप तपस्वीनी कथा.

उज्जयिनी नगरीमां एक अघोरशिव नामनो महा धूर्त ब्राह्मण रहेतो हतो. ते महाकपटी, महाधूर्त अने महापापी हतो. तेथी राजाए तेने देश वहार काढी मूक्यो, एटले ते चर्मकारना (मोचीना) देशमां गयो. त्यां चोर लोकोनी पल्लीमां जइने ते चोरोने मळी गयो. पछी तेणे चोरोने कह्युं के—" जो तमे लोकोमां मारी प्रशंसा करो, तो हुं परिव्राजकनो वेष धारण करीने आ त्रण गामनी वच्चेनी अटवीमां रहुं अने तमने घणुं धन मेळवी आपुं. " ते सांभळीने चोरोए तेनुं कहेवुं कबूल कर्युं. पछी ते ब्राह्मण तापसनो वेष धारण करीने ते त्रणे गामनी मध्ये रही कपटवृत्तिथी मासक्षपण करवा लाग्यो, अने ते चोरो पण कूटवृत्तिथी सर्वत्र कहेवा लाग्या के—' अहो ! आ महात्मा धन्य छे. आ तपस्वी निरंतर मासक्षपण करीने पारणुं करे छे. ' ते सांभळी सर्वे मुग्ध जनो तेनी एवी प्रवृत्ति जोइ तेने वंदना—नमस्कार करवा लाग्या, अने भोजनने माटे पोताने घेर निमंत्रण आपी लइ जवा लाग्या. पछी तेने इच्छाभोजन करावी पोताना घरनी लक्ष्मी वतावबा लाग्या; पोताना घरनी सर्व हकीकत तेने कहेवा लाग्या, अने प्रसंगे प्रसंगे निमित्त विगेरे पूछवा लाग्या. ते कपटी तापस पण लग्नना वळथी लोकोने आगामी स्वरूप कहेवा लाग्यो. पछी ते कूटक्षपक रात्रे

गाथा ३८५—विलित्तो । अईपमाई । सुट्ठिओमि=सुस्थितोऽस्मि । गाथा ३८६—खाइ=वंचयति । सोयइ ।

चोरोने बोलावीने पोते दिवसे जोयेला गृहस्थोना गृहोमां बधी हकीकत समजावी खातर पडावीने चोरी कराववा लाग्यो. ए प्रमाणे हमेशां चोरी करावतां तेणे त्रणे गामना लोकोने निर्धन कर्या. एकदा ते एक खेडुतना घरमां खातर पाडवा चोरोने लइने गयो. त्यां खातर पाडती वखते ते खेडुतनो पुत्र जागी गयो, एटले सर्वे चोरो नासी गया, पण एक चोर पकडाइ गयो. तेने पकडीने ते राजा पासे लइ गयो. राजाए ते चोरने धमकी आपी कह्युं के–' बोल, सत्य वात कही दे, नहीं तो तने मारी नांखीश. ' त्यारे ते भय पामीने बोल्यो के–" हे महाराजा ! अमने आ कूटक्षप तापस जे घर बतावे छे ते घरे अमे खातर पाडीए छीए. " पछी राजाए तापस सहित सर्वे चोरोने पकडी मंगाव्या अने सर्वे चोरोने मारी नखाव्या, मात्र एक तापसने जीवतो राख्यो; पण तेनी बन्ने आंखो कढावीने मूकी दीधो. पछी ते तापस महा वेदनाने अनुभवतो सतो मनमां पश्चात्ताप करवा लाग्यो के–" हा ! मने धिक्कार छे! में ब्राह्मण थइने कूटतापसनो वेष धारण करी घणा लोकोने छेतर्या. में लोकोने महा दुःखनुं कारण उत्पन्न कर्युं. मारो आत्मा में मलिन कर्यो. हुं बन्ने भव हारी गयो. जोके जे कांइ अशुभ कार्य करवामां आवे ते सर्व निंदापात्र तो छेज, परंतु तपस्वी थइने जे पुरुष पापकर्म करे छे ते अत्यंत निंदापात्र छे अने मलिनमां पण अति मलिन छे. " ए प्रमाणे पोताना आत्मानो शोक करतो ते तापस अत्यंत दुःखनो भाजन थयो. आ प्रमाणे बीजो पण जे कोइ धर्मने विषे कपट करे छे ते अत्यंत दुःखी थाय छे. ए आ कथानुं तात्पर्य छे.

॥ इति कपटक्षप तापस दृष्टान्तः ॥ ६६ ॥

हवे विराधकनुं स्वरूप कहे छे—

एगांगी पासत्थो, सच्छंदो ठाणवासि ओसन्नो ।
दुगमाईसंजोगा, जह बहुआ तह गुरू हुंति ॥ ३८७ ॥

अर्थ–" एकाकी (धर्मबंधु–अन्यमुनि अने धर्मशिष्यरहित एकलो), पार्श्वस्थ (ज्ञानादिकनी पासे रहेनार), स्वच्छंदी (गुरुनी आज्ञा नहीं माननार–स्वेच्छाए चालनार), स्थानवासी (एकज स्थाने निरंतर वसनार) अने अवसन्न (प्रतिक्रमणादिक क्रियामां शिथिल). ए दोषोनो द्विकादिक संयोग एटले बे दोष, त्रण दोष, चार दोष अने पांचे दोष मळेला जे पुरुषने विषे होय, तेमां जेम जेम जेने विषे बहु दोष रहेला होय, तेम तेम ते पुरुष गुरु (मोटो) विराधक होय छे. " ३८७.

हवे आराधकनुं स्वरूप कहे छे—

गच्छगओ अणुओगी, गुरुसेवी अनियवासि याउत्तो ।
संजोएण पयाणं, संजमआराहगा भणिया ॥ ३८८ ॥

अर्थ—" गच्छनी मध्ये रहेनार, अनुयोगी एटले ज्ञानादिकनुं सेवन करवामां उद्योगी, गुरुनी सेवा करनार, अनियतवासी एटले मासकल्पादिक विहार करनार अने प्रतिक्रमणादिक क्रियामां आयुक्त—उद्युक्त. ए पांच पदोना संयोगे करीने संयम (चारित्र)-ना आराधक कहेला छे; एटले जेने विषे आ गुणोमांथी वधारे वधारे गुण होय तेने विशेष विशेष आराधक जाणवो. " ३८८.

निम्मम निरहंकारा, उवउत्ता नाणदंसणचरित्ते ।
एगखित्ते वि ठिया, खवंति पोराणयं कम्मं ॥ ३८९ ॥

अर्थ—" निर्मम के० ममता रहित, अहंकार रहित अने विशेष अवबोध रूप ज्ञानने विषे, तत्त्वश्रद्धान रूप दर्शनने विषे, तथा आश्रवना निरोधरूप चारित्रने विषे उपयुक्त—उपयोगवाळा—सावधान एवा महापुरुषो एक क्षेत्रने विषे रह्या होय, तोपण तेओ पुराणा (पूर्व भवे संचय करेला) ज्ञानावरणादिक कर्मने खपावे छे—नाश करे छे."३८९.

जियकोहमाणमाया, जियलोहपरीसहा य जे धीरा ।
वुड्ढावासे वि ठिया, खवंति चिरसंचियं कम्मं ॥ ३९० ॥

अर्थ—" जेओए क्रोध, मान अने मायानो जय कर्यो छे, जेओ लोभसंज्ञा रहित छे, अने जेओए क्षुधा पिपासादिक परीषहोनो जय कर्यो छे एवा जे धीर (सत्त्ववाळा) पुरुषो छे तेओ वृद्धावस्थामां पण एक स्थाने रह्या सता चिरकाळना संचय करेला ज्ञानावरणादिक कर्मने खपावे छे—नाश करे छे. सदाचारवाळा मुनिओने कारणने लइने एक स्थाने वसवामां पण जिनेश्वरनी आज्ञा छे. ए आ गाथानुं तात्पर्य छे. " ३९०.

पंचसमिया तिगुत्ता, उज्जुत्ता संजमे तवे चरणे ।
वाससयं पि वसंता, मुणिणो आराहगा भणिया ॥ ३९१ ॥

अर्थ—" पांच समितिओथी समित (युक्त), त्रण गुप्तिओथी गुप्त (रक्षण करायेला) अने सत्तर प्रकारना संयमने विषे अथवा छ जीवनिकायनी रक्षा रूप संयमने विषे, बार प्रकारनां तपने विषे तथा चरण एटले पांच महाव्रतरूप क्रियाने

गाथा ३८८—अणियओ गुणायतो । आउत्तो । संजोगेण । आराहणा ।

गाथा ३९०—जिअकोह । जियलोभ ।

विषे उद्यमवंत एवा मुनिओ सो वर्ष सुधी एक क्षेत्रने विषे रह्या होय, तोपण तेओ (तेओने) आराधक कहेला छे, अर्थात् जिनेश्वरनी आज्ञानुं पालन करनारने एक स्थाने रहेवामां पण दोष नथी. " ३९१.

तह्मा सव्वाणुन्ना, सव्वनिसेहो य पवयणे नत्थि ।
आयं वयं तुलिज्जा, लाहाकंखि व्व वाणियओ ॥ ३९२ ॥

अर्थ–" तेथी करीने प्रवचन (जिनशासन)ने विषे एकांते सर्वानुज्ञा (सर्व वस्तुनी अनुज्ञा) एटले अमुक वस्तु अमुक रीतेज करवी एवी (एकांत) आज्ञा नथी; तथा एकांते कोइ वस्तुनो सर्वथा निषेध एटले अमुक कार्यनुं आचरण करवुंज नहीं एवो एकांत निषेध पण नथी. कारणके आ जिनशासन स्याद्वादरूप छे. तेथी करीने लाभनी आकांक्षावाळा वणिकनी जेम साधुए आय (ज्ञानादिक लाभ) अने व्यय (ज्ञानादिकनी हानि) ए बन्नेनी तुलना करी कार्य करवुं. जेम लाभनो अर्थी वणिक् जे वस्तुमां लाभ देखे छे तेज वस्तु ग्रहण करे छे, तेम साधु पण लाभालाभनो विचार करे छे. " ३९२.

धम्मंमि नत्थि माया, न य कवडं आणुवत्तिभणियं वा ।
फुड पागडमकुडिलं, धम्मवयणमुज्जुयं जाण ॥ ३९३ ॥

अर्थ–" धर्मने विषे (सत्यने विषे–साधुधर्मने विषे) माया छेज नहीं, (केमके माया अने धर्म ए बन्नेने परस्पर वैर छे–ते बन्ने परस्पर विरुद्ध छे.) वळी धर्मने विषे कपट (बीजाने छेतरवुं) पण होतुं नथी, अथवा आनुवृत्ति एटले बीजाने रंजन करवा माटे मायावाळुं अनुवृत्तिवाळा वचननुं बोलवुं–ते पण होतुं नथी. परंतु स्फुट के० स्पष्ट अक्षरोवाळुं, लज्जा नहीं होवाथी प्रगट अने मायारहित होवाथी अकुटिल एवुं धर्मनुं वचन ऋजु (सरल) अर्थात् मोक्षनुं कारण छे. एम हे शिष्य ! तुं जाण" ३९३.

न वि धम्मस्स भडक्का, उक्कोडा वंचण व कवडं वा ।
निच्छम्मो किर धम्मो, सदेवमणुआसुरे लोए ॥ ३९४ ॥

अर्थ–" धर्मनुं साधन आडंबर नथी. एटले अत्यंत आडंबर देखाडवाथी कांइ धर्म सधातो नथी, तेमज जो तुं मने अमुक वस्तु आपे तो हुं धर्म करुं, एवी तृष्णाए करीने पण धर्म सधातो नथी. अथवा वंचना एटले बीजाने वंचना करवाथी (छेतरवाथी)

गाथा ३९२–वाणीओ ।

गाथा ३९३–आणुयत्ति । उज्जुयं=ऋजु=सरलं मोक्षकारणमिति यावत् ।

गाथा ३९४–भडक्का=आडंबर. । उक्कोडा=लंचा । मणुया । निच्छम्मो=निच्छद्मः ।

धर्मनुं साधन थतुं नथी; अथवा कपट एटले मायायुक्त चेष्टा करवाथी पण धर्मनुं साधन थतुं नथी. परंतु विमानवासी देवो, मृत्युलोकवासी मनुष्यो अने पातालवासी असुरो सहित आ लोक (त्रण भुवन)ने विषे निष्कपट एवो धर्म ज श्रीतीर्थंकरोए कहेलो छे." ३९४.

भिक्खू गीयमगीए, अभिसेए तह य चेव रायणिए ।
एवं तु पुरिसवत्थुं, दव्वाइं चउव्विहं सेसं ॥ ३९५ ॥

अर्थ–" आ भिक्षु (साधु) गीतार्थ छे अथवा अगीतार्थ छे ? उपाध्याय छे के आचार्य छे ? तेमज रत्नाधिक छे ? ए प्रमाणे प्रथम पुरुषवस्तुनो विचार करवो; अने पछी बाकीना द्रव्यादिक (द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भाव) चार प्रकारनो विचार करवो, अर्थात् लाभालाभनो विचार करनारे प्रथम संपूर्ण विचार करवो–वस्तुने ओळखवी." ३९५.

चरणायारो दुविहो, मूलगुणे चेव उत्तरगुणे य ।
मूलगुणे छ ट्ठाणा, पढमो पुण नवविहो तत्थ ॥ ३९६ ॥

अर्थ–" चारित्राचार बे प्रकारनो छे. मूळ गुण–मूळ गुणना विषयवाळो तथा उत्तर गुण एटले उत्तर गुणना विषयवाळो. तेमां मूळ गुणने विषे छ स्थानो (छ प्रकार) छे. पांच महाव्रत अने छठ्ठुं रात्रिभोजनत्याग. तेमां पण एटले ते छए मूळ गुणना स्थानोने विषे प्रथम स्थान (प्राणातिपात विरमण रूप स्थान) नव प्रकारनुं छे. ते पृथिव्यादिक पांच अने द्वींद्रियादिक चार ए नव प्रकारना जीव वधथी विराम पामवो ते." ३९६.

सेसुक्कोसमज्झिमजहन्नओ वा भवे चउद्धाओ ।
उत्तरगुणे अणेगविहो, दंसणनाणेसु अट्ठट्ठ ॥ ३९७ ॥

अर्थ–" बाकीना एटले बीजा महाव्रतथी आरंभीने पांच मूळस्थानो उत्कृष्ट, मध्यम अने जघन्य भेदे करीने त्रण त्रण प्रकारे अथवा द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावभेदे करीने चार चार प्रकारे छे, तथा गोचरी, समिति, भावनादिक उत्तर गुण अनेक प्रकारनो छे. (उत्तर गुणने विषे अनेक प्रकारनो आचार छे.) दर्शन (समकित)मां निःशंकित विगेरे अने ज्ञानमां काळ विनय विगेरे आठ आठ आचार छे." ३९७.

जं जयइ अगीयत्थो, जं च अगीयत्थनिस्सिओ जयइ ।
वट्टावेइ गच्छं, अणंतसंसारिओ होइ ॥ ३९८ ॥

गाथा ३९५–एयं तु । दव्वाइ । गाथा ३९७–सेसुक्कोसो । उत्तरगुणणेगविहो ।

गाथा ३९८–जंजई वट्टावेमइ । वट्टावेइ=वर्तयति ।

अर्थ–" अगीतार्थ (सिद्धान्तने न जाणनार) जे यतना (तप क्रियादिकमां उद्यम) करे छे, अने जे अगीतार्थ निश्रित एटले अगीतार्थनी निश्रामां रहीने क्रियानुष्ठान करे छे; तथा पोते अगीतार्थ छतां जे गच्छने प्रवर्तावे छे–एटले क्रियानुष्ठानमां प्रेरणा करे छे, तो ते अगीतार्थ अनंतसंसारी थाय छे. अर्थात् गीतार्थ मुनिनुं अथवा तेनी निश्रामां रहीने करेलुं–क्रियानुष्ठानज मोक्षफळने आपनारुं थाय छे. " ३९८.

अहीं शिष्य गुरुने प्रश्न करे छे—

कहउ जयंतो साहू, वट्टावेईय जोउ गच्छं तु ।
संजमजुत्तो होउं, अणंतसंसारिओ होइ ॥ ३९९ ॥

अर्थ–" हे पुज्य ! जे साधु तपसंयमने विषे पोते यतना (उद्यम) करे छे, वळी ज तपसंयमने विषे गच्छने प्रवर्तावे छे ते साधु संयमयुक्त थइने पण अनंतसंसारी केम थाय ? तेने अनंतसंसारी केम कह्यो ? " ३९९.

हवे गुरुमहाराज एनो उत्तर आपे छे—

दव्वं खित्तं कालं, भावं पुरिसपडिसेवणाओ य ।
न वि जाणइ अग्गीओ, उस्सग्गववाईयं चेव ॥ ४०० ॥

अर्थ–" हे शिष्य ! अगीतार्थ साधु द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भाव जाणी शकतो नथी, वळी पुरुष एटले आ पुरुष योग्य छे के अयोग्य ? ते जाणी शकतो नथी, तथा प्रतिसेवना–पापसेवना एटले आ मनुष्ये स्ववशे पापसेवन कर्युं छे के परवशे कर्युं छे ते जाणतो नथी. तेमज उत्सर्ग एटले सामर्थ्य छते शास्त्रमां कह्या प्रमाणेज क्रियानुष्ठान करवुं ते, तथा अपवाद एटले रोगादिक कारणे अल्प दोषनुं सेवन करवुं ते–जाणतो नथी तेथी अगीतार्थना क्रियानुष्ठान व्यर्थ छे. " ४००.

जहट्ठियदव्व न याणई, सच्चित्ताचित्तमीसियं चेव ।
कप्पाकप्पं च तहा, जुग्गं वा जस्स जं होई ॥ ४०१ ॥

अर्थ–" वळी अगीतार्थ यथास्थित द्रव्यस्वरूपने जाणतो नथी, तथा सचित्त (सजीव), अचित्त अने मिश्र द्रव्यने (वस्तुने) पण निश्चयथी जाणतो नथी, तथा आ वस्तु कल्प्य छे के अकल्प्य छे ? ते पण जाणतो नथी, अथवा जे वस्तु जे बाळ ग्लानादिकने योग्य होय ते पण ते जाणतो नथी. " ४०१

गाथा ३९९–कहय । वट्टावेइ । संसारिओ भणिओ ।
गाथा ४००–उसग्गववायं । उत्सर्गापवाद ।
गाथा ४०१–जहट्ठिय दव्वं=यथास्थित द्रव्यं । होइ ।

जहट्ठियखेत्त न जाणइ, अध्धाणे जणवएअ जं भणियं ।
कालंपि नवि जाणइ, सुभिक्खदुभिक्ख जं कप्पं ॥ ४०२ ॥

अर्थ–" वळी अगीतार्थ यथास्थित क्षेत्रने एटले आ क्षेत्र भद्रक छे के अभद्रक छे ? ते जाणतो नथी. दूर मार्गवाळा जनपदमां (देशमां) विहार कर्ये छते जे विधिस्वरूप सिद्धान्तमां कहेलुं छे ते पण जाणतो नथी तथा काळ (काळनुं स्वरूप) पण जाणतो नथी, तेमज सुभिक्ष (सुकाळ) अने दुर्भिक्ष (दुष्काळ)ने विषे जे वस्तु कल्प्य के अकल्प्य कहेल छे ते पण अगीतार्थ जाणतो नथी. " ४०२.

भावे हट्ठगिलाण, नवि याणइ गाढगाढकप्पं च ।
सहुअसहुपुरिसवत्थुं, वत्थुमवत्थुं च नवि जाणई ॥ ४०३ ॥

अर्थ–" भावने विषे (भावद्वारने विषे) आ हृष्ट (नीरोगी) छे. माटे तेने आ वस्तु देवा योग्य छे, अने आ ग्लान (रोगी) छे, माटे तेने आ वस्तुज देवा योग्य छे, ते जाणतो नथी. तथा गाढागाढ कल्प एटले गाढ (मोटा) कार्यमां अमुक करवा योग्य छे अने अगाढ (स्वाभाविक) कार्यमां अमुकज करवा लायक छे, ते पण जाणतो नथी. वळी समर्थ शरीरवाळुं अने असमर्थ शरीरवाळुं पुरुषवस्तुने पण जाणतो नथी के आ समर्थ छे ने आ असमर्थ छे; तथा वस्तु एटले आचार्यादिकना स्वरूपने अने अवस्तु एटले सामान्य साधुना स्वरूपने पण जाणतो नथी. " ४०३.

पडिसेवणा चउद्धा, आउट्टि प्पमाय दप्प कप्पेसु ।
नवि जाणइ अग्गीओ, पच्छित्तं चेव जं तत्थ ॥ ४०४ ॥

अर्थ–" प्रतिसेवना (निषिद्ध वस्तुनुं आचरण) चार प्रकारे होय छे. एक पाप जाणीने करवुं १ एक पाप प्रमाद (निद्रादिक) वडे करवुं २, एक पाप दर्प वडे एटले धावन वल्गनादिक वडे करवुं ३, अने एक पाप कारणने लइने करवुं ४. ए चार प्रकारना पापने अगीतार्थ (सिद्धान्तना रहस्यनो अजाण) जाणतो नथी. वळी निश्चे आलोचनादिक जे प्रायश्चित्त, ते केवी जातनी प्रतिसेवनामां केवी जातनुं आपवुं ते पण अगीतार्थ जाणतो नथी. " ४०४.

जह नाम कोइ पुरिसो, नयणविहूणो अदेसकुसलो य ।
कंताराडविभीमे, मग्गपणट्ठस्स सत्थस्स ॥ ४०५ ॥

गाथा ४०२=याणइ । कालंपिय । याणइ ।

गाथा ४०३–हिठ्ठ गिलाणं=हृष्ट ग्लानं । गाढागाढ । सुहअसुहपुरिसवत्थं । याणइ ।

गाथा ४०४–पमाय । कप्पेय । गाथा ४०५–कोई । मार्गप्रणष्टस्य=मार्गभ्रष्टस्य ।

इच्छेइ य देसियत्तं, किं सो उ समत्थ देसियत्तस्स ।
दुग्गाइं अयाणंतो, नयणविहूणो कहं देसे ॥४०६॥युग्मम्॥

अर्थ—" जेम (नाम—प्रसिद्धिमाटे अव्यय) नयनरहित (अंध) अने अदेश कुशळ के० मार्गना ज्ञानमां अकुशळ एवो कोइ पुरुष भीम के० भयंकर एवी कांतार अटवीमां एटले विषम अटवीमां मार्गथी भ्रष्ट थयेला (भूला पडेला) सार्थने (जन-समुदायने) मार्ग बतावबा इच्छे, के हुं तेओने मार्ग बतावुं; पण शुं ते अंध पुरुष मार्ग बताववामां समर्थ थाय ? नज थाय. केमके दुर्ग एटले रस्तामां आवता विषम स्थानोने नहीं जाणतो एवो ते नेत्रहीन (अंध) पुरुष केवी रीते मार्ग बतावी शके ? अर्थात् नज बतावी शके. " ४०६.

एवमगीयत्थोवि हुं, जिणवयणपईवचक्खुपरिहीणो ।
दव्वाइं अयाणंतो, उस्सग्गववाइयं चेवं ॥ ४०७ ॥

अर्थ—" तेज प्रमाणे (हु इति निश्चये) जिनेश्वरनां कहेलां वचनो रूपी देदीप्यमान दीपक रूप चक्षुथी रहित एवो अगीतार्थ पण द्रव्यादिक वस्तुओने तथा उत्सर्ग अपवाद मार्गने नहीं जाणतो सतो शी रीते बीजाने मार्ग बतावी शके ? नज बतावी शके. " ४०७.

कह सो जयओ अगीओ, कह वा कुणऊ अगीयनिस्साए ।
कह वा करेऊ गच्छं, सबालवुड्ढाउलं सोऊ ॥ ४०८ ॥

अर्थ—" ते (उपर कह्यो तेवो) अगीतार्थ शी रीते पोते चारित्रमां यतना करी शके ? अथवा अगीतार्थनी निश्राए वर्तता बीजा मुनिओ पण तपसंयमने विषे यतना करवाने शी रीते समर्थ थाय ? अथवा ते (अगीतार्थ) बाळ अने वृद्धोथी आकुळ (सहित) एवा गच्छने शी रीते प्रवर्तावी शके ? कांइ न करी शके. " ४०८.

सुत्ते य इमं भणियं, अपच्छित्ते य देइ पच्छित्तं ।
पच्छित्ते अइमत्तं, आसायण तस्स महईओ ॥ ४०९ ॥

अर्थ—" सिद्धान्तमां एवुं कह्युं छे के जे अगीतार्थ बीजाने प्रायश्चित्त (पाप) विना प्रायश्चित्त (तपस्या करवानुं) आपे, अथवा थोडा प्रायश्चित्त (पाप)मां अधिक

गाथा ४०६– इच्छई । सो समत्थो । देसियत्तं=दर्शकत्वं–मार्गदर्शकत्व। दुग्गाइं=दुर्गाणि–विषमप्रदेशान्। कहिं । देसे=दर्शयेत् ।

गाथा ४०७–दव्वाइ । गाथा ४०८–कुणउ । करेउ । वड्ढाउल । सोउ ।

गाथा ४०९–अप्पाच्छित्ते । अइमत्तं=अतिमात्रं । महइओ ।

(मोटुं) प्रायश्चित्त (तपस्या) आपे, तो ते अगीतार्थने मोटी आशातना–जिनाज्ञानी विराधना थाय छे–तेवा अगीतार्थने जिनेश्वरनी आज्ञानो विराधक जाणवो." ४०९.

आसायण मिच्छत्तं, आसायणवज्जणा उ सम्मत्तं ।
आसायणानिमित्तं, कुव्वइ दीहं च संसारं ॥ ४१० ॥

अर्थ–" आशातना शब्दे करीने जिनाज्ञानो भंग एज मिथ्यात्व कहेवाय छे, अने आशातनाने वर्जवी एटले जिनाज्ञानुं पालन करवुं एज सम्यक्त्व कहेवाय छे; तेमज आशातनाने निमित्ते एटले जिनाज्ञानो भंग करवाथी प्राणी दीर्घ संसार एटले चार गतिमां भ्रमण करवा रूप बहुल संसार उपार्जन करे छे." ४१०.

एए दोसा जह्मागीयं जयंतस्सगीयनिस्साए ।
वट्टावय गच्छस्स य, जो अ गणं देयगीयस्स ॥ ४११ ॥

अर्थ–" जेथी करीने तपसंयमने विषे यतना करता एवा पण अगीतार्थने ए (पूर्वोक्त) दोषो लागे छे, अगीतार्थनी निश्राए करीने (वचने करीने) तपसंयम करता एवा बीजाने पण ए दोषो लागे छे, वळी गच्छना प्रवर्तावनार (अगीतार्थ)ने पण ए दोषो लागे छे; तथा जे अगीतार्थने (मूर्खने) गण (आचार्यपद) आपे छे–सोंपे छे तेने पण ए पूर्वोक्त दोषो लागे छे." ४११.

अबहुसुओ तवस्सी, विहरिउकामो अजाणिऊण पहं ।
अवराहपयसयाइं, काऊण वि जो न याणेइ ॥ ४१२ ॥

अर्थ–" जे अबहुश्रुत (अल्प शास्त्रनो जाण) छतो तपस्वी होय एटले गाढ तपस्या करतो होय, जे मार्गने (मोक्षमार्गने) जाण्या विना विहार करवाने इच्छतो होय, जे अपराध (अतिचार)ना सेंकडो स्थानोने (सेंकडो अतिचारने) करीने–सेवीने पण जे अल्पश्रुत होवाथी जाणतो न होय." ४१२. (संबंध आगली गाथामां छे.)

देसियराइयसोहिय, वयाइयारे य जो न याणेइ ।
अविसुध्धस्स न वढ्ढइ, गुणसेढी तत्तिया ठाइ ॥ ४१३ ॥

गाथा ४१०–वजणा य, वज्जणा इ । कुव्वई ।

गाथा ४११–अगीअ जयंतस्स अगीयनिस्साए । जोवि गणं देइ अगीयस्स ।

गाथा ४१२–अवहुस्सुओ । काहुण । याणेई ।

गाथा ४१३–सोहिं । वयाइचारेय । याणेई । तत्तिया=तावती ।

अर्थ—" वळी जे दिवस अने रात्रि संबंधी अतिचारोनी शुद्धिने तथा व्रतोना (मूळोत्तर गुणोना) अतिचारोने जाणतो नथी, एटले अल्पश्रुत होवाथी शुद्ध थतो नथी. ते अविशुद्ध (पापनी शुद्धिरहित एवा) पुरुषनी गुणश्रेणी (ज्ञानादिक गुणोनी परंपरा) वृद्धि पामती नथी, जेटली होय तेटलीज रहे छे; अधिक थती नथी. " ४१३

अप्पागमो किलिस्सइ, जइ वि करेइ अइदुक्करं तु तवं ।
सुंदरबुद्धीइ कइं, बहुयं पि न सुंदरं होई ॥ ४१४ ॥

अर्थ—" अल्प सिद्धान्तने जाणनार (साधु) जोके मासक्षपणादिक अतिदुष्कर तप करे, तोपण ते कष्टनेज सहन करे छे (एम जाणवुं). सुंदर बुद्धिए करेलुं घणुं एवुं ते तप पण सुंदर थतुं नथी. ते तप अज्ञानकष्टनी बराबरज छे. " ४१४.

अपरिच्छियसुयनिहसस्स, केवलमभिन्नसुत्तचारिस्स ।
सव्वुज्जमेण वि कयं, अन्नाणतवे बहु पडई ॥ ४१५ ॥

अर्थ—" नथी जाण्युं श्रुतनिकष (सिद्धान्ततुं रहस्य) जेणे तथा केवळ अभिन्न एटले टीकादिकना ज्ञानरहित मात्र श्रुतना अक्षरने अनुसारेज चालवाना स्वभाववाळा एवा साधुनुं सर्व उद्यमवडे करेलुं क्रियानुष्ठानादिक जे ते अज्ञानतपने विषे—अज्ञानकष्टने विषेज अत्यंत पडे छे. " ४१५.

ते उपर दृष्टान्त कहे छे—

जह दायंम्मि वि पंहे, तस्स विसेसे पहस्स याणंतो ।
पंहिओ किलिस्सइ च्चिय, तह लिंगायार सुअमित्तो ॥ ४१६ ॥

अर्थ—" जेम कोइ पुरुषे कोइ पथिक (मुसाफर)ने मार्ग देखाड्ये सते पण ते मार्गना विशेषने एटले ' आ मार्ग दक्षिणे (जमणो) जाय छे के वाम (डावो) जाय छे ? इत्यादिक विशेष स्वरूपने नहीं जाणतो एवो ते पथिक निश्चे क्लेश पामे छे, एटले मार्गमां भूलो पडीने अत्यंत दुःख पामे छे; तेम (आ दृष्टान्तवडे) लिंग (साधुवेष) अने आचार (क्रिया) तेने धारण करनार एटले पोतानी बुद्धिथी क्रिया करनार अने सूत्रना अक्षर मात्रनेज जाणनार एवो ते साधु पण ते पथिकनी जेम अत्यंत दुःख पामे छे. " ४१६.

गाथा ४१४—किलस्सइ । दुक्करंति तवं । वुद्धीए कयं । होइ ।

गाथा ४१५—निहिसस्स । वहु पडइ ।

गाथा ४१६—दायंमिविपहे=दर्शितेपि पथे—मार्गे । किलस्सइ । सुयमित्तो ।

कप्पाकप्पं एसणमणेसणं चरणकरणसेहविहिं ।
पायच्छित्तविहिं पि य, दव्वाइगुणेसु अ समग्गं ॥ ४१७ ॥
पव्वावणविहिमुट्ठावणं च, अज्जाविहिं निरवसेसं ।
उस्सग्गववायविहिं, अयाणमाणो कहं जयओ ॥४१८॥युग्मम्

अर्थ–" कल्प्यने, अकल्प्यने, एषणा (आहारशुद्धि)ने, अनेषणा (आहारना दोष)ने, चरण सीत्तरीने, करण सीत्तरीने, नवदीक्षितनी शिक्षाविधिने, दश प्रकारना प्रायश्चित्त (आलोचनादि)नी विधिने, द्रव्यादिक एटले द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावने विषे तथा गुणो (उत्तम अने मध्यम)ने विषे संपूर्णताने, प्रव्राजना विधि (नवाने दीक्षा आपवाना विधि)ने, उत्थापना एटले महाव्रतनो उच्चार करवो तेना विधिने, आर्या (साध्वी)ना विधिने तथा उत्सर्गमार्ग (शुद्ध आचारनुं पालन) अने अपवादमार्ग (कारणे आपत्ति वखते आदरवा लायक)ना विधिने संपूर्ण रीते नहीं जाणनार एवो अल्पश्रुत लिंगधारी शी रीते मोक्षमार्गने विषे यतना (उद्यम) करी शके ? नज करी शके. ४१८.

सीसायरियकमेण य, जणेण गहियाइं सिप्पसत्थाइं ।
नज्जंति बहुविहाइं, न चक्खुमित्ताणुसरियाइं ॥ ४१९ ॥

अर्थ–" वळी (लौकिकमां) मनुष्योए शिष्य अने आचार्यना क्रमे करीने विद्या ग्रहण करायछे, एटले शिष्य विनय पूर्वक कळाचार्यादिकने प्रसन्न करीने तेनी पासेथी विद्या ग्रहण करे छे एवा विनयना क्रमे करीने बहु प्रकारनां शिल्पशास्त्रो एटले चित्रादिकनां अने व्याकरण विगेरेनां शास्त्रो ग्रहण करेलां (सारी रीते शीखेलां) जणाय छे–जोवामां आवे छे; परंतु चक्षुमात्रे करीने (नेत्रथी जोवा मात्रे करीने) अनुसरेलां एटले पोतेज पोतानी मेळे (गुरुनो विनय कर्या विना) शीखेलां जोवामां आवतां नथी. अर्थात् पोतानी मेळे शीखेलां ते लौकिक शास्त्रो पण शोभा पामतां नथी, तो पछी लोकोत्तर शास्त्रोने माटे तो शुं कहेवुं! ॥ ४१९ ॥

जह उज्जमिउं जाणइ, नाणी तव संजमे उवायविऊ ।
तह चक्खुमित्तदरिसण, सामायारी न याणंति ॥ ४२० ॥

गाथा ४१७–विहंपिय । दव्वायगुणेसु य । गाथा ४१८–अजाणमाणो ।
गाथा ४१९–गहिआइं । शिल्पशास्त्राणि । नज्जंति=जायन्ते ।
गाथा ४२०–उज्जमिउ=उद्यम कर्तुं । उपायवित् । अवायविऊ ।

अर्थ-" जेवी रीते उपायने जाणनार ज्ञानी तप अने संयमने विषे उद्यम करवानुं जाणे छे; एटले ज्ञानी पुरुष सिद्धान्तना ज्ञाने करीने जेवी रीते उद्यम करे छे, तेवी रीते चक्षुमात्रना दर्शनवडे करीने एटले क्रियानुष्ठानादिक करनारा एवा बीजानी समीपे रहीने मात्र जोवाथी (सामाचारी) शुद्ध आचार जणातो नथी. अर्थात् पोताना ज्ञानथी जेवुं जणाय छे तेवुं बीजाने करतां जोवामात्रथी जणातुं नथी. " ४२०.

सिप्पाणि य सत्थाणि य, जाणंतो वि न य जुंजइ जो उ।
तेसिं फलं न भुंजइ, इअ अजयंतो जई नाणी ॥ ४२१ ॥

अर्थ-" शिल्पो (चित्रकर्म विगेरे) अने व्याकरणादिक शास्त्रोने जाणतो छतो पण जे पुरुष तेनी योजना नथी करतो एटले ते ते क्रियाओनी प्रवृत्ति नथी करतो, ते पुरुष ते शिल्पादिकथी थनारा धनलाभादिक फळने भोगवतो-पामतो नथी. तेज प्रमाणे संयममां यतना (उद्यम) नहीं करनारो ज्ञानवान एवो यति (साधु) पण मोक्षरूप फळने पामतो नथी. " ४२१.

गारवतियपडिबद्धा, संजमकरणुज्जमंमि सीअंता ।
निग्गंतूण गणाओ, हिंडंति पमायरन्नंमि ॥ ४२२ ॥

अर्थ-" रस, ऋद्धि अने सातारूपी त्रण गारवने विषे प्रतिबद्ध थयेला (आसक्त थयेला) अने संयम करणना (छ जीव निकायनी रक्षा करवाना) उद्यमने विषे शिथिल थयेला साधुओ गण (गच्छ)थी बहार नीकळीने प्रमादरूपी अरण्यमां स्वेच्छाए विहार करे छे-भ्रमण करे छे. " ४२२.

नाणाहिओ वरतरं, हीणो वि हु पवयणं पभावंतो ।
न य दुक्करं करंतो, सुट्ठु वि अप्पागमो पुरिसो ॥ ४२३ ॥

अर्थ-" चारित्रक्रियाए हीन छतो पण निश्चे जिनशासननी प्रभावना करनार एवो ज्ञानाधिक (ज्ञानवडे पूर्ण ज्ञानी) पुरुष श्रेष्ठ छे; पण सारी रीते मासक्षपणादिक दुष्कर तपस्या करतो छतो पण अल्पश्रुत पुरुष श्रेष्ठ नथी, अर्थात् क्रियावान छतां पण ज्ञानहीन पुरुष श्रेष्ठ नथी. " ४२३.

नाणाहियस्स नाणं, पुज्जई नाणा पवत्तए चरणं ।
जस्स पुण दुण्हइक्कं पि, नत्थि तस्स पुज्जए काई ॥ ४२४ ॥

गाथा ४२१-वि य न जुंजई । योजयति । इय यजयंतो ।

गाथा ४२२-सीयता । घराओ । रणंमि ।

गाथा ४२४-पूयज्जई । पवत्तई । दुण्हएक्कं । तस पूइज्जए काउं । पूइज्जइ काइ ।

अर्थ-" ज्ञानाधिक (ज्ञानथी पूर्ण) पुरुषनुं ज्ञान पूजाय छे, केमके ज्ञानथी चरण (चारित्र) प्रवर्ते छे; परंतु जे पुरुषने ज्ञान अने चारित्र ए बेमांथी एक पण नथी ते पुरुषनुं शुं पूजाय ? शुं पूजवा योग्य होय ? कांइ पण पूजवा योग्य न होय. "

नाणं चरित्तहीणं, लिंगग्गहणं च दंसणविहीणं ।
संजमहीणं च तवं, जो चरइ निरत्थयं तस्स ॥ ४२५ ॥

अर्थ-" जे पुरुष चारित्र (क्रिया) रहित ज्ञाननुं आचरण करे छे, जे पुरुष दर्शन (सम्यक्त्व) रहित लिंग (मुनिवेष)नुं ग्रहण (धारण) करे छे, अने जे पुरुष संयम (छ जीव निकायनी रक्षा रूप चारित्र) रहित तपनुं आचरण करे छे-ते पुरुषोना ए सर्वे मोक्षनां साधनो निरर्थक छे-निष्फळ छे. " ४२५.

जहा खरो चंदणभारवाही, भारस्स भागी न हु चंदणस्स ।
एवं खु नाणी चरणेण हीणो, नाणस्स भागी न हु सुग्गईए॥

अर्थ-" जेम चंदनना भारने वहन करनार खर (गधेडो) केवळ भारनोज भागी थाय छे, पण चंदनना सुगंधनो भागी थतो नथी, तेज रीते निश्चे चारित्रे करीने हीन एवो ज्ञानी पण केवळ ज्ञाननोज भागी थाय छे, पण मोक्षरूप सुगतिनो एटले ज्ञानना परिमलनो भागी थतो नथी. माटे क्रिया सहित ज्ञान होय तोज ते श्रेष्ठ छे." ४२६.

संपागडपडिसेवी, काएसु वएसु जो न उज्जमई ।
पवयणपाडणपरमो, सम्मत्तं कोमलं तस्स ॥ ४२७ ॥

अर्थ-" प्रगटपणे (लोक समक्ष) प्रतिकूल (निषिद्ध) आचरणने आचरनार एवो जे पुरुष छ जीवनिकायना पालनने विषे अने पांच महाव्रतना रक्षणने विषे उद्यम करतो नथी-प्रमादनुंज सेवन करे छे, तथा जे प्रवचन (जिनशासन)नुं पातन (लघुता) करवामां तत्पर छे, तेनुं सम्यक्त्व कोमळ एटले असार जाणवुं; अर्थात् तेने मिथ्यात्वज वर्त्तेछे एम जाणवुं. " ४२७.

चरणकरणपरिहीणो, जइ वि तवं चरइ सुट्ठु अइगुरुअं ।
सो तिल्लं व किणंतो, कंसिय बुद्धो मुणेयव्वो ॥ ४२८ ॥

अर्थ-" चरण एटले महाव्रतादिकनुं आचरण अने करण एटले आहारशुद्धि

गाथा ४२५-संजमविहीणं ।
गाथा ४२७=जो उ न वज्जमइ । संपागड=संप्रकट ।
गाथा ४२८-जयइ वि । गरूयं । बुद्दो ।

विगेरे तेणे करीने हीन एवो कोइ पुरुष जोके सारी रीते घणुं मोटुं तप करे छे, परंतु तेने आदर्शे करीने (आरीसाए करीने) तेलना बदलामां तल आपनार बोद्र गामना निवासी मूर्खनी जेवो जाणवो, एटले थोडाना बदलामां घणुं आपी देनारो जाणवो. तल आपीने तेल लेनारो ते मूर्ख घणा तलने हारी जाय छे; ते एवी रीते के आदर्शना पाछला भागे भरीने तल आपे अने काचनी बाजुथी तेल ग्रहण करे तेथी तेल घणुं थोडुं आवे अने तल घणा जाय. एवी रीते करार करनार बोद्रगामवासी मूर्खनुं दृष्टान्त अहीं जाणवुं; एटले ते जेम थोडा तेलना बदलामां घणां तल हारी गयो, तेम प्रमादी मुनि चारित्रनी थोडी शिथिलताना बदलामां घणुं तप हारी जाय छे. आ बोद्र गामवासीनुं दृष्टान्त नानुं होवाथी अत्रे लख्युं नथी. " ४२८.

छज्जीवनिकायमहव्वयाण, परिपालणाइ जइधम्मो ।
जइ पुण ताइ न रक्खइ, भणाहि को नाम सो धम्मो ॥४२९॥

अर्थ-" पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय अने त्रसकाय ए छ जीवनिकायनुं अने प्राणातिपातविरमणादिक पांच महाव्रतोनुं परिपालन (सारी रीते रक्षण) करवाथी यतिधर्म थाय छे-कहेवाय छे. पण जो ते छ जीवनिकाय अने पांच महाव्रतोनुं रक्षण न करे, तो हे शिष्य ! तुं कहे के तेने कयो धर्म कहेवो ? अर्थात् तेना रक्षण विना धर्म कहेवायज नहीं. " ४२९

छज्जीवनिकायदयाविवज्जिओ नेव दिक्खिओ न गिही ।
जइधम्माओ चुको, चुकइ गिहीदाणधम्माओ ॥ ४३० ॥

अर्थ-" छ जीवनिकायनी दयाथी रहित एवो वेषधारी दीक्षित (साधु) कहेवायज नहीं, तेमज (मस्तक मुंडेलुं होवाथी) गृहस्थी पण कहेवाय नहीं. ते यतिधर्मथी चुक्यो-भ्रष्ट थयो, अने गृहस्थना दानधर्मथी पण चूके छे-भ्रष्ट थायछे. केमके तेणे आपेलुं दान पण शुद्ध संयमीने कल्पतुं नथी. " ४३०

सव्वाओगे जह कोई, अमच्चो नरवइस्स घित्तूणं ।
आणाहरणे पावइ, वहबंधणदव्वहरणं च ॥ ४३१ ॥

अर्थ-" जेम कोइ अमात्य (प्रधान) नरपति (राजा)ना सर्व आयोगो (अधिकारो)ने ग्रहण करीने (पामीने) पछी जो राजानी आज्ञानो भंग करे, तो ते

गाथा ४२९-परिपालणाय । ताइ ।
गाथा ४३०-दिक्खिउ । गिहिदाणधम्माओ ।
गाथा ४३१-नरवयस्स । अमच्चो=अमात्यः ।

वध एटले लाकडी विगेरेना प्रहारने, सांकळ (बेडी) विगेरेना बंधनने तथा द्रव्य-हरण एटले सर्वस्वना नाशने अने चकारथी छेवट मरणने पण आज्ञानो भंग करवाथी पामे छे. " ४३१.

तह छक्कायमहव्वयसव्वनिवित्तीउ गिह्णिऊण जई ।
एगमवि विराहंतो, अमच्चरन्नो हणइ बोहिं ॥ ४३२ ॥

अर्थ–" तेवीज रीते छ जीवनिकाय तथा पांच महाव्रत संबंधी सर्व निवृत्ति (सर्वविरति) रूप प्रत्याख्यान (नियमो)ने ग्रहण करीने यति (साधु) एक पण जीवनिकायनी अथवा एक पण व्रतनी विराधना करतो सतो अमर्त्य राजा (देवोना राजा–तीर्थंकर)ए आपेली अथवा तेमणे प्ररूपेली बोधिने हणे छे–नाश पमाडे छे. अर्थात् जिनाज्ञानो भंग करवाथी बोधि (सम्यक्त्व)नो नाश थाय छे; अने तेथी ते अनन्त संसारी थाय छे. " ४३२.

तो हयबोहीय पच्छा, कयावराहाणुसरिसमियममियं ।
पुण वि भवोअहिपडिओ, भमइ जरामरणदुग्गंमि ॥ ४३३ ॥

अर्थ–" त्यार पछी हणी छे बोधि जेणे एवो ते मुनि करेला अपराध (जिनाज्ञा-भंगरूप)ने अनुसारे एटले अनुमाने करीने समान आ प्रत्यक्ष एवा अमित एटले मानरहित (अति मोटा) फळने पामे छे. ते फळ कयुं? ते कहे छे–वृद्धावस्था तथा मरणे करीने अत्यंत दुर्ग एटले गहन एवा भवसागरने विषे पड्यो छतो वारंवार परिभ्रमण करे छे–अनंतकाळ परिभ्रमण करवारूप फळने पामे छे. " ४३३.

जइयाणेणं चत्तं, अप्पणयं नाणदंसणचरित्तं ।
तइया तस्स परेसु, अणुकंपा नत्थि जीवेसु ॥ ४३४ ॥

अर्थ–" ज्यारे आ निर्भागी जीवे आत्माने हितकारक एवा ज्ञान, दर्शन, चारित्रनो त्याग कर्यो, त्यारे समजवुं के ते जीवने बीजा एटले पोता शिवाय बीजा जीवोने विषे अनुकंपा नथी. अर्थात् जे पोताना आत्मानो हितकारक नथी थतो ते बीजाओनुं हित शी रीते करे ? पोताना आत्मापर दया होय तोज बीजा जीवोपर दया थइ शके छे. (आत्मदया मूळकज परदया छे.) " ४३४.

गाथा ४३२–निवत्तिओ । गिह्णिऊण । रण्णो । अमच्चरन्नो=अमर्त्यराज्ञः तीर्थंकरदेवस्य ।

गाथा ४३३–हयबोहि पच्छा । हयबोही । कृतापराधानुसदृशमिदमामितम् । पुणो वि ।

गाथा ४३४–यदाऽनेन त्यक्तं । अप्पणयं=आत्मनीनं । परेसुं ।

छक्कायरिऊण अस्संजयाण लिंगावसेसमित्ताणं ।
बहुअस्संजमो पवहो, खारो मइलेइ सुट्ठुअरं ॥ ४३५ ॥

अर्थ–" छ जीवनिकायना शत्रु एटले छकायनी विराधना करनार, असंयत एटले जेणे मन, वचन कायाना योगने मोकळा (छुटा) मूकी दीधा छे एवा, तथा लिंगावशेषमात्र एटले केवळ रजोहरण विगेरे वेषनेज धारण करनारा एवा पुरुषोनो मोटो असंयम (अनाचार) रूप पापनो प्रवाह क्षार एटले बाळेला तलनी भस्मनी जेम सुष्टुतर एटले गाढ अथवा सम्यक् प्रकारे पोताना अने बीजाना आत्माने पण मालिन करे छे. ४३५.

किं लिंगविड्डुरीधारणेण, कज्जम्मि अट्ठिए ठाणे ।
राया न होइ सयमेव, धारयं चामराडोवे ॥ ४३६ ॥

अर्थ–" जेम स्थाने एटले श्रेष्ठ सिंहासने बेठेलो अने मात्र पोतेज एटले हाथी, घोडा विगेरेथी रहित एकलोज, चामरना आटोप (आडंबर)ने धारण करतो सतो पण राजा होतो नथी–थइ शकतो नथी, तेवीज रीते कार्यने विषे एटले संयमनी यतनाने विषे नहीं रहेलो–संयमथी रहित एवो साधु, लिंग एटले साधुवेष–तेनो आडंबर मात्र धारण करवावडे करीने शुं साधु कहेवाय ? नज कहेवाय. माटे गुण विनानो आडंबर करवो व्यर्थ छे. ए आ गाथानो तात्पर्य छे. " ४३६.

जो सुत्तत्थविणिच्छियकयागमो मूलउत्तरगुणोहं ।
उव्वहइ सयाऽखलिओ, सो लिक्खइ साहुलिक्खंमि ॥ ४३७ ॥

अर्थ–" सूत्र अने अर्थनो विनिश्चय एटले तथ्य (सत्य) ज्ञान तेणे करीने कर्यो छे आगम जेणे अर्थात् जाण्युं छे सिद्धान्तनुं रहस्य जेणे एवो (सिद्धांतज्ञाता) अने निरंतर अस्खलित एटले अतिचाररहित मूल अने उत्तर गुणना समूहने जे वहन करे छे–धारण करे छे एवो साधु साधुना लेखामां–साधुओनी गणतरीमां लखाय छे–गणाय छे. " ४३७.

बहुदोससंकिलिट्ठो नवरं मइलेई चंचलसहावो ।
सुट्ठु वि वायामंतो, कायं न करेइ किंचि गुणं ॥ ४३८ ॥

गाथा ४३५–छक्कारिऊण । असंजयाण । षट्कायरिपूणाम् । लिगावसेसुमित्ताण । बहुअस्संजमपवहो । बहुअसंजमपवहो । सुठ्ठुयरं । गाथा ४३६–लिंगाडंबरधारणेन । लिंगविदुरि । धारिंतो ।

गाथा ४३७–सुतत्थ । गुणेहिं । सायाखलिओ । साहूलिक्खंमि ।

गाथा ४३८–मइलेइ, मैलेइ । वायामित्तो=परीषहादि दुःखं सहमानः ।

अर्थ–" रागद्वेषरूपी घणा दोषोवडे संक्लिष्ट (भरेलो) एटले दुष्ट चित्तवाळो अने जेनो स्वभाव (अभिप्राय) चंचळ एटले विषयादिकमां लुब्ध छे एवो पुरुष अत्यंत परीसहादिक कष्टने सहन करतो छतो पण मात्र कायाए करीने कांइ पण (थोडो पण) कर्मक्षयादि रूप गुणने करतो नथी–मेळवतो नथी; नवरं के० उलटो ते पोताना आत्माने मलिन करे छे. " ४३८.

केसिंचि वरं मरणं, जीवियमन्नेसिमुभयमन्नेसिं ।
दद्दुरदेविच्छाए, अहियं केसिं चं उभयं पि ॥ ४३९ ॥

अर्थ–" दर्दुर देवनी इच्छामां केटलाएकनुं मरणज श्रेष्ठ छे, केटलाएक पुरुषोनुं जीववुंज श्रेष्ठ छे, केटलाएकनुं जीवित अने मरण बन्ने श्रेष्ठ छे, अने केटलाएकनुं जीवित अने मरण बन्ने अहितकारक छे. आ गाथानो सविस्तर भावार्थ दर्दुरांक देवनी कथाथी जाणवो' " ४३९. ते कथा नीचे प्रमाणे–

दर्दुरांक देवनी कथा.

प्रथम दर्दुरांक देवना पूर्वभवनुं स्वरूप कहे छे—कौशांबी महापुरीमां शतानीक नामे राजा राज्य करतो हतो, ते वखते ते गाममां एक सेडुक नामनो दरिद्री ब्राह्मण रहेतो हतो. तेनी स्त्री गर्भवती थइ. ज्यारे तेनो प्रसूतिसमय नजीक आव्यो त्यारे तेणे पोताना पतिने कह्युं के–'मारो प्रसूतिकाळ समीप आव्यो छे, माटे मने घी, गोळ विगेरे लावी आपो.' त्यारे सेडुक बोल्यो के–' मारी पासे एवी कोइ पण जातनी कळा नथी, तेथी द्रव्य विना घी गोळ विगेरे क्यांथी लावुं ? ' ते सांभळीने ते बोली के—' जो कांइ पण कळा न होय तोपण उद्यम करवाथी फळनी प्राप्ति थाय छे. कह्युं छे के—

प्राणिनामन्तरस्थायी, न ह्यालस्यसमो रिपुः ।
न ह्युद्यमसमं मित्रं, यं कृत्वा नावसीदति ॥

"प्राणीओनो पोताना अन्तःकरणमां रहेला आळस जेवो बीजो कोइ शत्रु नथी, अने उद्यम समान बीजो कोइ मित्र नथी, के जे (उद्यम) करवाथी प्राणी कदि पण सीदातो नथी–खेद पामतो नथी. "

आ प्रमाणे पोतानी स्त्रीनुं वाक्य सांभळीने ते सेडुके एक फळ लइ राजानी सभामां जइ राजाने ते भेट कर्युं. एवी रीते हंमेशां ते राजसभामां फळ लइ जइने शतानीक राजानी सेवा करवा लाग्यो.

गाथा ४३९–केसिंचि ।

एकदा कोइ कारणथी चंपा नगरीना राजा दधिवाहने आवीने कौशांबी नगरीने घेरो घाल्यो. ते वखते शतानीक पासे अल्प सैन्य होवाथी ते किल्लानी अंदरज रह्यो. हमेशां युद्ध थतां अनुक्रमे वर्षाऋतु आवी. ते वखते दधिवाहन राजानुं केटलुंक सैन्य आम तेम जतुं रह्युं, तेवामां पेलो सेडुक ब्राह्मण पुष्प फळ विगेरे लेवा माटे गाम बहार वाडीए गयो हतो. तेणे दधिवाहननुं सैन्य थोडुं जोइने शतानीक राजा पासे आवीने कह्युं के–' हे राजा ! आजे युद्ध करशो तो आपनो जय थशे.' ते सांभळीने शतानीक राजा सैन्य सहित किल्ला बहार नीकळ्यो. युद्ध करतां दधिवाहननुं सैन्य भाग्युं; एटले तेना हाथी घोडा विगेरे लइ लइने शतानीक राजा पोतानी नगरीमां आव्यो. पछी सेडुकने घणुं मान आपीने तेणे कह्युं के–' हे सेडुक ! हुं तारा पर प्रसन्न थयो छुं, माटे इच्छानुसार माग.' सेडुके कह्युं के–' हे स्वामी ! हुं घेर जइ मारी स्त्रीने पुछीने पछी मागीश ' एम कही घेर जइने तेणे पोतानी स्त्रीने पूछ्युं के " हे प्रिया ! आजे शतानीक राजा मारा पर तुष्टमान थइने इच्छित वरदान आपे छे, माटे हुं शुं मागुं ? " ते सांभळीने तेणे विचार्युं के–' जो आ घणा वैभवने पामशे तो मारुं अपमान करशे. ' एम विचारीने ते स्त्रीए कह्युं के–" हे प्राणनाथ ! जो तमारा पर राजा प्रसन्न थया होय, तो हंमेशां इच्छा प्रमाणे भोजन अने एक दीनार (महोर) दक्षिणानी मागणी करो. केमके निद्रा वेचीने ग्रहण करेला उजागरा (जागरण)नी जेवा गाम के नगरना अधिपतिपणाए करीने शुं फळ छे ? (एटले गाम गरास मागवो ते तो निद्रा वेचीने उजागरो लीधा जेवुं छे, माटे ते न मागवुं.) " आ प्रमाणे स्त्रीनुं वाक्य सांभळीने ते निर्भागीए पण तेज माग्युं. तेथी राजाए पण हंमेशने माटे वाराफरती दरेक घेर तेने जमाडीने दक्षिणा आपवानो हुकम कर्यो, एटले लोको तेने उपराउपर निमंत्रण करवा लाग्या. तेथी सेडुक पण दक्षिणाना लोभथी एक घेर भोजन करीने घेर जइ मुखमां आंगळां नांखी प्रथम खाधेलानुं वमन करी बीजे घेर जमवा जवा लाग्यो. ए प्रमाणे अतृप्तिथी भोजन करता सेडुकने त्वचाविकार थवाथी गळत् कोढनो व्याधि उत्पन्न थयो, एटले हाथ पग विगेरे अवयवो गळवा लाग्या; परंतु ते धन अने पुत्रादिकना परिवारथी घणो वृद्धि पाम्यो. पछी ते सेडुकना अंगमां रोगनी बहु वृद्धि थइ, एटले मंत्री प्रमुखे सेडुकने कह्युं के–' हवे तारे भोजनने माटे जवुं नहीं, तारे बदले तारा पुत्रने मोकलवो. ' त्यार पछी तेनो पुत्र हंमेशां दरेक घेर जमवा जवा लाग्यो, अने दीनारनी दक्षिणा लेवा लाग्यो. सेडुक सर्व लोकोने अनिष्ट थइ पड्यो. तेना पुत्रे पण तेने एक जूदा घरमां राख्यो, अने तेने भोजन पण एक काष्ठना पात्रमां जूदुं आपवा लाग्यो. तेनी साथे कोइ बोलतुं पण नहीं, अने सर्व घरना लोको तेने ' मर, अदीठ था ' एवां तिरस्कारनां वचनो

कहेता हता. पुत्रोनी वहुओना मुखथी पण तेवां तिरस्कारनां वचनो सांभळीने सेडुकने क्रोध चड्यो; तेथी तेणे विचार कर्यो के–' आ सर्वेने कोढीया करुं त्यारेज हुं खरो.' एम विचारीने तेणे पोताना पुत्रने बोलावीने कह्युं के –" हे पुत्र ! सांभळ, हुं वृद्ध थयो छुं, मारुं मृत्यु हवे नजीक आव्युं छे, तेथी मारे तीर्थयात्रा करवा जवुं छे. पण आपणा कुळनो एवो आचार छे के जे तीर्थयात्रा करवा जाय ते प्रथम जव तथा घासने मंत्रथी मंत्रीने एक बकरीना पुत्रने (बोकडाने) खवरावे, अने ते बकराने पुष्ट करी तेनुं मांस सर्व कुटुंबने खवरावीने पछी तीर्थयात्रा करवा जाय. माटे हे पुत्र ! मने पण एक बकरीनुं बच्चुं लावी आप. " ते सांभळीने ते पुत्रे ते प्रमाणे कर्युं; एटले ते बोकडाने सेडुके पोतानी पासे राख्यो. पछी पोताना कुष्ठ संबंधी परु विगेरेथी मिश्रित करीने जव तथा घास तेने खवरावा लाग्यो. तेवी रीते करतां केटलेक काळे ते बोकडो कोढीयो थयो. एटले तेने मारीने तेना मांसवडे कुटुंबनुं पोषण करीने (सौने जमाडीने) तेमनी रजा लइ ते तीर्थयात्रा माटे नीकळ्यो.

मार्गमां जतां सेडुकने तृषा लागवाथी तेणे सूर्यना तापथी तपेलुं, अंदर पडेला घणां पांदडांओथी ढंकायेलुं क्राथ (उकाळा) जेवुं कोइक हृद (खाबोचीया)नुं जळपान कर्युं. तेथी तुरतज तेने विरेचन थयुं. एटले तेनो सर्व कुष्ठकृमिनो व्याधि बहार नीकळ्यो. पछी तेणे घणा काळ सुधी ते जळनुं पान कर्या कर्युं. एटले दैवयोगे ते तद्दन नीरोगी थयो. परंतु अहीं कुष्ठरोगवाळा बोकडानुं मांस खावाथी तेनुं आखुं कुटुंब कोढीयुं थयुं. पछी सेडुक पोताना शरीरनी नीरोगता देखाडवा माटे कौशांबी नगरीमां पाछो आव्यो. लोकोए तेने पूछ्युं के–'तारो रोग केवी रीते गयो?' त्यारे ते बोल्यो के– ' देवना प्रभावथी मारो व्याधि नष्ट थयो छे. ' पछी घेर आवीने सेडुके पोताना कुटुंबने व्याधिग्रस्त जोइने कह्युं के–' जेवी तमे मारी अवज्ञा करी हती तेवुंज तमने सर्वेने फळ मळ्युं छे ? में केवुं कर्युं ? ' ते सांभळीने सर्वेए तेनो अत्यंत तिरस्कार कर्यो, अने ' तुं अदीठ था ' एम कही कुटुंबे अने नगरना लोकोए तेनी निर्भर्त्सना करी तेने नगर बहार काढी मूक्यो. त्यांथी भमतो भमतो ते राजगृही नगरीमां प्रतोलिए (दरवाजे) आवीने रह्यो.

ते अवसरे श्रीमहावीरस्वामी राजगृही नगरीना उद्यानमां समवसर्या. ते सांभळीने द्वारपाळोए सेडुकने कह्युं के–' जो तुं अहीं रहीने चोकी करे तो अमे वीरप्रभुने वंदना करी आवीए. ' ते सांभळीने सेडुक हा कहीने बोल्यो के–' हुं भूख्यो छुं.' त्यारे द्वारपाळोए कह्युं के–'अहीं द्वारदेवीनी पासे जे नैवेद्य आवे ते तुं यथेष्टपणे खाजे. परंतु तारे

अहींज रहेवुं बीजे क्यांइ जवुं नहीं. " ए प्रमाणे कहीने ते सर्वे द्वारपाळो श्रीजिनेश्वरने वंदना करवा गया. पछी ते क्षुधातुर सेडुके खीर, वडां विगेरे देवीना नैवेद्यने कंठ सुधी खाधां एटले तेने अत्यंत तृषा लागी; पण द्वारपाळोए तेने ते स्थानेथी बीजे जवानो निषेध कर्यो हतो, तेथी ते जळपान करवा कांइ गयो नहीं, तेमज ए प्रमाणेना कर्मना उदयथी तृषातुरपणामां जळना ध्यानमांज ते मृत्यु पाम्यो, अने ते दरवाजानी नजीक रहेली एक वापी (वाव)मां देडको थयो.

केटलेक काळे फरीथी श्रीमहावीर स्वामी त्यां समवसर्या. ते वखते ते वावमां जल भरती पौरलोकोनी स्त्रीओ परस्पर वातो करवा लागी के" हे बहेनो ! उतावळ करो. आजे श्रीमहावीर प्रभुने वांदवा जवुं छे. आजनो दिवस धन्य छे के जेथी आजे श्रीवीर प्रभुनुं आपणने दर्शन थशे. " आ प्रमाणेनां ते स्त्रीओनां वाक्यो सांभळीने ईहापोह[1] करतां ते देडकाने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं, अने पोतानो पूर्व भव (सेडुकनो भव) तेणे जाण्यो. पछी ते देडको पण भगवानने वांदवा माटे वापीनी बहार नीकळी चाल्यो. मार्गमां श्रेणिकराजा सैन्य सहित भगवानने वांदवा जता हता, तेना अश्वना पगनी खरीना प्रहारथी दबाइ जइने ते देडको भगवानना ध्यानमांज मरण पामी प्रथम स्वर्गमां दर्दुरांक नामे देवता थयो. अवधिज्ञानवडे पोतानो पूर्वभव जाणीने ते कोढीयानुं रूप विकुर्वी श्रेणिक राजाना सम्यक्त्वनी परीक्षा करवा माटे भगवानने वांदवा आव्यो. ते देव भगवाननी पासे बेसी पोताना शरीर परथी सौने देखातो कोढनो दुर्गन्धी रस (चेप) लइ भगवंतना चरणे चंदनरस चोपडवा (लेप करवा) लाग्यो. ते जोइने श्रेणिक राजाने तेना पर क्रोध चड्यो अने मनमां बोल्यो के 'कोण आ पापिष्ठ भगवाननी अवज्ञा करे छे ? ज्यारे आ बहार नीकळशे, त्यारे हुं तेने सारी रीते शिक्षा करीश.' आ प्रमाणे ते विचार करे छे, तेवामां भगवानने छींक आवी. ते वखते पेला देवे 'तमे मरो' एम भगवानने कह्युं. थोडी वारे राजाने छींक आवी, त्यारे तेने 'घणुं जीवो' एम कह्युं. थोडी वारे अभयकुमारने छींक आवी, त्यारे तेने 'जीवो अथवा मरो.' एम कह्युं. पछी कालसौकरिकने[2] पण छींक आवी. त्यारे तेने 'म जीव, म मर' एम कह्युं आ चारे वचनोमां भगवानने मरवानुं कह्युं ते वचनथी अति क्रोधातुर थयेला श्रेणिक राजाए पोताना सेवकोने कह्युं के 'आ दुष्ट कोढीयो समवसरणनी बहार नीकळे के तरत तेने पकडीने बांधी लेजो.' पछी देशनाने अंते ते देव समवसरणनी बहार नीकळ्यो. ते वखते

---

१ ईहा ने अपोह=सांभळेला वाक्य उपरथी आवुं पूर्वे मे कोइ वखत सांभळ्युं छे, एवी पूर्वनुं स्मरण करवा माटे गाढ विचारणा करवी ते.

२ काळ नामनो सौकरिक एटले कसाइ.

राजाना सुभटोए तेने चोतरफथी घेरी लीधो. परंतु ते तो तरतज आकाशमां उत्पती गयो. ते जोइ श्रेणिक राजा विस्मय पाम्यो.पछी पाछा फरीने तेमणे भगवंत पासे आवी पूछ्युं के 'हे स्वामी ! ते कुष्टी कोण हतो ते कहो.' त्यारे भगवाने सेडुकना भवथी आरंभीने तेनुं सर्व वृत्तांत राजाने कही संभळाव्युं. पछी कह्युं के 'ते दर्दुरांक देव जे हमणाज उत्पन्न थयो छे तेणे तारी परीक्षा करवा माटे तने कुष्टीनुं रूप बतावीने मारे अंगे दिव्य चंदननो लेप कर्यो छे.' फरीथी श्रेणिक राजाए पूछ्युं के 'हे स्वामी ! त्यारे कहो के आपने छींक आवी, ते वखते आपने तेणे मरवानुं केम कह्युं?' भगवान बोल्या के 'हे श्रेणिक ! मने अहीं छुं त्यां सुधी वेदनीयादिक चार कर्म वळगेलां छे, अने मृत्यु पाम्या पछी तो मने मुक्तिसुख मळवानुं छे, माटे मने मरवानुं कह्युं. वळी तने छींक आवी त्यारे तने जीववानुं कह्युं. तेनुं कारण ए छे के हालमां तुं जीवतो छे तो राज्य-सुख भोगवे छे, पण मृत्यु पछी तुं नरकमां जवानो छे. माटे तने 'चिरं जीव' एम कह्युं. तथा अभयकुमार अहीं पण धर्मकार्य करतो सतो राज्यसुख भोगवे छे, अने परभवमां पण ते अनुत्तर विमानमां जवानो छे. तेथी तेने 'जीव अथवा मर' एम कह्युं; अने कालसौकरिक तो अहीं जीवतो छतो पण बहु हिंसादिक पापनुं आचरण करे छे, अने मरण पाम्या पछी सातमी नरके जवानो छे. माटे तेने 'न जीव अने न मर' एम कह्युं. आ चार भांगा सर्व जीव परत्वे लागु पडे छे. (एटले के चार भांगामांथी कोइ पण एक भांगामां हरकोइ जीव आवी शके छे). आ दर्दुरांक देवना मननो अभि-प्राय छे." ते सांभळीने श्रेणिके भगवानने विनंति करी के "हे स्वामी ! आप जेवा मारे माथे गुरु छतां मारे नरकमां जवुं केम योग्य कहेवाय ?" भगवान बोल्या के "हे राजा ! तें सम्यक्त्व पाम्या पहेलां नरकनुं आयुष्य बांधेलुं छे, ते कोइथी पण दूर (मिथ्या) थइ शके तेम नथी. परंतु तुं खेद न कर. आवती चोवीशीमां तुं **पद्मनाभ** नामे प्रथम तीर्थंकर थवानो छे." ए सांभळीने राजाए हर्षित थइ फरीथी प्रभुने पूछ्युं के 'हे भगवान ! शुं तेवो कोइ पण उपाय नथी के जेथी मारे नरकमां जवुं न पडे ?' त्यारे भगवान बोल्या के 'जो तारी कपिला नामनी दासी भावपूर्वक साधुने दान आपे, अने जो कालसौकरिक हंमेशां पांचसो पाडा मारेछे ते न मारे तो तारे पण नरके जवुं न पडे.' ते सांभळीने राजा भगवानने वंदना करी घर तरफ चाल्यो. मार्गमां फरीथी श्रेणिक राजाना समकितनी परीक्षा करवा माटे दर्दुरांक देव एक साधुनुं रूप विकुर्वी घणा मत्स्योथी भरेली जाळ लइने राजानी सन्मुख आव्यो. तेने जोइ श्रेणिके पूछ्युं के 'अरे ! मुनिनो वेष धारण करनार एवा तें आ जाळने केम ग्रहण करी छे ? अने जो आ जाळ धारण करे छे, तो शुं तुं मत्स्यादिकनो आहार पण करे छे ?' आ विषय पर श्रेणिकना प्रश्न अने देवना उत्तरवाळो श्लोक आ प्रमाणे छे—

कंथाचार्य श्लथा किं ननु शफरवधे जालमश्नासि मत्स्यान् ।
तान् वै मद्योपदंशात् पिबसि मधु समं वेश्यया यासि वेश्याम् ॥
दत्वारीणां गलेऽङ्घ्री ननु तव रिपवो येन सायं छिनद्मि ।
चौरस्त्वं द्यूतहेतोः कितव इति कथं येन दासीसुतोऽस्मि ॥१॥

'हे साधु ! आ तारी कंथा बहु श्लथ (जीर्ण) केम छे ?' 'हे राजा ! आ कंथा नथी, पण मत्स्यने मारवा माटे पकडवानी जाळ छे.' 'अरे ! शुं तुं मत्स्य खाय छे?' 'हा. मदिराना उपदंशथी ते (मत्स्यो) खाउं छुं.' 'अरे ! शुं मद्य पण पीए छे ?' 'हा. वेश्या साथे प्रीति होवाथी तेनी साथे पीवुं पडे छे.' 'त्यारे शुं तुं वेश्यागमन पण करे छे ?' 'हा. शत्रुओना गळा उपर बे पग मूकीने वेश्या पासे जाउं छुं.' 'अरे ! शुं तारे शत्रुओ पण छे के ?' 'हा. केमके रात्रे चोरी करुं छुं, तेथी शत्रुओ पण छे.' 'अरे ! तुं चोरी पण करे छे ?' 'हा. द्यूत (जुगार) रमुं छुं, तेथी पैसाने माटे चोरी पण करुं छुं.' 'अरे ! त्यारे शुं तुं जुगारी पण छे, पण जुगारी थवानुं कारण शुं ?' 'हे राजा ! हुं दासीपुत्र छुं, तेथी जुगारी थयो छुं.'

आवा अनेक उत्तरो आपवा वडे घणी रीते राजानी परीक्षा करी, पण राजा सम्यक्त्वथी चलित थयो नहीं अने साधु उपरना रागथी भ्रष्ट थयो नहीं, त्यारे ते देव गर्भवती साध्वीनुं रूप ग्रहण करी, सर्व अलंकार पहेरी, माथुं गुंथी, तेल नांखी, कपाळे चांडलो करी राजानी सन्मुख आव्यो. तेने जोइ राजाए पूछयुं के 'तुं साध्वी छे, छतां आ गर्भ विगेरे क्यांथी ?' तेणे उत्तर आप्यो के 'सर्व साध्वीओ आवा ज कामो करे छे.' त्यारे राजाए कह्युं के 'तारेज आवो माठो कर्मोदय वर्ते छे, बीजा कोइ पण साधु साध्वी सर्वथा तारी जेवा होताज नथी.' आ प्रमाणेनो उत्तर मळवाथी राजानुं चित्त जरा पण चलित थयुं नथी एम जाणीने दर्दुरांक देवे प्रत्यक्ष थइ राजानी प्रशंसा करी, अने राजाने एक हार अने बे गोळा आपी ते देव स्वर्गे गयो. राजाए हार चिल्लणा देवीने आप्यो, अने बे गोळा नंदा राणीने आप्या. नंदाए चिल्लणाने हार आप्यो ने पोताने मात्र बे गोळा आप्या. ते जोइ क्रोध पामीने ते बन्ने गोळा इर्ष्याथी थांभला साथे अफळाव्या. एटले ते फूटी जवाथी एक गोळामांथी बे कुंडळ नीकळ्यां, अने बीजामांथी बे दिव्य वस्त्रो नीकळ्यां. ते जोइ नंदा राणी अत्यंत हर्ष पामी. राजाए कपिला दासीने बोलावीने कह्युं के 'तुं साधुओने दान आप.' तेणे कह्युं के 'हे राजा ! मने ए काम बतावशो नहीं. हुं बीजुं बधुं काम करीश पण ते काम करीश नहीं.' ते सांभळीने राजाए बळात्कार करीने तेने हाथे दान अपाव्युं. त्यारे ते दान आपती आपती बोली के 'आ दान हुं आपती नथी, पण श्रेणिक राजानो आ चाटवो नाद

आपे छे.' पछी तेने तजी दइने राजाए कालसौकरिकने बोलावीने कह्युं के 'तुं पाडा मारवानुं काम मूकी दे.' ते बोल्यो के 'हे राजा ! हुं प्राणथी पण प्रिय एवी हिंसानो त्याग नहीं करुं.' ते सांभळीने राजाए तेने एक अंधकूपमां नांख्यो. त्यां पण तेणे कादवनी माटीना पांचसो पाडा चीत्रीने (बनावीने) तेने मार्या (तेनी हिंसा करी). ते जाणीने राजाए विचार्युं के 'खरेखर जिनेश्वरनुं वचन सत्य छे, ते मिथ्या थायज नहीं.' आथी जोके तेने खेद थयो परंतु पोते तीर्थंकर थवाना छे, ते हकीकत जाणेली होवाथी मनमां आनंद पामवा लाग्या.

॥ इति दर्दुरांकदेवसंबन्धः ॥ ६७ ॥

केसिंचिय परलोगो, अन्नेसिं इत्थ होई इहलोगो ॥
कस्स वि दुन्न वि लोगो, दोवि हया कस्सई लोगा ॥४४०॥

अर्थ—" केटलाएक जीवोने परलोक (परभव) सारो होय छे, बीजा केटलाएकने अहींज आ लोक सारो होय छे, कोइ पुण्यशाळी जीवने बन्ने लोक पण सारा होय छे, अने कोइ पापकर्म करनारा जीवने बन्ने लोक हत (नष्ट) होय छे." ४४०.

(आ हकीकतनो उपनय उपर जणावेली छींकनी हकीकत परथी समजी लेवो.)

वळी विशेष स्पष्ट करे छे—

छज्जीवकायविरओ, कायकिलेसेहिं सुट्टु गुरुएहिं ।
न हु तस्स इमो लोगो, हवइ स्सेगो परो लोगो ॥४४१॥

अर्थ—" छ जीवनिकायनुं मर्दन (वध) करवामां विशेष आसक्त एवा ते तापसादिकने अतिशय मोटा एवा पंचाग्नि, मासक्षपण विगेरे कायक्लेशोए करीने आ लोक (भव) सारो होतो नथी. परंतु तेने एक परलोक सारो थाय छे. केमके तेने अज्ञानतपथी परभवमां राज्यादिक सुखनी प्राप्ति थाय छे." ४४१.

नरयनिरुद्धमईणं, दंडियमाईण जीवियं सेयं ।
बहुवायम्मि वि देहे, विसुज्झमाणस्स वर मरणं ॥ ४४२ ॥

अर्थ—" नरकने विषे बांधी छे (धारण करी छे) मति जेओए एटले नरकगतिगमन योग्य कार्यना करनारा एवा मंत्री विगेरे राज्यचिंता करनारनुं जीवित

गाथा ४४०—केसिंचि परो लोगो । हता । कस्सवि ।

गाथा ४४१—षट्जीवकायमर्दने विशेषेण रतः । स एगो परे लोगो । स्स=तस्य एगः=एकः ।

गाथा ४४२—मइणं । जीविअं । सेय=श्रेयः । दडियमाईणं=मन्त्रिप्रमुखाणा । वहुवायंमि वि=वहुरोगसमुत्पन्नेपि ।

एटले जीववुंज श्रेय (सारुं) छे. केमके पापकर्मना आचरणने लीधे परभवमां अवश्य तेने नरकादिक दुःखनी प्राप्ति थाय छे, अने बहुरोगवाळा एटले वेदनाने सहन करवा असमर्थ एवा देहने विषे रह्या सता-व्याधि सहन करतां छतां पण शुद्ध ध्यान करनार पुरुषनुं मरण श्रेष्ठ (कल्याणकारी) छे. केमके तेने परभवमां सद्गतिनी प्राप्ति थाय छे. " ४४२.

तवनियमसुट्ठियाणं, कल्लाणं जीविअं पि मरणं पि ।
जीवंत ज्जंति गुणा, मया वि पुण सुग्गइं जंति ॥ ४४३ ॥

अर्थ-" बार प्रकारना तपने विषे अने नियम (ग्रहण करेला व्रतो)ने विषे सुस्थित (दृढ) एवा साधुओनुं जीवित अथवा मरण बंने कल्याणकारी छे. (केमके तेमने जीवतां धर्मनी वृद्धि अने परभवमां सद्गतिनी प्राप्ति थाय छे. तेज उत्तरार्धवडे कहे छे). केमके तेओ (साधुओ) जीवतां छतां गुणोने उपार्जन करे छे, अने मृत्यु पाम्या सता पण स्वर्ग मोक्षादिक सद्‌गतिने प्राप्त करे छे. " ४४३.

अहियं मरणं च अहिअं, जीवियं पावकम्मकारीणं ।
तमसम्मि पडंति मया, वेरं वड्ढंति जीवंता ॥ ४४४ ॥

अर्थ-" पापकर्म करनार पुरुषोनुं मरण अहितकारी (अधम) छे, अने जीवित (प्राणनुं धारण) पण अहितकारी छे. केमके तेओ मरण पामीने परभवे तमोरूप नरक-कूपने विषे पडे छे (नरके जाय छे), अने जीवता छता अनेक जीवोना वधवडे करीने ते ते जीवोनी साथे वैरभावने वृद्धि पमाडे छे. " ४४४.

अवि इच्छंति अ मरणं, न य परपीडं करंति मणसा वि ।
जे सुविइयसुगइपहा, सोयरियसुओ जहा सुलसो ॥ ४४५ ॥

अर्थ-" कालसौकरिकना पुत्र सुलसनी जेम जेओए सुगतिनो मार्ग भली प्रकारे जाणेलो छे तेओ पोताना मरणने पण इच्छे छे, परंतु मनवडे पण परने पीडा उत्पन्न करता नथीज. मनमां पण परने पीडा करवानुं चिंतवता नथी, तो पछी वचन अथवा कायाए करीने तो केमज इच्छे ? नज इच्छे. जेम सुलसे परपीडा न करी तेम बीजा पण तेवा सुविदित पुरुषो परपीडा करता नथी."४४५. अहीं सुलसनुं दृष्टान्त जाणवुं.

गाथा ४४३-जीवियं । ज्जंति=अर्जयन्ति । सोगय ।

गाथा ४४४-तमसम्मि=तमसि, तमोरूपे नरके ।

गाथा ४४५-सुविइअसुगइपहा । सुविदितसुगतिपथा । सोअरियसुओ=कालशौकरिकसुतो ।

सुलसनी कथा.

राजगृह नगरमां महा क्रूर कर्म करनार अने अधर्मी कालसौकरीक नामे पशुवध करनार (कसाइ) रहेतो हतो. ते हमेशां पांचसो पाडानो वध करतो हतो, अने ते वडे कुटुंबनुं पोषण करतो हतो. तेने सुलस नामे एक पुत्र थयो. ते अभयकुमारना संसर्गथी श्रावक थयो. केटलेक काळे काळसौकरिकना शरीरमां एवा मोटा रोगो उत्पन्न थया के जेनी वेदनाने ते सहन करी शकतो नहीं. तेथी ते अत्यंत विलाप अने पोकार करतो. हतो. तेना स्वजनो अनेक प्रकारना औषधो करता हता, पण वेदना शांत थती नहोती. एकदा पिताना दुःखथी दुःखी थयेला सुलसे अभयकुमारने ते वात कही, एटले अभयकुमारे तेने कह्युं के" हे सुलस ! तारो पिता महापापी होवाथी नरकमां जवानो छे, तेथी सारां औषधोथी तेने शांति थशे नहीं; माटे तेनुं तुं मध्यम (हलका प्रकारनुं–कनिष्ठ) औषध कर के जेथी तेने कांइक सुख थाय." आवी अभयकुमारे आपेली बुद्धिथी सुलसे घेर आवी पिताना शरीरपर विष्टा विगेरे दुर्गन्धी वस्तुओनुं विलेपन कराव्युं, बोरडी अने बावळ विगेरेना कांटानी शय्या करी तेमां सुवाड्या, कडवां कषायलां ने तीखां औषधो पावा मांड्यां, गाय भेंस विगेरेनां मूत्र पायां, कुतरा अने भुंड विगेरेनी विष्टानो धूमाडो दीधो, तथा राक्षस अने वेताल विगेरेना भयंकर रूपो देखडाव्यां. एवी रीते करवाथी तेना शरीरने महा सुख उत्पन्न थयुं, तेमज ते पोताना मनमां पण अत्यंत सुख मानवा लाग्यो. पछी ते काळसौकरिक मृत्यु पामीने सातमी नरकमां नारकीपणे उत्पन्न थयो.

तेनुं प्रेतकार्य (मरणक्रिया) कर्या पछी सुलसने तेना कुटुंबे कह्युं के "तुं पण हवे तारा पितानी जेम हंमेशां पांचसो पाडानो वध करीने कुटुंबनुं पोषण कर, अने आपणा कुटुंबनी रीति प्रमाणे वर्ती सर्व कुटुंबमां मोटो था." ए प्रमाणे कुटुंबीओनुं वाक्य सांभळीने सुलस बोल्यो के " ए पापकर्म हुं कदी करवानो नथी. केमके तेवुं पाप करीने हुं नरके जाउं, ते वखते मारो कोइ आधार थवानुं नथी. जिह्वाना स्वादने माटे थइने जे पुरुषो आवी हिंसा करे छे तेओ अवश्य दुर्गतिने पामे छे. ज्यारे एक कांटो लागवाथी पण प्राणीने मोटुं दुःख उत्पन्न थाय छे, त्यारे अनाथ अने अशरण एवा पशुओने शस्त्रादिकवडे मारवाथी तेमने जे दुःख उत्पन्न थतुं हशे तेनुं तो केहवुं ज शुं ! माटे आवा पापकर्मवडे कुटुंबनुं पोषण करवाथी सर्युं. मारे हिंसा करवानुं कांइ पण प्रयोजन नथी." ते सांभळी कुटुंबवर्ग बोल्यो के " तने जे पाप लागशे तेना अमे पण भागीदार थइशुं, माटे तारे कुळक्रमने त्याग करवो नहीं. " इत्यादि कुटुंबनो बहु आग्रह जोइने तेमने प्रतिबोध करवा माटे सुलसे एक कुहाडी लइने पोताना

पग पर मारी, तेथी ते अचेतन थइ पृथ्वीपर पडी गयो. थोडीवारे चेतना (शुद्धि) आव्या पछी पोकार करी तेणे सर्व कुटुंबने बोलावीने कह्युं के 'मने घणी वेदना थाय छे, माटे तमे बधा थोडी थोडी वहेंचीने लइ ल्यो.' ते सांभळीने कुटुंबी बोल्या के 'बीजानी वेदना शी रीते लइ शकाय ?' त्यारे सुलसे कह्युं के 'ज्यारे मारी आ वेदनामांथी जरा पण तमाराथी लइ शकाती नथी, त्यारे मारुं पाप लेवाने तमे शी रीते शक्तिमान थशो ?' आ प्रमाणे कहीने पोतानी बुद्धिथी तेणे पोताना आखा कुटुंबने प्रतिबोध पमाड्यो.

पछी ते सर्व वृत्तांत जाणीने अभयकुमार सुलसने घेर आवी तेने सुखसाता पूछीने बोल्यो के 'हे सुलस ! तने धन्य छे. केमके तें नीच कुळमां उत्पन्न थया छतां पण हिंसामां आदर कर्यो नहीं.' इत्यादिक घणे प्रकारे तेनी प्रशंसा करीने अभयकुमार पोताने घेर गयो. पछी सुलस पण श्रावकधर्मनुं पालन करीने अनुक्रमे स्वर्गे गयो. एवी रीते बीजाओ पण जेओ परने पीडा करता नथी तेओ स्वर्गना सुखने पामे छे.

॥ इति सुलसदृष्टान्तः ॥ ६८ ॥

मूलग कुदंडगा दामगाणि, उच्छूल घंटिआओ यं ।
पिंडेइ अपरितंतो, चउप्पया नत्थि यं पसू वि ॥ ४४६ ॥

अर्थ—" मूलग एटले पशुओने बांधवाना मोटा खीला, कुदंडगा एटले नाना वाछरडाने बांधवानी खीलीओ जेने कोलीडो कहे छे ते, दामग एटले पशुओना रज्जुमय बंधनो (दामण, मोरी, पग बांधवानां दोरडां विगेरे), उच्छूल एटले पशुओने गळे बांधवानुं दोरडुं तथा पशुओने गळे बांधवानी घंटडीओ इत्यादि पशुने योग्य एवां उपकरणोने अश्रांतपणे एकठां करे छे; परंतु पोताने घेर तो चतुष्पद एटले गाय, भेंस विगेरे तथा पशुओ एटले बकरी बोकडी विगेरे कांइ नथी, तो ते बधा उपकरणो एकठां करवां व्यर्थ छे." ४४६. तेवीज रीते—

तह वत्थपायदंडगउवगरणे जयणकज्जमुज्जुत्तो ।
जस्सट्ठाए किलिस्सई, तं चिय मूढो न वि करेई ॥ ४४७ ॥

अर्थ—" तेवीज रीते जे अविवेकी पुरुष वस्त्र, पात्र अने दांडो विगेरे उपकरणो यतना रूप कार्यने माटे मेळववा सारु उद्यमवंत छतो मेळवे छे अने तेने माटेज एटलो

गाथा ४४६—नत्थि अ प्पसु वि। अपरितंतो=अपरिश्रातः सन्।

गाथा ४४७—जसट्ठाइ=यस्यार्थे। किलस्सइ। करेइ।

क्लेश सहे छे, छतां ते यतनानेज निश्चे ते मूर्ख माणस करतो नथी; तो ते मूर्खने उपरना पशु विना पशुनां उपकरणो मेळवनारनी जेवो जाणवो; अर्थात् यतनाने माटेज उपकरणो मेळववानी जरुर छे, छतां ते मेळवीने पछी यतनाज जो न करे तो ते उपकरणो एकठां करवां व्यर्थ छे. " ४४७.

अरिहंता भगवंतो, अहियं व हियं व न वि इहं किंचि ।
वारंति कारवंति य, घित्तूण जणं बला हत्थे ॥ ४४८ ॥

अर्थ—" अरिहंत (रागद्वेष रहित) भगवान् (ज्ञानी) मनुष्योने बळात्कारे हाथे पकडीने आ संसारमां कांइ पण (थोडुं पण) तेना अहितनुं निवारण करावता नथी, तेमज तेना हितने करावता नथी. अर्थात् जेम राजा माणसने हाथे पकडीने बळात्कारे पोतानी हितकारी आज्ञा मनावे—पळावे छे अने अहितकारी मार्ग छोडावे छे तेम अरिहंत भगवान् करता नथी. " ४४८. त्यारे शुं करे छे ते कहे छे—

उवएसं पुण तं दिंति, जेण चरिएण कित्तिनिलयाणं ।
देवाण वि हुंति पहू, किमंग पुण मणुअमित्ताणं ॥ ४४९ ॥

अर्थ—" परंतु तेने (मनुष्यने) उपदेश—धर्मोपदेश आपे छे, के जे आचरवाथी (जे धर्मनुं आचरण करवाथी) कीर्तिना स्थानरूप एवा देवोनो पण ते प्रभु—स्वामी थाय छे; तो पछी हे अंग ! (हे शिष्य !) मनुष्यमात्रनो स्वामी थाय, तेमां तो शुं आश्चर्य ! " ४४९.

वरमउडकिरीडधरो, चिंचईओ चवलकुंडलाहरणो ।
सक्को हिओवएसा, एरावणवाहणो जाओ ॥ ४५० ॥

अर्थ—" वर (प्रधान) छे मउड एटले आगळनो भाग जेनो एवा किरीट के० मुकुटने धारण करनार (श्रेष्ठ मुकुटने धारण करनार), बाहुरक्षा (बाजुबंध बेरखा) विगेरे आभरणोथी शोभित तथा कर्णने विषे चपळ कुंडळना आभरणने धारण करनार एवो शक्रेन्द्र हितोपदेशथी एटले हितकारी जिनेश्वरना उपदेशथी (उपदेश प्रमाणे आचरण करवाथी) ऐरावणना वाहनवाळो थयो; एटले कार्तिक शेठना भवमां हितकारक जिनेश्वरनो उपदेश अंगीकार करवाथी तेणे इन्द्रपणुं प्राप्त कर्युं. " ४५०.

रयणुज्जलाइं जाइं, बत्तीसविमाणसयसहस्साइं ।
वज्जहरेण वराइं, हिओवएसेण लद्धाइं ॥ ४५१ ॥

गाथा ४४८—हियं च । वारिंति । कारविंति य । घित्तूण । गाथा ४४९—निलयाइ ।
गाथा ४५०—चंचईओ=बाहुरक्षाद्याभरणो । हिउवएसा । गाथा ४५१—रयणुज्जलायल ।

अर्थ–" वळी वज्रधरे (इन्द्रे) रत्नोथी उज्वल (देदीप्यमान) अने श्रेष्ठ एवां जे बत्रीशसो हजार (बत्रीश लाख) विमानो प्राप्त कर्यां–तेनुं स्वामीपणुं मेळव्युं ते हितोपदेशे करीनेज एटले वीतरागना वचननुं आराधन करवाथीज मेळव्युं." ४५१.

सुरवइसमं विभूइं, जं पत्तो भरहचक्कवट्टी वि ।
माणुसलोगस्स पहू, तं जाण हिओवएसेण ॥ ४५२ ॥

अर्थ–"मनुष्यलोकनो (छखंड भरतक्षेत्रनो) स्वामी भरत चक्रवर्ती पण जे सुरपतिने (इन्द्रने) तुल्य एवी विभूति पाम्यो. ते पण हे शिष्य! हितोपदेशे करीने (वीतरागना वचननुं आराधन करवाथी)ज जाण." ४५२.

लद्धूण तं सुइसुहं, जिणवयणुवएसममयबिंदुसमं ।
अप्पहियं कायव्वं, अहियंसु मणं न दायव्वं ॥ ४५३ ॥

अर्थ–" ते (प्रसिद्ध एवो) श्रुतिने (कर्णने) सुखकारक तथा अमृतना बिंदु समान एवो जिनवचननो उपदेश पामीने (सांभळीने) पंडित पुरुषे आत्माने हितकारक धर्मानुष्ठानादिक करवुं. परंतु अहित (पाप)ने विषे मन पण न आपवुं–राखवुं. तो पछी काया अने वचनवडे तो पाप करवानी वातज शी ? " ४५३.

हियमप्पणो करिंतो, कस्स न होइ गरुओ गुरू गण्णो ।
अहियं समायरंतो, कस्स न विपच्चओ होइ ॥ ४५४ ॥

अर्थ–" आत्माने हितकारक धर्मानुष्ठानादिक करतो मनुष्य कोने गुरुस्थानीय (मुख्य) अने गण्य (गणना करवा लायक–पुछवा योग्य) एवो गुरु न थाय ? अर्थात् सर्वना मध्ये गुरु थाय छे; अने आत्मानुं अहित आचरण करनार पुरुष कोने विप्रत्यय एटले अविश्वासनुं पात्र नथी थतो अर्थात् सर्वने अविश्वासनुं स्थान थाय छे." ४५४.

जो नियमसीलतवसंजमेहिं, जुत्तो करेइ अप्पहियं ।
सो देवयं व पुज्जो, सीसे सिद्धत्थओ व्व जणे ॥ ४५५ ॥

अर्थ–" नियम (प्रत्याख्यान), शील (सदाचार), तप (छठ्ठ अठ्ठम विगेरे) अने संयम (चारित्र), एटलाए करीने युक्त एवो जे पुरुष आत्माने हितकारक एवुं

गाथा ४५२–सुरवईसमं । मणुस्स ।

गाथा ४५३–अहिएसु ।

गाथा ४५४–हिय अप्पणो । गुरुओ गुरूगन्नो । होई । विपच्चओ=विप्रत्ययोऽविश्वास्य·

गाथा ४५५–नीयम । सिद्धार्थक· सर्षप. । जणो ।

धर्मानुष्ठानादिक करे छे ते पुरुष दैवतनी जेम पूज्य थाय छे. तथा लोकना मध्ये ते सिद्धार्थक (श्वेत सरसव)नी जेम मस्तकपर चडे छे. अर्थात् जेम सरसवने मनुष्यो पोताना मस्तकपर चडावे छे, तेम लोको तेनी आज्ञाने मस्तकपर वहन करे छे–अंगीकार करे छे. " ४५५.

सव्वो गुणेहिं गण्णो, गुणाहिअस्स जह लोगवीरस्स ।
संभंतमउडविडवो, सहस्सनयणो सययमेइ ॥ ४५६ ॥

अर्थ–" सर्व जीव गुणोवडेज गण्य (माननीय) थाय छे. जेमके सत्त्वादिक गुणोथी अधिक अने लोकवीर के० लोक मध्ये प्रसिद्ध एवा श्रीमहावीर स्वामीने चपळ छे मुकुटनो प्रान्त भाग जेनो एवो सहस्र नेत्रवाळो इन्द्र पण निरंतर वंदना करवा आवे छे. माटे गुणवानपणुंज पूज्यपणामां हेतु छे, एम सिद्ध थाय छे. " ४५६.

चोरिक्कवंचणाकूडकवडपरदारदारुणमईस्स ।
तस्स च्चिय तं अहियं, पुणोवि वेरं जणो वहइ ॥ ४५७ ॥

अर्थ–" चोरी, वंचना–परने छेतरवुं, कूट–मृषा बोलवुं, कपट–माया करवी तथा परस्त्रीसेवन एटलां पापस्थानोने विषे जेनी दारुण–मलिन मति (मननी प्रवृत्ति) छे एवा ते पुरुषने निश्चे ते पूर्वे कहेला पापना आचरण अहितकारी एटले नरकना हेतुभूत छे एम जाणवुं, तेमज तेवा पुरुषनी उपर लोको पण वेर (द्वेष)ने वहन करे छे–धारण करे छे; माटे तेवुं आचरण करवुं नहीं. " ४५७.

जइ ता तणकंचणलट्ठुरयणसरिसोवमो जणो जाओ ।
तइया नणु वुच्छिन्नो, अहिलासो दव्वहरणम्मि ॥ ४५८ ॥

अर्थ–" ज्यारे (तावत्–प्रथम) तृण अने कंचन, लेष्टु (ढेफुं–पाषाण) अने रत्न–तेमने विषे समान उपमावाळो माणस थाय, एटले के ज्यारे माणसनी तृण तथा कांचनने विषे अने पथ्थर तथा रत्नने विषे समान बुद्धि थाय, त्यारे खरेखर (पारकुं) द्रव्य हरण करवानो अभिलाष तेनो तुटी गयो छे एम समजवुं. " ४५८.

आजीवगगणनेया, रज्जसिरिं पहिऊण य जमाली ।
हियमप्पणो करिंतो, न य वयणिज्जे इह पडंतो ॥ ४५९ ॥

गाथा ४५६–गुणाहियस्स । संभ्रातश्चपलो मुकुटविटपो मुकुटप्रांतो यस्य ।

गाथा ४५७–मइस्स ।

गाथा ४५८–लिट्ठु । तईआ । वोच्छिन्नो ।

गाथा ४५९–आजीविकाना निह्नवाना गणस्य नेता । पहिऊण=त्यक्त्वा । पडितो ।

अर्थ-" राज्यलक्ष्मीनो त्याग करीने तथा च शब्दे सिद्धान्तनो अभ्यास करीने पण श्रीमहावीर स्वामीनो जमाइ जमाली के जे आजीवक एटले केवळ वेषने धारण करीने तेनावडे आजीविकानाज करनारा एवा निह्नवोना समूहनो नेता थयो हतो, तेणे जो आत्माने हितकारक एवुं धर्मानुष्ठान कर्युं होत, तो ते आ लोकमां जिनशासनने विषे वचनीयता-निंदाने पामत नहीं-अर्थात् धर्मानुष्ठान नहीं करवाथी ते निंदापात्र थयो छे एम थात नहीं. ४५९." अहीं जमालिनुं दृष्टांत जाणवुं.

जमालिनी कथा.

कुंडपुर नगरमां जमालि नामनो एक मोटी ऋद्धिवाळो क्षत्रिय रहेतो हतो. ते युवावस्था पाम्यो त्यारे श्रीमहावीर स्वामीनी पुत्री साथे परण्यो, तथा बीजी पण राजकन्याओ परण्यो. ते सर्वेनी साथे पंचेन्द्रिय संबंधी सुख भोगवतो सतो एकदा ते श्रीमहावीर स्वामीने वांदवा गयो. त्यां वंदना करीने भगवानना मुखथी देशना सांभळी, तेथी संसारनी असारता जाणी एटले तेणे पांचसो राजकुमारो सहित महोत्सव पूर्वक चारित्र ग्रहण कर्युं. भगवाननी पुत्री सुदर्शनाए पण घणी स्त्रीओ सहित चारित्र ग्रहण कर्युं. भगवाने जमालिने पांचसो राजकुमारो शिष्य तरीके सोंप्या. जमालिए अनुक्रमे एकादशांगनो अभ्यास कर्यो, अने छट्ठ अट्ठमादि तप करवा लाग्यो. अन्यदा तेणे भगवाननी पासे आवीने भिन्न विहार करवानी आज्ञा मागी, परंतु भगवाने आज्ञा आपी नहीं. त्यारे भगवाननी आज्ञा विनाज पांचसो शिष्यो सहित तेणे जुदो विहार कर्यो. अनुक्रमे विहार करतां ते श्रावस्ती नगरीना कोष्टक नामना वनमां आव्यो, त्यां तेना शरीरमां महा ज्वर उत्पन्न थयो. ते ज्वरनी वेदना सहन न थवाथी तेणे पोताना एक शिष्यने बोलावीने कह्युं के 'मारे माटे संथारो कर.' त्यारे शिष्ये संथारो करवा मांडयो. फरीथी जमालिए वेदना सहन न थवाथी पूछ्युं के 'संथारो कर्यो ?' शिष्ये जवाब आप्यो के 'हा कर्यो.' ते सांभळीने जमालि त्यां आवी जोइने बोल्यो के 'हे शिष्य ! तुं हजु संथारो करे छे, अने कर्यो एम असत्य केम कह्युं ?' शिष्ये जवाब आप्यो के 'कडेमाणे कडे-करवा मांडेलुं ते कर्युंज कहेवाय एवुं भगवाननुं वचन छे.' ते सांभळी जमालि बोल्यो के "हे शिष्य ! ए भगवाननुं वचन असत्य छे, केमके ए वचन प्रत्यक्ष रीतेज विरुद्ध देखाय छे. भूतकाळ अने वर्तमान काळमां मोटो विरोध आवे छे, माटे कर्या पछीज कर्युं एम कहेवुं पण करातुं होय तेने कर्युं न कहेवुं." ते सांभळीने सर्व शिष्यो बोल्या के "जेम कोइ पुरुष क्यांइक दूर गाम जवा तैयार थइने नीकल्यो ने गाम बहार उभो होय तो-

पण ते अमुक गामे गयोज कहेवाय छे. जेम कोइ भाजन थोडुं भांग्युं होय तोपण ते वासण भांग्युं कहेवाय छे. जेम वस्त्रनो थोडो भाग फाट्या छतां पण वस्त्र फाट्युं एवो वचनव्यवहार थाय छे, तेवीज रीते करातुं एवुं कार्य पण कर्युं एम कहेवाय छे. 'कडेमाणे कडे' ए निश्चय सूत्र छे. जो प्रथम समये कार्यनी उत्पत्ति न मानीए, तो पछी बीजे क्षणे पण कार्य थयुं नहीं कहेवाय, एम त्रीजे चोथे विगेरे क्षणे पण कार्य उत्पन्न थयेलुं कहेवाशे नहीं. मात्र एक छेल्लेज क्षणे कार्यसिद्धि कहेवाशे. तेम मानवाथी प्रथमादिक क्षणोनी व्यर्थता थशे. वळी अंत्य क्षणेज कांइ सर्व कार्यसिद्धि देखाती नथी. माटे 'कडेमाणे कडे' ए भगवाननुं वाक्य युक्तियुक्त अने सत्यज छे." इत्यादिक अनेक युक्तिथी बोध कर्या छतां पण जमालिए पोतानो कदाग्रह छोड्यो नहीं, त्यारे केटलाक शिष्यो 'आ (जमालि) अयोग्य छे, जिनवचननो उत्थापक छे, अने पोताना मतनुं स्थापन करनार निह्नव छे.'एम जाणी तेने तजीने भगवंतनी पासे गया.

पछी जमालि पण नीरोगी थयो त्यारे विहार करतो करतो चंपानगरीमां भगवाननी पासे आवी कहेवा लाग्यो के 'हुं तमारा बीजा शिष्योनी जेम छद्मस्थ नथी, पण हुं तो केवळी छुं.' ते सांभळीने श्रीगौतमस्वामीए पूछ्युं के 'जो तुं केवळी हो तो कहे के आ लोक शाश्वत छे के अशाश्वत? तथा जीव शाश्वत छे के अशाश्वत?' ते सांभळीने तेनो प्रत्युत्तर आपवाने असमर्थ एवो जमालि मौन धारीनेज रह्यो. त्यारे श्रीगौतमस्वामी बोल्या के 'हे जमालि! तुं केवळीनुं नाम धारण करे छे अने उत्तर केम आपी शकत नथी? हुं छद्मस्थ छुं तोपण तेनो उत्तर जाणुं छुं ते सांभळ–लोक बे प्रकारनो छे. शाश्वत अने अशाश्वत. तेमां द्रव्यथी आ लोक शाश्वत (नित्य) छे, अने पर्याय थकी एटले उत्सर्पिणी अवसर्पिणी विगेरे काळप्रमाणथी अशाश्वत (अनित्य) छे. तथा जीव पण द्रव्यथी नित्य छे, अने देव, मनुष्य, तिर्यंच तथा नरकगतिरूप पर्यायथी अनित्य छे." ते सांभळीने तेना उत्तर उपर श्रद्धा नहीं राखतो जमालि विहार करी श्रावस्ती नगरीए गयो.

सुदर्शना साध्वीए पण जमालिनो मत अंगीकार कर्यो हतो. ते सुदर्शना पण तेज नगरीमां ढंक नामना भगवानना उपासक कुंभारनी शाळामां रहीने लोकोनी पासे जमालिना मतनी प्ररुपणा करवा लागी. ते सांभळी ढंके विचार्युं के "जुओ! कर्मनी केवी विचित्रता छे? आ सुदर्शना भगवाननी पुत्री थइने पण कर्मना वशथी असत् प्ररुपणा करे छे, तोपण जो आने हुं कोइ पण उपायथी प्रतिबोध पमाडुं तो मने मोटुं फळ प्राप्त थाय." एम विचारीने तेणे एकदा पोरसीना मध्यमां स्वाध्याय करती सुनंदा (सुदर्शना) साध्वीनी साडीपर एक अंगारो नांख्यो, तेथी साडीमां बे त्रण छिद्र पड्यां

ते जोइने सुदर्शनाए कह्युं के 'हे श्रावक! आ तें शुं कर्युं? मारी आ आखी साडी बाळी नांखी' त्यारे ढंक बोल्यो के 'हे साध्वी! तमे एम न बोलो, ए तो भगवाननो मत छे; केमके 'बळवा मांड्युं होय ते बळ्युं कहेवाय' एवुं भगवाने कहेलुं छे. तमारो मत तो समग्र बळ्या पछीज बळ्युं कहेवानो छे, माटे हवे तमे भगवाननुं वचन सत्य मानो." आ प्रमाणे ढंकनी बुद्धिथी सुदर्शनाए भगवाननुं वचन सत्य मान्युं. पछी तेणे जमालि पासे आवीने कह्युं के 'भगवाननुं वाक्य सत्य छे, अने तमारो मत प्रत्यक्ष रीते असत्य छे.' एम कह्या छतां पण जमालिए कर्मना वशथी ते वचन अंगीकार कर्युं नहीं.

पछी सुदर्शना भगवाननी पासे आवी मिथ्यादुष्कृत आपी चारित्रनुं प्रतिपालन करी केवळज्ञान पामीने मोक्षे गइ; अने जमालि तो घणा दिवसो सुधी कष्ट सहीने प्रांते पंदर दिवसनुं अनशन करी विराधक होवाथी किल्बिषी देव थयो. त्यांथी चवीने चिरकाळ सुधी संसारमां परिभ्रमण करशे.

आ प्रमाणे जमालिए जेम जिनवचननुं उत्थापन करवाथी बहु संसार उपार्जन कर्यो, तेवीज रीते बीजो पण जे कोइ जिनाज्ञानी विराधना करे ते आ लोकमां निंदा अने परलोकमां दुर्गतिने प्राप्त थाय तथा बहुल संसारी थाय, माटे श्रीजिनेश्वरनुं वचन सत्यपणे सद्दहवुं, ए आ कथानुं तात्पर्य छे.

॥ इति जमालि संबन्धः ॥ ६९ ॥

इंदियकसायगारवमएहिं, सययं किलिट्ठपरिणामो ।
कम्मघणमहाजालं, अणुसमयं बंधइ जीवो ॥ ४६० ॥

अर्थ—" स्पर्शन विगेरे इन्द्रियो, क्रोधादिक कषायो, रस सात ने ऋद्धि ए त्रण गारव तथा जाति विगेरेनो मद—एटलाए करीने निरंतर क्लिष्ट परिणामवाळो (मलिन परिणामवाळो) एटले दुष्ट परिणाममां वर्ततो एवो संसारी जीव दरेक समये कर्मरूपी मेघना मोटा समूहने बांधे छे (उपार्जन करे छे). अर्थात् कर्मरूपी मेघना पटले करीने ज्ञानरूपी चंद्रनुं आच्छादन करे छे." ४६०.

परपरिवायविसाला, अणेगकंदप्पविसयभोगेहिं ।
संसारत्था जीवा, अरइविणोअं करंतेवं ॥ ४६१ ॥

गाथा ४६०—बंधई ।
गाथा ४६१—विणोयं । करिंतेवं ।

अर्थ–" पर (अन्य)ना परिवाद (अवर्णवाद–निंदा) वडे विशाळ एटले परपरिवादमां–पारकी निंदा करवामां आसक्त एवा संसारमां रहेला (संसारी) जीवो अनेक प्रकारना कंदर्प (हास्यादिक करवुं ते) अने शब्दादिक विषयोना भोग एटले सेवनवडे करीने अन्यने अरति उत्पन्न करे तेवा विनोदने करे छे. एवं एटले ए प्रमाणे बीजाने परिताप उत्पन्न करीने पोताना आत्माने सुख उत्पन्न करे छे. " ४६१.

आरंभपायनिरया, लोईअरिसिणो तहा कुलिंगी अ ।
दुहओ चुक्का नवरं, जीवंति दरिद्द जियलोए ॥ ४६२ ॥

अर्थ–" आरंभ (पृथ्वीकायादिकनुं उपमर्दन) अने पाक ते रंधनक्रिया–तेमां निरत (आसक्त) एवा लौकिक ऋषिओ (तापस विगेरे) तथा त्रिदंडी विगेरे कुलिंगीओ यतिधर्मथी अने श्रावकधर्मथी एम बन्ने धर्मथी भ्रष्ट थइने मात्र आ जीवलोकने विषे दरिद्र (धर्म रूपी धन रहित) एवा छता जीवे छे. " ॥ ४६२ ॥

सव्वो न हिंसियव्वो, जह महिपालो तहा उदयपालो ।
न य अभयदाणवइणा, जणोवमाणेण होयव्वं ॥ ४६३ ॥

अर्थ–"साधुए सर्व जीव (कोइ पण जीव)नी हिंसा करवी नहीं. जेवो महिपाळ के० राजा तेवोज उदकपाळ के० रंक पण जाणवो. (मुनि राजाने अने रंकने समान गणे छे, एटले एकेते मारता नथी.) अभयदानना व्रतवाळा साधुए सामान्य जननी उपमावडे थवुं नहीं. एटले के करेलानो प्रतिकार करवो (कोइए आपणने मार्या होय, तो तेनुं वैर लेवुं) इत्यादिक सामान्य जननी कहेणी छे अने कृति पण होय छे तेनी समानता धारण करवी नहीं. " ४६३.

पाविज्जइ इह वसणं, जणेण तं छगलओ असंतुत्ति ।
न य कोई सोणियबलिं, करेइ वग्घेण देवाणं ॥ ४६४ ॥

अर्थ–" क्षमा करनार प्राणी आ संसारमां व्यसन एटले निंदारूप कष्टने पामे छे. केमके लोकमां क्षमावान प्राणीने एवुं कहेवामां आवे छे के 'आ तो असमर्थ (बिचारो) बकरा जेवो छे.' एवी रीते लोको तेनो उपहास करे छे, बीजाथी पीडा पामतो छतो पण ते क्षमाज करे छे, माटे आ असमर्थ बकरा जेवो छे, एम लोको

गाथा ४६२–लोईय । कुलिंगीय । जीयलोए ।
गाथा ४६३–उदकपालो–रंकः । होइव्वं ।
गाथा ४६४–छगलओ । असत्तोत्ति ।

कहे छे; वळी कोइ पुरुष देवोने वाघना रुधिरवडे बळिदान करतो नथी. तेथी करीने जे असमर्थ होय तेज हणाय छे, पण बळवानने कोइ हणतुं नथी. आ प्रमाणे सांभळीने पण साधु क्षमाने तजता नथी—ते तो क्षमाज करे छे. ” ४६४.

वच्चइ खणेण जीवो, पित्तानिलधाउसिंभखोभेहिं ।
उज्जमह मा विसीअह, तरतमजोगो इमो दुलहो ॥ ४६५ ॥

अर्थ—“ आ जीव पित्त (पित्त विकार), अनिल (वात—वायु विकार), धाउ के० धातु अने सिंभ के० श्लेष्मना क्षोभ (विकार) वडे करीने एक क्षणवारमां नाश पामे छे—पामे तेवो छे, माटे हे भव्य प्राणीओ ! क्षमादिक धर्ममां उद्यम करो अने विषाद न करो एटले धर्ममां शिथिल आदरवाळा न थाओ. केमके आ तरतम योग एटले वृद्धि पामतो धर्मसामग्रीनो योग फरीथी (प्राप्त थवो) दुर्लभ छे. ” ४६५.

पंचिंदियत्तणं माणुसत्तणं, आयरिए जणे सुकुलं ।
साहुसमागम सुणणा, सद्दहणारोग पव्वज्जा ॥ ४६६ ॥

अर्थ—“ आ संसारमां पंचेन्द्रियपणुं (पंचेन्द्रिय जातिपणुं) पामवुं दुर्लभ छे, ते पाम्या छतां पण मनुष्यपणुं (पामवुं) दुर्लभ छे, ते पाम्या छतां पण मगधादिक आर्यदेशने विषे उत्पत्ति दुर्लभ छे, आर्य देशमां उत्पत्ति थया छतां पण सुकुळ (उत्तम कुळमां जन्म) दुर्लभ छे, सुकुळ पाम्ये सते पण साधुसमागम दुर्लभ छे, साधुनो संयोग मळ्या छतां पण सूत्रनुं (धर्मनुं) श्रवण (करवुं) दुर्लभ छे, श्रवण कर्या छतां पण तेनापर श्रद्धा थवी दुर्लभ छे, श्रद्धा थया छतां पण नीरोगता(द्रव्यभाव आरोग्यता)रहेवी दुर्लभ छे अने नीरोगता रह्या छतां प्रव्रज्या ग्रहण करवी अति दुर्लभ छे. ” ४६६.

आउं संविल्लंतो, सिढिलंतो बंधणाइं सव्वाइं ।
देहट्ठिअं मुयंतो, झायइ कलुणं बहुं जीवो ॥ ४६७ ॥

अर्थ—“ आयुष्यनो संक्षेप करतो (ओछुं करतो—घटाडतो), सर्व अंगोपांगादिक बंधनोने शिथिल करतो अने देहनी स्थितिने मूकतो एवो आ धर्मरहित जीव छेवट अंतसमये करुण (दीन) स्वरथी घणो शोक करे छे. हा ! में धर्म कर्यो नहीं. ए प्रमाणे अति शोक करे छे. ” ४६७.

गाथा ४६५—पित्तानल । खऊभेहिं ।

गाथा ४६७—संव्विल्लंतो । सविलतो=संक्षेपयन् । सढिलंतो । सेढिलंतो=शिथिलयन् । बंधणाइ सव्वाइ । मुइतो । मुअंतो । कलुणं=करुणं—दीनस्वरं ।

इक्कं पि नत्थि जं सुट्ठु, सुचरियं जह इमं बलं मज्झ ।
को नाम दढकारो, मरणंते मंदपुन्नस्स ॥ ४६८ ॥

अर्थ–" एक पण तेवुं सुष्टु (सारुं) सुचरित (सारुं आचरण) नथी, के जे सुचरित मारुं बळ (आधार रूप) थाय. माटे मंद पुण्यवाळा एवा मारो मरणने अंते कोण आधार थशे ? " ४६८.

सूलविसअहिविसूईपाणीसत्थग्गिसंभमेहिं च ।
देहंतरसंकमणं, करेइ जीवो मुहुत्तेण ॥ ४६९ ॥

अर्थ–" शूल (कुक्षिमां शूळ आववुं ते), विष (झेरनो प्रयोग), अहि (सर्पनुं विष), विसूचिका (अजीर्ण) पाणी (जळमां बूडवुं), शस्त्र (शस्त्रनो प्रहार), अग्नि (अग्निमां बळवुं), तथा संभ्रम एटले भय स्नेहादिक वडे एकदम हृदयनुं रुंधाइ जवुं–आटला प्रकारे करीने आ जीव एक मुहूर्त मात्र (क्षणवार)मां देहान्तरमां संक्रमण (बीजा देहमां प्रवेश) करे छे. एटले मृत्यु पामी परभवमां जाय छे. अर्थात् प्राणीओनुं आयुष्य अति चपळ छे." ४६९.

कत्तो चिंता सुचरियतवस्स गुणसुट्ठियस्स साहुस्स ।
सोगइगमपडिहत्थो, जो अच्छइ नियमभरियभरो ॥ ४७० ॥

अर्थ–सद्गतिमां जवाने प्रतिहस्त (दक्ष) एटले समर्थ अने नियम (अभिग्रह) वडे भर्यो छे धर्मकोश (धर्मभंडार)नो भार जेणे एवा जे साधु रहे छे (होय छे), ते सुचरित तप एटले क्षमा सहित आचरण कर्युं छे तप जेणे एवा अने चारित्रादिक गुणने विषे सुस्थित एटले; दृढ थयेला साधुने क्यांथी चिंता होय ? एटले तेवा साधुने मरणकाळे पण क्यांथी फीकर होय ? नज होय. " ४७०.

साहंति अ फुडं वियडं, मासाहससउणसरिसया जीवा ।
न य कम्मभारगरूयत्तणेण तं आयरंति तहा ॥ ४७१ ॥

गाथा ४६८–एकंपि । सुट्ठ । दढकारो । दढकारो=अवष्टंभ आधारः ।

गाथा ४६९–विसूईअ । पांणिअ । सत्थग्गि=शस्त्राग्नि । महुत्तेण ।

गाथा ४७०–कुत्तो । सुचरिय । गुणसट्ठिअस्स । साहूस्स । अच्छय । सुगइ–सुगगइ । सद्गतिगमनप्रतिहस्तः ।

गाथा ४७१–वियडं । सउण=पक्षी । गुरूअत्तणेण ।

अर्थ–" पर्वतनी गुफामां रहेनार मासाहस नामना पक्षीनी जेवा जीवो प्रकटपणे विस्तारथी अन्यने उपदेश आपे छे. परंतु तेओ कर्मना भारना गुरुपणाए करीने (भारेकर्मी होवाथी) ते प्रमाणे (पोते उपदेश करे छे ते प्रमाणे) ते उपदेशनुं आचरण करता नथी, उपदेश प्रमाणे करता–वर्तता नथी. अर्थात् उपदेश देवामां कुशळ होय, पण आचरण करवामां तत्पर न होय ते जीवो मासाहस पक्षी जेवा जाणवा." ४७१

वग्घमुहम्मि अहिगओ, मंसं दंतंतराउ कड्ढेइ ।
मा साहसं ति जंपइ, करेइ न य तं जहाभणियं ॥४७२॥

अर्थ–" वाघना मुखमां पेठेलो मासाहस नामनो पक्षी (वाघना) दांतनी मध्येथी मांसने काढे छे. पछी मांसना कटका लइने झाडपर बेसी ते खाइने ' आवुं साहस (विश्वास) कोइ करशो नहीं ' एम पोतेज बोले छे. परंतु जेवुं पोते कह्युं ते प्रमाणे ते करतो नथी, तेथी ते नाश पामे छे. एटले वाघना मुखमां पेसीने ते पक्षी मांस काढे छे. एटलो बधो वाघनो विश्वास राखवाथी बीजा पक्षीओए तेने वार्यो छतां पण ते वाघनाज मुखमां नाश पामे छे. ते प्रमाणे अन्य मनुष्य पण जेओ पोते सदुपदेश आपे छे, परंतु पोते तेनुं आचरण करता नथी तेओ ते मासाहस पक्षीनी तुल्य जाणवा. एटले तेओ पण नाश पामे छे." ४७२.

परिअट्टिऊण गंथत्थवित्थरं निहिसिऊण परमत्थं ।
तं तह करेइ जह तं, न होइ सव्वं पि नडपढियं ॥ ४७३ ॥

अर्थ–" ग्रन्थार्थ (सूत्रार्थ)ना विस्तारनुं परावर्तन करीने (सारी रीते गोखीने–कंठे करीने) तथा परमार्थनी (तत्त्वार्थनी) सारी रीते परीक्षा करीने पण बहुलकर्मी जीव ते सूत्रार्थने तेवो करे छे के जेथी ते मोक्षरूप कार्यसाधक न थाय, परंतु ते सर्व (सूत्रार्थ) पण नटना भण्या (बोल्या) जेवुं निष्फळ थाय. जेम नटनुं उपदेशयुक्त बोलेलुं व्यर्थ छे, एटले तेने कांइ पण गुणकारी नथी, तेम बहुलकर्मीनुं सूत्रार्थ पठनादिक सर्व व्यर्थ छे. ४७३.

पढइ नडो वेरग्गं, निव्विज्जिज्जा य बहुजणो जेण ।
पढिऊण तं तह सढो, जालेण जलं समोअरइ ॥ ४७४ ॥

गाथा ४७२–अहिगऊ । दतंतराओ । कट्ठेई । नहुत्त । भणिअं ।
गाथा ४७३–नहिसीऊण । निहिसिऊण=निरीक्ष्य–परीक्ष्य । नडपढिअं=नटपठित ।
गाथा ४७४–निविज्जिज्जा बहुउ जणो जेण । निविज्जिज्जा=निर्वेद प्राप्नुयात् । सढिलो । समोयरइ ।

अर्थ–" जे नट होय छे ते वैराग्यनी एवी वातो कहे छे के जेथी घणा लोको निर्वेद (वेराग्य) पामे छे. तेवी रीते मूर्ख माणस सूत्रार्थ भणीने पण (बोलीने–उपदेश आपीने पण) पछीथी ते प्रमाणे वर्ततो नथी, परंतु माछलां पकडवा माटे जाळ लइने जळमां उतरे छे. (उतर्यो जेवुं करे छे.) अर्थात् मूर्ख माणस सूत्रना अध्ययन (अभ्यास)ने विपरीत आचरण करवाथी व्यर्थ करे छे. " ४७४.

कह कह करेमि कह मा करेमि, कह कह कयं बहुकयं मे ।
जो हिययसंपसारं, करेइ सो अइ करेइ हियं ॥ ४७५ ॥

अर्थ–" हुं केवी केवी रीते धर्मानुष्ठान करुं ? केवी रीते न करुं ? अने केवी केवी रीते करेलुं ते धर्मानुष्ठान मने बहु करेलुं एटले घणुं गुणकारी थाय ? आवी रीते जे पुरुष हृदयमां संप्रसार (आलोचना–विचार) करे छे ते पुरुष अत्यंत आत्महित करे छे (करी शके छे). " ४७५.

सिढिलो अणायरकओ, अवस्सवसकओ तहा कयावकओ ।
सययं पमत्तसीलस्स, संजमो केरिसो होज्जा ॥ ४७६ ॥

अर्थ–" शिथिल, अनादर वडे (आदर रहित) करेलो, अवशपणाथी एटले गुरुनी परतंत्रताथी करेलो अने कांइक पोतानी स्वतंत्रताथी करेलो, तथा कृतापकृत एटले कांइक (संपूर्ण) करेलो अने कांइक विपरीत करेलो एटले विराधेलो एवो निरंतर प्रमत्तशील (प्रमादना आचरणना स्वभाववाळा)नो संयम एटले प्रमादीए ग्रहण करेलो तेवा प्रकारनो संयम केवो होय ? अर्थात् सर्वथा तेनो ते संयम (चारित्र) कहेवायज नही. " ४७६.

चंदु व्व कालपक्खे, परिहाइ पए पए पमायपरो ।
तह उग्घरविग्घरनिरंगणो य ण्णे य इच्छियं लहइ ॥४७७॥

अर्थ–" कृष्ण पक्षमां चंद्रनी जेम एटले जेम कृष्ण पक्षमां चंद्र दिवसे दिवसे हीन थाय छे, तेम प्रमादवान पुरुष पगले पगले हानि पामेछे. जोके ते गृहनो (गृहस्थपणाना गृहनो) त्याग करीने घरना आश्रयरहित थया छतां अने स्त्रीरहित थया छतां पण इच्छित एटले स्वर्गादिक वांछित फळने पामतो नथी. " ४७७.

गाथा ४७५–कहवा करेमि । हियइ संपसारो ।

गाथा ४७६–अणायारकओ । कहाविकओ । कयावकओ=कृतापकृत । हुज्जा ।

गाथा ४७७–कालपक्खे=कृष्णपक्षे । विहघर । ण य । उद्गृहाविगृहनिरंगन.=उज्झित गृह येन, गृहाद्विरहितो विगृहः, निर्गता अंगना यस्य, स्त्री रहित इत्यर्थः ।

भीओव्विग्ग निलुक्को, पागडपच्छन्नदोससयकारी ।
अप्पच्चयं जणंतो, जणस्स धी जीवियं जियइ ॥ ४७८ ॥

अर्थ–" भय पामेलो (पापाचरण करेल होवाथी हवे शुं थशे ? एम भय पामेलो), उद्विग्न (मननी समाधि रहित), निलुक्क (पोताना पापने ढांकनारो), अने प्रकट तेमज प्रच्छन्न सेंकडो दोषने करनारो तथा माणसोने अविश्वास उत्पन्न करनारो एवो जे पुरुष जीवे छे ते धिक् छे. अर्थात् निंद्य जीवित छे– तेना जीवतरने धिक्कार छे. " ४७८.

न तहिं दिवसा पक्खा, मासा वरिसा वि संगणिज्जंति ।
जे मूलउत्तरगुणा, अक्खलिया ते गणिज्जंति ॥ ४७९ ॥

अर्थ–" ते दिवसो, ते पक्षो (पखवाडीयां), ते महिनाओ अने ते वर्षो पण गणतरीमां गणवांज नहीं. अर्थात् धर्मरहित व्यतीत थयेला दिवसो, पक्षो, मासो के वर्षो निष्फळज छे. परंतु जे (दिवसो विगेरे) मूळ अने उत्तर गुणे करीने अस्खलित–निरतिचारवाळा (आराधन करेला) गया होय–जता होय तेज दिवसो विगेरे गणतरीमां आवे छे. गणना करवा योग्य तेज दिवसो छे, अर्थात् धर्मयुक्त दिवसोज लेखामां छे, बाकीना व्यर्थ छे. " ४७९.

जो न वि दिणे दिणे संकलेइ, के अज्ज अज्जिया मए गुणा ।
अगुणेसु अ न हु खलिओ, कह सोउ करिज्ज अप्पहिअं ४८०

अर्थ–" आजे में कया गुणो उपार्जित कर्या ? एटले मने आजे ज्ञानादिक कयो गुण प्राप्त थयो ? ए प्रमाणे जे पुरुष दिवसे दिवसे (दररोज) संकलना करतो नथी– विचार करतो नथी. तथा जे (पुरुष) प्रमाद अने अतिचार रूप अगुणने विषे स्खलना पामतो नथी–तेने तजतो नथी अर्थात् अगुणनी आराधनामां–आचरणामांज तत्पर रहे छे ते पुरुष पोताना आत्मानुं हित शी रीते करी शके ? नज करी शके. " ४८०

इय गणियं इयं तुलिअं, इय बहुआ दरिसियं ...
जइ तह वि न पडिबुज्झइ, किं कीरइ नूण ...

अर्थ–" जोके आ प्रमाणे (पूर्वे कह्या प्रमाणे) एटले श्री ऋषभवीरनी
उद्यम करवो एम कह्युं. आ प्रमाणे अवंतीसुकुमारादिकनी जेम प्राणांते पण

गाथा ४७८–निलुक्को=स्वात्मपापाच्छादक । धई जीविअं जइइ ४७९–तिहिं ।
गाथा ४८०–संकलेअ । मी गुणा । य ण य खलिओ ।
गाथा ४८१–बहुहा । दरिसीअं । नियमयं । निऊण । ।

करवो नहीं एम तुळना करी, आ प्रमाणे आर्यमहागिरि विगेरेना दृष्टांते करीने घणे प्रकारे बताव्युं, तथा घणे प्रकारे समिति, कषायादिकना फळभूत दृष्टांतो देखाडवा वडे नियंत्रणा देखाडी, तोपण आ जीव जो प्रतिबोध न पामे तो शुं करीए ? खरेखर ते जीवनी चिरकाळ भवभ्रमण रूप भवितव्यताज छे; नहीं तो ते केम प्रतिबोध न पामे ? माटे जरुर तेनी एवीज भवितव्यता छे एम जाणवुं. " ४८१.

किमगं तु पुणो जेणं, संजमसेढी सिढिलीकया होई ।
सो तं चिअ पडिवज्जइ, दुक्ख पच्छा हु उज्जमई ॥ ४८२ ॥

अर्थ–" वळी हे शिष्य ! जे पुरुषे संयमश्रेणी (ज्ञानादिक गुणश्रेणी) शिथिल करेली छे ते पुरुषे करीने शुं ? (ते पुरुष शा कामनो ? कांइज नहीं). केमके ते पुरुष निश्चे ते (शिथिलपणा)नेज पामे छे, अने पछी (शिथिल थया पछी) दुःखे करीने उद्यम करी शके छे. एटले शिथिल थया पछी उद्यम करवो अशक्य छे. माटे प्रथमथीज शिथिल थवुं नहीं, ए अहीं तात्पर्य छे. " ४८२.

जइ सव्वं उवलद्धं, जइ अप्पा भाविओ उवसमेणं ।
कायं वायं च मणं, उप्पहेण जह न देई ॥ ४८३ ॥

अर्थ–" वळी हे भव्य प्राणी ! जो तें पूर्वोक्त सर्व सामग्री प्राप्त करी होय, अने जो उपशमवडे आत्मा भावित (वासित) कर्यो होय, तो तुं काययोग वचनयोग अने मनयोगने जे प्रमाणे उन्मार्गे न जाय तेम कर–तेवी रीते प्रवर्ताव. " ४८३.

हत्थे पाए निक्खव्वे, कायं चालिज्ज तं पि कज्जेण ।
कुम्मो व्व सया अंगे, अंगोवंगाइं गोविज्जा ॥ ४८४ ॥

अर्थ–" हाथ तथा पगने संकोचवा एटले कार्य विना हलाववा नहीं, अने जे कायाने एटले काययोगने चलाववो ते पण कार्ये करीने एटले कार्य होय तोज चलाववो, कार्य विना चलाववो नहीं; अने काचवानी जेम निरंतर अंगोने विषे भुज, नेत्र विगेरे अंगोपांगने गुप्त राखवां एटले तेने पण कार्य विना चलाववां नहीं. " ४८४.

अहीं कूर्म (काचवा)नुं दृष्टांत जाणवुं.

कूर्मनी कथा.

वाराणसी नामनी महापुरीमां गंगानदीनी पासे एक मृदगंगा नामनो मोटो द्रह छे. तेनी समीपे मालुया कच्छ नामे एक मोटुं गहन वन छे. ते वनमां बे दुष्ट

गाथा ४८२–होइ। चिय। उजमइ। गाथा ४८३–भाविउ। उवसमेण। उप्पहिम जइ न देइ। देही=प्रवर्त्तय। गाथा ४८४–नक्खिवे। चालिज्ज। कुम्म व सए अंगंमि।

शीयाळ रहेता हता. ते महा प्रचंड अने भयंकर (क्रूर) कर्म करनार हता. एकदा ते द्रहमांथी बे कूर्म (काचबा) बहार नीकळ्या. तेमने पेला दुष्ट शीयाळोए जोया. तेथी ते कूर्मना तरफ तेमने मारवा दोडया. ते पापी शीयाळोने आवतां जोईने बन्ने कूर्मो पोतानां अंगोने संकोचीने रह्या. पापी शीयाळोए आवीने ते कूर्मोने उंचा कर्या, पछाडया, घणा नखना प्रहार दीधा तथा तेमने मारवा माटे घणो प्रयत्न कर्यो. परंतु ते काचबाओए पोतानुं एके अंग बहार काढयुं नहीं, तेथी ते भेद न पाम्या. एटले ते बन्ने मायावी शीयाळ थाकीने नजीकना भागमां संताइ रह्या. थोडी वारे एक काचबाए तेमने गयेला धारीने पोतानां अंगो बहार काढ्यां. ते पेला पापी शीयाळोए जोयुं. पेला काचबाए धीरे धीरे चारे पग तथा ग्रीवा विगेरे सर्व अंगो बहार काढ्यां. एटले तरतज अकस्मात् आवीने ते शीयाळोए तेने ग्रीवामांथी पकडी पृथ्वीपर नांखी नखना प्रहारथी तेने मारी नाखीने खाइ गया. तेने मारी नांखेलो जाणीने पेला बीजा काचबाए पोतानां अंगो वधारे वधारे संकोची लीधां. पेला दुष्ट शीयाळोए तेने मारवा माटे घणा उपायो कर्या, तोपण तेने कांइ करी शक्या नहीं. घणीवारे थाकीने ते शीयाळीया दूर चाल्या गया. पछी ते काचबो तेमने घणा दूर गया जाणीने प्रथम पोतानी ग्रीवा जरा बहार काढी चोतरफ जोवा लाग्यो. एटले तेमने वधारे दूर गया जाणीने (जोइने) एकदम चारे चरणो बहार काढी तरतज जल्दीथी दोडतो ते मृदगंगा नामना ह्रदमां पेसी गयो अने पोताना कुटुंबने मळी सुखी थयो.

आ दृष्टांत प्रमाणे बीजा पण जे साधु पोतानां अंगोपांगने गोपवीने तेनुं रक्षण करे छे-तेने कुमार्गमां प्रवर्तावता नथी, ते मोक्षसुखने पामे छे; अने जे पोतानां अंगोपांगनुं संगोपन करता नथी ते बीजा काचबानी जेम दुःखनुं पात्र थाय छे.

॥ इति कूर्मदृष्टान्तः ॥ ७१ ॥ कथाओ संपूर्ण. ॥

विकहं[1] विणोयभासं[2], अंतरभासं[3] अवक्कभासं[4] च[5] ।
जं[6] जस्स[7] अणिट्ठमपुच्छिओ[8] य[9] भासं[10] न[11] भासिज्जा[12][13] ॥ ४८५ ॥

अर्थ—" स्त्रीकथादिक विकथाने, विनोदभाषा (कौतुकनी वार्ता)ने, अंतर भाषाने (गुरु बोलता होय, तेनी वच्चे बोलवुं तेने), अवाक्य भाषा (नहीं बोलवा लायक मकार चकारादिक भाषा)ने, जे (भाषा) जेने अनिष्ट (अप्रीति)कारी होय तेवी भाषाने तथा कोइए पूछ्या विना बोलवुं ते अपृष्टभाषाने सारा साधु कदी पण बोलता नथी. " ४८५.

अणवट्ठियं मणो जस्स, झायइ बहुयाइं अट्टमट्टाइं ।
तं चिंतिअं च न लहइ, संचिणइ पावकम्माइं ॥ ४८६ ॥

अर्थ—" जेनुं अनवस्थित (अति चपळ) मन घणा दुष्ट विचारोने (आडां त्रेडांने—आळजाळने) हृदयमां चिंतवे छे. ते चिंतित (मनोवांछित)ने पामतो नथी, पण उलटां दरेक समये पापकर्मोने एकठां करे छे—वृद्धि पमाडे छे. माटे मनने स्थिर करीने सर्व अर्थने साधनार एवा संयमने विषे यतना करवी—उद्यम करवो. ४८६.

जह जह सव्वुवलद्धं, जह जह सुचिरं तवोवणे वुच्छं ।
तह तह कम्मभरगुरू, संजमनिव्वाहिरो जाओ ॥ ४८७ ॥

अर्थ—" कर्मना भर (समूह)थी गुरु (व्याप्त) थयेला पुरुषे (भारेकर्मी जीवे) जेम जेम सर्व सिद्धान्तनुं रहस्य उपलब्ध (प्राप्त) कर्युं, अने जेम जेम चिर काळ सुधी तपोधन (तप रूपी धनवाळा) साधुओने विषे (साधुसमुदायने विषे) निवास कर्यो, तेम तेम ते (गुरुकर्मी) चारित्र थकी बाह्य करायो—भ्रष्ट थयो. " ४८७.

ते उपर दृष्टान्त कहे छे.—

विज्जप्पो जह जह ओसहाइं पिज्जेइ वायहरणाइं ।
तह तह से अहिययरं, वाएणा ओरिअं पुट्टं ॥ ४८८ ॥

अर्थ—" आप्त (हितकारी) वैद्य जेम जेम वायुने हरण (नाश) करनारां सुंठ, मरी विगेरे औषधो पाय छे, तेम तेम ते (असाध्य रोगवाळा)नुं उदर (पेट) वायुए करीने अधिकतर पूर्ण (भरायेलुं) थाय छे. ते दृष्टांत प्रमाणे श्रीजिनेश्वर रुपी वैद्य पण ज्ञानावरणादिक कर्म रूपी वायुने शांत करनार सिद्धांतरूपी घणुं औषध पाय छे, तो पण (बहुकर्मी जीवोनो) असाध्य एवो कर्म रूपी वायु उलटो वृद्धि पामे छे. " ४८८ .

दड्ढजउमकज्जकरं, भिन्नं संखं न होई पुणकरणं ।
लोहं च तंबविद्धं, न एइ परिकम्मणं किंचि ॥ ४८९ ॥

अर्थ—" बळेली जतु (लाख) अकार्यकर छे—कांइ पण कामनी नथी. भांगी (फूटी) गयेला शंखनुं फरी सांधवुं थतुं नथी (फरी संधातो नथी). तथा तांबावडे विंधायेलुं—मळेलुं—एकरूप थयेलुं लोढुं कांइ पण (जरा पण) परिक्रमण (सांधवा)-ना उपायने पाळतुं नथी. तेवीज रीते असाध्य कर्मथी वींटायेलो भारेकर्मी जीव धर्मने विषे सांधी—जोडी शकातो नथी. " ४८९.

गाथा ४८६—सचिणय ।
गाथा ४८७—सुचिरो । वुच्छइति उषित । भारगुरू । सयमानिर्वासितः । निव्वाहिरउ जाओ ।
गाथा ४८८—वाइहरणाय । ऊरियं पोट्टं । गाथा ४८९—होइ ।

को दाही उवएसं, चरणालसयाण दुव्विअड्ढाणं ।
इंदस्स देवलोगो, न कहिज्जइ जाणमाणस्स ॥ ४९० ॥

अर्थ–" चारित्रने विषे आळसु अने दुर्विदग्ध (खोटा पंडित–पंडितमानी) अथवा दुर्वाक्य पुरुषोने वैराग्य तत्त्वनो उपदेश कोण आपे ? (अमे पोतेज सर्व जाणीए छीए. तेथी अमने उपदेश आपनार आ कोण छे ? एम जाणनारा दुर्विदग्ध कहेवाय छे). जेम देवलोकना स्वरूपने जाणनार एवा इन्द्रनी पासे देवलोकनुं स्वरूप कोण कही शके ? (कहे ?) कोइ कही शके नहीं (कहे नहीं). तेम जे जाणता छतां प्रमादी थाय छे, तेने धर्मोपदेश आपवा कोण समर्थ छे ? कोइ समर्थ नथी. " ४९०.

दो चेव जिणवरेहिं, जाइ जरामरणविप्पमुक्केहिं ।
लोगम्मि पहा भणिया, सुसमण सुसावगो वा वि ॥ ४९१ ॥

अर्थ–" जाति (एकेन्द्रियादिक), जरा (वृद्धावस्था) अने मरण (प्राण-वियोग) तेनाथी मुक्त थयेला एवा जिनवरो (तीर्थंकरो)ए आ लोकने विषे बेज मार्ग (मोक्षे जवाना) कहेला छे. एक सुश्रमण–सुसाधुधर्म अने बीजो सुश्रावक धर्म. तेमज अपि शब्दथी त्रीजो संविग्न पक्ष पण ग्रहण करवो–जाणवो. " ४९१.

भावच्चणमुग्गविहारया य, दव्वच्चणं तु जिणपूआ ।
भावच्चणा य भट्ठो, हविज्ज दव्वच्चणुज्जुत्तो ॥ ४९२ ॥

अर्थ–" उग्रविहारता (सत्य क्रियानुष्ठाननुं करवुं–शुद्ध यतिमार्गनुं पाळन करवुं) ते भावार्चन–भावपूजा कहेवाय छे, अने जिनबिंबनी पुष्पादिकथी पूजा करवी ते द्रव्यपूजा कहेवाय छे. तेमां जो भावपूजाथी एटले यतिधर्मना पाळनथी भ्रष्ट (असमर्थ) थाय, तो तेणे द्रव्यपूजामां (श्राद्ध धर्ममां) उद्यमवंत थवुं. श्राद्ध धर्मनुं पाळन करवुं. " ४९२.

जो पुण निरच्चणो चिअ, सरीरसुहकज्जमित्ततल्लिच्छो ।
तस्स न हि बोहिलाभो, न सुग्गइ नेय परलोगो ॥ ४९३ ॥

अर्थ–" पण जे पुरुष निरर्चन एटले द्रव्यपूजा अने भावपूजाथी रहितज होय, तथा निश्चे शरीरना सुखकार्यमांज मात्र लोलुप (तत्पर) होय तेवा पुरुषने बोधिनो लाभ थतो नथी एटले आवता भवमां धर्मनी प्राप्ति थती नथी, तेनी सद्गति (मोक्ष-

गाथा ४९०–दुव्वियड्ढाणं–दुर्वाक्याना । गाथा ४९१–सुस्सावओ ।
गाथा ४९२–दव्वच्चणुज्जत्तो ।
गाथा ४९३–निरच्चणु । तल्लिच्छो=लोलुप । न य । न सोगई ।

गतिरूप) थती नथी, तथा तेने परलोक पण (परभवमां देवपणुं के मनुष्यपणुं) प्राप्त थतो नथी. " ४९३. द्रव्यपूजा अने भावपूजामां भावपूजा श्रेष्ठ छे ते बतावे छे.

कंचणमणिसोवाणं, थंभसहस्सूसिअं सुवन्नतलं ।
जो कारिज्ज जिणहरं, तओ वि तवसंजमो अहिओ ॥ ४९४ ॥

अर्थ–" कांचन (सुवर्ण) अने चंद्रकांतादिक मणिओना सोपान (पगथीयां)-वाळुं, हजारो स्तंभोए करीने उच्छ्रित एटले विस्तारवाळुं अने सुवर्णनी भूमि (तळ) वाळुं जिनगृह (जिनमंदिर) जे कोइ पुरुष करावे, तेना करतां पण एटले तेवुं जिन-मंदिर कराववा करतां पण तप अने संयमनुं पालन (करवुं ए) अधिक छे, अर्थात् भावपूजा अधिक छे. " ४९४.

निब्बीए दुब्भिक्खे, रन्ना दीवंतराओ अन्नाओ ।
आणेऊणं बीअं, इह दिन्नं कासवजणस्स ॥ ४९५ ॥

अर्थ–" आ लोकमां निर्वीज एटले बीज पण न मळी शके एवा दुकाळसमयमां राजाए लोकोने माटे बीजा द्वीपमांथी बीज अणावीने (मंगावीने) ते (बीज) कर्षक लोकने एटले खेडुतोने आप्युं. " ४९५

केहिंचि सव्वं खइयं, पइन्नमन्नेहिं सव्वमद्धं च ।
वुत्तंगयं च केई, खित्ते खुट्टंति संतत्था ॥ ४९६ ॥

अर्थ–" ते राजाए आपेला वीजने केटलाएक बधुं खाइ गया, बीजा केटलाएक खेडुतोए ते सर्व बीजने वावीने उगाड्युं, केटलाएके अर्धुं खाधुं ने अर्धुं वाव्युं, तथा केटलाक खेडुतो वावीने पछी ज्यारे ते उग्युं के तरतज एटले पूरुं पाकवा दीधा पहेलांज त्रास पामीने एटले पाछळथी राजसेवको आ धान्य लइ जशे एवा भयथी ते धान्य पोताने घेर लइ जवा माटे क्षेत्रमां कूटवा लाग्या. कूटीने दाणा काढवा लाग्या. " तेने पण राजसेवकोए गुन्हेगार गणी पकड्या अने घणुं दुःख आप्युं. ४९६

हवे आ बे गाथामां कहेला दृष्टान्तनो उपनय बतावे छे–

राया जिणवरचंदो, निब्बीयं धम्मविरहिओ कालो ।
खित्ताइं कम्मभूमी, कासगवग्गो य चत्तारि ॥ ४९७ ॥

गाथा ४९४–थभसहसूसिअ=स्तंभसहस्रोच्छ्रितम् ।

गाथा ४९५–बीयं । कासगजणस्स=कर्षकजनस्य ।

गाथा ४९६–केहि वि । पयन्न । पइन्न–उप्तम् । वुत्तगइ–उत्तुग्गयं । वुत्तंगयं–उप्तं च तदुद्गतं च खुडंति–सुडंति । संतित्था–संतव्वा

गाथा ४९७–निव्वीए । विहरीओ । कासवबग्गो ।

अर्थ–" जिनवरचंद्र (तीर्थंकरदेव)ने राजा जाणवा, धर्मरहित काळने निर्बीजसमय (गयुं छे धर्मरूपी बीज जे काळे एवो समय) जाणवो, पंदर कर्मभूमिने क्षेत्रो जाणवां, तथा कर्षक (खेडूत) वर्ग चार प्रकारनो जाणवो. असंयत, संयत, देशविरति अने पार्श्वस्थ ए रूप चार प्रकारना जीवोने खेडूत वर्ग जाणवो. ४९७.

अस्संजएहिं सव्वं, खइअं अद्धं च देसविरएहिं ।
साहूहिं धम्मबीअं, उत्तं नीअं च निप्फत्तिं ॥ ४९८ ॥

अर्थ–" हवे ते अरिहंत राजाए धर्म रूपी बीज चारे वर्गना कर्षकोने आप्युं तेमां असंयत (विरति रहित) पुरुषो ते धर्मबीज बधुं खाई गया, अने देशविरतिवाळा एटले स्थूल प्राणातिपात थकी विरति विगेरे व्रतने धारण करनार श्रावकोए अर्धुं धर्मबीज बाधुं अने अर्धुं वाव्युं. तथा साधुओए ते विरतिधर्मरूपी बीज बधुं आत्मारूपी क्षेत्रमां वाव्युं, अने तेने निष्पत्ति (उत्पत्ति) पमाड्युं एटले सारी रीते तेनुं पालन कर्युं " ४९८

जे ते सव्वं लहिउं, पच्छा खुट्टंति दुब्बलधिईया ।
तवसंजमपरितंता, इह ते ओहरिअसीलभरा ॥ ४९९ ॥

अर्थ–" तथा जेओ पार्श्वस्थादिक छे, जेओ विरतिधर्मरूपी सर्व बीजने पामीने पछीथी जेओनुं धैर्य दुर्बळ छे, तप अने संयमे करीने जे खेद पामेला छे–थाकी गयेला छे अने जेमणे शील (संयम)ना भारनो त्याग कर्यो छे एवा ते पार्श्वस्थादिक आ जिनशासनने विषे पोताना आत्मारूपी क्षेत्रमांज ते धर्मबीजने कूटे छे–विनाश पमाडे छे. " ४९९.

आणं सव्वजिणाणं, भंजइ दुविहं पहं अइक्कंतो ।
आणं च अईक्कंतो, भमइ जरामरणदुग्गम्मि ॥ ५०० ॥

अर्थ–" धर्मबीजने विनाश पमाडवाथी ते (पार्श्वस्थादिक) सर्व जिनेश्वरोनी आज्ञानो भंग करे छे, अने साधुधर्म तथा श्रावकधर्मरूप बन्ने प्रकारना मार्गनुं अतिक्रमण (उल्लंघन) करता सता तेमज सर्वज्ञनी आज्ञानुं उल्लंघन करता सता जरा अने मरणे करीने अति दुर्ग (गहन) एवा अनंत संसारमां चिरकाळ परिभ्रमण करे छे. " ५००.

गाथा ४९७–निव्वीए । थिरहीओ । कासगवग्गो ।

गाथा ४९८–खइयं । विरएहि । धम्मवीय । नीय । निप्पत्तिं ।

गाथा ४९९–लहिअं । खोट्टंति । धिइआ–द्धिआ । तप.संयमाभ्या परिक्लिन्नाः । अवहृतशीलभराः त्यक्तसंयमभाराः । गाथा ५००–अइक्कतो ।

जइ न तरसि धारेउं, मूलगुणभरं सउत्तरगुणं च ।
मुत्तूण तो तिभूमी, सुसावगत्तं वरतरागं ॥ ५०१ ॥

अर्थ—"हे भव्य जीव ! जो कदाच तुं समिति विगेरे उत्तर गुणना भार (समूह) सहित मूलगुणना भारने (पंचमहाव्रतना भारने) धारण करवा (वहन करवा) शक्तिमान न हो तो तारे जन्मभूमि, विहारभूमि अने दीक्षाभूमि ए त्रण भूमिनो त्याग करीने सुश्रावकपणुं अंगीकार करवुं ते अति श्रेष्ठ छे; अर्थात् तुं अति श्रेष्ठ एवा सुश्रावकपणाने अंगीकार कर." ५०१

अरिहंतचेइआणं, सुसाहू पूयारओ दढायारो ।
सुसावगो वरतरं, न साहुवेसेण चुअधम्मो ॥ ५०२ ॥

अर्थ—" वळी हे भव्य प्राणी ! जो तुं साधुपणुं धारण करवा असमर्थ हो, तो अरिहंतना चैत्य (बिंब)नी पूजामां तत्पर अने सुसाधु एटले उत्तम साधुओनी सत्कार सन्मानादिरूप पूजामां आसक्त अने दृढाचारवाळो (अणुव्रत पाळवामां कुशळ) एवो सुश्रावक था ते घणुं श्रेष्ठ छे, एटले तेवुं श्रावकपणुं धारण करवुं ते बहु सारुं छे. परंतु साधुवेषे करीने—साधुवेष धारण करीने धर्मथी च्युत—भ्रष्ट थवुं ए श्रेष्ठ नथी. केमके आचारभ्रष्ट थइने मात्र वेष धारण करवाथी कांइ पण फळ नथी." ५०२

सव्वं ति भाणिऊणं, विरई खलु जस्स सव्विया नत्थि ।
सो सव्वविरइवाई, चुक्कइ देसं च सव्वं च ॥ ५०३ ॥

अर्थ—" सर्व एटले 'सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि' हुं सर्व सावद्य योगनुं प्रत्याख्यान (निषेध) करुं छुं—एम प्रतिज्ञा करवावडे सर्व सावद्य योगनुं प्रत्याख्यान करीने पण जेने निश्चे सर्व (संपूर्ण) षट्कायना पालन रूप विरति नथी ते सर्व विरतिने कहेनारो (हुं सर्वविरति छुं एम प्रलाप करनारो) देशविरतिने (श्रावक धर्मने) अने सर्वविरतिने (साधुधर्मने) बंनेने चूके छे—हारे छे, अर्थात् बन्नेथी भ्रष्ट थाय छे." ५०३.

जो जहवायं न कुणइ, मिच्छद्दिट्ठी तओ हु को अन्नो ।
वुड्ढेइअ मिच्छत्तं, परस्स संकं जणेमाणो ॥ ५०४ ॥

गाथा ५०१=तरसि=शक्नोषि । धारेउ । तिभूमिं ।

गाथा ५०२—चेईआणं । पुआरओ । सुस्सावगो । च्युतधर्मः ।

गाथा ५०३—भाणिउणं । विरइ । सव्विया=सर्विका—सर्वा । विरइवाही ।

गाथा ५०४—वड्ढेई मिच्छत्तं । जणेमाणे ।

अर्थ—" जे पुरुष यथावाद एटले जेवुं वचन बोले तेवुं क्रियानुष्ठानादिक करतो नथी ते पुरुषथी बीजो कयो पुरुष मिथ्यादृष्टि जाणवो ? एनेज मिथ्यादृष्टि जाणवो. तेनाथी बीजो कोइ विशेष मिथ्यादृष्टि नथी. केमके ते पुरुष बीजा लोकोने शंका उत्पन्न करावतो सतो मिथ्यात्वने वृद्धि पमाडे छे. " ५०४.

आणाए च्चिय चरणं, तब्भंगे जाण किं न भग्गं ति ।
आणं च अइक्कंतो, कस्साएसा कुणइ सेसं ॥ ५०५ ॥

अर्थ—" निश्चे जिनेश्वरनी आज्ञाए करीनेज चारित्र छे, एटले जिनाज्ञानुं पालन करवुं एज चारित्र छे; तो ते आज्ञानो भंग कर्ये सते शुं न भांग्युं ? एटले शेनो भंग न कर्यो ? अर्थात् जिनाज्ञानो भंग करवाथी सर्व चारित्रादिकनो भंग कर्यो, एम हे शिष्य ! तुं जाण; अने जिनाज्ञानुं उल्लंघन करनार पुरुष शेष-क्रियानुष्ठानादिक कोना आदेश (आज्ञा)थी करे छे ? जो जिनाज्ञानुं उल्लंघन कर्युं, तो पछी क्रियानुष्ठानादिक कोनी आज्ञाथी करवुं ? अने आज्ञानुं उल्लंघन करीने (आज्ञा विना) जे क्रिया करवी ते केवळ विडंबनाज छे-निष्फळ छे. " ५०५

संसारो अ अणंतो, भट्ठचरित्तस्स लिंगजीविस्स ।
पंचमहव्वयतुंगो, पागारो भल्लिओ जेण ॥ ५०६ ॥

अर्थ—" वळी जे निर्भागी पुरुषे पंचमहाव्रत रूपी तुंग (उंचो) प्राकार (किल्लो) भेद्यो छे—नष्ट पमाड्यो छे-पाडी नाख्यो छे ते भ्रष्ट (लुप्त) चारित्रवाळा अने मुखवस्त्रिका रजोहरण विगेरे लिंग (वेष) मात्रे करीने आजीविका करनारानो संसार अनंत जाणवो; एटले ते निर्भाग्यशेखर अनंत काळ सुधी चतुर्गतिमां भ्रमण करे छे. " ५०६.

न करेमि त्ति भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो पावं ।
पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ॥ ५०७ ॥

अर्थ—" जे पुरुष ' न करेमि इत्यादि ' नहीं करुं इत्यादि एटले मन वचन अने कायाए करीने नहीं करुं, नहीं करावुं अने करता एवा बीजाने अनुमोदन नहीं करुं, एम नव कोटी सहित प्रत्याख्यान भणीने (करीने) पण फरीथी तेज पापनुं सेवन करे छे (आचरण करे छे) ते पुरुषने प्रत्यक्ष मृषावादी जाणवो. केमके ते जेवुं बोले छे तेवुं पाळतो नथी; तथा माया एटले अंतरंग असत्यपणुं अने निकृति एटले बाह्य असत्यपणुं ते

गाथा ५०५—आणाइच्चअ । तं भगे । भंग्गाति । कस्सादेशात् ।

गाथा ५०६—नट्ठचरित्तस्स । लिंगजीवस्स । महाव्वय । भिल्लओ । भिल्लिओ । भेल्लिओ=भेदितः ।

गाथा ५०७—मुसावाइ । नयरि । मायानिकृत्यो. प्रसगो यस्य सः ।

बन्नेनो जेने प्रसंग छे एवो तेने जाणवो, अर्थात् तेने अन्तरंग अने बाह्य बन्ने प्रकारनो असत्यवादी मायाकपटी जाणवो. ” ५०७.

लोए वि जो ससूगो, अलिअं सहसा न भासए किंचि ।
अह दिक्खिओ वि अलियं, भासइ तो किंचि दिक्खाए ॥

अर्थ–“ लोकने विषे पण जे सशूक (पापभीरु–पापथी भय पामतो) माणस होय छे ते सहसा (विचार कर्या विना) कांइ पण असत्य बोलतो नथी; त्यारे जो दीक्षित थईने (दीक्षा लइने) पण ते असत्य बोले, तो दीक्षाए करीने शुं ? अर्थात् दीक्षा लेवानुं शुं फळ ? कांइज नहीं. ” ५०८.

महव्वयअणुव्वयाइं, छंडेउं जो तवं चरइ अन्नं ।
सो अन्नाणी मूढो, नावा बुड्डो मुणेयव्वो ॥ ५०९ ॥

अर्थ–“ जे पुरुष महाव्रतोने अथवा अणुव्रतोने तजीने बीजुं तप करे छे, एटले महाव्रत अने अणुव्रत शिवाय बीजां तप करे छे ते अज्ञानी अने मूर्ख माणस (अज्ञान कष्ट करनार माणस) नाववडे करीने पण एटले हाथमां नावा आव्या छतां पण बूडेलो जाणवो. जेम कोइ समुद्रमां रहेलो मूर्ख माणस हाथमां आवेली नावने तजीने ते नावना लोढाना खीलाए करीने समुद्र तरवाने इच्छे तेवी रीतनो तेने जाणवो.” ५०९.

सुबहुं पासत्थजणं, नाऊणं जो न होइ मज्झत्थो ।
न य साहेइ सकज्जं, कागं च करेइ अप्पाणं ॥ ५१० ॥

अर्थ–“ बहु प्रकारे पासत्थानुं स्वरूप जाणीने पण (पार्श्वस्थ जन संबंधी शिथिलताने जाणीने पण) जे मध्यस्थ होतो नथी ते पोतानुं मोक्षरूप कार्य साधी शकतो नथी, अने पोताना आत्माने कागडा तुल्य करे छे. ” ५१०.

परिचिंतिऊण निउणं, जइ नियमभरो न तीरए वोढुं ।
परचित्तरंजणेणं, न वेसमित्तेण साहारो ॥ ५११ ॥

अर्थ–“ निपुणताथी (सूक्ष्म बुद्धिथी) विचार करीने जो नियमनो भार (मूळ अने उत्तर गुणनो समूह) वहन करवा (धारण करवा) शक्तिमान न थवाय, तो पछी बीजाना चित्तने रंजन (प्रीति) करनार एवा वेषमात्रे करीने (मात्र वेष

गाथा ५०८–ससुगो । अलिअ । अहि दिक्खियओ वि । किंच ।

गाथा ५०९–छंडेउ=त्यक्त्वा । छड्डेउं । अन्नाणी । बुड्डो=ब्रूडितः ।

गाथा ५१०–कागं=काकतुल्यं ।

गाथा ५११–जय । वेसमत्तेण ।

धारण करी राखवाथी) परभवे दुर्गतिमां पडता माणसने ते (वेष) आधार रूप थतो नथी, एटले मात्र वेष धारण करवाथी कांइ दुर्गतिथी रक्षण थतुं नथी. " ५११.

निच्छयनयस्स चरणस्सुवग्घाए नाणदंसणवहो वि ।
ववहारस्स उ चरणे, हयम्मि भयणाउ सेसाणं ॥ ५१२ ॥

अर्थ–" निश्चय नयना मतमां (परमार्थवृत्तिथी कहीए तो) चारित्रनो उपघात थये छते ज्ञान अने दर्शननो पण वध (विनाश) थाय छे. केमके चारित्रनो विनाश थये आश्रवनुं सेवन करवाथी ज्ञान दर्शन पण नष्ट थाय छे; अने व्यवहार नयना मतमां तो (बाह्यवृत्तिथी कहीए तो) चारित्रनो घात थये छते शेष–ज्ञान दर्शनने विषे भजना (विकल्प) जाणवी. एटले कदाच ज्ञान दर्शन होय पण खरां अने न पण होय. " ५१२.

सुज्झइ जई सुचरणो, सुज्झइ सुस्सावओ वि गुणकलिओ ।
ओसन्नचरणकरणो, सुज्झइ संविग्गपक्खरुई ॥ ५१३ ॥

अर्थ–" सारा चारित्रवाळो यति (साधु) शुद्ध थाय छे. ज्ञानादिक गुणोए कलना करेलो (गुण सहित) सुश्रावक पण शुद्ध थाय छे. तथा शिथिल छे चरण अने करण जेनुं एवो संविग्न पक्षनी रुचिवाळो पण शुद्ध थाय छे; (संविग्न एटले मोक्षनी अभिलाषावाळा साधुओ. तेमना पक्षमां एटले तेमनी क्रियामां जेनी रुचि छे ते पण शुद्ध थाय छे.) " ५१३.

संविग्गपक्खियाणं, लक्खणमेयं समासओ भणियं ।
ओसन्नचरणकरणा वि, जेण कम्मं विसोहंति ॥ ५१४ ॥

अर्थ–" संविग्न (मोक्षाभिलाषी) साधुओनो जेमने पक्ष छे, एटले जेओ संविग्नना क्रियाअनुष्ठानमां आसक्त छे तेवा पुरुषोनुं (संविग्न पक्षीनुं) लक्षण समासथी (संक्षेपथी) तीर्थंकरोए आ प्रमाणे (हवे कहे छे ते प्रमाणे) कहेलुं छे, के जेणे करीने चरण अने करणने विषे शिथिल थयेला मनुष्यो पण ज्ञानावरणादिक कर्मने शुद्ध करे छे–खपावे छे. " ५१४.

सुद्धं सुसाहुधम्मं, कहेइ निंदइ य निययमायारं ।
सुतवस्सियाण पुरओ, होइ य सव्वोमरायणीओ ॥ ५१५ ॥

गाथा ५१३–जइ। सुस्सावगो । रुइ ।

गाथा ५१४–पक्खिआणं । मेअं । जेणाविकम्मं ।

गाथा ५१५–सुद्दं । नियमायार । सव्वोमरायणिओ । सर्वेभ्योऽपि अवमरात्रिको लघुः ।

अर्थ–" शुद्ध (निर्दोष) एवा साधु धर्मनी लोको पासे प्ररुपणा करे, अने पोताना आचारनी–शिथिळपणा विगेरेनी निंदा करे, तथा सारा तपस्वी साधुओनी पासे सर्वथी पण लघु थाय एटले तरतना दीक्षित साधुथी पण पोताना आत्माने लघु माने. " ५१५.

वंदइ नई वंदावइ, किंयकम्मं कुणइ कारवे नेयं ।
अत्तट्ठा नं वि दिक्खइ, देई सुसोहूण बोहेउं ॥ ५१६ ॥

अर्थ–" वळी लघु एवा पण संविग्न साधुने पोते वांदे, पण तेमनी पास पोताने वंदावे नहीं. तेमनुं कृतिकर्म (विश्रामणा विगेरे वैयावृत्त्य) करे, पण तेमनी पासे पोतानी विश्रामणा विगेरे करावे नहीं; अने पोताने माटे (पोतानी पासे दीक्षा लेवाने माटे) आवेला शिष्यने पोते दीक्षा आपे नहीं, पण तेने प्रतिबोध पमाडीने सुसाधु पासे मोकले–तेनी पासे दीक्षा अपावे, पण पोते आपे नहीं. " ५१६.

ओसन्नो अत्तट्ठा, परमप्पाणं चं हणइ दिक्खंतो ।
तं छुहइ दुग्गईए, अहिययरं बुड्डइ सयं चं ॥ ५१७ ॥

अर्थ–"उपरली गाथामां कह्या प्रमाणे न करतां अवसन्न के० शिथिल एवो छतो जे पोताने माटे बीजाने दीक्षा आपे छे ते तेने (शिष्यने) अने पोताना आत्माने हणे छे. केमके ते (शिष्य)ने दुर्गतिमां नांखे छे, अने पोताना आत्माने पण पूर्वनी अवस्था करतां अधिकतर संसारसमुद्रमां डुबावे छे. " ५१७.

जह सरणमुवगयाणं, जीवाण निकिंतए सिरे जोउं ।
एवं आयरिओ वि हुं, उस्सुत्तं पन्नवंतो य ॥ ५१८ ॥

अर्थ–" जेम कोइ माणस पोताने आश्रये आवेला जीवोनुं मस्तक छेदे, तेम आचार्य पण जो शरणे आवेला जीवोनी पासे उत्सूत्र प्ररुपणा करे–तेने कुमार्गे प्रवर्तावे, तो तेने पण तेना मस्तक छेदनार जेवो एटले विश्वासघाती जाणवो. " ५१८.

सावज्जजोगपरिवज्जणाउ, सव्वुत्तमो जईधम्मो ।
बीओ सावगधम्मो, तईओ संविग्गपक्खपहो ॥ ५१९ ॥

गाथा ५१६–वंदवेइ । कृतिकर्म=विश्रामणादि । णेय ।

गाथा ५१७–दुग्गइए । बुडइ ।

गाथा ५१९–सव्वंतसो । जइधम्मो । तइओ ।

अर्थ-" सावद्य योगो (पाप सहित योगो)ना वर्जन थकी (सर्व सावद्य योग वर्जवा थकी) यतिधर्म सर्वोत्तम छे ते पहेलो मार्ग छे; बीजो श्रावकधर्म पण मोक्षमार्ग छे, अने त्रीजो संविग्नपक्षनो मार्ग छे. ए त्रणे मोक्षमार्ग छे." ५१९.

सेसा मिच्छद्दिट्ठी, गिहिलिंगकुलिंगदव्वलिंगेहिं ।
जह तिन्नि य मुक्खपहा, संसारपहा तहा तिन्नि ॥ ५२० ॥

अर्थ-" शेष एटले उपर कहेला त्रण मार्ग शिवाय बाकीना गृहिलिंग (गृहिलिंगने धारण करनार), कुलिंग एटले योगी भरडा विगेरे कुलिंगने धारण करनार तथा द्रव्यलिंग एटले द्रव्यथी यतिवेषने धारण करनार-ए त्रणेने मिथ्यादृष्टि जाणवा. जेम उपरनी गाथामां त्रण मोक्षमार्ग कह्या तेम आ गृहिलिंगादिक त्रणे संसारना मार्ग जाणवा, एटले ते त्रणे संसारना हेतु छे." ५२०.

संसारसागरमिणं, परिभमंतेहिं सव्वजीवेहिं ।
गहियाणि य मुक्काणि य, अणंतसो दव्वलिंगाइं ॥ ५२१ ॥

अर्थ-" आ (प्रसिद्ध एवा) अनादि अनंत संसारसागरमां परिभ्रमण करता सर्व जीवोए अनंतीवार द्रव्यलिंगोने ग्रहण कर्यां छे, अने (ग्रहण करीने) मूकी दीधां छे; तोपण तेमनी कांइ पण अर्थसिद्धि थइ नथी." ५२१.

अच्चणुरत्तो जो पुण, न मुयइ बहुसो वि पन्नविज्जंतो ।
संविग्गपक्खियत्तं, करिज्ज लब्भिहिसि तेण पहं ॥ ५२२ ॥

अर्थ-" वळी अत्यंत अनुरक्त एटले वेष राखवामां गाढ आसक्त थयेलो एवो जे पुरुष घणी वार गीतार्थोए हितशिक्षा कह्या (दीधा) छतां पण ते वेषने मूके नहीं, तो तेणे संविग्ननुं पक्षपातीपणुं अंगीकार करवुं. (संविग्न पक्षनो आश्रय करवो). तेम करवाथी आवता भवमां ते मोक्षमार्ग पामे छे." ५२२.

कंताररोहमद्धाणओमगेलन्नमाइकज्जेसु ।
सव्वायरेण जयणाए, कुणइ जं साहुकरणिज्जं ॥ ५२३ ॥

गाथा ५२०-मिच्छदिट्ठी । तिन्नि ओ । संसारप्पहा ।

गाथा ५२१-गहीआणि अ ।

गाथा ५२२-पन्नविज्जंतो-प्रज्ञाप्यमान. । पक्खिअत्तं । लज्जहसि-लज्जिहिसि ।

गाथा ५२३-मायकज्जेसु । मद्धाण=विषममार्गचलनं । ओम=दुर्भिक्षकाल. । गेलन्न-ग्लानत्वम् । सव्वाइरेण । जयणाइ ।

अर्थ—" कांतार (मोटुं अरण्य एटले अटवीमां आवी चडवुं), रोध (राजानी लडाइ विगेरे प्रसंगे दुर्गमां रुंधावुं), मद्धाण (विषममार्गे चालवुं), ओम (दुष्काळ) अने गेलन्न (ग्लानत्व—रोगीपणुं) इत्यादिक कार्यने (प्रसंगोने) विषे पण एटले एवा कारण प्राप्त थया छतां पण सर्व आदर (शक्ति) वडे करीने यतना पूर्वक साधुने जे करवा लायक कार्य छे तेज सुसाधु करे छे; अर्थात् प्रबळ कारण प्राप्त थया छतां पण साधुए पोतानी सर्व शक्तिथी पोतानुं जे कर्तव्य छे ते यतना पूर्वक अवश्य करवुं. " ५२३.

आयरतरसंमाणं, सुदुक्करं माणसंकडे लोए ।
संविग्गपक्खियत्तं, ओसन्नेणं फुडं काउं ॥ ५२४ ॥

अर्थ—" अहंकारे करीने सांकडा एटले अभिमानथी भरेला एवा आ लोक (संसार) ने विषे अत्यंत आदरे करीने (संविग्न पणाए करीने) सुसाधुओनुं सन्मान करवुं ए अति दुष्कर छे, तेमज अवसन्न एटले शिथिल आचारवाळाने स्फुट—प्रगटपणे संविग्ननुं पक्षपाती पणुं करवुं एटले संविग्न पक्षना अनुरागी थवुं ए दुष्कर छे. " ५२४.

सारणचइआ जे गच्छनिग्गया पविहरंति पासत्था ।
जिणवयणबाहिरा वि य, ते अ पमाणं न कायव्वा ॥ ५२५ ॥

अर्थ—" सारणा के० स्मारणा—भूली गयेलानुं स्मरण आपवुं एटले आ काम आवी रीते करवुं एवी वारंवार शिक्षा आपवाथी उद्वेग पामेला अने तेथी करीने गच्छ बहार नीकळी गयेला (स्वेच्छाए वर्तवा माटे गच्छ बहार थयेला) एवा जे पासत्थाओ स्वेच्छाए विहार करे छे तेओ जिनवचनथी बाह्य छे, अर्थात् प्रथम शुद्ध चारित्रनुं पालन करीने पछी प्रमादी थयेला छे तेओने प्रमाण रूप गणवा नहीं, एटले साधुपणामां गणवा नहीं. " ५२५.

हीणस्स विसुद्धपरूवगस्स, संविग्गपक्खवायस्स ।
जा जा हविज्ज जयणा, सा सा से निज्जरा होइ ॥ ५२६॥

अर्थ—" विशुद्ध प्ररुपणा करनार, अने संविग्ननो पक्षपात छे जेने एवा हीननी (उत्तरगुणमां कांइक शिथिल थयेलानी) जे जे यतना (बहु दोषवाळी वस्तुनुं वर्जन अने अल्प दोषवाळी वस्तुनुं ग्रहण करवुं ते रूप यतना) होय छे, ते ते यतना तेने निर्जरा रूप (कर्मने क्षय करनारी) थाय छे. " ५२६.

गाथा ५२४—सदुक्कर । पक्खिअत्तं ।

गाथा ५२५—सारणचेइआ । सारणचोईआ । वाहिरो । ते अ-प्पमाणं ।

गाथा ५२६—वाइस्स । जइणा ।

सुंकाइयपरिसुद्धे, सइ लाभे कुणइ वाणिओ चिट्ठं ।
एमेव य गीयत्थो, आयं दट्ठुं समायरइ ॥ ५२७ ॥

अर्थ–" शुल्कादिके करीने एटले राजानो कर (दाण) विगेरे आपवाए करीने शुद्ध अर्थात् दाणनुं द्रव्य तथा बीजो खर्च काढ्या पछी जो लाभ प्राप्त थाय तेम होय तो वणिक् चेष्टा (वेपार) करे छे; एवीज रीते गीतार्थ मुनि पण शास्त्रना ज्ञानथी आय के० लाभने जोइने आचरण (कार्य) करे छे, अर्थात् अल्प दोषवाळुं अने बहु लाभवाळुं कार्य यतना पूर्वक करे छे. " ५२७.

आमुक्कजोगिणो चिअ, हवइ थोवा वि तस्स जीवदया ।
संविग्गपक्खजयणा, तो दिट्ठा साहुवग्गस्स ॥ ५२८ ॥

अर्थ–" निश्चे चोतरफथी सर्वे प्रकारे मूक्या छे संयमना योग (व्यापार) जेणे एवा ते साधुना हृदयमां थोडी पण जो जीवदया होय, तो ते संविग्न पक्षवाळा (मोक्षना अभिलाषी) साधुवर्गनी यतना (जीवदया) तीर्थकरोए जोएली छे; अर्थात् ते मोक्षाभिलाषी ने संविज्ञपक्षी होवाथी तेनी यतना तीर्थकरोए प्रमाण रूप गणी छे. "

किं मूसगाण अत्थेण, किं वा कागाण कणगमालाए ।
मोहमलखविलिआणं, किं कज्जुवएसमालाए ॥ ५२९ ॥

अर्थ–" मूषको (उंदरो)ने सुवर्ण विगेरे अर्थ (धन)वडे करीने शुं प्रयोजन छे ? मूषक पासे धन होय तो तेथी तेनु शुं कार्य साधी शकाय ? कांइज नहीं. अथवा कागडाओने सुवर्णनी माळाए करीने शुं प्रयोजन छे ? कागडा पासे सुवर्णनी माळा होय तो तेथी तेने शो फायदो ? कांइज नहीं. तेवीज रीते मोहमळ (मिथ्यात्वादिक कर्म रूपी मळ) वडे करीने लींपाएला प्राणीओने आ उपदेशमाळा (उपदेशनी परंपरा) ए करीने शुं प्रयोजन छे ? अर्थात् बहुलकर्मीने आ उपदेशमाळा कांइ पण कामनी नथी. " ५२९.

चरणकरणालसाणं, अविणयबहुलाण सययजोगमिणं ।
न मणी सयसाहस्सो, आबज्झइ कुच्छभासस्स ॥ ५३० ॥

गाथा ५२७–सुंकाईपरिसुद्धे–संकाईपरिसुद्ध । शुल्कादिना राज्यदेयद्रव्यादिना परिशुद्धे । दिट्ठं ।
गाथा ५२८–जोगिण–जोगिणु। हवइ हु ।
गाथा ५२९–मुसगाण=मूषकाणाम् । कणयमालाए । मोहमलखवलियाण=मोहमलावलिप्तानाम् ।
गाथा ५३०–कुत्सिता भाषा यस्य तस्य काकस्येत्यर्थः ।

अर्थ–" पांच महाव्रतादिक चरण अने पिंडविशुद्ध्यादिक करणने विषे आळसु तथा अविनयवडे बहुल एटले घणा अविनयवाळा एवा पुरुषोने आ उपदेशमाळा प्रकरण निरंतर अयोग्य छे, अर्थात् तेओने आ उपदेश आपवा योग्य नथी. केमके सो हजार (लाख)ना मूल्यवाळो मणि कुत्सित भाषावाळा कागडाने (कागडानी कोटे) बांधवा लायक नथी." ५३०.

नाऊण करयलगयामलं व सब्भावओ पहं सव्वं ।
धम्मंमि नाम सीईज्जइ त्ति कम्माइं गरूआइं ॥ ५३१ ॥

अर्थ–" करतळमां रहेला आमलक (आमळाना) फळनी जेम अथवा अमल के० निर्मळ क के० पाणीनी जेम सद्भावथी (सत्य बुद्धिथी) सर्व (ज्ञानादि रूप) मोक्षमार्ग जाणीने पण आ जीव धर्मने विषे (नाम संभावनाने अर्थे छे) प्रमादी थाय छे. तेमां ते प्राणीना गुरुकर्मोज कारण छे, अर्थात् ते जीव भारेकर्मी होवाथी–ज्ञानावरणीयादि कर्मनी बहुलता होवाथी ते जाणतो सतो पण धर्म करतो नथी." ५३१.

धम्मत्थकाममुक्खेसु, जस्स भावो जहिं जहिं रमइ ।
वेरग्गेगंतरसं, न इमं सव्वं सुहावेइ ॥ ५३२ ॥

अर्थ–" धर्म, अर्थ, काम अने मोक्ष ए चार पुरुषार्थोने विषे जे प्राणीनो भाव (अभिप्राय) जे जे (भिन्न भिन्न) पदार्थोने विषे रमे छे (वर्ते छे); एटले प्राणीओनो अभिप्राय भिन्न भिन्न पदार्थोमां होय छे, माटे जेने विषे वैराग्यनोज एकांत रस रहेलो (भरेलो) छे एवुं (वैराग्य रसमय) आ उपदेशमाला प्रकरण सर्व प्राणीओने सुखकर नथी (सुख उत्पन्न करतुं नथी); किंतु वैराग्यवाळा पुरुषोनेज आ प्रकरण सुख उपजावे छे." ५३२.

संजमतवालसाणं, वेरग्गकहा न होइ कन्नसुहा ।
संविग्गपक्खियाणं, हुज्ज व केसिंचि नाणीणं ॥ ५३३ ॥

अर्थ–" सत्तर प्रकारना संयम तथा तपस्याने विषे आळसु (प्रमादी) एवा पुरुषोने वैराग्यकथा कर्णने सुखकारी थती नथी, प्रमादीने वैराग्यनी वार्ता रुचती नथी; परंतु संविग्न पक्षवाळा (मोक्षनी अभिलाषावाळा)ने अथवा केटलाएक ज्ञानीनेज वैराग्य कथा कर्णने सुखकारी थाय छे, सर्वने सुखकारी थती नथी." ५३३.

गाथा ५३१–सीइज्जइ=विषीदति–प्रमादी भवति ।
गाथा ५३२–मोक्खेसु । वेरागेगतरसं । सुहावेई ।
गाथा ५३३–हुज्जवि । केसिंच । नाणेणं ।

सोऊण पगरणमिणं, धम्मे जाओ न उज्जमो जस्स ।
न य जणियं वेरग्गं, जाणिज्ज अणंतसंसारी ॥ ५३४ ॥

अर्थ–" आ उपदेशमाळा प्रकरण सांभळीने धर्मने विषे जेनो उद्यम थयो नथी (जे धर्म करवामां उद्यमी थयो नथी), तथा जेने पंचेन्द्रिय विषय त्यागरूप वैराग्य उत्पन्न थयो नथी तेने (ते प्राणीने) अनंतसंसारी एटले ए जीव अनंतसंसारी छे एम जाणवुं, अर्थात् अनंतसंसारी जीवनेज घणो उपदेश पण वैराग्यजनक थतो नथी. " ५३४.

कम्माण सुबहुआणुवसमेण उवगच्छई इमं सव्वं ।
कम्ममलचिक्कणाणं, वच्चइ पासेण भन्नंतं ॥ ५३५ ॥

अर्थ–" प्राणी अत्यंत घणां कर्मोना उपशमे करीने (क्षयोपशमे करीने) एटले ते ते जातिना कर्मना आवरणना क्षयवडे करीने आ (प्रत्यक्ष) सर्व (उपदेशमाळा रूप तत्त्वार्थना समूह)ने पामे छे; परंतु कर्मना मळवडे चिकणा थयेला (लींपायेला) एटले जेणे गाढ कर्म बांधेलां छे एवा पुरुषोने आ प्रकरण कह्युं छतुं पण तेनी पासे थइने चाल्युं जाय छे. एटले वारंवार तेने उपदेश कर्या छतां पण तेना हृदयमां कर्मनी चीकाश होवाथी प्रवेश करतुं नथी. " ५३५.

उवएसमालमेयं, जो पढई सुणइ कुणइ वा हियए ।
सो जाणइ अप्पहियं, नाऊण सुहं समायरई ॥ ५३६ ॥

अर्थ–" आ उपदेशमाळाने जे पुरुष भणे छे, श्रवण करे छे अथवा हृदयमां धारण करे छे एटले हृदयमां तेना अर्थनी भावना करे छे ते पुरुष आत्महित (आलोक तथा परलोकना हित)ने जाणे छे, अने तेने जाणीने शुभ एटले सम्यक् प्रकारे ते हितनुं आचरण करे छे. " ५३६.

धंतमणिदामससिगयणिहि, पयपढमक्खराभिहाणेण ।
उवएसमालपगरणमिणमो रइअं हिअट्ठाए ॥ ५३७ ॥

अर्थ–" धंत, मणि, दाम, ससि, गय अने णिहि–एटलां पदोना जे प्रथम अक्षरो धंकार, मकार, दाकार, सकार, गकार अने णिकार- तेणे करीने जेनुं नाम जणाय

गाथा ५३४–सोउण ।
गाथा ५३६–मेअं । अप्पहिअं । समाइरई ।
गाथा ५३७–पढमक्खरावयाणेण । रईय । हियट्ठाए ।

छे एवाए एटले धंम्मदासगणिए आ उपदेशमाळा प्रकरण पोताना अने परना (भव्य जीवोना) हितने माटे रच्युं छे. " ५३७.

जिणवयणकप्परुक्खो, अणेगसुत्तत्थसालिविच्छिन्नो ।
तवनियमकुसुमगुच्छो, सुग्गइफलबंधणो जयइ ॥ ५३८ ॥

अर्थ–" अनेक सूत्रार्थ रूपी शाखाओवडे विस्तार पामेलो, तप अने नियमरूप पुष्पोना गुच्छवाळो तथा देव मनुष्यरूप सद्गति रूपी फळनी निष्पत्तिवाळो (सद्गतिने बंधावनारो) आ जिनवचन (द्वादशांगी) रूप कल्पवृक्ष (मनवांछित फल आपनार) जय पामे छे–सर्वोत्कृष्टपणे वर्ते छे. " ५३८

जुग्गा सुसाहुवेरग्गिआण, परलोगपत्थिआणं चं ।
संविग्गपक्खीआणं, दायव्वा बहुसुआणं च ॥ ५३९ ॥

अर्थ–" सुसाधुओने, वैराग्यवाळा श्रावकोने अने परलोकना साधनमां प्रस्थित थयेला–चालेला (उद्यमवाळा) एवा संविग्न पक्षीओने योग्य एवी आ उपदेशमाळा बहुश्रुत (पंडितो)ने आपवा योग्य छे. एटले आ उपदेशमाळा पंडितोनेज आनंद आपनारी छे, पण मूर्खने आनंद आपनारी नथी. " ५३९.

इय धम्मदासगणिणा, जिणवयणुवएसकज्जमालाए ।
मालं व्व विविहकुसुमा, कहीआय सुसीसवग्गस्स ॥ ५४० ॥

अर्थ–" आ प्रमाणे श्रीधर्मदासगणिए (श्रीधर्मदासगणि नामना आचार्य महाराजे) जिनवचनना उपदेशना कार्यनी माळा (परंपरा)ए करीने पुष्पमाळानी जेम विविध प्रकारना उपदेशना अक्षरोरूपी पुष्पवाळी आ उपदेशमाळा सारा शिष्योना समूहने अभ्यास करवा माटे कहीछे–करी छे. " ५४०.

संतिकरी वुड्ढिकरी, कल्लाणकरी सुमंगलकरी य ।
होइ कहगस्स परिसाए, तह य निव्वाणफलदाई ॥ ५४१ ॥

अर्थ–" आ उपदेशमाळा कथक के० वक्ताने (व्याख्या करनारने) तथा पर्षदने (श्रवण करनारने) क्रोधादिकनी शांति करनारी, ज्ञानादिक गुणोनी वृद्धि करनारी, कल्याण

गाथा ५३८–साल–शाखा । सोग्गइ ।

गाथा ५३९–जोग्गो । वेरग्गियाण । पत्थियाणं । परलोयावुच्छियाणं च । पक्खियाणं । बहुस्सुयाणं ।

गाथा ५४०–वयणवएस । कज्जमलयाओ । मालु व्व । कुसमा । कहिआय ।

गाथा ५४१–कल्लाणकरि सुमंगलकरेअ । होउ । तहइ । फळदाइ । परिसाए=पर्षदः ।

करनारी एटले आ लोकमां धनादिक संपत्ति अने परभवमां वैमानिक ऋद्धिने प्राप्त करावनारी, सुमांगल्य (भला मंगलिकने) करनारी अने परलोकने विषे निर्वाण (मोक्ष) रूप फळने आपनारी थाय छे. अर्थात् आ प्रकारनुं व्याख्यान करवाथी तथा श्रवण करवाथी मोटुं फळ प्राप्त थाय छे. " ५४१.

इत्थं समप्पइ इणमो, मालाउवएसपगरणं पगयं ।
गाहाणं सव्वाणं, पंचसया चेव चालीसा ॥ ५४२ ॥

अर्थ–" आ प्राकृत उपदेशमाळा प्रकरण अहींआं समाप्त करीए छीए. प्रथमथी आरंभीने अहींआं सुधी जो छन्दविशेष गाथा गणीए तो सर्व गाथाओनी संख्या पाचसो अने चालीश छे. (बे गाथाओ प्रक्षेप समजवी) " ५४२

जावय लवणसमुद्दो, जावय नक्खत्तमंडिओ मेरू ।
तावय रइया माला, जयंमि थिरथावरा होउ ॥ ५४३ ॥

अर्थ–" ज्यां सुधी (आ जगतमां) लवण समुद्र शाश्वतो वर्ते छे, अने ज्या सुधी नक्षत्रोथी शोभित थयेलो शाश्वत मेरु पर्वत वर्ते छे, त्यां सुधी आ रचेली उपदेशमाळा जगतने विषे स्थिर (शाश्वत) पदार्थनी जेम स्थावर के० स्थिर थाओ. " ५४३

अक्खरमत्ताहीणं, जं चिय पढियं अयाणमाणेणं ।
तं खमह मज्झ सव्वं, जिणवयणविणिग्गया वाणी ॥ ५४४ ॥

अर्थ–" आ प्रकरणने विषे अक्षरथी अथवा मात्राथी हीन के अधिक एवुं काइ पण में अजाणतां (अज्ञानपणाथी) कह्युं होय ते सर्व मारी भूलने जिनेश्वरना मुखथी नीकळेली वाणी श्रुतदेवी क्षमा करो."

गाथा ५४२–इणिमो । पगयं=प्राकृतम् । सव्वग्गं । चालिसा ।
गाथा ५४३–जावइ । मेरु । होइ ।

॥ इति श्रीधर्मदासगणिविरचित-
मुपदेशमालाप्रकरणम् ॥

श्रीरामविजयजी गणिकृत टीकाना भाषांतर
युक्त श्रीउपदेशमाळा भाषान्तर संपूर्ण.

आ ग्रंथ छपावीने बहार पाडवामां भावनगरना श्राविका समुदाय पैकी जेणे जेणे मदद आपी छे तेमनां नामोनुं लीस्ट.

३८३) बाई झवेर–ते शा. वीरचंद फतेचंदनी विधवा.
तेमना श्रेयार्थे शा. कुंवरजी आणंदजी हस्तु.

१२०) बाई जतन–ते शा. आणंदजी परशोतमनी पुत्री.
हाल साध्वी कंचनश्री थया छे ते.

६०) बाई अमृत–ते वोरा कल्याणजी सवचंदनी पुत्री.
हाल साध्वी जंबुश्री थया छे ते.

२३) गुरुणीजी श्री लाभश्रीजी हस्तु अमदावादथी आव्या ते.

५१६।।। परचुरण रकमे आप्या तेनी विगत—

२५। बाई धोळी.	२५। बाई हरकोर.	२५। बाई पोती.
२५। बाई चकु.	२५। बाई पार्वती.	२५) बाई आधार.
२५) बाई राम.	२५) बाई रूपाळी.	२०। बाई उजम.
२०। बाई नंदु.	२०) बाई अमृत.	१५। बाई कस्तुर.
१५) बाई लाडकी.	१२।। बाई कुंवर.	१२।। बाई समरत.
१२। बाई मोती.	१०। बाई उजम.	१०। बाई मोती.
१०) बाई मणी.	१०) बाई झीणी.	१०) बाई जेकोर.
१०) बाई काळी.	१०) बाई जीवी.	१०) बाई मणी.
१०) बाई देवकोर.	१०) बाई लाधी.	१०) बाई.
५। बाई गिरजा.	५। बाई झरमर.	५। बाई वीजी.
५। बाई हरकोर.	५। बाई पार्वती.	५। बाई दीवाळी.
५। बाई मणी.	५। बाई नंदु.	५) बाई पुनी.
५) बाई मोती.	५) बाई मोंघी.	५) बाई कंकु.
५) बाई वीजी.	५) बाई माकु.	५) बाई चंचळ.
		५१६।।।

११०२।।।